न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते ।

माणिकचन्द-दिगम्बर-जैन-ग्रन्थमाला ।

१२

त्रिलोकसारः ।

माणिकचन्द-दिगम्बर-जैनग्रन्थमाला ११।

श्रीमन्नेमिचन्द्र-सिद्धान्तचक्रवर्ति-विरचितः

त्रिलोकसारः।

श्रीमन्माधवचन्द्रत्रैविद्यदेवकृत-

व्याख्यासहितः।

श्रीयुतपण्डितमनोहरलालशास्त्रिणा
सम्पादितः संशोधितश्च।

प्रकाशिका-
श्रीमाणिक्यचन्द्र-दिगम्बर-जैन-
ग्रन्थमाला-समितिः।

ज्येष्ठ, वीर निर्वाण सं० २४४४.

प्रथमावृत्तिः] [मूल्यं पादोनरूप्यकद्वयम्।

प्रकाशक—
नाथूराम प्रेमी, मंत्री
माणिकचन्द दि० जैनग्रन्थमालासमिति,
हीराबाग, गिरगांव-बम्बई ।

मुद्रक—
चिंतामणि सखाराम देवळे,
बम्बईवैभव प्रेस, सँढहर्स्ट रोड,
बम्बई ।

ग्रन्थकर्तॄणां परिचयः ।

मूलसंघ अर्थात् दिगम्बरसम्प्रदायकी चार शाखायें हैं—नन्दि, सिंह, सेन और देव । इन शाखाओंकी भी प्रतिशाखायें हैं, जो गणगच्छादि नामोंसे प्रसिद्ध हैं । नन्दिसंघमें जो कई गणगच्छादि हैं उनमेंसे एक देशीय गण भी है । त्रिलोकसारके कर्ता महामना नेमिचन्द्र इसी देशीय गणमें हुए हैं । यह गण कर्नाटकमें बहुत ही प्रसिद्ध हुआ है और इसमें बहुत बड़े बड़े विद्वान् हुए हैं । इस गणके बीसों विद्वान् 'सिद्धान्त-चक्रवर्ती' की पदवीसे विभूषित हुए हैं । आचार्य नेमिचन्द्रको भी यह महती पदवी प्राप्त थी । इनकी गुरुपरम्पराका पता आचार्य गुणनन्दिसे लगता है । गुणनन्दिके शिष्य विबुधगुणनन्दि, विबुधगुणनन्दिके अभय-नन्दि और उनके वीरनन्दि । यथाः—

बभूव भव्याम्बुजपद्मबन्धुः पतिर्मुनीनां गणभृत्समानः ।
सदग्रणीर्देशिगणाग्रगण्यो गुणाकरः श्रीगुणनन्दिनामा ॥

गुणग्रामाम्भोधेः सुकृतवसतेर्मित्रमहसा-
मसाध्यं यस्यासीन्न किमपि महीशासितुरिव ।
स तच्छिष्यो ज्येष्ठः शिशिरकरसौम्यः समभवत्
प्रविख्यातो नाम्ना विबुधगुणनन्दीति भुवने ॥ २ ॥

मुनिजननुतपादः प्रास्तमिथ्याप्रवादः,
सकलगुणसमृद्धस्तस्य शिष्यः प्रसिद्धः ।
अभवदभयनन्दी जैनधर्माभिनन्दी
स्वमहिमजितसिन्धुर्भव्यलोकैकबन्धुः ॥ ३ ॥

भव्याम्भोजविबोधनोद्यतमतेर्भास्वत्समानत्विषः
शिष्यस्तस्य गुणाकरस्य सुधियः श्रीवीरनन्दीत्यभूत् ।
स्वाधीनाखिलवाङ्मयस्य भुवनप्रख्यातकीर्तेः सतां
संसत्सु व्यजयन्त यस्य जयिनो वाचः कुतर्काङ्कुशाः ॥

—चन्द्रप्रभचरित ।

इन श्लोकोंसे यह मालूम हुआ कि गुणनन्दिके शिष्य अभयनन्दि और उनके वीरनंदि हुए; पर यह मालूम नहीं हुआ कि अभयनन्दिके शिष्य नेमिचन्द्र भी थे । इसके लिए त्रिलोकसारकी नीचे लिखी गाथा देखिए:—

इदि णेमिचंदमुणिणा णप्पसुदेणभयणंदिवच्छेण ।
रइयो तिलोयसारो खमंतु तं बहुसुदाइरिया ॥

यदि यह कहा जाय कि वीरनंदिके गुरु अभयनन्दि और होंगे और नेमिचन्द्रके गुरु अभयनन्दि और, तो इसका समाधान गोम्मटसार कर्मकाण्डकी नीचे लिखी गाथासे होता है:—

जस्स य पायपसाएणणंतसंसारजलहिमुत्तिण्णो ।
वीरिंदणंदिवच्छो णमामि तं अभयणंदिगुरुं ॥ ४३६ ॥

इसमें कहा है कि जिनके चरणोंके प्रसादसे वीरनन्दि और इन्द्रनन्दि शिष्य संसारसमुदायसे पार हो गये, उन अभयनन्दि गुरुको नमस्कार हो । इससे सिद्ध हुआ कि अभयनन्दिके शिष्योंमें जिन वीरनन्दिका उल्लेख है, वे और कोई नहीं किन्तु चन्द्रप्रभ महाकाव्यके कर्त्ता ही हैं । वीरनन्दि और नेमिचन्द्रकी समकालीनतासे भी इस बातकी पुष्टि होती है, जिसका कि उल्लेख आगे किया गया है ।

इन्द्रनन्दि और वीरनन्दि बहुत बड़े विद्वान् थे । यद्यपि अभयनन्दिके शिष्य होनेसे वे नेमिचन्द्रके गुरुभाई थे, तो भी उन्हें नेमिचन्द्रने अपने गुरुके समान भक्तिभावसे स्मरण किया है:—

णमिऊण अभयणंदिं सुदसागरपारगिंदणंदिगुरुं ।
वरवीरणंदिणाहं पयडीणं पच्चयं वोच्छं ॥ ७८५ ॥

—कर्मकाण्ड अध्याय ६ ।

णमह गुणरयभूसणसिद्धंतामियमहब्धिभवभावं ।
वरवीरणंदिचंदं णिम्मलगुणमिंदणंदिगुरुं ॥ ८९६ ॥

—कर्मकाण्ड अध्याय ८ ।

वीरिंदणंदिवच्छेणप्पसुदेणभयणंदिसिस्सेण ।
दंसणचरित्तलद्धी सुसूयिया णेमिचंदेण ॥ ६४८ ॥

—लब्धिसार ।

कर्मकाण्डकी ३९६ वीं गाथामें नेमिचन्द्र स्वामी एक कनकनन्दि नामक आचार्यका भी उल्लेख करते हैं:—

वर इंदणंदिगुरुणो पासे सोऊण सयलसिद्धंतं ।
सिरिकणयणंदिगुरुणा सत्तट्ठाणं समुद्दिट्ठं ॥

अर्थात्—श्रीकनकनन्दि गुरुने इन्द्रनन्दि गुरुके पास सारे सिद्धान्तोंको सुनकर सत्त्वस्थानका कथन किया ।

इन सब गाथाओंसे यह भी मालूम होता है कि अभयनन्दि, इन्द्रनन्दि, वीरनन्दि, कनकनन्दि और नेमिचन्द्र ये सब प्रायः एक ही समयमें हुए हैं। अब हमें यह देखना चाहिए कि इनका समय क्या है।

सुप्रसिद्ध एकीभाव स्तोत्रके कर्त्ता महाकवि वादिराजने अपना 'पार्श्वनाथ काव्य' शक संवत् ९४७ में सम्पूर्ण किया है* । इसके प्रारंभमें उन्होंने अपनेसे पूर्वके अनेक ग्रन्थकर्ताओंका स्तवन करते हुए लिखा है:—

चन्द्रप्रभाभिसम्बद्धा रसपुष्टा मनःप्रियम् ।
कुमुद्वतीव नो धत्ते भारती वीरनन्दिनः ॥ ३० ॥

इस श्लोकमें महाकवि वीरनन्दिके चन्द्रप्रभचरितका स्पष्ट उल्लेख है। इससे मालूम होता है कि चन्द्रप्रभकाव्य शक संवत् ९४७ से पहले बन चुका था और इस लिए वीरनन्दि और नेमिचन्द्र आदिका समय भी शक संवत् ९४७ से पहले मानना होगा।

---

* शाकाब्देनगवार्धिरन्ध्रगणने संवत्सरे क्रोधने,
मासे कार्तिकनाम्नि बुद्धिमहिते शुद्धे तृतीयादिने ।
सिंहे पाति जयादिके वसुमती जैनी कथेयं मया,
निष्पत्तिं गमिता सती भवतु वः कल्याणनिष्पत्तये ॥

नेमिचन्द्रके प्रधान शिष्य माधवचन्द्र त्रैविद्यदेव इस त्रिलोकसार-टीकाके प्रारंभमें लिखते हैं:—

“ **श्रीमदप्रतिहताप्रतिमनिःप्रतिपक्षनिष्करण–भगवन्नेमिचन्द्र-सैद्धान्तदेवश्चतुरनुयोगचतुरुदधिपारगश्चामुण्डरायप्रतिबोधन-व्याजेन अशेषविनेयजनप्रतिबोधनार्थं त्रिलोकसारनामानं ग्रन्थ-मारचयन्...........विशिष्टदेवतामभिष्टौति** ।” इसी प्रकार गोम्मटसारके संस्कृत टीकाकार अभयचन्द्र त्रैविद्यचक्रवर्ती लिखते हैं— “**सिंहनन्दिमुनीन्द्राभिनन्दित-गंगवंशललाम....श्रीमद्राचमल्लदेव-महीवल्लभमहामात्यपदविराजमान—रणरंगमल्लासहायपराक्रम-गुणरत्नभूषण–सम्यक्त्वरत्ननिलयादिविविधिगुणग्रामनामसमा-सादितकीर्तिः...श्रीमच्चामुण्डरायभव्यपुण्डरीक—द्रव्यानुयोगप्र-श्नानुरूपं**––” । इससे मालूम होता है कि त्रिलोकसार और गोम्मट-सार ग्रन्थ चामुण्डरायके प्रतिबोधके लिए अथवा उनके प्रश्नके उत्तर-रूपमें लिखे गये थे । गोम्मटसारके अन्तमें एक गाथा दी हुई है:—

गोम्मटसुत्तल्लिहणे गोम्मटरायेण जा कया देसी ।
सो राओ चिरकालं णामेण य वीरमतंडी ॥

अर्थात् गोम्मटसूत्रके लिखनेके समय जिसने उसकी देसी टीका अर्थात् कर्नाटकी वृत्ति बनाई, वह गोम्मटराय या चामुण्डराय चिरकाल तक जयवंत हो । इससे मालूम होता है कि गोम्मटसारकी वह ‘ कर्नाटकी वृत्ति ’–जिसके कि आधारसे केशववर्णीने संस्कृतटीका बनाई है–* नेमिचन्द्र स्वामीके ही समयमें बन चुकी थी । इन बातोंसे अच्छी तरह सिद्ध है कि नेमिचन्द्र और चामुण्डराय समकालीन व्यक्ति थे ।

---

* नेमिचन्द्रं जिनं नत्वा सिद्धं श्रीज्ञानभूषणम् ।
वृत्तिं गोम्मटसारस्य कुर्वे कर्णाटवृत्तितः ॥

ये ‘ चामुण्डराय ’ गंगवंशीय राजा राचमल्लके प्रधानमंत्री और सेनापति थे। राचमल्लके भाई रक्कस गंगराजने शक संवत् ९०६ से ९२१ तक राज्य किया है और उसके बाद राचमल्लका समय प्रारंभ होता है। अर्थात् चामुण्डराय शककी १० वीं शताब्दिके प्रारंभमें मौजूद थे। यह समय कनड़ीभाषाके ‘ चामुण्डरायपुराण ’ या ‘ त्रिषष्ठिलक्षणमहापुरुषचरित ’ नामक ग्रन्थसे और भी अच्छी तरह निश्चित हो जाता है। यह ग्रन्थ स्वयं चामुण्डरायका बनाया हुआ है और शक संवत् ९०० में—ईश्वरनामक संवत्सरमें—यह समाप्त हुआ है। * इसके सिवाय ‘ रन्न ’ नामके प्रसिद्ध कविने अपने ‘ पुराणतिलक ’ नामक कनड़ी ग्रन्थमें—जो शक संवत् ९१५ में बनकर पूरा हुआ है--अपने ऊपर चामुण्डरायकी विशेष कृपा होनेका उल्लेख किया है +। इन सब प्रमाणोंसे अच्छी तरह सिद्ध हो जाता है कि शककी दसवीं शताब्दिके प्रारंभमें नेमिचन्द्र स्वामी हो गये हैं और इससे शक संवत् ९४७ में वादिराजसूरि द्वारा वीरनन्दिका उल्लेख होना भी संगत तथा निर्भ्रान्त सिद्ध हो जाता है।

नेमिचन्द्रस्वामीके इस समयके विषयमें कई सज्जनोंको सन्देह है। सन्देहका एक कारण यह है कि ‘ प्रमेयकमलमार्तण्ड ’ में गोम्मटसारकी ‘ विग्गहगदिमावण्णा ’ आदि गाथा उद्धृत हुई है और इस ग्रन्थके कर्त्ता प्रभाचन्द्र शकसंवत् ७०० के लगभग हुए हैं। अत एव गोम्मटसारके कर्त्ता शक संवत् ९०० के लगभग नहीं किन्तु ७०० से पहले होने चाहिएँ। पर यह सन्देह व्यर्थ है। प्रमेयकमलमार्तण्डमें जो गाथा उद्धृत हुई है, वह गोम्मटसारकी नहीं, किन्तु गोम्मटसार जिस सिद्धान्तग्रन्थसे संग्रहीत किया गया है, उसकी है। गोम्मटसार ‘जयधवल सिद्धान्त’

---

* इसके लिए देखो मि० राइसकी ‘ इंस्क्रिपशन्स ऐट् श्रवणबेल्गोल ’ नामक अँगरेजी ग्रन्थकी भूमिका।

\+ देखो ‘ कर्नाटक-कविचरित ’ में रन्नका वृत्तान्त।

परसे साररूप संग्रह किया हुआ ग्रन्थ है और इसी लिए इसे स्वयं ग्रन्थ-कर्ताने ग्रन्थान्तमें ‘ गोम्मट-संगह-सुत्त ’ कहा है। गोम्मटसारकी ऐसी और भी कई गाथायें उससे बहुत पुराने ग्रन्थोंमें * (जैसे कि राजवार्तिक और भगवती आराधनामें) मिलती हैं; परन्तु इससे गोम्मटसार भगवती आराधना आदिसे पहले सिद्ध नहीं हो सकता। इससे केवल यही मालूम होता है कि गोम्मटसारमें प्राचीन ग्रन्थोंसे बहुतसी गाथायें संग्रह की गई हैं । ऐसी दशामें नेमिचन्द्रका समय प्रभाचन्द्रसे § पहले नहीं ठहर सकता ।

सन्देहका दूसरा कारण यह है कि ‘ बाहुबलिचरित ’ नामक संस्कृत ग्रन्थमें लिखा है कि कल्कि संवत् ६०० में चामुण्डराय मंत्रीनें गोम्मट देवकी प्रतिष्ठा कराई थी + और कुछ पण्डित महाशयोंने बिना

---

* देखो जैनहितैषी भाग १३ पृष्ठ ४९२–९३ ।

§ प्रमेयकललमार्तण्डकी प्रशस्तिमें लिखा है कि इस ग्रन्थको धारानिवासी प्रभाचन्द्र पण्डितने भोजदेवके राज्यमें बनाया । इस पर हमारे कुछ पण्डित महाशयोंने प्रभाचन्द्रको विक्रमकी ग्यारहवीं शताब्दिका विद्वान् समझ लिया है। क्योंकि सुप्रसिद्ध राजा भोजका निश्चय किया हुआ समय यही है । परन्तु उन्हें यह मालूम नहीं है कि धारामें कविकल्पवृक्ष भोजके पहले, शककी आठवीं शताब्दिके प्रारंभमें, एक और भोजदेव नामका राजा हो गया है । उसीके समयमें प्रभाचन्द्रका प्रमेयकमलमार्तण्ड लिखा गया है । हरिवंशपुराण शक संवत् ७०५ में समाप्त हुआ है और आदिपुराण भी लगभग इसी समयका ग्रन्थ है । पर इन दोनों ही ग्रन्थोंमें प्रभाचन्द्रका स्मरण किया गया है और इस लिए प्रभाचन्द्र दूसरे भोजके समयके नहीं, किन्तु प्रथम भोजके समयके, शक संवत् ७०० के लगभगके, विद्वान् हैं और इस कारण नेमिचन्द्रको उनसे २०० वर्ष बाद मानना चाहिए ।

+ कल्क्यब्दे षट्शताख्ये विनुतविभवसंवत्सरे मासि चैत्रे
पंचम्यां शुक्लपक्षे दिनमणिदिवसे कुंभलग्ने सुयोगे ।
सौभाग्ये मस्तनाम्नि प्रकटितभगणे सुप्रशस्तां चकार
श्रीमच्चामुण्डराजो बेल्गुलनगरे गोम्मटेशप्रतिष्ठाम् ॥

समझे-बूझे कल्कि संवत् और शक संवत्को एक ही मान लिया है। परन्तु वास्तवमें कल्कि संवत् दूसरा है और शक संवत् दूसरा है। हरिवंशपुराणादि ग्रन्थोंके मतानुसार शक राजाके ३९४ वर्ष ७ महीने बाद कल्कि राजा हुआ है। अतएव कल्कि संवत् ६०० को शक संवत् ९९४ समझना चाहिए और इसी समयमें गोम्मटेशकी प्रतिष्ठा हुई, ऐसा मानना चाहिए। परन्तु इससे चामुण्डरायका समय लगभग १०० वर्ष पीछे हट जायगा, जो इतिहाससे बहुत विरुद्ध जाता है। ऐसी दशामें या तो प्रो० शरच्चन्द्र घोषाल एम. ए. की कल्पनानुसार यह मान लेना चाहिए कि बाहुबलिचरितके 'कल्क्यब्दे षट्शताख्ये' का अर्थ कल्किकी छठी शताब्दि है, ६०० संवत् नहीं, या कल्कि संवत् ६०० को कल्किका 'मृत्यु संवत्' मान लेना चाहिए जो कि उसके जन्मसे ७२ वर्ष पीछे सुरू होता है। हरिवंशपुराणमें उसकी आयु ७२ वर्षकी बतलाई गई है। मृत्युसंवत् माननेसे गोम्मटेशकी प्रतिष्ठाका समय शक संवत् ९२२ के लगभग आ जायगा जो कि संभव है।

इस तरह ये दोनों ही सन्देह दूर हो जाते हैं और नेमिचन्द्र तथा चामुण्डरायका समय शककी दसवीं शताब्दिका प्रारंभ निश्चित हो जाता है।

जैनसाहित्यमें चामुण्डरायकी बहुत बड़ी प्रसिद्धि है। ये ब्रह्मक्षत्रिय वैश्य कुलमें उत्पन्न हुए थे। जैसा कि पूर्वमें कहा जा चुका है, ये गंगवंशीय महाराज राचमल्लके प्रधान मंत्री और सेनापति थे। श्रवणबेलगुलकी जगत्प्रसिद्ध बाहुबलि या गोम्मटस्वामीकी प्रतिमा इन्हींने प्रतिष्ठित कराई थी। नेमिनाथ भगवान्की इन्द्रनील मणिकी प्रतिमा—जो एक हाथ ऊँची कही जाती है—उन्हींकी बनवाई हुई है। गोम्मटसारमें इस प्रतिमाका उल्लेख है। ये बड़े ही उदार थे। इनकी उदारतासे प्रसन्न होकर 'राचमल्ल' ने इन्हें रायकी पदवी थी। इनका एक नाम

'अण्ण' भी था। ये बड़े शूर और पराक्रमी थे। गोविन्दराज, बेकोंडुराज आदि अनेक राजाओंको इन्होंने पराजित किया था, इस लिए इन्हें समरधुरन्धर, वीरमार्तण्ड, रणरंगसिंह, वैरिकुलकालदण्ड, सगरपरशुराम, प्रतिपक्षराक्षस आदि अनेक उपनाम प्राप्त थे। जैनधर्मके ये बहुत बड़े श्रद्धालु और विद्वान् थे, इस कारण जैन विद्वानोंने इन्हें सम्यक्त्वरत्नाकर, शौचाभरण, सत्ययुधिष्ठिर, गुणरत्नभूषण, आदि अनेक प्रशंसासूचक पद दिये थे। गोम्मटेशकी प्रतिमाके कारण इनकी इतनी प्रसिद्धि हुई थी कि इनका नाम ही 'गोम्मटराय' पड़ गया था। नेमिचन्द्र स्वामीने इन्हें कई स्थानोंमें इसी नामसे स्मरण किया है। ये अजितसेन नामक आचार्यके शिष्य थे। यथा—

जम्हि गुणा विस्संता गणहरदेवादि इड्डिपत्ताणं।
सो अजियसेणणाहो जस्स गुरू जयउ सो राओ॥ ९६६॥

—कर्मकाण्ड।

जीवकाण्डके अन्तमें भी कहा है:—

अज्जज्जसेणगुणगणसमूहसंधारि अजियसेणगुरू।
भुवणगुरू जस्स गुरू सो राओ गोम्मटो जयऊ॥

इससे यह भी मालूम होता है कि अजितसेनाचार्य आर्यसेनके शिष्य थे।

राजा राचमल्ल भी जैनधर्मका अनुयायी था और वह भी अजितसेनको अपना गुरु मानता था। यह राजा जिस वंशका था, वह गंगवंश जैनधर्मका ही उपासक रहा है।

चामुण्डरायपुराण, गोम्मटसारकी कर्नाटवृत्ति, और चारित्रसार * ये तीन ग्रन्थ चामुण्डरायके बनाये हुए प्रसिद्ध हैं। इनमेंसे पहले दो कनड़ी भाषामें और पिछला संस्कृतमें है। इससे मालूम होता है कि

* यह ग्रन्थ इसी ग्रन्थमालामें प्रकाशित हो चुका है।

वे कनड़ी और संस्कृत दोनों ही भाषाओंके पण्डित थे । बाहुबलिचरितके कर्त्ताने राजा राचमल्लका उल्लेख कर चुकनेके बाद इनके विषयमें नीचे लिखा प्रशंसात्मक श्लोक लिखा है:—

तस्यामात्यशिखामणिः सकलवित्सम्यक्त्वचूडामणि-
र्भव्याम्भोजविबोधनमणिः सुजनवन्दिव्रातचूडामणिः ।
ब्रह्मक्षत्रियवैश्यशुक्तिसुमणिः कीर्त्यौघमुक्तामणिः
पादन्यासमहीशमस्तकमणिश्चामुण्डभूपोऽग्रणीः ॥

आचार्य नेमिचन्द्रने भी चामुंण्डरायकी बहुत प्रशंसा की है । अपने प्रत्येक ग्रन्थमें उन्होंने गोम्मटराय या चामुण्डरायकी विजयकी आकांक्षा प्रकट की है । दिगम्बर सम्प्रदायके शायद किसी भी ग्रन्थमें किसी राजा या मंत्रीकी किसी आचार्यद्वारा इतनी जय न मनाई गई होगी । इससे मालूम होता है कि चामुण्डरायकी जैनधर्म पर और जैनाचार्यों पर बहुत बड़ी कृपा रहती थी ।

आचार्य नेमिचन्द्रके बनाये हुए गोम्मटसार, लब्धिसार और त्रिलोकसार ये तीन ही ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं । बाहुबलिचरितके कर्ताने भी इन्हीं तीन ग्रन्थोंका उल्लेख किया है:—

सिद्धान्तामृतसागरं स्वमतिमन्थक्ष्माभृदालोढ्यमध्ये (?)
लेभेऽभीष्टफलप्रदानपि सदा देशीगणाग्रेसरः ।
श्रीमद्गोमट-लब्धिसारविलसत्त्रैलोक्यसारामर—
क्ष्माजश्रीसुरधेनुचिन्तितमणीन् श्रीनेमिचन्द्रो मुनिः ॥

इस श्लोकसे जैसा कि हम पहले लिख चुके हैं यह भी प्रकट होता है कि गोम्मटसार आदि ग्रन्थोंकी रचना सिद्धान्तग्रन्थोंको मथन करके, उन्हींका सारसंग्रह करके, की गई है । त्रिलोकसारके विषयमें हमारा यह खयाल है कि यह ग्रन्थ ‘ तिलोयपण्णत्ति ’ या ‘ त्रिलोकप्रज्ञप्ति ’ के आधारसे लिखा गया है ।

'द्रव्यसंग्रह' नामक ग्रन्थ भी आचार्य नेमिचन्द्रका बनाया हुआ माना जाता है; परन्तु जैसा कि बाबू जुगलकिशोरजीने प्रकट किया है. जान पड़ता है कि द्रव्यसंग्रहके कर्ता इनसे भिन्न कोई दूसरे ही आचार्य थे। क्योंकि द्रव्यसंग्रहके कर्ताने भावास्रवके भेदोंमें प्रमादका भी वर्णन किया है और अविरतके पाँच तथा कषायके चार भेद ग्रहण किये हैं; * परन्तु गोम्मटसारके कर्ताने प्रमादको भावास्रवके भेदोंमें नहीं माना और अविरतके दूसरे ही प्रकारके बारह तथा कषायके पच्चीस भेद स्वीकार किये हैं × यदि दोनोंके कर्ता एक होते, तो उनके कथनमें यह विभिन्नता न होती।

त्रिलोकसार-व्याख्याके कर्त्ता श्रीमाधवचन्द्र त्रैविद्यदेव हैं जैसा कि टीकाकी उपान्त्य गाथासे मालूम होता है। आचार्य नेमिचन्द्रके ये प्रधान शिष्य मालूम होते हैं। मूल ग्रन्थमें भी इनकी बनाई हुई कई गाथायें सम्मिलित हैं और वे मूलकर्त्ताकी आज्ञानुसार शामिल की गई हैं। गोम्मटसारमें भी इनकी कई गाथायें संग्रह की गई हैं, जो संस्कृत टीकाकी उत्थानिकासे मालूम होती हैं। संस्कृत गद्यरूप क्षपणासार भी-जो कि लब्धिसारमें शामिल है-इन्हीं माधवचन्द्रका बनाया हुआ है। त्रैविद्यदेव इनकी पदवी थी। इससे मालूम होता है, कि ये भी अच्छे विद्वान् थे। इनके बनाये हुए और किसी ग्रन्थका हमें परिचय नहीं है।

चन्दाबाड़ी, बम्बई।
वैशाख शुक्ल १३
सं० १९७५ वि०। } **नाथूराम प्रेमी।**

---

* मिच्छत्ताविरदपमादजोगकोहादओ थ विण्णेया।
पण पण पणदह तिय चदु कमसो भेदा दु पुव्वस्स ॥ ३० ॥
—द्रव्यसंग्रह।

× मिच्छत्तमविरमणं कसायजोगा य आसवा होंति।
पणबारस पणवीसं पण्णरसा होंति तब्भेया ॥ ७८६ ॥
— कर्मकाण्ड।

ॐ

श्रीनेमिचंद्राय नमः ।

श्रीमन्नेमिचंद्राचार्यविरचितः

त्रिलोकसारः ।

(टीकासहितः)

श्रीमन्माधवचंद्राचार्यविरचिता संस्कृतटीका ।

त्रिभुवनचंद्रजिनेंद्रं भक्त्यानत्य त्रिलोकसारस्य ।
वृत्तिरियं किंचिज्ज्ञप्रबोधनाय प्रकाश्यते विधिना ॥ १ ॥
जीयादकलंकाचार्यस्सूरिर्गुणभूरिरतुलवृषधारी ।
अनवरतविनताजिनमताविरोधिवादिव्रजो जगति ॥ २ ॥
यस्मादखिलबुधानां विस्मयकृद्भूत् प्रवृत्तिरिह यस्य ।
तच्छासनमपनुदतादनघं घनकुमततिमिरनिवहमतः ॥ ३ ॥

श्रीमदप्रतिहताप्रतिमनिःप्रतिपक्षनिःकरण—निःक्रमकेवलज्ञानतृतीयलोचनावलोकितसकलपदार्थेन संरक्षितामरेंद्रनरेंद्रमुनीन्द्रादिसार्थेन तीर्थकरपुण्यमहिमावष्टंभसंभूतसमवसरणप्रातिहार्यातिशयादिबाहिरंगलक्ष्मी विशेषेण निर्मूलीकृताष्टादशदोषेण सर्वांगसमालिंगितानंतचतुष्टयादिगुणगणात्मकांतरंगलक्ष्मीप्रकटितपरमात्मप्रभावेण श्रीवर्धमानतीर्थंकरपरमदेवेन सर्वभाषास्वभावदिव्यभाषाभाषितार्थं सप्तर्धिसमृद्धगौतमस्वामिना विश्वविद्यापरमेश्वरेण

श्रुतकेवलिना विरचितशब्दरचनाविशेषं तदर्थज्ञानविज्ञानसंपन्नवर्ज्यभीरु-गुरुपर्वक्रमेणाव्युच्छिन्नतया प्रवर्तमानमविनष्टसूत्रार्थत्वेन केवलज्ञानसमानं करणानुयोगनामानं परमागमं कालानुरोधेन संक्षिप्य निरूपयितुकामो भगवान्नेमिचंद्रसैद्धांतदेवश्चतुरनुयोगचतुरुदधिपारगश्चामुंडरायप्रतिबोधनव्याजेनाशेषविनेयजनप्रतिबोधनार्थं त्रिलोकसारनामानं ग्रंथमारचयन् तदादौ निर्विघ्नतः शास्त्रपरिसमाप्त्यादिकं फलकुलमवलोक्य विशिष्टेष्टदेवतामभिष्टौति;—

बलगोविंदसिहामणिकिरणकलावरुणचरणणहकिरणं
विमलयरणेमिचंदं तिहुवणचंदं णमंसामि ॥ १ ॥

बलगोविन्दशिखामणिकिरणकलापारुणचरणनखकिरणम् ।
विमलतरनेमिचंद्रं त्रिभुवनचंद्रं नमस्यामि ॥ १ ॥

अस्यार्थः कथ्यते । **णमंसामि** नमस्यामि नमस्करोमि । कं । **विमलयरणेमिचंदं** विमलतरनेमिचंद्रं, विगतं मलं द्रव्यभावात्मकं आत्मगुणघातिकर्म देहधातवो वा यस्मादसौ विमलः स्वयं विशुद्धेरुदयस्य परमकाष्ठामधिष्ठितः सन्नन्येषामप्यात्माश्रितानां कर्ममलक्षालनहेतुत्वादतिशयेन विमलो विमलतरः । अनेनापायातिशयः प्रकाशितः । नेमिचंद्रो द्वाविंशतीर्थकरपरमदेवः विमलतरनेमिचंद्रस्तं । कथंभूतं । 'त्रिभुवनचंद्रं' त्रिभुवनानां चंद्र इव चंद्रः प्रकाशकस्तं त्रिलोकानां स्वरूपोपदेशकं तत्स्वरूपपरिच्छेदकं वेत्यर्थः । एतेन वागतिशयः प्राप्त्यतिशयो वा प्रतिपादितः । अवसरोचितं वैतद्विशेषणं । त्रयाणां भुवनानां स्वरूपनिरूपणे बद्धव्यवसायस्याचार्यस्य शब्दज्योतिषा ज्ञानज्योतिषा च तत्स्वरूपप्रकाशकस्यैव नमस्कारकरणं समुचितमेवेति । पुनरपि कथंभूतं । 'बलगोविंदशिखामणिकिरणकलापारुणचरणनखकिरणं' निजपादपद्मावनतपद्मपद्मनाभचूडाग्रसद्मपद्मरागमणिमरीचिजालबालातपमंजरीपिंजरितपदकंजनखमरीचिपुंजमित्यर्थः । अनेन भगवतः पूजातिशयः शेषातिशयाविनाभावी निवेदितः । अत्रो-

पयोगी श्लोकः । "अपायप्रातिवाक्पूजा विहारास्थायिका तनु–। प्रवृत्तय इति ख्याता जिनस्यातिशया इमे ॥ " । अथवा नमस्यामि नमामि । कं । विमलतरनेमिचंद्रं, नेमिश्चक्रधारा नेमिरिव नेमिः धर्मरथप्रवर्तकत्वात् । चंद-यत्याह्लादयति भव्यजननयनमनांसीति चंद्रः इंद्रायसंभविरूपातिशयसंपन्न इत्यर्थः । नेमिश्चासौ चंद्रश्च नेमिचंद्रः विमलतरश्चासौ नेमिचंद्रश्च विमल-तरनेमिचंद्रः । अथवा यथावस्थितमर्थं नयति परिछिनत्तीति नेमिर्बोधः विगतं मलमज्ञानं यस्मादसौ विमलः अतिशयेन विमलो विमलतरः विमलत-रश्चासौ नेमिश्च विमलतरनेमिः सकलविमलकेवलज्ञानमिति यावत् तेनोप ल-क्षितश्चंद्रो विमलतरनेमिचंद्रः। अथवा विमलतरा रत्नत्रयपवित्रात्मानस्तयेव नेमयो नक्षत्राणि तेषां चंद्र इव चंद्रः स्वामी तं विमलतरनेमिचंद्रमंतिमतीर्थ-करस्वामिनं चतुर्विंशतितीर्थकरं समुदायं वेत्यर्थः । किं विशिष्टं । त्रिभुवनचंद्रं। त्रिभुवनशब्देनात्र त्रिभुवनस्था विनेया ग्राह्याः तेषां चंद्र इव चंद्रः अज्ञानत-मोविनाशकस्तं। भूयःकिंभूतं । 'बल-किरणं' बलं जंबूद्वीपपरावर्तनलक्षणं सत्त्वं प्रतींद्रादिकं देवसैन्यं अतिमनोहरं रूपं वा विद्यते अस्येति बलः । अत्रोपयोगी श्लोकः। "बलं शक्तिर्बलं सैन्यं बलं स्थौल्यं बलो बलः। बलं रूपं बलो दैत्यो बलः काको बली बलः॥" । गां स्वर्गं विंदति पालयतीति गोविंदो देवेंद्रः बलश्चासौ गो-विंदश्च बलगोविंदःतस्य शिखेत्यादि शब्दार्थः सुबोधः । भक्तिभरविनतशतमख-प्रमुखनिखिललेखशिखामणिमयूखमालारुणीकृतचरणनखकिरणमिति तात्प-र्यार्थः। अथवा। णमंसामि। कं। 'विमलयरणेमिचंदं' पंचविंशतिमलरहितस-मक्त्वसमन्वितत्वाद्विशुद्धज्ञानसमृद्धत्वान्निरतिचारचारुचरित्रपवित्रीभूतत्वाद्वा विमलतरः स चासौ नेमिचंद्राचार्यश्च विमलतरनेमिचंद्रस्तं नमस्यामीति चामुंडरायः स्वगुरुनमस्कारपूर्वकं शास्त्रमिदं प्रारभते। कथंभूतं तं। त्रिभुवनचंद्रं चंद्र इव चंद्रो धर्मामृतस्यंदित्वात् । अथवा चंद्रं कांचनं सर्वजनैरादेयत्वात् । त्रिभुवनानां चंद्रस्त्रिभुवनचंद्रस्तं । पुनरपि कथंभूतं । बल......किरणं बलं द्वासप्ततिनियोगवर्तनलक्षणं हस्त्यादिकं वा अस्येति बलश्चामुंडरायः गां पृथ्वीं

विंदति पालयतीति गोविंदो राचमल्लदेवः बलश्च गोविंदश्च बलगोविंदौ तयोः शिखेत्यादि पूर्ववत् ॥ १ ॥

अथ प्रथमद्वितीयगाथाद्वयकृतचैत्यचैत्यालयनमस्कारकरणेन नवदेवतानमस्कारं कुर्वन् ग्रंथस्य पंचाधिकारं सूचयन्नाह;—

भवणव्विंतरजोइसविमाणणरतिरियलोयजिणभवणे ।
सव्वामरिंदणरवइसंपूजियवंदिए वंदे ॥ २ ॥

भवनव्यंतरज्योतिर्विमाननरातिर्यग्लोकजिनभवनानि ।
सर्वामरेंद्रनरपतिसंपूजितवंदितानि वंदे ॥ २ ॥

भवण । भवनव्यंतरज्योतिर्विमाननरतिर्यग्लोकजिनभवनानि सर्वामरेंद्रनरपतिसंपूजितवंदितानि वंदे ॥ २ ॥

अथ तानि जिनभवनानि कुत्रेत्याशंकायामाह;—

सव्वागासमणंतं तस्स य बहुमज्झदेसभागम्हि ।
लोगोसंखपदेसो जगसेढिघणप्पमाणो हु ॥ ३ ॥

सर्वाकाशमनंतं तस्य च बहुमध्यदेशभागे ।
लोकोऽसंख्यप्रदेशो जगच्छ्रेणिघनप्रमाणो हि ॥ ३ ॥

सव्व । सर्वाकाशमनंतं तस्य च बहुमध्यदेशभागे, बहवः अतिशयिताः रचनीकृताः असंख्याता वाकाशस्य मध्यदेशा यस्य स बहुमध्यदेशः स चासौ भागश्च खंडाः तस्मिन् बहुमध्यदेशभागे । अथवा बहवः अष्टौ गोस्तनाकाराः आकाशस्य मध्यदेशाः मध्यदेशे यस्य स तथोक्तस्तस्मिन् । लोकोस्त्यसंख्यप्रदेशः स च जगच्छ्रेणीघनप्रमाणः खलु ॥ ३ ॥

अथ लोकविप्रतिपत्तिनिरासार्थमाह;—

लोगो अकिट्टिमो खलु अणाइणिहणो सहावणिव्वत्तो ।
जीवाजीवेहिं फुढो सव्वागासवयवो णिच्चो ॥ ४ ॥

लोकः अकृत्रिमः खलु अनादिनिधनः स्वभावनिर्वृत्तः ।
जीवाजीवैः स्फुटः सर्वाकाशावयवः नित्यः ॥ ४ ॥

लोगो । अधिकारागतस्य लोकपदस्य पुनरुपादानं लोकमनूद्य दूषणार्थं । लोकोस्तीति । अनेन विशेषणेन शून्यवादनिराकृतिः कृता । अकृत्रिमः खलु, अनेनेश्वरकर्तृकत्वं निराकृतम् । अनादिनिधनः । अनेन सृष्टिसंहारनिराकरणं । स्वभावनिर्वृत्तः । अनेन परमाण्वारब्धतानिराकृतिः । जीवाजीवैः स्फुटः अनेन मायावादिनिराकरणं । सर्वाकाशावयवः । अनेन अलोकाभाववादापहारः । नित्यः । अनेन क्षणिकमतनिरासः । एतावता कथनेन लोक्यत इति लोकः इति षड्द्रव्यसमवायस्य लोकत्वमुक्तम् ॥ ४ ॥

इदानीं तदाधारस्याकाशस्य लोकत्वमुच्यते;—

धम्माधम्मगासा गदिरागदि जीवपोग्गलाणं च ।
जावत्तावल्लोगो आयासमदो परमणंतं ॥ ५ ॥

धर्माधर्माकाशा गतिरागतिः जीवपुद्गलयोः च ।
यावत्तावल्लोक आकाशं अतः परमनंतम् ॥ ५ ॥

धम्मा । धर्माधर्माकाशा गतिरागतिर्जीवपुद्गलयोः चकारात् कालाणवश्च यावदाकाशमभिव्याप्य वर्तंते तावदाकाशं लोक, अतः परमाकाशमनंतं न संख्यातादि ॥ ५ ॥

अथ परपरिकल्पितलोकसंस्थाननिराकरणार्थमाह;—

उब्भियदलेक्कमुरवद्धयसंचयसण्णिहो हवे लोगो ।
अद्धुदयो मुरवसमो चोद्दसरज्जूदओ सव्वो ॥ ६ ॥

उद्भूतदलैकमुरजध्वजसंचयसन्निभो भवेत् लोकः ।
अर्धोदयः मुरजसमः चतुर्दशरज्जूदयः सर्वः ॥ ६ ॥

उब्भिय । उर्द्धीभूतदलमुरजैकमुरजसन्निभः । अत्र शून्यतानिराकरणार्थं ध्वजसंचयसन्निभो भवेल्लोकः । अर्धमुरजोदयः एकमुरजोदयसमः मिलित्वा सर्वलोकश्चतुर्दशरज्जूदयः ॥ ६ ॥

अथ प्रसंगायातरज्जुप्रतीत्यर्थमाह;—

जगसेढिसत्तभागो रज्जू सेढीवि पल्लछेदाणं ।
होदि असंखेज्जदिमप्पमाणविंदंगुलाण हदी ॥ ७ ॥

जगच्छ्रेणिसप्तमभागः रज्जुः श्रेणिरपि पल्यच्छेदानाम् ।
भवति असंख्येयप्रमाणवृंदांगुलानां हतिः ॥ ७ ॥

जग । अंकसंदृष्टिप्रदर्शनद्वारेण गाथार्थो विव्रियते । जगच्छ्रेण्याः १८-४२-सप्तमभागो रज्जुः । श्रेणिरपि केत्यत्रोच्यते । पल्य १६ छेदानां ४ असंख्येय भाग २ प्रमितवृंदांगुलानां परस्परा हतिः श्रेणिः ॥ ७ ॥

अथ वृंदांगुलप्रतिपत्त्यर्थमाह;-

पल्लछिदिमेत्तपल्लाणण्णोण्णहदीए अंगुलं सूई ।
तव्वग्गघणा कमसो पदरघणंगुल समक्खादो ॥ ८ ॥

पल्यच्छेदमात्रपल्यानामन्योन्यहत्या अंगुलं सूची ।
तद्वर्गघनौ क्रमशः प्रतरघनांगुले समाख्याते ॥ ८ ॥

पल्ल । पल्य १६ छेद ४ मात्रपल्यानां अन्योन्यहत्या सूच्यंगुलं ६५ तद्वर्गघनौ प्रतर ४२ घनांगुले ४२×६५ क्रमशः समाख्याते ॥ ८ ॥

अथ मानप्रतीत्यर्थं प्रक्रियामाह;—

माणं दुविहं लोगिग लोगुत्तरमेत्थ लोगिगं छद्धा ।
माणुम्माणोमाणं गणिपडितप्पडिपमाणमिदि ॥ ९ ॥

मानं द्विविधं लौकिकं लोकोत्तरमत्र लौकिकं षोढा ।
मानोन्मानावमानं गणिप्रतितत्प्रतिप्रमाणमिति ॥ ९ ॥

माणं । मानं द्विविधं लौकिकं लोकोत्तरमिति । अत्र लौकिकं षोढा मानोन्मानावमानगणिमानप्रतिमानतत्प्रतिमानमिति ॥ ९ ॥

एतेषां षण्णां यथासंख्यं दृष्टांतमुखेनोपपत्तिमाह;—

पत्थतुलचुलयएगप्पहुदी गुंजातुरंगमोल्लादी ।
दव्वं खित्तं कालो भावो लोगुत्तरं चदुधा ॥ १० ॥

प्रस्थतुलाचुलकैकप्रभृति गुंजातुरंगमूल्यादि ।
द्रव्यं क्षेत्रं कालो भावो लोकोत्तरं चतुर्धा ॥ १० ॥

पत्थ । प्रस्थप्रभृति तुलाप्रभृति चुलकप्रभृति एकप्रभृति गुंजादि तुरंगमूल्यादीति । इतो लोकोत्तरमानभेद उच्यते । द्रव्यं क्षेत्रं कालो भाव इति लोकोत्तरं चतुर्धा ॥ १० ॥

अथ तेषां चतुर्णां यथासंख्येन जघन्योत्कृष्टप्रतीत्यर्थं गाथाचतुष्टयमाह;—

परमाणु सयलदव्वं एगपदेसो य सव्वमागासं ।
इगिसमय सव्वकालो सुहुमणिगोदेसु पुण्णेसु ॥ ११ ॥

परमाणुः सकलद्रव्यं एकप्रदेशः च सर्वमाकाशम् ।
एकसमयः सर्वकालः सूक्ष्मनिगोदेषु अपूर्णेषु ॥ ११ ॥

परमाणु । परमाणुः सकलद्रव्यं एकप्रदेशः सर्वमाकाशं एकसमयः सर्वकालः सूक्ष्मनिगोदलब्ध्यपर्याप्तकेषु ॥ ११ ॥

णाणं जिणेसु य कमा अवर वरं मज्झिमं अणेयविहं ।
दव्वं दुविहं संखा उवमपमा उवम अट्ठविहं ॥ १२ ॥

ज्ञानं जिनेषु च क्रमात् अवरं वरं मध्यमं अनेकविधम् ।
द्रव्यं द्विविधं संख्या उपमाप्रमा उपममष्टविधम् ॥ १२ ॥

णाणं । जिनेषु च ज्ञानं क्रमाज्जघन्यमुत्कृष्टं मध्यमं अनेकविधं । तत्रापि द्रव्यं द्विविधं संख्याप्रमाणमुपमाप्रमाणमिति । तत्रोपमाप्रमाणमष्टविधं । अल्पवक्तव्यमादौ वक्तव्यमिति न्यायेन यथोक्तोद्देशेन निर्देशं मुक्त्वा उपमाभेद उच्यते । उपमा अष्टविधेति ॥ १२ ॥

कारणप्रतिपत्तिपूर्वकत्वात् कार्यप्रतिपत्तेरिति तामपि त्यजति;—

तं उवरि भणिस्सामो संखेज्जमसंखणंतमिदि तिविहं ।
संखंतिल्लदु तिविहं परित्तजुत्तंति दुगवारं ॥ १३ ॥

ता उपरि भणिष्यामः संख्येयं असंख्यं अनंतमिति त्रिविधम् ।
संख्यं अंतिमद्विकं त्रिविधं परीतं युक्तं इति त्रिकवारम् ॥ १३ ॥

तं उवरि । तामुपरि भणिष्याम इति । अवशिष्टभेद उच्यते—संख्येयं असंख्यं अनंतमिति त्रिविधं । संख्यं अंतिमद्विकं त्रिविधं—परीतं युक्तं द्विकवारमिति ॥ १३ ॥

ते अवर मज्झ जेट्ठं तिविहा संखेज्जजाणणणिमित्तं ।
अणवत्थ सलागा पडिमहासला चारि कुंडाणि॥ १४ ॥

तानि अवरं मध्यं ज्येष्ठं त्रिविधा संख्येयज्ञाननिमित्तम् ।
अनवस्था शलाका प्रतिमहाशला चत्वारि कुंडानि ॥ १४ ॥

ते अवर । तानि सप्तापि स्थानानि जघन्यं मध्यमं उत्कृष्टमिति त्रिधा। संख्येयज्ञाननिमित्तं अनवस्था शलाका प्रतिशलाका महाशलाकेति च चत्वारि कुंडानि कल्पयितव्यानि ॥ १४ ॥

अथ चतुर्णां कुंडानां व्यासादिप्रतीत्यर्थमाह;—

जोयणलक्खं वासो सहस्समुस्सेहमेत्थ सव्वेसिं ।
दुप्पहुदिसरिसवेहिं अणवत्था पूरयेदव्वा ॥ १५ ॥

योजनलक्षं व्यासः सहस्रमुत्सेध अत्र सर्वेषाम् ।
द्विप्रभृतिसर्षपैः अनवस्था पूरयितव्या ॥ १५ ॥

जोयण । योजनलक्षं व्यासः सहस्रमुत्सेधः स्यात् । अत्र सर्वेषां कुंडानां द्विप्रभृतिसर्षपैरनवस्था पूरयितव्या ॥ १५ ॥

द्विप्रभृतिभिरिति किमित्याशंकामपनुदन्नाह;—

एयादीया गणणा बीयादीया हवंति संखेज्जा ।
तीयादीणं णियमा कदित्ति सण्णा मुणेदव्वा ॥१६॥

एकादिका गणना द्व्यादिकाः भवंति संख्याताः ।
त्र्यादीनां नियमात् कृतिरिति संज्ञा मंतव्या ॥ १६ ॥

एया । एकादिका गणना द्व्यादिका संख्याता भवंति त्र्यादीनां नियमात् कृतिरिति संज्ञा ज्ञातव्या । यस्य कृतौ मूलमपनीय शेषे वर्गिते वर्धिते सा कृतिरिति । एकस्य द्वयोश्च कृतिलक्षणाभावात् एकस्य नो कृतित्वं द्वयोर-वक्तव्यमिति कृतित्वं त्र्यादीनामेव तल्लक्षणयुक्तत्वात् कृतित्वं युक्तम् ॥१६॥

अथोक्तयोजनलक्षव्यासकुंडस्य समस्तक्षेत्रफलज्ञापनार्थमाह;—

वासो तिगुणो परिही वासचउत्थाहदो दु खेत्तफलं ।
खेत्तफलं वेहगुणं खादफलं होइ सव्वत्थ ॥ १७ ॥

व्यासस्त्रिगुणः परिधिः व्यासचतुर्थाहतस्तु क्षेत्रफलम् ।
क्षेत्रफलं वेधगुणं खातफलं भवति सर्वत्र ॥ १७ ॥

वासो । व्यासत्रिगुणः परिधिः, व्यासचतुर्थाहतस्तु क्षेत्रफलं, क्षेत्रफलं वेधगुणितं खातफलं भवति सर्वत्र कुंडेषु ॥ १ ल. व्यासः ×३=३ ल. परिधिः । $\frac{1}{4}$ ल. ×३ ल. क्षेत्रफलं । ३×$\frac{1}{4}$×१००० वे=खातफलं॥ अथ व्यासत्रिगुण इत्यस्य वासना कथ्यते । योजनलक्षव्यासवृत्तं अर्धीकृत्य तदर्द्धं पुनरप्यर्द्धीकृत्य मध्यमखंडद्वयमेलने अर्द्धं स्यात् । पुनः परिधेः षष्ठांशं गत्वार्धीकृत्य एतदर्द्धद्वयं प्रत्येकमर्धीकृत्य मध्यमखंडद्वयमेलने अपरैकार्धं स्यात् । पुनरपि तथा षष्ठांशं गत्वा तथाकृते षडर्धानि भवंति । तेषां षण्णां मेलने $\frac{6}{2}$ ल. अपहृते च व्यासत्रिगुण इत्यस्य वासना भवति ॥ इदानीं व्यासचतुर्थाहत इत्यस्य वासना निरूप्यते । शष्कुलीजाततद्व्यासकुंडं १ ल ऊर्द्धादधः मध्य-

पर्यंतं छित्वा विरलय्यायतत्रिकोणं संस्थाप्य पुनरपि मुखभूमिसमासार्धं मध्यफलमिति मध्यफलं साधयित्वा $\frac{1}{4}$ ल. तत्पर्यंतमूर्ध्वादधः छित्वा खंड-द्वये चायतचतुरस्रं यथाभवति तथा क्रमहीनपार्श्वद्वये स्थापिते क्षेत्रस्य व्यासचतुर्थाहतत्वं भवति ॥ १७ ॥

स्थूलक्षेत्रफलप्रमाणयोजनस्य व्यवहारयोजनादिकं कुर्वन्नाह;—

थूलफलं ववहारं जोयणमवि सरिसवं च कादव्वं ।
चउरस्ससरिसवा ते णवसोडस भाजिदा वट्टं ॥ १८ ॥

स्थूलफलं व्यवहारं योजनमपि सर्षपश्च कर्तव्यः ।
चतुरस्रसर्षपास्ते नवषोडश भाजिता वृत्तम् ॥ १८ ॥

थूलफलं। स्थूलफलं ३×$\frac{1}{4}$×१००० एतत्। एकप्रमाणयोजनस्य पंचशत् व्यवहारयोजनानि इयतां प्रमाणयोजनानां किमिति त्रैराशिकविधिना व्यवहारयोजनं कर्तव्यं। अपिशब्दात् पुनरपि त्रैराशिकविधिनैव योजन प्र. १ क्रोश ४ । क्रोश १ दंड २००० । दंड १ हस्त ४ । हस्त १ अंगुल २४ परस्परगुणनेनैव कृतैकयोजनांगुलानि ७६८००० यवश्च ८ कर्तव्यानि सर्षपश्च ८ कर्तव्यः। घनराशेर्गुणकारभागहारौ घनरूपेण भवत इति न्यायेन एते सर्वे गुणकाराः घनरूपेण भवंति । एते सर्वे चतुरस्रसर्षपा भवंति । त एते नव षोडश $\frac{9}{16}$ भक्ता वृत्तसर्षपा भवंति । " हारस्य हारो गुणकोंश-राशेः " इति षोडशापि गुणकारो भवति । तत्रैकाष्टकं द्विकरूपेण विरलय्य २।२।२ पंचशतानि गुणयित्वा तत्र राशौ स्थितानि सर्वाणि शून्यानि एकत्रिंशत्संख्याकानि पृथक् कर्तव्यानि । पुनरप्येकाष्टकं तथा विरलय्य तैरष्टत्रिकं ८।८।८ गुणयित्वा १६।१६।१६ प्राक्तनषोडशसाहितचतुःषोड-शानां परस्परगुणने पण्णट्ठि ६५५३६ अंगुलांकं त्रिभिर्भेदयित्वा बेसदछ-प्पण्णद्वयगुणने पण्णट्ठिर्जाता, पण्णट्ठ्योर्द्वयोर्गुणने बादालमभूत्। परस्परगु-णितात्रिकद्वयं ९ अवशिष्टाष्टकेन भागहारचतुर्भिः समं चतुर्भिरपवर्तितेन

२ गुणयेत्। अपरत्रिकद्वयं संगुण्य ९ भागहारेण नवभिः सममपवर्तयेत् राशिर्भवति।४२=।२५६।१८।३१०॥ १८॥

अथ नवषोडशभाजिता वट्टमित्यस्य वासनारूपनिष्पन्नक्षेत्रफलमुच्चारयति;--

वासद्धघणं दलियं णवगुणियं गोलयस्स घणगणियं।
सव्वेसिंपि घणाणं फलत्तिभागप्पिया सूई ॥ १९ ॥

व्यासार्द्धघनः दलितः नवगुणितः गोलकस्य घनगुणितम्।
सर्वेषामपि घनानां फलत्रिभागात्मिका सूची ॥ १९ ॥

वासद्ध। व्यासार्धघनो दलितः नवगुणितो गोलकस्य घनगुणितं सर्वेषां घनानां फलत्रिभागात्मकं सूचीफलं भवति॥ णवसोडसभाजिदा वट्टमित्यस्य वासना निरूप्यते। एकव्यासैकखातगोलकमर्धीकृत्यार्द्धमपहाय अवशिष्टार्द्धं पुनरपि खंडत्रयं कृत्वा तत्राप्येकखंडं गृहीत्वा तदप्यूर्ध्वादधश्छित्वा चतुरस्रं यथा तथा संस्थाप्य तत्र गोलकस्य बहुमध्यदेशे विवक्षितवेधसद्भावोस्ति। पार्श्वेषु क्रमहानिसद्भावात्समीकरणमर्थं हीनस्थाने एता वट्टणं निक्षिप्य समस्थले सति तदपि पुनस्तिर्यग्मध्यं छित्वा उपरि संस्थाप्य समच्छेदेन ऋणमपनीय "भुजकोटी" इत्यादिना खातफलमानीय एकखंडस्यैतावति षण्णां खंडानां किं फलमिति संपात्यापवर्त्य गुणिते गोलकस्य घनगुणितमेव नव षोडशभाजितेत्यस्य वासना जाता। त्रिभुजचतुर्भुजवृत्तक्षेत्राणां फलं "मुखभूमि जोग" इत्यादिना "भुजकोडी" इत्यादिना "वासो तिगुण" इत्यादिना यथाक्रममानीय त्रिभिर्भक्ते तत्तत्सूचीफलं भवति॥ १९॥

अथ स्थूलफलराशिमुच्चारयाति;--

वादालं सोलसकदिसंगुणिदं दुगुणणवसमब्भत्थं।
इगितीससुण्णसहियं सरिसवमाणं हवे पढमे ॥२०॥

बादालं षोडशकृतिसंगुणितं द्विगुणनवसमभ्यस्तम् ।
एकत्रिंशत्शून्यसहितं सर्षपमानं भवेत् प्रथमे ॥ २० ॥

बादालं । बादालं ४२ षोडशकृति २५६ संगुणितं द्विगुणनव १८ समभ्यस्तं एकत्रिंशत्शून्यसहितं सर्षपमानं भवेत् प्रथमे कुंडे ॥ २० ॥

अथैतद्गुणितफलमुच्चारयति;—

विधुणिधिणगणवरविणभणि-
धिणयण-बलद्धिणिधिखराहत्थी ।
इगितीससुण्णसहिया जंबूए लद्धसिद्धत्था॥२१॥

विधुनिधिनगनवरविनभोनिधिनयनबलर्द्धिनिधिखरहस्तिनः ।
एकत्रिंशच्छून्यसहिताः जंबौ लब्धसिद्धार्थाः ॥ २१ ॥

विधु । एकनवसप्तनवद्वादशशून्यनवद्विनवनवनवषडष्टौ एकत्रिंशच्छून्यसहिताः जंबूद्वीपे लब्धसर्षपाः १९७९१२०९२९९९६८००००००००००००००००००००००००००००००० ॥ २१ ॥

सर्वेषां कुंडानां सिद्धशिखाफलमुच्चारयति;—

परिणाहेक्कारसमं भागं परिणाहछट्ठभागस्स ।
वग्गेण गुणं णियमा सिहाफलं सव्वकुडाणं ॥२२॥

परिणाहैकादश भागः परिणाहषष्ठभागस्य ।
वर्गेण गुणं नियमात् शिखाफलं सर्वकुंडानाम् ॥ २२ ॥

परिणा । परिधे (३ ल.) रेकादशमो भागः ($\frac{3}{11}$ ल.) परिधेः षष्ठभागस्य वर्गेण ($\frac{3}{6}$ $\frac{3}{6}$) गुणितो नियमात् शिखाफलं सर्वकुंडानां भवति ॥ अथ सिद्धफलस्य वासना कथमितिचेदाह । व्यासः त्रिगुणः परिधिः (३. ल.) व्यासचतुर्थाहत ($3\times\frac{1}{4}$) स्तु क्षेत्रफलं परिध्यैकादशमभाग-

वेधेन गुणितं फलं " फलत्तिभागप्पिय " इति आगतेन भागहारत्रिकेण समभुपरितनपरिधेः त्रिकमपवर्त्य व्यासचतुर्थांशस्य हारश्चतुष्कं विरलयित्वा गाथोच्चारणार्थमुपर्यधश्च त्रिभिर्गुणितं दृष्ट्वा परिणाहेक्कारसमेत्याद्युक्तं । एतत्स्थूलफलं पूर्ववत् व्यवहारयोजनादिकं कर्तव्यं ॥ २२ ॥

अथ केषां केषां वेधः परिध्येकादशमभाग इत्याह;—

तिलसरिसवबल्लाढइ–चणयतसिकुलत्थरायमासादि।
परिणाहेक्कारसमो वेहो जदि गयणगो रासी ॥ २३ ॥

तिलसर्षपवल्लाढकीचणकातसिकुलत्थराजमाषादेः ।
परिध्येकादशमो वेधो यदि गगनगो राशिः ॥ २३ ॥

तिल । तिलसर्षपवल्लाढकीचणकातसिकुलत्थराजमाषादेः परिध्येकादशमो वेधो यदि गगनराशिः भवेत् ॥ २३ ॥

अथ गुणितराशिमुच्चारयति;—

वेरूवतदियपंचमवग्गं अट्ठारसेहिं संगुणियं ।
तेत्तीससुण्णजुत्तं हरभजिदं जंबुदीवसिहा ॥ २४ ॥

द्विरूपतृतीयपंचमवर्गः अष्टादशैः संगुणितः ।
त्रयस्त्रिंशच्छून्ययुक्तः हरभक्तः जंबूद्वीपशिखा ॥ २४ ॥

वेरूव । द्विरूपवर्गधारातृतीयपंचमवर्गः अष्टादशाभिः संगुणितः त्रयस्त्रिंशच्छून्ययुक्तः हर (एकादश) भक्तश्चेत् जंबूद्वीपशिखाफलं भवति ॥ २४ ॥

अथ सिद्धांकमुच्चारयति;—

इगिसगणवणवदुगणभणभट्ठचउपणचउक्कपणसोलं ।
सोलसछत्तीसजुदं हरहिदचउरो य पढमसिहा॥२५॥

एकसप्तनवनवद्विकनभोनभोष्टचतुःपंचचतुष्कपंचषोडश ।
षोडशषट्त्रिंशद्युतं हरहितचतुष्कं च प्रथमशिखा ॥ २५ ॥

इगि । एकसप्तनवनवद्विकशून्यशून्याष्टचतु:पंचचतुष्कपंचषोडशषोडशषट्त्रिंशद्युतं एकादशभक्तचतुष्कं प्रथमकुंडशिखाफलं भवति ॥ १७९९२००८४५४५१६३६३६३६३६३६३६३६३६३६३६३६३६३६३६-३६३६ $\frac{४}{११}$ ॥ २५ ॥

अथ कुंडशिखयोः फलं मेलयित्वोच्चारयति;—

वासद्धकदी तिगुणा वेहगुणेक्कारसहिदवासगुणा ।
एयारस पविभत्ता इच्छिदकुंडाणमुभयफलं ॥ २६ ॥

व्यासार्धकृतिः त्रिगुणा वेधगुणैकादशसहितव्यासगुणा ।
एकादशप्रविभक्ता इच्छितकुंडानामुभयफलम् ॥ २६ ॥

वासद्ध । व्यासार्धवर्गस्त्रिगुणो वेधगुणितैकादशसहितैकलक्षव्यासगुण एकादशप्रविभक्त ईप्सितकुंडानामुभयफलं भवति । तद्यथा । "वासो-तिगुणो परिही" इत्यादिना कुंडफलमानीतं । "वासो" इत्यादि "परिणाहेक्कारसमं वेधेन गुणितं फलं तिभागप्पिय" इति सूचीफलमानीतं । पश्चात् कुंडफलशिखाफलयोर्द्वयोः परिधिं "वासद्धकदी" इति गाथोच्चारितफलप्रदर्शनार्थं त्रिभिः संभेद्य तात्रिकमुभयत्र गुणकाररूपेण संस्थाप्य यथायोग्यमपवर्त्य समच्छेदेनांकस्यांकं लकारस्य लकारं दर्शयित्वा अधिकलक्षे इतरांक (११०००) मेलने उभयफलं स्यात् । इदं दृष्ट्वा वासद्धकदीत्यादि उक्तं । एतत्स्थूलफलं व्यवहारयोजनादिकं कर्तव्यम् ॥ २६ ॥

अथ राश्यंकमुच्चारयति;—

बादालमट्ठघण इगिहीण सहस्साहदं एगारहिदं ।
इगितीस सुण्णसहियं जंबूदीबुभयासिद्धत्था ॥ २७ ॥

बादलमष्टघनैकहीनसहस्राहतं एकादशाहितम् ।
एकत्रिंशच्छून्यसहितं जंबूद्वीपोभयासिद्धार्थाः ॥ २७ ॥

बादाल । बादालं अष्टघन ५१२ एकहीनसहस्राभ्यां ९९९ आहतं एकादशहृतं एकत्रिंशच्छून्यसहितं जंबूद्वीपप्रमितकुंडाशिखाफलयोः सिद्धार्थाः ॥ २७ ॥

अथ परस्परगुणितांकमुच्चारयति;—

इगि णव णव सगिगिगिदुगणवतिण्णडचउपणेक्कतिगिछक्कं ।
पण्णरछत्तीसजुदं हरहिदचउरो य पढमुभयं ॥२८॥

एक नव नव सप्तैकैकद्विकनवत्रिअष्टचतुःपंचैकत्र्येकषट्कम् ।
पंचदशषट्त्रिंशद्युतं हरहितचतुष्कं च प्रथमोभयम् ॥ २८ ॥

इगिणव । एक नव नव सप्तैकैकद्विकनवत्रिअष्टचतुःपंचैकत्र्येकषट्कम् पंचदशषट्त्रिंशद्युतं हरहितचतुष्कं प्रथमानवस्थोभयफलं स्यात् ॥ १९९७१ १२९३८४५१३१६ ३६ ३६ ३६ ३६ ३६ ३६ ३६ ३६ ३६ ३६ ३६ ३६ ३६ ३६ ३६ $\frac{४}{११}$ ॥ २८ ॥

अथ दुप्पहुदिसरिसवेहिं अणवत्था पूरयेद्व्वा इत्युक्त्वा तत्प्रसक्तानुप्रसक्त्या तदेतत्संबंधं निरूप्येदानीं प्रकृतमनुसंदधाति;—

पुण्णा सइमणवत्था इदि एगं खिव सलागकुंडम्हि ।
तं मज्झिमसिद्धत्थे मादिए देवो व घित्तूणं ॥ २९ ॥

पूर्णा सकृदनवस्था इत्येकां क्षिप शलाकाकुंडे ।
तन्मध्यसिद्धार्थान् मत्या देवो वा गृहीत्वा ॥ २९ ॥

पुण्णा सइ । पूर्णा सकृदनवस्था इत्येकां क्षिप शलाकाकुंडे तन्मध्यसर्षपान् मत्या देवो वा गृहीत्वा ॥ २९ ॥

किं कृतवानित्याशंकायामाह;—

दीवसमुद्दे दिण्णे एक्केक्के परिसमप्पदे जत्थ ।
तो हिट्ठिमदीउवही कयगत्तो तेहिं भरिद्व्वो ॥३०॥

द्वीपसमुद्रे दत्ते एकैकस्मिन् परिसमाप्यते यत्र ।

ततः अधस्तनद्वीपोदधिषु कृतगर्तस्तैः भर्तव्यः ॥ ३० ॥

दीव । द्वीपे समुद्रे च दत्ते एकैकस्मिन् सर्षपे परिसमाप्यते यत्र तत् आरभ्य अधस्तनसर्वद्वीपोदधिषु प्राक्तनवेधप्रमाणेन कृतगर्तः पुनस्तैः सर्षपैर्भर्तव्यः ॥ ३० ॥

अथ तस्य द्वितीयकुंडस्य क्षेत्रफलानयनोपायभूतगच्छमाह;—

बिदिये पढमं कुंडं गच्छो तदिए दु पढमबिदियदुगं ।

इदि सव्वपुव्वगच्छा तहिं तहिं सरिसवा सज्झा ॥ ३१ ॥

द्वितीये प्रथमं कुंडं गच्छः तृतीये तु प्रथमद्वितीयद्विकम् ।

इति सर्वपूर्वगच्छाः तैः तैः सर्षपाः साध्याः ॥ ३१ ॥

बिदिये । द्वितीयकुंडसर्षपानयने प्रथमकुंडसर्षपप्रमाणं गच्छः, तृतीयकुंडसर्षपानयने तु प्रथमद्वितीयकुंडसर्षपमानं गच्छः इति सर्वपूर्वपूर्वगच्छास्तैस्तैः सर्षपाः साध्याः तं तं गच्छं गृहीत्वा "रूऊणाहियपद" इत्यादिना सूचीव्यासमानीय पश्चाद् "वासो तिगुणो परिही" इत्यादि तत्र तत्र कुंडे सर्षपाः साध्याः इत्यर्थः ॥ ३१ ॥

अथ तत्कृतगर्ते भृते सति किं जातमित्यत्राह;—

बिदिए वारे पुण्णं अणवट्ठिदमिदि सलागकुंडम्हि ।

पुणरपि णिक्खिवदव्वा अवरेगा सरिसवाण सला ३२

द्वितीये वारे पूर्णे अनवस्थितमिति शलाकाकुंडे ।

पुनरपि निक्षेप्तव्या अपरैका सर्षपाणां शलाका ॥ ३२ ॥

बिदिए । द्वितीये वारे पूर्णे अनवस्थितकुंडमिति शलाकागर्ते पुनरपि निक्षेप्तव्या अपरैका सर्षपाणां शलाका ॥ ३२ ॥

अथैवं कृतेपि किमित्यत्राह;—

एवं सलागभरणे रूवं णिक्खिवदु पडिसलागम्हि।
रित्तीकदेवि भरिदे अवरेगं पडिसलागम्हि ॥ ३३ ॥

एवं शलाकाभरणे रूपं निक्षिपतु प्रतिशलाकायाम्।
रिक्तीकृतेपि भृते अपरैकं प्रतिशलाकायाम् ॥ ३३ ॥

एवं। एवमेव शलाकाभरणे रूपं (एकं) निक्षिपतु प्रतिशलाकाकुंडे रिक्तीकृतेपि भृते सति अपरैकं निक्षिपतु प्रतिशलाकाकुंडे ॥ ३३ ॥

अथैवं सत्यपि किमित्यत्राह;—

एवं सावि य पुण्णा एवं णिक्खिव महासलागम्हि।
एसावि कमा भरिदा चत्तारि भरंति तक्काले ॥३४॥

एवं सापि च पूर्णा एकं निक्षिप महाशलाकायाम्।
एषापि क्रमाद्भृता चत्वारि भ्रियंते तत्काले ॥ ३४ ॥

एवं सा। एवमेव सापि च पूर्णेति एकं निक्षिपतु महाशलाकाकुंडे, एषापि क्रमाद्भृता तस्मिन्नेव काले चत्वारि कुंडानि भ्रियंते ॥ ३४ ॥

अथैतावता भरणेन किमित्यत्राह;—

चरिमणवट्ठिदकुंडे सिद्धत्था जेत्तिया पमाणं तं।
अवरपरीतमसंखं रूऊणे जेट्ठ संखेज्जं ॥ ३५ ॥

चरमानस्थितकुंडे सिद्धार्थाः यावंति प्रमाणं तत्।
अवरपरीतमसंख्यं रूपोने ज्येष्ठं संख्येयम् ॥ ३५ ॥

चरिम। चरमानवस्थितकुंडे सिद्धार्थाः यावंति प्रमाणानि तदवरपरीतासंख्यं। तत्र रूपे ऊने ज्येष्ठं संख्येयम् ॥ ३५ ॥

अथैतदेव धृत्वा संख्यातानंतोत्पत्तिभेदप्रभेदं षोडशगाथयाह;—

अवरपरित्तस्सुवरिं एगादीवड्ढिदे हवे मज्झं।
अवरपरित्तं विरलिय तमेव दादूण संगुणिदे ॥ ३६ ॥

अवरपरीतस्योपरि एकादिवर्द्धिते भवेन्मध्यम् ।
अवरपरीतं विरलय्य तदेव दत्वा संगुणिते ॥ ३६ ॥

अवर । अवरपरीतस्योपरि एकादिके वृद्धे सति भवेन्मध्यं जघन्यपरीतमेकैकरूपेण विरलय्य तदेव जघन्यपरिमितं रूपं प्रति दत्त्वा संगुणिते ॥३६॥

अवरं जुत्तमसंखं आवलिसरिसं तमेव रूऊणं ।
परिमिदवरमावलिकिदि दुगवारवरं विरूव जुत्तवरं ।३७।

अवरं युक्तमसंखं आवलिसदृशं तदेव रूपोनम् ।
परिमितवरं आवलिकृतिर्द्विकवारावरं विरूपं युक्तवरम् ॥ ३७ ॥

अवरं । जघन्ययुक्तासंख्यं स्यात् । एतदेवावलिसदृशं । तदेव रूपोनं परिमितासंख्यातवरं आवलिकृतिः द्विकवारासंख्यातजघन्यं तदेव विगतरूपं चेत् युक्तासंख्यातोत्कृष्टं स्यात् ॥ ३७ ॥

अवरे सलागविरलणादिज्जे बिदियं तु विरालिदूण तहिं ।
दिज्जं दाऊण हदे सलागदो रूवमणिज्जं ॥ ३८ ॥

अवरे शलाकाविरलनदेये द्वितीयं तु विरलय्य तस्मिन् ।
देयं दत्त्वा हते शलाकातः रूपमपनेतव्यम् ॥ ३८ ॥

अवरे । द्विकवारासंख्यातजघन्ये शलाकाविरलनदीयमानरूपेण त्रिधा कृते तत्र द्वितीयं विरलय्य तस्मिन् विरलिते देयं दत्त्वा अन्योन्यहतमिति शलाकाराशितः रूपमपनेतव्यम् ॥ ३८ ॥

तत्थुप्पण्णं विरलिय तमेव दाऊण संगुणं किच्चा ।
अवणय पुणरवि रूवं पुव्विल्लसलागरासीदो ॥ ३९॥

तत्रोत्पन्नं विरलय्य तदेव दत्वा संगुणं कृत्वा ।
अपनयेत् पुनरपि रूपं पूर्वतनशलाकाराशितः ॥ ३९ ॥

तत्थुप्पणं। तत्रान्योन्याभ्यस्तं विरलय्य तद्देव दत्त्वा संगुणं कृत्वा अपनयेत् पुनरपि रूपं पूर्वतनशलाकाराशितः ॥ ३९ ॥

एवं सलागरासिं णिट्ठाविय तत्थतणमहारासिं।
किच्चा तिप्पडि विरलणदिज्जादी कुणदि पुव्वं व॥४०॥

एवं शलाकाराशिं निष्ठाप्य तत्रतनमहाराशिम्।
कृत्वा त्रिःप्रति विरलनदेयादि करोति पूर्वं व॥ ४० ॥

एवं सला। एवं शलाकाराशिं निष्ठाप्य तत्रतनान्योन्याभ्यस्तमहाराशिं कृत्वा त्रिःप्रतिविरलनदेयादिं पूर्वमिव शलाकात्रयनिष्ठापनं कुर्यात् ॥ ४० ॥

एवं बिदियसलागे तदियसलागे च णिट्ठिदे तत्थ।
जं मज्झासंखेज्जं तहिमेदे पक्खिवेदव्वा ॥ ४१ ॥

एवं द्वितीयशलाकायां तृतीयशलाकायां च निष्ठितायां तत्र।
यत् मध्यासंख्यातं तस्मिन् एते प्रक्षेप्तव्याः ॥ ४१ ॥

एवं। एवं द्वितीयशलाकायां तृतीयशलाकायां च निष्ठापितायां सत्यां तत्र यन्मध्यमासंख्यातं जातं तस्मिन् एते अग्रे वक्ष्यमाणा राशयः प्रक्षेप्तव्याः ॥ ४१ ॥

धम्माधम्मिगिजीवगलोगागासप्पदेसपत्तेया।
तत्तो असंखगुणिदा पदिट्ठिदा छप्पि रासीओ ॥ ४२ ॥

धर्माधर्मैकजीवकलोकाकाशप्रदेशप्रत्येकाः।
ततः असंख्यगुणिता प्रतिष्ठिताः षडपि राशयः ॥ ४२ ॥

धम्मा। धर्माधर्मैकजीवलोकाकाशप्रदेशाः अप्रतिष्ठितप्रत्येकाः ततो लोकाकाशप्रदेशादसंख्यातगुणिताः। ततोपि प्रतिष्ठितप्रत्येका अपरैकासंख्यातलोकगुणिताः। एते षडपि राशयः प्रक्षेप्याः ॥ ४२ ॥

तं कयतिप्पाडिरासिं विरलादिं करिय पढमबिदियसलं।
तदियं च परिसमाणिय पुव्वं वा तत्थ दायव्वा ॥ ४३ ॥

तं कृतत्रिःप्रतिराशिं विरलादिं कृत्वा प्रथमद्वितीयशलाम् ।
तृतीयां च परिसमाप्य पूर्वं वा तत्र दातव्याः ॥ ४३ ॥

तं कय । तं कृतात्रिःप्रतिराशिं विरलादिं कृत्वा प्रथमशलाकां द्वितीयशलाकां तृतीयशलाकां च परिसमाप्य पूर्वमिव एते तत्र दातव्याः ॥ ४३ ॥

कप्पठिदिबंधपच्चयरसबंधज्झवसिदा असंखगुणा ।
जोगुक्कस्सविभागप्पडिच्छिदा बिदियपक्खेवा ॥४४॥

कल्पस्थितिबंधप्रत्ययरसबंधाध्यवसिता असंख्यगुणाः ।
योगोत्कृष्टाविभागप्रतिच्छेदाः द्वितीयप्रक्षेपाः ॥ ४४ ॥

कप्पठिदि । कल्पः संख्यातपल्यमात्रः, ततः स्थितिबंधप्रत्ययाः असंख्यातलोकगुणिताः, ततः रसबंधाध्यवसिताः असंख्यातलोकगुणाः, ततो योगोत्कृष्टाविभागप्रतिच्छेदाः असंख्यातलोकगुणाः । एते द्वितीयप्रक्षेपाः ॥ ४४ ॥

तं रासिं पुव्वं वा तिप्पाडि विरलादिकरणमेत्थ किदे ।
अवरपरित्तमणंतं रूऊणमसंखसंखवरं ॥ ४५ ॥

तं राशिं पूर्वं वा त्रिःप्रति विरलादिकरणं अत्र कृते ।
अवरपरीतमनंतं रूपोनमसंख्यासंख्यवरम् ॥ ४५ ॥

तंरासिं । तं राशिं पूर्वमिव त्रिःप्रति कृत्वा विरलनादिकरणं च विधाय अस्मिन् कृते अवरपरीतानंतं तत् रूपोनं चेत् असंख्यातासंख्यातवरम् ॥ ४५ ॥

अवरपरित्तं विरलिय दाऊणेदं परोपरं गुणिदे ।
अवरं जुत्तमणंतं अभव्वसममेत्थ रूऊणे ॥ ४६ ॥

जेट्ठपरित्ताणंतं वग्गे गाहिदे जहण्णजुत्तस्स ।
अवरमणंताणंतं रूऊणे जुत्तणंतवरं ॥ ४७ ॥

अवरपरीतं विरलयित्वा दत्त्वा इदं परस्परं गुणिते ।
अवरं युक्तमनंतं अभव्यसमं अत्र रूपोने ॥ ४६ ॥
ज्येष्ठपरीतानंतं वर्गे गृहीते जघन्ययुक्तस्य ।
अवरं अनंतानंतं रूपोने युक्तानंतवरम् ॥ ४७ ॥

अवर परित्तं । जघन्यपरिमितानंतं विरलयित्वा तदेव दत्त्वा तस्मिन् राशौ परस्परं गुणिते अवरं युक्तानंतं अभव्यसमं । अत्र रूपोने सति ज्येष्ठपरीतानंतं भवति । जघन्ययुक्तानंतस्य वर्गे गृहीते अवरमनंतानंतं स्यात् । अत्र रूपोने कृते युक्तानंतस्य वरं स्यात् ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

अवराणंताणंतं तिप्पडि रासिं करित्तु विरलादिं ।
तिसलागं च समाणिय लद्धेदे पक्खिवेदव्वा॥ ४८॥

अवरानंतानंतं त्रिःप्रतिराशिं कृत्वा विरलनादि ।
त्रिशलाकां च समाप्य लब्धे एते प्रक्षेप्तव्याः ॥ ४८ ॥

अवरा । अवरानंतानंतं राशिं त्रिःप्रतिकं कृत्वा विरलनादिकं त्रिशलाकां च समाप्य अत्र लब्धे एते प्रक्षेप्तव्याः ॥ ४८ ॥

सिद्धा णिगोदसाहियवणप्फदिपोग्गलपमा अणंतगुणा।
काल अलोगागासं छच्चेदेणंतपक्खेवा ॥ ४९ ॥

सिद्धा निगोदसाधिकवनस्पतिपुद्गलप्रमा अनंतगुणाः ।
काल अलोकाकाशं षट् चैते अनंतप्रक्षेपाः ॥ ४९ ॥

सिद्धा । सिद्धराशिः ३ जीवराशेरनंतैकभागः, ततोनंतगुणः पृथिव्यादिचतुष्टयप्रत्येकवनस्पतित्रसराशिभिर्न्यूनसंसारिराशिरेव १३≡ निगोद-

राशिः, निगोदराशेः सकाशात् वनस्पतिराशिः प्रत्येकेन साधिकः १३≡। ततो जीवराशेरनंतगुणः पुद्गलराशिः १६ ख, ततोनंतगुणः कालराशिः १६ ख ख, ततोप्यनंतगुणः अलोकाकाशराशिः १६ ख ख ख। षडेते अनंतरूपप्रक्षेपाः ॥ ४९ ॥

तं तिण्णिवारवग्गिदसंवग्गं करिय तत्थ दायव्वा।
धम्माधम्मागुरुलघुगुणाविभागप्पडिच्छेदा ॥ ५० ॥

तं त्रिवारवर्गितसंवर्गं कृत्वा तत्र दातव्याः।
धर्माधर्मागुरुलघुगुणाविभागप्रतिच्छेदाः ॥ ५० ॥

तं तिण्णि। तं राशिं त्रिवारवर्गितसंवर्गं कृत्वा त्रिःप्रति विरलनादिकं त्रिशलाकां च समाप्येत्यर्थः। तत्र राशौ दातव्याः धर्माधर्मद्रव्यागुरुलघुगुणाविभागप्रतिच्छेदाः ख ख ॥ ५० ॥

लद्धं तिवार वग्गिदसंवग्गं करिय केवले णाणे।
अवणिय तं पुण खित्ते तमणंताणंतमुक्कस्सं ॥ ५१ ॥

लब्धं त्रिवारं वर्गितसंवर्गं कृत्वा केवलज्ञाने।
अपनीय तं पुनः क्षिप्ते तमनंतानंतमुत्कृष्टम् ॥ ५१ ॥

लद्धं तिवार। लब्धं त्रिवारवर्गितसंवर्गं कृत्वा पूर्वमिव त्रिःप्रति विरलादिं त्रिशलाकां च समाप्येत्यर्थः। एतदेव केवलज्ञाने अपनीय तदेव तस्मिन् पुनर्निक्षिप्ते यो राशिरुत्पद्यते तं अनंतानंतस्योत्कृष्टं जानीहि ॥ ५१ ॥

अथ श्रुतज्ञानादीनां विषयस्थानं निरूपयति;-

जावदियं पच्चक्खं जुगवं सुदओहिकेवलाण हवे।
तावदियं संखेज्जमसंखमणंतं कमा जाणे ॥ ५२ ॥

यावत्कं प्रत्यक्षं युगपत् श्रुतावधिकेवलानां भवेत्।
तावत्कं संख्येयमसंख्यमनंतं क्रमात् जानीहि ॥ ५२ ॥

जावदियं । यावन्मात्रं प्रत्यक्षं युगपत् श्रुतावधिकेवलज्ञानानां भवेत् तावन्मात्रं संख्यातमसंख्यातमनंतं क्रमाज्जानीहि ॥ ५२ ॥

अथ चतुर्दशधाराणां नामानि निवेदयति;—

धारेत्थ सव्वसमकदिघणमाउगइदरवेकदीविंदं ।
तस्स घणाघणमादी अंतं ठाणं च सव्वत्थ ॥ ५३ ॥

धाराः अत्र सर्वसमकृतिघनमातृकेतरद्विकृतिवृंदम् ।
तस्य घनाघनमादि अंतं स्थानं च सर्वत्र ॥ ५३ ॥

धारेत्थ । धाराः अत्र शास्त्रे निरूप्यंते । सर्वधारा, समधारा, कृतिधारा, घनधारा, कृतिमातृकधारा, घनमातृकधारा, समादिभ्य इतरा विषमधारा, अकृतिधारा, अघनधारा, अकृतिमातृकधारा, अघनमातृकधारा इति, द्विरूपवर्गधारा, द्विरूपघनधारा, द्विरूपघनाघनधारा । आसामाद्यंतस्थानानि च सर्वत्र धारासु कथ्यंते ॥ ५३ ॥

अथ सर्वधारास्वरूपं निरूपयति;—

उत्तेव सव्वधारा पुव्वं एगादिगा हवेज्ज जदि ।
सेसा समादिधारा तत्थुप्पण्णेति जाणाहि ॥ ५४ ॥

उक्तैव सर्वधारा पूर्वं एकादिका भवेत् यदि ।
शेषाः समादिधाराः तत्रोत्पन्ना इति जानीहि ॥ ५४ ॥

उत्तेव । उक्तैव सर्वधारा स्यात् । पूर्वमेकादिका भवेद्यदि, शेषाः समादिधारा सर्वास्तत्रोत्पन्ना इति जानीहि ॥ अंकसंदृष्टौ च ज्ञातव्या “ १,२, ३,४,५,६,७,८,९,१०,११,१२,१३,१४,१५, के १६ ” ॥ ५४ ॥

अथ समधारामाह;—

वेयादि बिउत्तरिया केवलपज्जंतया समा धारा ।
सव्वत्थ अवरमवरं रूऊणुक्कस्समुकस्सं ॥ ५५ ॥

द्व्यादि द्व्युत्तरिका केवलपर्यंतका समा धारा ।
सर्वत्र अवरमवरं रूपोनोत्कृष्टं उत्कृष्टम् ॥ ५५ ॥

बेयादि । द्व्यादिका द्व्युत्तरा केवलज्ञानपर्यंता समधारा प्रोक्ता सर्वत्र संख्यातादिषु समधारास्थितजघन्यमेवात्र जघन्यं । सर्वधारागतरूपन्यूनोत्कृष्टमत्रोत्कृष्टं स्यात् । अंकसंदृष्टौ २,४,६,८,१०,१२,१४, के १६॥५५॥

एगादि बिउत्तरिया विसमा रूऊणकेवलवसाणा ।
रूवजुदमवरमवरं वरं वरं होदि सव्वत्थ ॥ ५६ ॥

एकादि द्व्युत्तरा विषमा रूपोनकेवलावसाना ।
रूपयुतमवरमवरं वरं वरं भवति सर्वत्र ॥ ५६ ॥

एगा । एकादिका द्व्युत्तरा विषमधारा रूपन्यूनकेवलावसाना । सर्वधारागतसंख्यातादीनां जघन्यं रूपयुतं चेत् विषमधारायामवरं स्यात् तत्रोत्कृष्टमत्र सर्वत्रोत्कृष्टं स्यात् । अंकसंदृष्टौ १, ३, ५, ७, ९, ११, १३, के १५ ॥ ५६ ॥

अथ समविषमधारयोः स्थानं तद्गच्छानयनं चाह;—

केवलणाणस्सद्धं ठाणं समविसमधारयाण हवे ।
आदी अंते सुद्धे वड्ढिहिदे इगिजुदे ठाणा ॥ ५७ ॥

केवलज्ञानस्यार्धं स्थानं समविषमधारयोर्भवेत् ।
आदौ अंते शुद्धे वृद्धिहृते एकयुते स्थानानि ॥ ५७ ॥

केवल । केवलज्ञानस्यार्धं स्थानं समविषमधारयोर्भवेत् । आदौ २ अंते १६ शुद्धे सति १४ वृद्धि २ हृते ७ एकयुते च सति ८ स्थानानि भवंति । एवं चयोत्तरे सर्वत्र दृष्टव्यम् ॥ ५७ ॥

अथ कृतिधारामाह;—

इगिचादि केवलंतं कदी पदं तप्पदं कदी अवरं ।
इगिहीण तप्पदकदी हेट्ठिममुक्कस्स सव्वत्थ ॥ ५८ ॥

एकं चत्वार्यादिः केवलांता कृतिः पदं तत्पदं कृतिः अवरं ।
एकहीनतत्पदकृतिः अधस्तनमुत्कृष्टं सर्वत्र ॥ ५८ ॥

इगि चादि । एकं चत्वार्यादिः केवलज्ञानांता कृतिधारा स्यात् । पदं कृतिधारास्थानं तत्पदं केवलज्ञानस्य प्रथममूलमात्रं संख्यातादीनां जघन्यं कृत्यात्मकमेव एकहीनस्यासंख्यातादीनां प्रथममूलस्य कृतिरेव सर्वत्राधस्तनाधस्तनोत्कृष्टप्रमाणं भवति । अंकसंदृष्टौ १, ४, ९, के १६ ॥ ५८ ॥

अथाकृतिधारोच्यते;—

दुप्पहुदिरूववज्जिदकेवलणाणावसाणमकदीए ।
सेसविही विसमं वा सपदूणं केवलं ठाणं ॥ ५९ ॥

द्विप्रभृति रूपवर्जितकेवलज्ञानावसानमकृतौ ।
शेषविधिः विषमा वा स्वपदोनं केवलं स्थानम् ॥ ५९ ॥

दुप्पहु । द्विप्रभृतिः रूपवर्जितकेवलज्ञानमवसानं अकृतिधारायां शेषविधिः संख्यातादीनां जघन्यमुत्कृष्टं च विषमधारावत् " रूवजुदमवरमवरं वरं वरं होदि सव्वत्थ " इति ज्ञातव्यमित्यर्थः । कृतिस्थानराहित्वात् स्वप्रथममूलोनं केवलज्ञानं स्थानं स्यात् । अंकसंदृष्टौ २,३,५,६,७,८,१०,११, १२,१३,१४, के १५ ॥ ५९ ॥

अथ घनधारा कथ्यते;—

इगिअडपहुदिं केवलदलमूलस्सुवरि चडिदठाणजुदे ।
तग्घणमंतं बिंदे ठाणं आसण्णघणमूलम् ॥ ६० ॥

एकाष्टप्रभृतिं केवलदलमूलस्योपरि चटितस्थानयुते ।
तद्धनमंतं वृंदे स्थानं आसन्नघनमूलम् ॥ ६०

इगि । अंकसंदृष्टौ प्रदर्श्यंते । एकाष्टप्रभृतिं १, ८, २७, एवमनंतानि घनस्थानानि गत्वा केवल ६५—दलस्य घनरूपस्य ३२७६८ यन्मूलं तस्मि

३२ तदुपरि घनमूलस्योपरि चटितस्थानानां उपर्य्युपरिगतघनमूलस्थानानां ३३, ३४, ३५, ३६, ३७, ३८, ३९, ४०, संख्याने युते सति तस्य ४० घनो अंतो भवति ६४००० । तस्येति कथम् ? यस्मादासन्नघनमूला ४० द्रूपाधिकस्य घनमूलस्य ४१ घने गृहीते ६८९२१ केवलज्ञानं व्यतिक्रम्य राशिरुत्पद्यते तस्मात्तस्यैव ४० घनः ६४००० घनधारायामंतो भवति । स एवासन्नघन इत्युच्यते, तन्मूलमेव चासन्नघनमूलमिति कथ्यते । स्थानं केवलज्ञानस्यासन्नघनमूलप्रमाणं स्यात् ॥ ६० ॥

अथ केवलद्लस्य घनात्मकत्वे उपपत्तिं पूर्वार्धेन दर्शयन्नुत्तरार्धेनाघनधारामाह;—

समकदिसल विकदीए दलिदे घणमेत्थ विसमगे तुरिए ।
अघणस्स दु सव्वं वा विघणपदं केवलं ठाणं ॥ ६१ ॥

समकृतिशला विकृतौ दलिते घनः अत्र विषमके तुरिये ।
अघनस्य तु सर्वं वा विघनपदं केवलं स्थानम् ॥ ६१ ॥

समक । द्विरूपवर्गधारायां समकृतिशलाके वर्गराशौ दलिते घनो जायते । यथा षोडशकादिके १६।६५=।१८=। अत्रैव धारायां विषमकृतिशलाके वर्गराशौ चतुर्भागे गृहीते घनो जायते । यथा चतुष्कादिके । ४।२५६।४२=। एवमुक्तन्यायेन केवलज्ञानस्य वर्गशलाकानां समत्वात्तस्मिन् केवलज्ञाने दलिते घनो भवतीति सिद्धम् । तत्समत्वं कथं ज्ञायत इति चेदिदमुच्यते । केवलज्ञानस्य वर्गशलाकाराशेर्द्विरूपवर्गधारायामेवोत्पन्नत्वात् । एतदपि कुत इति चेत् "अवरा खाइयलद्धीवग्गसलागा तदो सगद्धछिदी" इति पुरस्ताद् वक्ष्यमाणत्वात् । अघनधारायाः सर्वधारावत् प्रक्रिया । अयं तु विशेषः, विघनपदं घनस्थानरहितसर्वधारावदिति ग्राह्यं । अस्याः स्थानप्रमाणं "काकाक्षगोलकन्यायेन" विघनपदं केवलं घनस्थानन्यूनकेवलज्ञानमात्रं स्यात् । अंकसंदृष्टौ २, ३, ४, ५, ६, ७, ९, १०, ११, १२, १३, १४, १५, १६ ॥ ६१ ॥

अथ वर्गमातृकधारामाह;—

इह वग्गमाउआए सव्वगधारव्व चरिमरासीदु।
पढमं केवलमूलं तट्ठाणं चावि तच्चेव॥ ६२॥

इह वर्गमातृकायां सर्वकधारा इव चरमराशिस्तु।
प्रथमं केवलमूलं तत्स्थानं चापि तदेव॥ ६२॥

इह व। इह वर्गमातृकधारायां सर्वधारावत् चरमराशिस्तु केवलज्ञानस्य प्रथममूलं तस्याः स्थानमपि तावदेव। अंकसंदृष्टौ। १, २, ३, के ४॥ ६२॥

अथावर्गमातृकधारोच्यते;—

अकदीमाउअ आदी केवलमूलं सरूवमंतं तु।
केवलमणेय मज्झं मूलूणं केवलं ठाणं॥ ६३॥

अकृतिमातृकाया आदिः केवलमूलं स्वरूपमंतं तु।
केवलमनेकं मध्यं मूलोनं केवलं स्थानम्॥ ६३॥

अकदी। अकृतिमातृकधारायाः आदिः केवलज्ञानस्य प्रथममूलं रूपसहितं अंतस्तु केवलज्ञानं मध्यमनेकविधं तस्याः स्थानं स्वमूलोनकेवलज्ञानमात्रं। अंकसंदृष्टौ ५,६,७,८,९,१०,११,१२,१३,१४,१५,१६॥ ६३॥

अथ घनमातृकधारामाह;—

घणमाउगस्स सव्वगधारं वा सव्वपच्छिमो रासी।
आसण्णविंदमूलं तमेव ठाणं विजाणाहि॥ ६४॥

घनमातृकायाः सर्वकधारा इव सर्वपश्चिमो राशिः।
आसन्नवृंदमूलं तदेव स्थानं विजानीहि॥ ६४॥

घणमाउ । घनमातृकायाः सर्वधारावत् प्रक्रिया, अंकसंदृष्टौ प्रदर्श्यते–१,२,३,४,५,६,७,८, आदिः ४० । अयं तु विशेषः सर्वपश्चिमो राशिः । क इति चेत्, केवलज्ञानस्य ६५=आसन्नघन ६४००० प्रथममूलं ४० तदेव तस्याः घनमातृकायाः स्थानमिति जानीहि ॥ ६४ ॥

अथाघनमातृकधारोच्यते;—

तं रूवसहिदमादी केवलमवसाणमघणमाउस्स ।
आसण्णघणपदूणं केवलणाणं हवे ठाणं ॥ ६५ ॥

तत् रूपसहितं आदिः केवलमवसानमघनमातृकायाः ।
आसन्नघनपदोनं केवलज्ञानं भवेत् स्थानम् ॥ ६५ ॥

तं रूव । अंकसंदृष्टौ घनमातृकायाः अंतः ४० सः रूपसहितश्चेत् ४१ अघनमातृकाया आदिः अस्या अवसानं केवलज्ञानमेव ६५= अस्याः स्थानं पुनः केवलज्ञानस्य ६५= आसन्नघन ६४००० मूलो(४०)नं केवलज्ञानमेव ६५४९६ भवेत् ॥ ६५ ॥

अथ द्विरूपवर्गधारां गाथासप्तकेनाह;—

बेरूववग्गधारा चउ सोलसबेसदसहियछप्पणं ।
पण्णट्ठी बादालं एकट्ठं पुव्वपुव्वकदी ॥ ६६ ॥

द्विरूपवर्गधारा चत्वारः षोडश द्विशतसहितषट्पंचाशत् ।
पण्णट्ठी द्वाचत्वारिंशत् एकाष्टी पूर्वपूर्वकृतिः ॥ ६६ ॥

बेरूव । द्विरूपवर्गधारा कथ्यते । चत्वारि ४ षोडश द्विशतसहितषट्पंचाशत् २५६ पण्णट्ठिपंचसयाछत्तीसा ६५५३६ "बादालं चउणउदी छण्णउदि· बिहत्तरीयछण्णउदी" ४२९४९६७२९६ "एकट्ठ च चउ छस्सत्तयं च च य सुण्णसत्ततियसत्ता । सुण्णं णव पण पंच य एक्कं छक्केक्कगो य छक्कं च ॥" १८४४६७४४०७३७०९५५१६१६ ॥ एवमुत्तरोत्तरराशिः पूर्वपूर्वस्य कृतिः ॥ ६६ ॥

तो संखठाणगमणे वग्गसलागद्धछेदपढमपदं ।
अवरपरित्तासंखं आवलि पदरावली य हवे ॥ ६७ ॥

ततः संख्यस्थानगमने वर्गशलाकार्धच्छेदप्रथमपदम् ।
अवरपरीतासंख्यं आवलिः प्रतरावली च भवेत् ॥ ६७ ॥

तो संखठाण । ततः संख्यातस्थानानि गत्वा वर्गशलाकाराशिरुत्पद्यते । ततः संख्यातस्थानानि गत्वा अर्धच्छेदराशिरुत्पद्यते । ततः संख्यातस्थानानि गत्वा प्रथममूलमुत्पद्यते । तस्मिन्नेकवारं वर्गिते जघन्यपरीतासंख्यातराशिरुत्पद्यते । ततः " उप्पज्जदि जो रासी विरालिदादिज्जक्कमेण " इत्यादिना वर्गशलाकादेर्निषिद्धत्वात् संख्यातस्थानानि गत्वा आवलिरेवोत्पद्यते । तत्संख्यातस्थानज्ञानं कथमितिचेत् । देयराशेरुपरि विरालितराश्यर्धच्छेदमात्राणि वर्गस्थानानि गत्वा विवक्षितराशिरुत्पद्यते इति ज्ञातव्यं । तस्यामावल्यामेकवारं वर्गितायां प्रतरावलिर्भवेत् ॥ ६७ ॥

गमिय असंखं ठाणं वग्गसलद्धच्छिदी य पढमपदं ।
पल्लं च सूइअंगुल पदरं जगसेढिघणमूलं ॥ ६८ ॥

गत्वा असंख्यं स्थानं वर्गशलार्द्धच्छिदिश्च प्रथमपदम् ।
पल्यं च सूच्यंगुलं प्रतरं जगच्छ्रेणिघनमूलम् ॥ ६८ ॥

गमिय । ततः असंख्यातस्थानानि गत्वा वर्गशलाकाराशिः ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा अर्धच्छेदः । ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा प्रथममूलं तस्मिन्नेकवारं वर्गिते अद्धापल्यमुत्पद्यते । ततः विरलितराश्यर्धच्छेदमात्राणि वर्गस्थानानि गत्वोत्पन्नत्वात्तदर्धच्छेदस्यासंख्यातरूपत्वादसंख्यातस्थानानि गत्वा सूच्यंगुलमुत्पद्यते । अत्र वर्गशलाकादीनामनुत्पत्तिः कथमिति चेत् । विरलनदेयक्रमेणोत्पन्नस्य राशेः " उप्पज्जदि जो रासी " इत्यादिना धारात्रये वर्गशलाकादीनां निषिद्धत्वात् अस्यापि सूच्यंगुलस्य " पल्लछिदिमे-

त्तपल्ल " इत्यादिना विरलनदेयरूपेणोत्पन्नत्वात् । तस्मिन्नेकवारं वर्गिते प्रतरांगुलमुत्पद्यते । ततः असंख्यातस्थानानि गत्वा जगच्छ्रेणिघनमूलमुत्पद्यते ॥ ६८ ॥

तिविह जहण्णाणंतं वग्गसलादलछिदी सगादिपदं।
जीवो पोग्गल काला सेढीआगास तप्पदरम् ॥६९॥

त्रिविधं जघन्यानंतं वर्गशलादलच्छेदाः स्वकादिपदम् ।
जीवः पुद्गलः कालः श्रेण्याकाशं तत्प्रतरम् ॥ ६९ ॥

तिविह । ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा वर्गशलाकाः, ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा अर्धच्छेदाः, ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा प्रथममूलं, तस्मिन्नेकवारं वर्गिते परिमितानंतस्य जघन्यमुत्पद्यते । तस्मिन् राशौ विरलनदेयक्रमे कृते विरलितराश्यर्धच्छेदमात्राणि वर्गस्थानानि गत्वोत्पन्नत्वात्तदर्धच्छेदस्यासंख्यातरूपत्वादसंख्यातस्थानानि गत्वा युक्तानंतस्य जघन्यमेवोत्पद्यते । तत्र प्राग्वद्वर्गशलाकादीनां निषिद्धत्वात् । तस्मिन्नेकवारं वर्गिते द्विकवारानंतस्य जघन्यमुत्पद्यते, ततोऽनंतस्थानानि गत्वा वर्गशलाकाः, ततोऽनंतस्थानानि गत्वा अर्धच्छेदाः, ततोऽनंतस्थानानि गत्वा स्वप्रथममूलं, तस्मिन्नेकवारं वर्गिते जीवराशिरुत्पद्यते । अत्र वर्गशलाकादीनामुपलक्षणेनोक्तत्वादुत्तरत्र राशावपि ते वर्गशलाकादयोऽवगंतव्याः, ततोऽनंतस्थानानि गत्वा पुद्गलराशिरुत्पद्यते, ततोऽनंतस्थानानि गत्वा कालसमयराशिरुत्पद्यते, ततोऽनंतस्थानानि गत्वा श्रेण्याकाशमुत्पद्यते, तस्मिन्नेकवारं वर्गिते प्रतराकाशमुत्पद्यते ॥ ६९ ॥

धम्माधम्मागुरुलघु इगिजीवागुरुलघुस्स होंति तदो।
सुहमणिअपुण्णणाणे अवरे अविभागपडिछेदा॥७०॥

धर्माधर्मागुरुलघोरेकजीवागुरुलघोः भवंति ततः ।
सूक्ष्मनिगोदापूर्णज्ञाने अवरे अविभागप्रतिच्छेदाः ॥ ७० ॥

धम्माधम्म। ततोनंतस्थानानि गत्वा धर्माधर्मागुरुलघुगुणाविभागप्रतिच्छेदाः, ततोनंतस्थानानि गत्वा एकजीवागुरुलघुगुणाविभागप्रतिच्छेदा भवंति, ततोनंतस्थानानि गत्वा सूक्ष्मनिगोदलब्ध्यपर्याप्तकजघन्यज्ञानाविभागप्रतिच्छेदा उत्पद्यंते ॥ ७० ॥

अवरा खाइयलद्धी वग्गसलागा तदो सगद्धछिदी।
अडसगछप्पणतुरियं तदियं बिदियादि मूलं च॥७१

अवरा क्षायिकलब्धिः वर्गशलाका ततः स्वकार्धच्छिदिः।
अष्टसप्तषट्पंचतुरीयं तृतीयं द्वितीयादिमूलं च ॥ ७१ ॥

अवरा। ततोनंतस्थानानि गत्वा तिर्यग्गत्यसंयतसम्यग्दृष्टौ जघन्यक्षायिकसम्यक्त्वरूपलब्धेरविभागप्रतिच्छेदाः, ततोनंतस्थानानि गत्वा वर्गशलाकाः, ततोनंतस्थानानि गत्वा अर्धच्छेदाः, ततोनंतस्थानानि गत्वा अष्टममूलं, तस्मिन्नेकवारं वर्गिते सप्तममूलं, तस्मिन्नेकवारं वर्गिते षष्ठमूलं, तस्मिन्नेकवारं वर्गिते पंचममूलं, तस्मिन्नेकवारं वर्गिते चतुर्थमूलं, तस्मिन्नेकवारं वर्गिते तृतीयमूलं, तस्मिन्नेकवारं वर्गिते द्वितीयमूलं, तस्मिन्नेकवारं वर्गिते प्रथममूलं चोत्पद्यते ॥ ७१ ॥

सइमादिमूलवग्गे केवलमंतं पमाणजेट्ठमिणं।
वरखइयलद्धिणामं सगवग्गसला हवे ठाणं ॥ ७२ ॥

सकृदादिमूलवर्गे केवलमंतं प्रमाणजेष्ठमिदम्।
वरक्षायिकलब्धिनाम स्वकवर्गशला भवेत् स्थानम् ॥ ७२ ॥

सइ। सकृदेकवारं तस्यादिमूलस्य वर्गे गृहीते केवलज्ञानस्याविभागप्रतिच्छेदाः। एतावदेव द्विरूपवर्गधारायामंतं, इदमेव प्रमाणज्येष्ठं, एतदेवोत्कृष्टं, क्षायिकलब्धिनाम। अस्या द्विरूपवर्गधारायाः स्थानं तस्य केवलज्ञानस्य वर्गशलाकाप्रमाणं भवेत् ॥ ७२ ॥

अथ धारात्रये सर्वत्राविशेषेण वर्गशलाकादिप्राप्तौ तन्नियममाह;—

उप्पज्जदि जो रासी विरलणदिज्जक्कमेण तस्सेत्थ।
वग्गसलद्धच्छेदा धारातिदए ण जायंते ॥ ७३ ॥

उत्पद्यते यः राशिः विरलनदेयक्रमेण तस्यात्र ।
वर्गशलार्धच्छेदा धारात्रितये न जायंते ॥ ७३ ॥

उपज्जदि । यत्र धारायां विरलणदेयक्रमेणोत्पन्नो यो राशिरुत्पद्यते तस्य राशेर्वर्गशलाका अर्धच्छेदाश्च तत्रैव धारायां न जायंते । इयं व्याप्तिर्द्विरूपवर्गादिधारात्रये । अंकसंदृष्टौ विरलनराशिः १६ देयराशिः १६ उपन्नराशिः १८=तस्यार्धच्छेदाः ६४ तस्य वर्गशलाका ६ द्विरूपवर्गधारायां न जायंते ॥ ७३ ॥

अथ धारात्रये उपर्युपरि राशावर्धच्छेदप्रमाणमाह;—

वग्गादुवरिमवग्गे दुगुणा दुगुणा हवंति अद्धछिदी।
धारातय सट्ठाणे तिगुणा तिगुणा परट्ठाणे ॥ ७४ ॥

वर्गादुपरिमवर्गे द्विगुणा द्विगुणा भवंति अर्धच्छेदाः ।
धारात्रये स्वस्थाने त्रिगुणाः त्रिगुणः परस्थाने ॥ ७४ ॥

वग्गा । वर्गादुपरिमवर्गे द्विगुणा द्विगुणा अर्द्धच्छेदा भवंति धारात्रये स्वस्थाने, त्रिगुणा स्त्रिगुणाः परस्थाने । इयं व्याप्तिर्द्विरूपवर्गादिधारात्रयेपि । द्विरूपवर्गधारायामंकसंदृष्टिः स्वबुद्धितोवसेया ॥ ७४ ॥

अथ वर्गशलाकादीनामाधिक्यादिभवनप्रकारमाह;—

वग्गसला रूवहिया सपदे परसम सवग्गसलमेत्तं ।
दुगमाहदमद्धछिदी तम्मेत्तदुगे गुणे रासी ॥ ७५ ॥

वर्गशला रूपाधिकाः स्वपदे परस्मिन् समाः स्ववर्गशलामत्रम् ।
द्विकमाहतमर्धच्छेदाः तन्मात्रद्विके गुणे राशिः ॥ ७५ ॥

वग्ग। वर्गशलाका रूपाधिकाः स्वस्थाने स्वकीयधारायां परस्मिन् स्थाने परधारायां स्वसमानाः स्वस्वर्गशलाकामात्रं द्विकं परस्पराहतं चेत् राशेरर्धच्छेदा भवंति। इयं व्याप्तिर्द्विरूपवर्गधारायामेव न द्विरूपघनाद्विरूपघनाघनधारयोः तदर्धच्छेदमात्रे द्विके परस्परगुणिते सति राशिर्भवति। इयं व्याप्तिर्धारात्रयेपि ॥ ७५ ॥

अथ वर्गशलाकार्धच्छेदयोः स्वरूपमाह;—

वग्गिदवारा वग्गसलागा रासिस्स अद्धछेदस्स।
अद्धिदवारा वा खलु दलवारा होंति अद्धछिदी॥ ७६

वर्गितवारा वर्गशलाका राशेः अर्द्धच्छेदस्य।
अर्धितवारा वा खलु दलवारा भवंति अर्धच्छेदाः॥ ७६ ॥

वग्गिद। राशेर्वर्गितवारा वर्गशलाका, इयं व्याप्तिरपि धारात्रये। अर्धच्छेदस्य अर्धितवारा वर्गशलाकाः, इयं व्याप्तिः द्विरूपवर्गधारायामेव। राशेर्दलवारा अर्द्धच्छेदा भवंति, इयं व्याप्तिरपि धारात्रये ॥ ७६ ॥

अथ गाथाषट्केन द्विरूपघनधारामाह;—

बेरूवविंदधारा अड चउसट्ठी चडित्तु संखपदे।
आवलिघनमावलिया कदिविंदं चापि जायेज्ज॥७७

द्विरूपवृंदधारा अष्ट चतुःषष्टिः चटित्वा संख्यपदानि।
आवलिघन आवल्याः कृतिवृंदं चापि जायेत ॥ ७७ ॥

बेरूव। द्विरूपवर्गधाराराशीनां ये घनास्तेषां धाराः अष्ट चतुःषष्टिः। एवं पूर्वपूर्ववर्गरूपेण ४०९६ संख्यातस्थानानि गत्वा जघन्यपरीतासंख्यातघनः ततो विरलितराश्यर्द्धच्छेदमात्रगत्योत्पन्नत्वात्। संख्यातस्थानानि चटित्वा आवलि २ घन ८ उत्पद्यते। तस्मिन्नेकवारं वर्गिते आवल्याः कृतिघनश्चापि जायेत ॥ ७७ ॥

पल्लघणं विंदंगुलजगसेढीलोयपदरजीवघणं।
तत्तो पढमं मूलं सव्वागासं च जाणेज्जो ॥ ७८ ॥

पल्यगनं वृंदांगुलजगच्छ्रेणीलोकप्रतरजीवघनम्।
ततः प्रथमं मूलं सर्वाकाशं च जानीहि ॥ ७८ ॥

पल्ल । ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा वर्गशलाका, ततोसंख्यातस्थानानि गत्वा अर्धच्छेदाः, ततोसंख्यातस्थानानि गत्वा प्रथममूलं तस्मिन्नेकवारं वर्गिते पल्यघनमुत्पद्यते । ततोसंख्यातस्थानानि गत्वा घनांगुलमुत्पद्यते अत्र उप्पज्जदि जो रासीत्यादिना निषिद्धत्वात् वर्गशलाकादीनामभावः । ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा जगच्छ्रेणिरुत्पद्यते, अत्रापि उप्पज्जदीति निषिद्धत्वात् वर्गशलाकादीनामभावः । तस्यामेकवारं वर्गितायां जगत्प्रतर उत्पद्यते । ततोनंतस्थानानि गत्वा वर्गशलाका, ततोनंतस्थानानि गत्वा अर्धच्छेदाः, ततोनंतस्थानानि गत्वा प्रथममूलं, तस्मिन्नेकवारं वर्गिते जीवराशेर्घन उत्पद्यते । उप्पज्जदीति निषिद्धत्वादत्र वर्गशलाकादीनां सद्भावः । ततोनंतस्थानानि गत्वा प्रथममूलं तस्मिन्नेकवारं वर्गिते सर्वाकाशं च जानीहि ॥ ७८ ॥

संखमसंखमणंतं वग्गट्ठाणं कमेण गंतूण ।
संखासंखाणंताणुप्पत्ती होदि सव्वत्थ ॥ ७९ ॥

संख्यमसंख्यमनंतं वर्गस्थानं क्रमेण गत्वा ।
संख्यासंख्यानंतानामुत्पत्तिः भवति सर्वत्र ॥ ७९ ॥

संखम—द्विकवारासंख्यातजघन्यपर्यंतं संख्यातवर्गस्थानानि गत्वा तदुपरि द्विकवारानंतजघन्यपर्यंतमसंख्यातवर्गस्थानानि गत्वा तदुपरि केवलज्ञानपर्यंतमनंतवर्गस्थानानि गत्वा तत्र तत्र वर्गधारायां यथासंख्यं संख्यातासंख्यातानंतानां राशीनामुत्पत्तिर्भवति सर्वत्र ॥ ७९ ॥

जत्थुद्देसे जायदि जो जो रासी विरूपधाराए।
घणरूवे तद्देसे उपज्जदि तस्स तस्स घणो॥ ८०॥

यत्रोद्देशे जायते यो यो राशिः द्विरूपधारायां।
घनरूपे तद्देशे उत्पद्यते तस्य तस्य घनः॥ ८०॥

जत्थुद्देसे। यत्रोद्देशे द्विरूपवर्गधारायां यो यो राशिर्जायते द्विरूपघनधारायां तद्देशे तस्य तस्य राशेर्घन उत्पद्यते॥ ८०॥

एवमणंतं ठाणं णिरंतरं गमिय केवलस्सेव।
विदियपदविंदमंतं बिदियादिममूलगुणिदसमं॥८१॥

एवमनंतं स्थानं निरंतरं गत्वा केवलस्यैव।
द्वितीयपदवृंदमंतो द्वितीयादिममूलगुणितसमः॥ ८१॥

एवमणंतं। एवं सर्वाकाशराशेरुपर्यनंतस्थानं निरंतरं गत्वा केवलज्ञानस्य द्वितीयमूलघन उत्पद्यते स एव द्विरूपघनधारायामंतः। तत् कियदित्युक्ते द्वितीयादिममूलयोः परस्परगुणितराशिसमः॥ ८१॥

एतदेवांतस्थानं कथमित्याशंकायामाह;—

चरिमस्स दुचरिमस्स य णेवं घणं केवलव्वदिक्कमदो।
तम्हा विरूवहीणा सगवग्गसला हवे ठाणं॥ ८२॥

चरमस्य द्विचरमस्य च नैव घनः केवलव्यतिक्रमतः।
तस्मात् द्विरूपहीना स्वकवर्गशला भवेत् स्थानम्॥ ८२॥

चरिम। चरमराशेर्द्विचरमराशेश्च घनो नैवांतः। कुतः? केवलज्ञानव्यतिक्रमो यस्मात्। तस्मात्स्थानं पुनर्द्विरूपहीनस्वकीयवर्गशालाकामात्रं भवेत्। अंकसंदृष्टिरभ्यूह्या॥ ८२॥

इदानीं द्विरूपघनाघनधारां गाथाष्टकेनाह;—

तं जाण विरूवगयं घणाघणं अट्ठविंदतव्वग्गं ।
लोगो गुणगारसला वग्गसलद्धच्छदादिपदं ॥ ८३ ॥

तं जानीहि द्विरूपगतं घनाघनं अष्टवृंदतद्वर्गम् ।
लोको गुणकारशला वर्गशलार्धच्छेदादिपदम् ॥ ८३ ॥

तं जाण । द्विरूपवर्गधारायां यो यो राशिः तस्य तस्य घनाघन एवात्र धारायामित्यमुं क्रमं जानीहि । कथं चरतीति चेत् । आदिरष्टघनः ५१२ तदुपरि अष्टघनवर्गः २६२१४४ तदुपरि असंख्यातस्थानानि गत्वा लोक उत्पद्यते । अस्य वर्गशलाकादिरत्रापतितत्वादनुक्त इत्यवसेयः । ततोसंख्यातस्थानानि गत्वा गुणकारशलाकाराशिरुत्पद्यते । स क इति चेत्, लोकं विरलयित्वा लोकमेव दत्त्वा समस्तराशीनन्योन्यं गुणयित्वा एकवारं गुणितमिति लोकमात्रशलाकाराशितो रूपमपनयेत् । अत्र गुणकारशलाका रूपोनलोकमात्रा भवंति । तं पुनरसंख्यातलोकमात्रं अन्योन्यगुणितराशिमेव विरलयित्वा तमेव दत्त्वा अन्योन्यं गुणितमिति प्राक्तनशलाकाराशितः अपरं रूपमपनयेत्; तत्र च गुणकारशलाका रूपोनासंख्यातलोकमात्रा भवंति । एवं यावच्छलाकाराशिसमाप्तिस्तावद्गुणकारशलाका वर्धंते । एवं सत्येकवारशलाकानिष्ठापनं स्यात् । एवमाहुट्ठवारं शलाकानिष्ठापने कृते यावंत्यो गुणकारशलाकास्तावंत्योत्र गुणकारशलाका इत्युच्यंते । ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा वर्गशलाकास्ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा अर्धच्छेदास्ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा प्रथममूलं तस्मिन्नेकवारं वर्गिते— ॥ ८३ ॥

तेउक्काइयजीवा वग्गसलागत्तयं च कायठिदी ।
वग्गसलादित्तिदयं ओहिणिबद्धं वरं खेत्तं ॥ ८४ ॥

तेजस्कायिकजीवा वर्गशलाकात्रयं च कायस्थितिः ।
वर्गशलादित्रितयं अवधिनिबद्धं वरं क्षेत्रम् ॥ ८४ ॥

तेउ । तेजस्कायिकजीवराशेः संख्या उत्पद्यते । सा पुनराहुट्ठवारशलाकानिष्ठापने यो राशिरुत्पद्यते तत्प्रमाणमित्यवसेयं । अस्य वर्गशलाकायाः अधो गुणकारशलाका तिष्ठतीति । कथमिति चेत्, अंकसंदृष्टौ प्रदर्श्यते । बादाले अन्योन्यं गुणिते एकट्ठमुत्पद्यते १८=अस्य गुणकारशलाका एका वर्गशलाका पुनः षट् ततस्तेजस्कायिकवर्गशलाकाया अधो गुणकारशकाला तिष्ठतीत्यवसेयं । ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा वर्गशलाकास्ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा अर्धच्छेदास्ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा प्रथममूलं, तस्मिन्नेकवारं वर्गिते कायस्थितिप्रमाणमुत्पद्यते । तत्कीदृगिति चेत् । अन्यकायादागत्य तेजस्कायिकेषूत्पन्नजीवस्योत्कृष्टेन तेजस्कायिकमत्यक्त्वा अवस्थान काल इति प्ररूपयामः । ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा वर्गशलाकास्ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वार्धछेदास्ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा प्रथममूलं, तस्मिन्नेकवारं वर्गिते सर्वावधिनिबद्धमुत्कृष्टक्षेत्रमात्रमुत्पद्यते । क्षेत्रस्य लोकमात्रत्वेपि शक्त्यपेक्षयोक्तत्वात् घटते ॥ ८४ ॥

वग्गसलागत्तिदयं तत्तो ठिदिबंधपच्चयट्ठाणा ।
वग्गसलादीरसबंधज्झवसाणाण ठाणाणि ॥ ८५ ॥

वर्गशलाकात्रितयं ततः स्थितिबंधप्रत्ययस्थानानि ।
वर्गशलादिरसबंधाध्यवसानानां स्थानानि ॥ ८५ ॥

वग्गसला । ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा वर्गशलाकास्ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वार्धच्छेदास्ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा प्रथममूलं, तस्मिन एकवारं वर्गिते ज्ञानावरणादिकर्मणां स्थितिबंधकारणकषायपरिणामस्थानान्युत्पद्यंते । तत्परिणामसंख्या इत्यर्थः । ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा वर्गशलाकास्ततोसंख्यातस्थानानि गत्वा अर्द्धच्छेदास्ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा प्रथममूलं तस्मिन्नेकवारं वर्गिते ज्ञानावरणादिकर्मणां तीव्रादिशक्तिलक्षणरसबंधकारणकषायपरिणामस्थानानि उत्पद्यंते ॥ ८५ ॥

वग्गसलागप्पहुदी णिगोदजीवाण कायवरसंखा ।
वग्गसलागादितयं णिगोदकायट्ठिदी होदि ॥ ८६ ॥

वर्गशलाकाप्रभृति निगोदजीवानां कायवरसंख्या ।
वर्गशलाकादित्रयं निगोदकायस्थितिर्भवति ॥ ८६ ॥

वग्ग । ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा वर्गशलाकास्ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वार्धच्छेदास्ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा प्रथममूलं तस्मिन्नेकवारं वर्गिते निगोदजीवानां सर्वशरीराणामुत्कृष्टसंख्योत्पद्यते । नियतानामनंतसंख्यावच्छिन्नानां जीवानां गां क्षेत्रं ददाति इति निगोदं कर्म तद्युक्ता जीवा निगोदजीवा इत्युच्यंते । ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा वर्गशलाकास्ततोसंख्यातस्थानानि गत्वा अर्धच्छेदास्ततोसंख्यातस्थानानि गत्वा प्रथममूलं तस्मिन्नेवारं वर्गिते निगोदकायस्थितिर्भवति । सा कीदृशीति चेत् । अत्र निगोदकायस्थितिरित्युक्ते तावदेकजीवस्य निगोदेषूत्कृष्टेनावस्थानकालो न गृह्यते तस्यार्धतृतीयपुद्गलपरिवृत्तत्वात् । तर्हि किं गृह्यते ? निगोदशरीररूपेण परिणतपुद्गलानां तदाकारमत्यक्त्वोत्कृष्टेनावस्थानकालो गृह्यते ॥ ८६॥

तत्तो असंखलोगं कदिठाणं चडिय वग्गसलतिदयं ।
दिस्संति सव्वजेट्ठा जोगस्सविभागपडिच्छेदा ॥ ८७ ॥

ततो असंख्यलोकं कृतिस्थानं चटित्वा वर्गशलात्रितयम् ।
दृश्यंते सर्वज्येष्ठा योगस्याविभागप्रतिच्छेदाः ॥ ८७ ॥

तत्तो । तत उपर्यसंख्यातलोकमात्रकृतिस्थानानि चटित्वा वर्गशलाकास्ततोसंख्यातलोकमात्रकृतिस्थानानि गत्वार्धच्छेदास्ततोसंख्यातलोकमात्रकृतिस्थानानि चटित्वा प्रथममूलं तास्मिन्नेकवारं वर्गिते सर्वज्येष्ठयोगोत्कृष्टाविभागप्रतिच्छेदा दृश्यंते । कर्माकर्षणशक्तिर्योगस्तस्याविभागप्रतिच्छेदाः कर्माकर्षणशक्त्यविभागांशा इत्यर्थः ॥ ८७ ॥

जो जो रासी दिस्सदि बिरूववग्गे सगिट्ठठाणम्हि ।
तट्ठाणे तस्सरिसा घणाघणे णवणवुद्दिट्ठा ॥ ८८ ॥

यो यो राशिः दृश्यते द्विरूपवर्गे स्वकेष्टस्थाने ।
तत्स्थाने तत्सदृशा घनाघने नव नव उद्दिष्टाः ॥ ८८ ॥

जो । द्विरूपवर्गधारायां स्वकीयेष्टस्थाने विवक्षितस्थाने यो यो राशि- र्दृश्यते तत्स्थाने घनाघनधारायां तत्सदृशा द्विरूपवर्गधारास्थानसदृशा राशयः द्विरूपवर्गधाराराशय एव नवनववारं परस्परं गुणिता उद्दिष्टाः ॥८८॥

चडिदूणेवमणंतं ठाणं केवलचउत्थपदविंदं ।
सगवग्गगुणं चरिमं तुरियादिपदाहदेण समं ॥ ८९॥

चटित्वैवमनंतं स्थानं केवलचतुर्थपदवृंदम् ।
स्वकवर्गगुणश्चरमः तुरीयादिपदाहतेन समः ॥ ८९ ॥

चडि । ततो योगोत्कृष्टाविभागप्रतिच्छेदत उपर्यनंतस्थानानि चटित्वा केवलज्ञानस्य ६५=चतुर्थमूलघनः ८ स्वकीयवर्ग ६४ गुणितो ५१२ घनाघनधारायाश्चरमः । स च चतुर्थप्रथममूलयोः परस्पराहत्या समः॥ ८९ ॥

अन्येषां चरमकत्वं कथं न संभवतीति चेत्;—

चरिमादिचउक्कस्स य घणाघणा एत्थ णेव संभवंदि ।
हेदू भणिदो तम्हा ठाणं चउहीणवग्गसला ॥ ९० ॥

चरमादिचतुष्कस्य च घनाघना अत्र नैव संभवंति ।
हेतुः भणितः तस्मात् स्थानं चतुर्हीनवर्गशलम् ॥ ९० ॥

चरिमा । केवलज्ञानाद्यधश्चतुर्णां स्थानानां ६५=२५६, १६, ४, घनाघना अत्र द्विरूपघनाघनधारायां नैव संभवंति । कुतः ? केवलज्ञान-

व्यतिक्रमत इति हेतुर्भणितस्तस्मात् स्थानं केवलज्ञानस्य चतुर्हीनवर्ग-शलाकाप्रमाणं स्यात् ॥ ९० ॥

अथोक्तानां धाराणां निगमनमाह;—

ववहारुवजोग्गाणं धाराणं दरिसिदं दिसामेत्तं ।
वित्थरदो वित्थररुइसिस्सा जाणंतु परियम्मे ॥९१॥

व्यवहारोपयोग्यानां धाराणां दर्शितं दिशामात्रम् ।
विस्तरतो विस्तररुचिशिष्या जानंतु परिकर्मणि ॥ ९१ ॥

ववहारु । व्यवहारोपयोग्यानां धाराणां दिग्मात्रं दर्शितं, विस्तरतो विस्तररुचिशिष्या बृहद्धारापरिकर्माणि जानंतु ॥ ९१ ॥

इति संख्याप्रमाणं समाप्तम् ।

अथ संख्याप्रमाणविशेषाश्चतुर्दश धाराः सप्रपंचं प्रदर्श्येदानीं प्रकृतमुपमाप्रमाणाष्टं निरूपयति;—

पल्लो सायर सूई पदरो य घणंगुलो य जगसेढी ।
लोयपदरो य लोगो उवमपमा एवमट्ठविहा ॥९२॥

पल्यं सागरः सूची प्रतरं च घनांगुलं च जगच्छ्रेणी ।
लोकप्रतरश्च लोकः उपमाप्रमा एवमष्टविधा ॥ ९२ ॥

पल्ले । पल्यं सागरः सूच्यंगुलं प्रतरांगुलं घनांगुलं च जगच्छ्रेणिः जगत्प्रतरश्च घनलोक इत्येवमुपमाप्रमाणमष्टाविधं स्यात् ॥ ९२ ॥

अथ तेषां मध्ये पल्यभेदं स्वस्वविषयनिर्देशपूर्वकमाह;—

ववहारुद्धारद्धापल्ला तिण्णेव होंति णायव्वा ।
संखा दीवसमुद्दा कम्मट्ठिदि वण्णिदा जेहिं ॥९३॥

व्यवहारोद्धाराद्धापल्यानि त्रीण्येव भवंति ज्ञातव्यानि ।
संख्या द्वीपसमुद्राः कर्मस्थितयो वर्णिता यैः ॥ ९३ ॥

ववहारु । व्यवहारोद्धाराद्धापल्यानीति पल्यानि त्रीण्येव भवंति इति ज्ञातव्यानि। यैः पल्यत्रयैर्यथासंख्या द्वीपसमुद्राः कर्मास्थित्यादयश्च वर्णिताः९३

अथ पल्यज्ञापनार्थमाह;—

सत्तमजम्मावीणं सत्तदिणब्भंतरम्हि गाहिदेहिं ।
सण्णट्ठं सण्णिचिदं भरिदं वालग्गकोडीहिं ॥ ९४ ॥

सप्तमजन्मावीनां सप्तदिनाभ्यंतरे गृहीतैः ।
संनष्टं संनिचितं भरितं बालाग्रकोटिभिः ॥ ९४ ॥

सत्तम । सप्तमजन्मनामवीनां सप्तदिनाभ्यंतरे गृहीतैर्वालाग्रकोटिभिः संनष्ट संनिचितं भरितं ॥ ९४ ॥

तत्किमित्याह;—

जं जोयणवित्थिण्णं तत्तिउणं परिरयेण सविसेसं ।
तं जोयणमुव्विद्धं पल्लं परिदोवमं णाम ॥ ९५ ॥

यत् योजनविस्तीर्णं तत्रिगुणं परिधिना सविशेषम् ।
तत् योजनमुद्विद्धं पल्यं पलितोपमं नाम ॥ ९५ ॥

जं जो । यद्योजनविस्तीर्णं तत्रिगुणं परिधिना सविशेषं सूक्ष्मफलत्वात् योजनमुद्विद्धं तत् कुंडलोमप्रमाणं पल्योपमं पलितोपमं वा इति संज्ञा ॥९५॥

अथ परिधेः सविशेष इति विशेषणार्थं ज्ञापयन्नाह;—

विक्खंभवग्गदहगुणकरणी वट्टस्स परिरयो होदि ।
विक्खंभचउब्भागे परिरयगुणिदे हवे गणियं ॥ ९६ ॥

विष्कंभवर्गदशगुणकरणिः वृत्तस्य परिधिः भवति ।
विष्कंभचतुर्भागे परिधिगुणिते भवेत् गणितम् ॥ ९६ ॥

विक्खंभ । विष्कंभवर्गो दशगुणितः करणिर्मूलग्रहणयोग्यराशिर्भवेदिति समानछेदेन मेलयेत् १८/६ + १/६ = १९/६ एवं सति वृत्तस्य सूक्ष्मपरिधिर्भवति । विष्कंभचतुर्थांशे १/४ परिधिना १९/६ गुणिते वेधेन गुणिते च १९/२४ समस्तसूक्ष्मक्षेत्रफलं भवेत् । एतत् सूक्ष्मक्षेत्रफलं व्यवहारयोजनादिकं कर्तव्यं । कथं । एकप्रमाणयोजनक्षेत्रस्य पंचशतव्यवहारयोजने सति ५०० एतावत् प्रमाणयोजनक्षेत्रस्य १९/२४ किमिति संपात्य प्र १ फ ५०० इ १९/२४ घनराशेः गुणकारभागहारा घनात्मका भवंति । पुनरंगुलयवतिललिक्षाकर्मभूमिजरोमजघन्यभोगभूमिजरोममध्यमभोगभूमिजरोमउत्तमभोगभूमिजरोमाण्येवमेव क्रमेण त्रैराशिकं कृत्वा गुणयेत् । विष्कंभस्य वासनां निरूपयति । एकयोजनवृत्तक्षेत्रं तत्प्रमाणेन चतुरस्रं कृत्वा भुजकोटयोः कृत्योः परस्परं गुणयित्वा ' विवि १ विवि १ समासे विवि २ कर्णकृतिः तस्यामर्धितायां द्वितीयांशः, तस्मिन्नर्धिते चतुर्थांशः, तस्मिन्नर्धिते अष्टमांशं खंडं, तत्रैकखंडं गृहीत्वा भुजकोटयोः द्वाभ्यां समानछेदेन मेलनं कृत्वा एकखंडस्य एतावति फले अष्टखंडस्य किं । वर्गराशेर्गुणकारभागहारौ वर्गात्मकौ भवत इति न्यायेन इच्छांकः वर्गरूपेण गुणकारो भवति । तयोर्गुणकारभागहारयोर्वज्राववर्तने दशगुणिते विष्कंभवासना भवति ॥१६॥

अथ सिद्धांकमुच्चारयति;—

एक्कट्ठी पण्णट्ठी उणवीसट्ठारसेहिं संगुणिदा ।
बिगुणणवसुण्णसहिया पल्लस्स दु रोमपरिसंखा १७

एकाष्टी पंचषष्ठी एकोनविंशाष्टादशैः संगुणिता ।
द्विगुणनवशून्यसहिता पल्यस्य तु रोमपरिसंख्या ॥ १७ ॥

एक्कट्ठी । १८४४६७४४०७३७०९५५१६१६ इत्यादि सुगमं ॥१७॥

गुणितफलं दर्शयति;—

वटलवणरोचगोनगनजरनगंकाससघधमपरकधरं ।
विगुणणवसुण्णसहिदं पल्लस्स दु रोमपरिसंखा ॥ ९८ ॥

वट.. ।
द्विगुणनवशून्यसहितं पल्यस्य तु रोमपरिसंख्या ॥ ९८ ॥

वट । अत्र 'कटपय' इत्यादिना संख्या कथिता । ४१३४५२६३०३०८२०३१७७७४९५१२१९२०००००००००००००००००० पल्यस्य रोमसंख्या भवति ॥ ९८ ॥

अथ व्यवहारपल्यसमयं दर्शयति;—

वस्ससदे वस्ससदे एक्केक्के अवहिदम्हि जो कालो ।
तक्कालसमयसंखा णेया ववहारपल्लस्स ॥ ९९ ॥

वर्षशते वर्षशते एकैकस्मिन् अपहृते यः कालः ।
तत्कालसमयसंख्या ज्ञेया व्यवहारपल्यस्य ॥ ९९ ॥

वस्स । वर्षशते वर्षशते एकैकस्मिंल्लोम्नि अपहृते तदपहरणपरिसमाप्तिनिमित्तं यावत्कालस्तावत्कालसमयसंख्या व्यवहारपल्यस्य ज्ञातव्या । एकरोमापहृतौ वर्षशते १०० एतावद्रोमा ४१=पहृतौ कियान् वर्ष इति संपात्य एवमेव दिनं ३६० मुहूर्तो ३० श्वास ३७७३ संख्यातावलीनां संपातगुणनेन यावान् समयः स व्यवहारपल्यस्य कालः ॥ ९९ ॥

उद्धारपल्यकालं दर्शयति;—

ववहारेयं रोमं छिण्णमसंखेज्जवाससमयेहिं ।
उद्धारे ते रोमा तक्कालो तत्तियो चेव ॥ १०० ॥

व्यवहारैको रोमः छिन्नो असंख्येयवर्षसमयैः ।
उद्धारे तानि रोमाणि तत्कालः तावान् चैव ॥ १०० ॥

वव । व्यवहारैकरोमोऽसंख्येयवर्षसमयैः समं छिन्नं चेत् तदा तानि रोमाणि उद्धारपल्यस्य भवंति । तदपहरणकालश्च तावान् उद्धारपल्यरोमसमान एव । प्रतिसमयमेकैकरोमोपह्रियत इति भावः ॥ १०० ॥

अथोद्धारपल्यं निदर्शयति;—

उद्धारेयं रोमं छिण्णमसंख्येज्जवाससमयेहिं ।
अद्धारे ते रोमा तत्तियमेत्तो य तक्कालो ॥ १०१ ॥

उद्धारैकं रोमं छिन्नमसंख्येयवर्षसमयैः ।
अद्धारे तानि रोमाणि तावन्मात्रश्च तत्कालः ॥ १०१ ॥

उद्धा । उद्धारैकं रोमोऽसंख्यातवर्षसमयैः समं छिन्नंचेत् तदा तानि रोमाणि अद्धारपल्यस्य भवंति । तदपहरणकालश्च तावन्मात्र एव ॥१०१॥

अथ सागरोपमस्वरूपं सूचयति;—

एदेसिं पल्लाणं कोडाकोडी हवेज्ज दसगुणिदा ।
तं सागरोवमस्स दु हवेज्ज एक्कस्स परिमाणम् ॥१०२

एतयोः पल्ययोः कोटीकोटी भवेत् दशगुणिता ।
तत् सागरोपमस्य तु भवेत् एकस्य परिमाणम् ॥ १०२ ॥

एदे । एतयोरुद्धाराद्धारपल्ययोर्दशगुणिता कोटीकोटी भवेद्यदि तदा तद्विवक्षितपल्यं विवक्षितस्य एकसागरोपमस्य प्रमाणं भवति ॥ १०२ ॥

अथ सागरोपमसंज्ञाया अन्वर्थतादर्शनार्थमाह;—

लवणंबुहिसुहुमफले चउरस्से एकजोयणस्सेव ।
सुहुमफलेणवहरिदे वट्टं मूलं सहस्सवेहगुणं ॥१०३॥

लवणांबुधिसूक्ष्मफले चतुरस्रे एकयोजनस्यैव ।
सूक्ष्मफलेनापहृते वृत्तं मूलं सहस्रवेधगुणम् ॥ १०३ ॥

लवणं। "अंतायिसूयिजोगं रुंदद्धगुणित्तु दुप्पडिं किच्चा तिगुणं दहकरणिगुणं बादरसुहुमं फलं बलये" अनेनोक्तप्रकारेण लवणांबुधिसूक्ष्मफलं। चतुरस्रं कथमिति चेदस्य वासना दर्श्यते। लवणांबुधिवलयं ऊर्ध्वं छित्वा रुंद्र (२ ल.) प्रमाणेन विषमचतुर्भुजं कृत्वा "विक्खंभवग्ग" इत्यादिना मुखसूक्ष्मफलं। भूमिसूक्ष्मफलं वानीय मुखभूम्योस्संस्थाप्य मुखभूमिसमासार्धमिति मध्यफलमानीय $\frac{६}{२}$, $\frac{६}{२}$, ल १० मध्ये संस्थाप्य उपरितनभागं ऊर्ध्वं छित्वा चतुरस्रार्थं व्यत्यासेन संस्थाप्य समानछेदेन मेलनं कृत्वा अपवर्तिते एवं ६ ल. ६ ल. १० रुद्रार्धेन १ ल. गुणिते सति "वर्गराशेर्गुणकारभागहारा वर्गात्मका एव भवंति" इति न्यायेन गुणिते सति चतुरस्रं स्यात्। ६ लल ६ लल १०। एतावच्चतुरस्रसूक्ष्मफलस्य एकयोजनवृत्तकुंडे फ १ एतावच्चतुरस्रसूक्ष्मफलस्य इ ६ लल ६ लल १० किमिति त्रैराशिकक्रमेणागतेनैकयोजनसूक्ष्मफलेनापहृतेपवर्त्य एवं "हारस्य हारो गुणकोंशराशेः" इति गुणितेपीदं लब्धं २४ लल. २४ लल. वृत्तवर्गभूतकुंड फलशलाका स्यात्। मूलं २४ लल एतावत् २४ लल सहस्रवेध १००० गुणितं कर्तव्यं। २४ लल १००० ॥ १०३ ॥

अथ गुणकारांतरं दर्शयति;—

रोमहदं छक्केसजलोस्सेगे पणुवीससमयात्ति।
संपादं करिय हिदे केसेहिं सागरुप्पत्ती ॥ १०४ ॥

रोमहतं षट्केशजलोत्सेके पंचविंशसमया इति।
संपातं कृत्वा हिते केशैः सागरोत्पत्तिः ॥ १०४ ॥

रोम। प्र कुंड १ फ रोम ४१= इ. कुंड २४ लल १००० इति त्रैराशिकेनागतै रोमभिर्गुणितं २४ लल १०००, ४१= षट्केशजलोत्सेके पंचविंशतिसमयाश्चेत् २४ लल १०००, ४१= एतावत् रोमजलोत्सेके कियंतः समया इति त्रैराशिकं कृत्वा प्रमाणीभूतषट्कैशैरपहृत्यापवर्त्य २५, ४

लल, १०००, ४१=एतावत्समयस्य एकस्मिन् पल्ये एतावत्समयानां किमिति २५,४ लल. १०००, ४१=, संपात्यापवर्तिते सागरोपमोत्पत्तिर्भवति ॥ १०४ ॥

अथ द्विरूपवर्गधारायां सागरोपमस्यानुत्पन्नत्वात्तस्यार्धच्छेदं ज्ञापयन्नाह;-

गुणयारद्धच्छेदा गुणिज्जमाणस्स अद्धछेदजुदा ।
लद्धस्सद्धच्छेदा अहियस्स छेदणा णत्थि ॥ १०५॥

गुणकारार्धच्छेदा गुण्यमानस्यार्धच्छेदयुताः ।
लब्धस्यार्धच्छेदा अधिकस्य छेदना नास्ति ॥ १०५ ॥

गुण । गुणकारा दशकोटीकोट्यस्तासामर्धच्छेदाः संख्याताः, ते पुनर्गुण्यमानस्याद्धापल्यस्यार्धच्छेदयुताः लब्धस्य सागरोपमस्यार्धच्छेदा भवंति यतः अधिकस्य छेदना नास्ति । ततः सागरोपमस्य वर्गशलाका नास्ति ॥ १०५ ॥

अथ गुण्यगुणकारयोः छेदप्रदर्शने प्रसंगाद्भाज्यभाजकयोरपि छेदं प्रदर्शयति;—

भज्जस्सद्धच्छेदा हारद्धच्छेदणाहिं परिहीणा ।
अद्धच्छेदसलागा लद्धस्स हवंति सव्वत्थ ॥ १०६॥

भाज्यस्यार्धच्छेदा हारार्धच्छेदनाभिः परिहीनाः ।
अर्धच्छेदशलाका लब्धस्य भवंति सर्वत्र ॥ १०६ ॥

भज्ज । अंकसंदृष्टौ भाज्यस्य ६४ अर्धच्छेदाः ६ हारा (४) र्धच्छेदनाभिः २ परिहीना ४ लब्धस्य १६ अर्धच्छेदशलाका भवंति सर्वत्र ॥ १०६ ॥

अथ सूच्यंगुलस्यार्धच्छेदं दर्शयन्नाह;—

विरलिज्जमाणरासिं दिण्णस्सद्धच्छिदीहिं संगुणिदे।
अद्धच्छेदा होंति हु सव्वत्थुप्पण्णरासिस्स॥१०७॥

विरल्यमानराशौ देयस्यार्धच्छिदिभिः संगुणिते ।
अर्धच्छेदा भवंति हि सर्वत्रोत्पन्नराशेः ॥ १०७ ॥

विर । विरल्यमानराशिः पल्यच्छेदस्तास्मिन् देयस्य पल्यस्यार्धच्छेदैः संगुणिते सत्युत्पन्नराशेः सूच्यंगुलस्यार्धच्छेदा भवंति खलु सर्वत्र ॥ १०७ ॥

अथ सूच्यंगुलस्य वर्गशलाकां दर्शयन्नाह;—

विरलिदरासिच्छेदा दिण्णद्धच्छेदछेदसंमिलिदा ।
वग्गसलागपमाणं होंति समुप्पण्णरासिस्स ॥१०८॥

विरलितराशिच्छेदा देयार्धच्छेदछेदसंमिलिताः ।
वर्गशलाकाप्रमाणं भवंति समुत्पन्नराशेः ॥ १०८ ॥

विरलिद । सूच्यंगुलार्धच्छेदस्यार्धितवारा व १ व १ युताः व २ सूच्यंगुलस्य वर्गशलाका भवंति । "वग्गादुवरिमवग्गे दुगुणा दुगुणा हवंति अद्धछिदी" इति न्यायेन द्विगुणाः सूच्यंगुलार्धच्छेदाः । छे छे २ प्रतरांगुलार्धच्छेदा भवंति । "वग्गसला रूवहिया" इतिन्यायेन रूपाधिकसूचीवर्गशलाकाः प्रतरांगुलवर्गशलाक भवंति । द्विरूपवर्गधारोत्पन्नस्य सूच्यंगुलस्य समानस्थाने द्विरूपघनधारायां घनांगुलस्योत्पन्नत्वात् । "तिगुणा तिगुणा परट्ठाणे' इति न्यायेन त्रिगुणाः सूच्यंगुलार्धच्छेदाः घनांगुलार्धच्छेदा भवंति । "सपदे परसम" इति न्यायेन सूच्यंगुलवर्गशलाका एव घनांगुलस्य वर्गशलाका भवंति । "विरलिज्जमाणरासिं दिण्णस्स" इत्यादिन्यायेन विरल्यमानपल्यच्छेदासंख्यातभागेषु घनांगुलच्छेदैर्गुणितेषु सत्सु जगच्छ्रेण्याः छेदाः भवंति ॥ १०८ ॥

अथ जगच्छ्रेण्या वर्गशलाकाप्रदर्शनार्थमाह;—

दुगुणपरीतासंखेणवहरिदद्धारपलुवग्गसला ।
विंदंगुलवग्गसलासहिया सेढिस्स वग्गसला ॥ १०९ ॥

द्विगुणपरीतासंख्येनापहृताद्धारपल्यवर्गशलाः ।
वृंदांगुलवर्गशलासहिता श्रेण्या वर्गशलाः ॥ १०९ ॥

दुगुण। द्विगुणपरिमितासंख्यातजघन्येनापहृताद्धारपल्यवर्गशलाका वृंदांगुलवर्गशलाकासहिता जगच्छ्रेण्या वर्गशलाका भवंति । द्विगुणपरिमितासंख्यातजघन्येनापहृतत्वे उपपत्तिरुच्यते । अद्धापल्यार्धच्छेदराशेरर्धच्छेदाः पल्यवर्गशलाकामात्राः छेदराशेः प्रथममूलस्यार्धच्छेदाः पल्यवर्गशलाकार्धं भवंति द्वितीयमूलस्यार्धच्छेदास्तदर्धं, तृतीयमूलस्यार्धच्छेदाश्च तदर्धम् । एवं प्रतिवर्गमूलमर्धच्छेदाः अर्धार्धक्रमेण तावद्गच्छंति यावच्छेदराशेरधस्ताद्वर्गमूलानि जघन्यपरिमितासंख्यातस्य रूपाधिकार्धच्छेदमात्राणि गत्वा चरमं यद्वर्गमूलं तस्यार्धच्छेदा द्विगुणपरिमितासंख्यातजघन्येनापहृताद्धारपल्यवर्गशलाकामात्रा जायंते । यथा उपर्युपरिवर्गेषु अर्धच्छेदा द्विगुणा द्विगुणा जायंते तथाधोऽधोवर्गमूलेष्वप्यर्धच्छेदा अर्धार्धमात्रा जायंते इति युक्त्या जघन्यपरिमितासंख्यातस्य रूपाधिकार्धच्छेदमात्रपूरणवर्गमूलस्यार्धच्छेदा रूपाधिकार्धच्छेदमात्रद्विकसंवर्गेण द्विगुणपरिमितासंख्यातजघन्यप्रमाणेन विभक्ताद्धारपल्यवर्गशलाकामात्राः। "दिण्णद्धच्छेदछेदसंमिलिदा" देयस्य घनांगुलस्य छेदछेदाः वर्गशलाकास्तेषु संमिलिताः । इदं समुत्पन्नराशेर्जगच्छ्रेण्या वर्गशलाकाप्रमाणं भवति । इदं सर्वं मनसि कृत्वा " दुगुणपरित्तासंखे " इत्याद्युक्तं । " वग्गादुवरिमवग्गे " इत्यादिन्यायेन द्विगुणश्रेणीछेदा जगत्प्रतरछेदा भवंति । " वग्गसला रूवहिया " इति न्यायेन रूपाधिकश्रेणिवर्गशलाका जगत्प्रतरवर्गशलाका भवंति । " तिगुणा तिगुणा परट्ठाणे "

इति न्यायेन त्रिगुणश्रेणीछेदा एव घनलोकछेदा भवंति । " सपदे परसम " इति न्यायेन श्रेणिवर्गशलाका एव घनलोकवर्गशलाका भवंति॥१०९॥

अथ " तम्मेत्तदुगे गुणे रासी " इति न्यायेनार्धच्छेदमात्रद्विकानामन्योन्याहतौ राशिना भवितव्यामित्यत्र साधिकछेदानां कथमित्यत्राह;—

विरलिदरासीदो पुण जेत्तियमेत्ताणि अहियरूवाणि ।
तेसिं अण्णोण्णहदी गुणगारो लद्धरासिस्स ॥ ११० ॥

विरलितराशितः पुनः यावन्मात्राणि अधिकरूपाणि ।
तेषां अन्योन्यहतिः गुणकारो लब्धराशेः ॥ ११० ॥

विर । विरलितराशितः पुनर्यावन्मात्राण्यधिकरूपाणि तासां छेदाः तावन्मात्रद्विकानामन्योन्यहतिः लब्धपल्यराशेर्गुणकारो भवति । अंकसंदृष्टौ विरलितराशिः पल्यछेदः ४ तस्मादधिकरूपछेदः ३ तन्मात्रद्विकान्योन्याहतौ ८ लब्धः पल्यराशेः १६ गुणकारो भवति । तयोः गुण्यगुणकारयोर्गुणने सागरोपमः १२८ स्यात् ॥ ११० ॥

अथ प्रसंगेन हीनछेदानां किमित्याकांक्षायामाह;—

विरलिदरासीदो पुण जेत्तियमेत्ताणि हीणरूवाणि ।
तेसिं अण्णोण्णहदी हारो उप्पण्णरासिस्स ॥१११॥

विरलितराशितः पुनः यावन्मात्राणि हीनरूपाणि ।
तेषामन्योन्यहतिः हार उत्पन्नराशेः ॥ १११ ॥

विरलिद । अस्यार्थः छायामात्रमेव ॥ १११ ॥

अथोत्तरप्रकरणस्य पातनिकागाथामाह; —

जगसेढीए वग्गो जगपदरं होदि तग्घणो लोगो ।
इदि वोहियसंखाणस्सेत्तो पगदं परूवेमो ॥ ११२ ॥

जगच्छ्रेण्या वर्गः जगत्प्रतरो भवति तद्घनो लोकः ।
इति बोधितसंख्यानस्य इतः प्रकृतं प्ररूपयामः ॥ ११२ ॥

जग । जगच्छ्रेण्या वर्गः तत्प्रतरो भवति । तस्याः श्रेण्या घनो लोक इत्यस्माभिर्बोधितसंख्यानस्य शिष्यस्य इतः परं प्रकृतं प्ररूपयामः ॥ ११२ ॥ **उपमा**प्रकरणं समाप्तम् ।

पूर्वगाथयैवोक्ता पातनिका;—

उदयदलं आयामं वासं पुव्वावरेण भूमिमुहे ।
सत्तेकपंचएक्क य रज्जू मज्झम्हि हाणिचयं ॥ ११३ ॥

उदयदलं आयामः व्यासः पूर्वापरेण भूमिमुखे ।
सप्तै॰ पंचैकं च रज्जुः मध्ये हानिचयम् ॥ ११३ ॥

उदय । उदय १४ दलं ७ आयामः दक्षिणोत्तरव्यास इत्यर्थः । पूर्वापरहानिचयकथनात् चतुर्दशरज्जूत्सेधपर्यंतमायामः सर्वत्र सप्तरज्जुरेवेति ज्ञातव्यं । पूर्वापरेण व्यासस्तु भूमौ मुखे च यथासंख्यं सप्तरज्जवः एका रज्जुः पंचरज्जवः एका रज्जुः तयोर्मुखभूम्योर्मध्ये हानिचयौ साध्यौ ॥ ११३ ॥

अथ तत्साधनप्रकारं कथयन्नाह;—

मुहभूमीण विसेसे उदयहिदे भूमुहादु हाणिचयं ।
जोगदले पदगुणिदे फलं घणो वेधगुणिदफलं ११४

मुखभूम्योः विशेषे उदयहिते भूमुखतः हानिचयं ।
योगदले पदगुणिते फलं घनो वेधगुणितफलम् ॥ ११४ ॥

मुह । भूमौ ७ मुखं १ हीनं कृत्वा ६ सप्तरज्जूदयस्य षड्रज्जुहानौ एकरज्जूदयस्य कियती हानिरिति संपात्य तद्धानिं ६/७ समानछेदेन सप्त रज्वायामे स्फेटयेत् ४३/७ पुनस्तद्धानिमेव तत्रावशिष्ट एकरज्जुपर्यंते स्फेट-

येत् । तदा तत्तद्धानिरहिता तत्र तत्र आयातिर्भवेत् । ऊर्ध्वलोकार्धचयानयने मुख १ भूम्योर्विशेषे ५ सति ४ पश्चादर्धचतुर्थस्य ७/२ चतुश्चये ४ द्वितीयार्धस्य ३/२ कियांश्चय इति संपात्यापवर्त्य गुणितराशौ १२/७ एकरज्जुसमानछेदेन मेलने कृते १९/७ सत्यर्धद्वितीयस्य प्रथमचयस्तस्मिंश्चये प्राकृतचयमेलने कृते ३१/७ उपरितनार्धद्वितीयचयो भवति । अर्धचतुर्थस्य ७/२ चतुश्चये ४ दलस्य १/२ किमिति संपात्यापवर्त्य ४/७ तत्प्राक्तनचये ३१/७ मेलयेत् ३५/७ तदुपरितनचयः स्यात् । उपरितनोर्ध्वलोकहान्यानयने अर्धचतुर्थस्य चतुर्हानौ दलोदयस्य किमिति संपात्यागतहानिं ४/७ प्राक्तनदलचये स्फेटयेत् ३१/७ । एवं सति उपरितनदलहानिरहितफलं स्यात् । एवमूर्ध्वदलचतुष्टयहान्यानयनेपि पूर्वपूर्वहानिफले चतुःसप्तमहानिस्फेटने २७/७ तत्तद्धानिरहितायतिर्भवति २३/७ । १९/७ । १५/७ दलोदयस्य १/२ एतावद्धानौ ४/७ एकोदयस्य किमिति संपात्य ८/७ षष्ठदलहानिफले १५/७ स्फेटने एकरज्जुफलं स्यात् । अधोलोकक्षेत्रफलानयने मुखं १ भूमि ७ योग ८ दले ४ पद ७ गुणिते २८ क्षेत्रफलं स्यात् । तदेव वेधेन ७ गुणितं घनफलं १९६ स्यात् ॥ ११४ ॥

इतोऽधोलोकोऽष्टधा भेदयति;—

सामण्णं दो आयद जवमुर जवमज्झ मंदरं दूसं ।
गिरिगडगेणवि जाणह अट्ठवियप्पो अधो लोगो ११५

सामान्यं द्व्यायतं यवमुरजं यवमध्यं मंदरं दूष्यम् ।
गिरिकटकेनापि जानीहि अष्टविकल्पः अधोलोकः ॥ ११९ ॥

सामण्णं । सामान्यमूर्ध्वायतं तिर्यगायतं यवमुरजं यवमध्यं मंदरं दूष्यं गिरिकटकेन सह अष्टविकल्पो अधोलोक इति जानीहि । सामान्यक्षेत्रफलं "मुखभूमीजोगदले"त्यादिना सुगमं । अधोलोकस्य मध्यं छित्वा आयतचतुरस्रं यथा भवति तथा व्यत्यासेन संस्थाप्य " भुजकोटिवध " इत्यादिना

गुणिते ऊर्ध्वायतक्षेत्रफलं स्यात् । अधोलोकस्य मध्यफलं "मुखभूमिसमास" इत्यादिनानीय ऊर्ध्वं छित्वा तिर्यगायतचतुरस्रं यथा भवति तथा संस्थाप्य "भुजकोटिवधे" त्यादिना तिर्यगायतक्षेत्रफलमानयेत् ॥ ११५ ॥

अथ यवमुरजक्षेत्रफलमानयति;—

रज्जुतयस्सोरणे सत्तुदओ जदि हवेज्ज एक्केसे ।
किमिदि कदे संपादे एक्कजउस्सेहमाणमिणं ॥ ११६ ॥

रज्जुत्रयस्यापसरणे सप्तोदयो यदि भवेत् एकस्याम् ।
किमिति कृते संपाते एकयवस्योत्सेधमानमिदम् ॥ ११६ ॥

रज्जु । रज्जुत्रयस्यापसरणे सप्तोदयो यदि भवेत् एकरज्ज्वपसरणे कियानुदय इति संपाते कृते आगतमेकयवोत्सेधप्रमाणमिदं $\frac{७}{३}$ । एकयवस्य १ इयत्युदये $\frac{७}{३}$ अर्धयवस्य किमिति संपाते अर्धयवोत्सेधमानं स्यात् । पश्चादर्धयवक्षेत्रफलं "मुखभूमिजोगदले" त्यादिनानीय $\frac{७}{१२}$ एकार्धयवस्य इयति फले अष्टादशार्धस्य किमिति संपात्य षड्भिरपवर्तिते सर्वं यवक्षेत्रफलं $\frac{१२}{२}$ स्यात् । मुख १ भूमि ४ जोग ५ दले $\frac{५}{२}$ पदे $\frac{७}{२}$ गुणिते $\frac{३५}{४}$ पद-धनं होदीत्यर्धमुरजक्षेत्रफलमानीयार्धमुरजस्यैतावति $\frac{३५}{४}$ फले एकमुरजस्य किमिति संपात्यापवर्त्य $\frac{३५}{२}$ एतद्यवक्षेत्रफले $\frac{२१}{२}$ संयोज्य भाजिते २८ यवमुरजक्षेत्रफलं भवति । यवमध्यक्षेत्रस्थयवान् सर्वान् गुणयित्वा २४ पूर्ववदर्धयवक्षेत्रफलमानीय पुनरर्धयवस्य $\frac{१}{२}$ एतावति $\frac{७}{१२}$ एकयवस्य किमिति संपात्यापवर्तिते एकयवक्षेत्रफलं $\frac{७}{६}$ स्यात् । एकयवस्य एतावति फले $\frac{७}{६}$ चतु-र्विंशतियवानां किमिति संपात्य षड्भिरपवर्तिते यवमध्यक्षेत्रफलं भवति ११६

अथ मंदरक्षेत्रफलानयनप्रकारं दर्शयाति;—

अद्धं चउत्थभागो सगबारसमं तिदालबारंसो ।
सगबारंस दिवड्ढं रज्जुदओ मंदरे खेत्ते ॥ ११७ ॥

अर्धं चतुर्थभागः सप्तद्वादश त्रिचत्वारिंशत्द्वादशांशाः ।
सप्तद्वादशांशा द्व्यर्धं रज्जूदया मंदरे क्षेत्रे ॥ ११७ ॥

अर्द्धं । अर्द्धं $\frac{१}{२}$ चतुर्थांशः $\frac{१}{४}$ तयोर्मेलने $\frac{३}{४}$ सप्तद्वादशांशा $\frac{७}{१२}$ त्रिचत्वारिंशत्द्वादशांशाः $\frac{४३}{१२}$ पुनरपि सप्तद्वादशांशा $\frac{७}{१२}$ अर्धद्वितीयांशा $\frac{३}{२}$ रज्जूदया मंदरक्षेत्रे भवंति । मुख १ भूमीण ७ विसेसे इति हानिमानीय ६ सप्त रज्जूदयस्य ७ षड्ढानौ ६ त्रिचतुर्थ $\frac{३}{४}$ रज्जूदयस्य किमिति संपात्य द्वाभ्यां तिर्यगपवर्त्य $\frac{३}{७}$ $\frac{३}{२}$ गुणिते $\frac{९}{१४}$ समानछिन्नसप्तरज्ज्वां $\frac{९८}{१४}$ स्फेटिते $\frac{८९}{१४}$ त्रिचतुर्थक्षेत्रोपरितनायामःस्यात् । सप्तरज्जूदयस्य षड्ढानौ सप्तद्वादश $\frac{७}{१२}$ रज्जूदयस्य किमिति संपात्यापवर्त्य गुणिते $\frac{७}{१४}$ पूर्वस्मिन्नायामे $\frac{८९}{१४}$ स्फेटिते $\frac{८२}{१४}$ उपरितनायामः स्यात् । सप्तरज्जूदयस्य षड्ढानौ त्रिचत्वारिंशद्वादश $\frac{४३}{१२}$ रज्जूदयस्य किमिति संपात्यापवर्त्य गुणिते $\frac{४३}{१४}$ पूर्वस्मिन्नायामे $\frac{८२}{१४}$ स्फेटिते $\frac{३९}{१४}$ उपरितनायामः स्यात् । सप्तरज्जूदयस्य षड्ढानौ सप्तद्वादश $\frac{७}{१२}$ रज्जूदयस्य किमिति तथा गुणिते $\frac{७}{१४}$ पूर्वस्मिन्नायामे $\frac{३९}{१४}$ स्फेटिते $\frac{३२}{१४}$ उपरितनायामः स्यात् । सप्तरज्जूदयस्य षड्ढानौ अर्धद्वितीय $\frac{३}{२}$ रज्जूदयस्य किमिति गुणिते $\frac{९}{७}$ समानछेदेन $\frac{१८}{१४}$ अधस्तात् $\frac{३२}{१४}$ स्फेटने कृते $\frac{१४}{१४}$ उपरितनायामः स्यात् । चलिकानयनार्थं सप्तद्वादशोदयक्षेत्रद्वयमायतचतुरस्रं कृत्वा तत्तन्मुखं $\frac{८२}{१४}$ $\frac{३२}{१४}$ तत्तद्भूमौ $\frac{८९}{१४}$ $\frac{३९}{१४}$ स्फेटयित्वा $\frac{७}{१४}$ $\frac{७}{१४}$ सप्तभिरपवर्त्य $\frac{१}{२}$ $\frac{१}{२}$ खंडद्वयस्य एतावति $\frac{१}{२}$ एकखंडस्य किमिति संपातितं $\frac{१}{४}$ एकैकखंडस्य भूमिः । तेष्वेकखंडभूमिमुपरितनं कृत्वा खंडत्रयभूमिमधस्तनभूमिं कृत्वा $\frac{३}{४}$ सप्तद्वादशोदयां चूलिकां कुर्यात् । पश्चाद्विषमचतुर्भुजक्षेत्रफलं मुखभूमिजोगदलेत्यादिनानीय आयतचतुरस्रक्षेत्रफलं भुजकोटिबधादित्यादिनानीय षण्णां फलानां च त्रि द्वि द्वि षट्चतुर्दशभिः समानछेदेन मेलनं कृत्वा $\frac{९४०८}{३३६}$ हृते च मंदरक्षेत्रफलं भवति २८ । रज्जुतयस्सेत्यादिनार्धयवोत्सेध $\frac{७}{६}$ मानीय समानछिन्नसप्तरज्ज्वां स्फेटने $\frac{३५}{६}$ सप्तरज्जुभूमेर्मुखं स्यात् । तत्रैव $\frac{३५}{६}$ पुनरर्धयवोत्सेधस्फेटने $\frac{२८}{६}$ तदुत्तरस्य मुखं स्यात् । एवं पूर्वपूर्वमुखे पुनः पुनः अर्धयवो-

त्सेधस्फेटने तत्तदुत्तरोत्तरस्य मुखं स्यात् । मुखभूमिजोगेत्यादिना षण्णां क्षेत्राणां फलमानीय मेलयित्वा २५२/१२ हृत्वा २१ सप्तरज्जूमेलने २८ दूष्यक्षेत्रफलं भवति । रज्जूतयेत्यादिनार्धयवक्षेत्रफलमानीय एकखंडस्यैतावति ७/१२ अष्टचत्त्वारिंशत्खंडानां किमिति संपात्य द्वादशभिरपवर्त्य भक्त्वा ४ गुणिते २८ गिरिकटकक्षेत्रफलं भवति ॥ ११७ ॥

इदानीमूर्ध्वलोकक्षेत्रभेदमाह;—

सामण्णं पत्तेयं अद्धत्थंभं तहेव पिण्णट्ठी ।
एदे पंचपयारा लोयक्खेत्तह्मि णायव्वा ॥ ११८ ॥

सामान्यं प्रत्येकं अर्धं स्तंभं तथैव पिनष्टिः ।
एते पंचप्रकारा लोकक्षेत्रे ज्ञातव्याः ॥ ११८ ॥

सामण्णं । समीकृतं प्रत्येकं अर्द्धं स्तंभं तथैव पिनष्टिः एते पंचप्रकारा ऊर्ध्वलोकक्षेत्रे ज्ञातव्याः । मुख १ भूमि ५ जोग ६ दले इत्यादिना समीकृतोर्ध्वलोकार्धक्षेत्रफल ३ ७/२ मानीय एकस्यैतावति ३ ७/२ द्वयोः किमिति संपात्यापवर्त्य गुणिते सामान्यक्षेत्रफलं २१ भवति । भूमौ ५ मुखं १ शेषयित्वा अर्धचतुर्थोदयस्य ७/२ चतुश्चये ४ अर्धद्वितीयो ३/२ दयस्य किमित्यपवर्त्य संपातितं १२/७ समानछिन्नैकरज्ज्वां ७/७ मेलने कृते १९/७ अर्धद्वितीयोपरितनव्यासं १२/७ तत्रैव तत्संपातमेलने ३१/७ तदुपरितनव्यासः । अर्धचतुर्थोदयस्य चतुश्चये अर्धोदयस्य किमित्यपवर्त्य संपातितं ४/७ अधस्तात् ३१/७ मेलने उपरितनव्यासः ३५/७ । एवमर्धोदयस्य चय ४/७ मेव तत्तद्भूमौ स्फेटने ३१/७ उपर्युपरि व्यासः स्यात् यावत्पंचदलं २७/७ २३/७ १९/७ १५/७ । अर्धचतुर्थोदये चतुश्चये ४ एकोदयस्य १ किमिति संपातितं ८/७ अधस्तात् १५/७ स्फेटने ७/७ लोकाग्रव्यासः स्यात् । मुखभूमिजोगदलेत्यादिना अर्धद्वितीयोदयादिक्षेत्रफलमानीय सर्वेषां मेलने कृते २९४/१४ प्रत्येक क्षेत्रफलं भवति २१ । अर्धस्तंभयोः क्षेत्रफले सुगमे । मुह १ भूमीण ५ विसेसे ४ उदयहिदेत्यादिना दिवड्ढा-

द्युपरितननवभूमिव्यासमानीय $\frac{१९}{७}$ $\frac{३१}{७}$ $\frac{३५}{७}$ $\frac{३१}{७}$ $\frac{२७}{७}$ $\frac{२३}{७}$ $\frac{१९}{७}$ $\frac{१५}{७}$ $\frac{७}{७}$ दिवङ्कोपरितना व्यासे $\frac{१९}{७}$ समच्छेदेन मध्यमैकरज्जुं स्फेटयित्वा $\frac{१२}{७}$ उभयभागस्यैतावति $\frac{१२}{७}$ एकभागस्य किमिति त्रैराशिकं कृत्वा अर्धिते $\frac{६}{७}$ अधो दिवङ्कसदृशत्रिभुजभूमिः $\frac{६}{७}$ अधोदिवङ्कोपरिमव्यासं $\frac{१९}{७}$ समच्छिन्नात्रिरज्ज्वां $\frac{२१}{७}$ स्फेटयित्वा $\frac{२}{७}$ अर्धिते $\frac{१}{७}$ बहिः सूचीभूमिः ॥ ११८ ॥

अथ त्रिभुजोदयार्थं गाथाद्वयमाह;—

रज्जुदुगहाणिठाणे आहुट्टुदओ जदीह एक्किस्से ।
किमिदि तिरासियकरणे फलं दलूणं तिबाहुदओ ११९

रज्जुद्विकहानिस्थाने अर्धचतुर्थोदयो यदीह एकस्य ।
किमिति त्रैराशिककरणे फलं दलोनं त्रिबाहूदयः ॥ ११९ ॥

रज्जु । रज्जुद्विकहानिस्थाने अर्धचतुर्थोदयो $\frac{७}{२}$ यदि तदैकस्य १ किमिति त्रैराशिककरणे फलं $\frac{७}{४}$ दलादिवङ्कयोः $\frac{१}{२}$ $\frac{३}{२}$ प्रणिधिक्षेत्रद्वयोदयः तत्फलं $\frac{७}{४}$ समच्छिन्नदलन्यूनं $\frac{५}{४}$ दिवङ्कसदृशत्रिबाहूदयः ॥ ११९ ॥

तिभुजुदयूणुहयुच्चं सूईखेत्तस्स भूमिमुहसेसे ।
भूमीतप्फलहीणं चउरस्सधराफलं सुद्धं ॥ १२० ॥

त्रिभुजोदयोनमुभयोच्चं सूचीक्षेत्रस्य भूमिमुखशेषे ।
भूमितत्फलहीनं चतुरस्रधराफलं शुद्धम् ॥ १२० ॥

तिभुजु । त्रिभुजोदयेन $\frac{५}{४}$ ऊनः समुच्छिन्नादिवङ्कोदयः $\frac{१}{४}$ बहिः सूचीक्षेत्रस्योदयः भूमिमुखयोः $\frac{६}{७}$ शेषभूमिः $\frac{१}{७}$ तत्फलहीनं शुद्धं चतुरस्रधराफलं भवति । समच्छिन्नात्रिरज्जुं $\frac{२१}{७}$ द्वितीयादिवङ्कोपरितनव्यासे $\frac{३१}{७}$ अपनीय अवशिष्टे $\frac{१०}{७}$ अर्धिते $\frac{५}{७}$ अंतास्त्रिभुजभूमिः तत्र तत्र व्यासे $\frac{३५}{७}$ $\frac{३१}{७}$ $\frac{२७}{७}$ $\frac{२३}{७}$ तात्रिरज्जु $\frac{२१}{७}$ मपनीय $\frac{१४}{७}$ $\frac{१०}{७}$ $\frac{६}{७}$ $\frac{२}{७}$ अर्धिते $\frac{७}{७}$ $\frac{५}{७}$ $\frac{३}{७}$ $\frac{१}{७}$ तत्त-

त्रिभुजभूमिः । रज्जुदुगेत्यादिना त्रैराशिकफलमानीय $\frac{७}{४}$ तत्र समच्छिन्नत्रिदल $\frac{६}{४}$ न्यूने $\frac{१}{४}$ उपरितनांतः सूच्युदयः तदुदये $\frac{१}{४}$ समच्छिन्नदलोदये $\frac{२}{४}$ अपनीते अवशिष्टे $\frac{१}{४}$ उपरितनबहिः सूच्युत्सेधः । तदुपरितनव्यासं $\frac{१९}{७}$ समच्छिन्नत्रिरज्ज्वा $\frac{२१}{७}$ मपनीय अवशिष्टे $\frac{२}{७}$ अर्धिते $\frac{१}{७}$ तद्बहिः सूचीभूमिः । पुनरपि तद्व्यासे $\frac{१९}{७}$ एकसमच्छिन्नरज्जु $\frac{८}{७}$ मपनीय अवशिष्टे $\frac{१२}{७}$ अर्धिते $\frac{६}{७}$ उपरितनत्रिभुजभूमिः । एतदुपरितनव्यासे $\frac{१५}{७}$ एकरज्जु $\frac{७}{७}$ मपनीय अवशिष्टे $\frac{८}{७}$ अर्धिते $\frac{४}{७}$ अग्रसूचीभूमिः । मुखभूमिजोगदलेत्यादिना अधउपतनबहिः सूचीक्षेत्रफल $\frac{१}{५६}$ $\frac{१}{५६}$ मानीय तत् तयोरंतः क्षेत्रफले भुजकोटिवधेत्यादिना आनीते $\frac{३}{२}$ $\frac{१}{२}$ अष्टाविंशत्या समच्छिन्ने $\frac{८४}{५६}$ $\frac{२८}{५६}$ स्फेटयित्वा एकक्षेत्रस्यैतावति $\frac{८३}{५६}$ $\frac{२७}{५६}$ द्वयोः किमिति संपात्यापवर्तिते $\frac{८३}{२८}$ $\frac{२७}{२८}$ अधस्तनोपरितनबहिःसूच्यंतः क्षेत्रफलं भवति । इतरेषां क्षेत्राणां फलं मुखभूमी जोगदलेत्यादिनानीय चतुर्भिः समानछेदं कृत्वा परस्परं मेलयित्वा भक्ते दशरज्जवः मध्यसप्तरज्जवः तत्पार्श्वाष्टदलानां चतूरज्जवः । एवं सर्वेषां मेलने पिनष्टि क्षेत्रफलं २१ भवति ॥ १२० ॥

अतो लोकस्य पूर्वापरेण दक्षिणोत्तरेण च परिधिं दर्शयन्नाह;—

पुव्वावरेण परिही उगुदालं साहियं तु रज्जूणं ।
दक्खिणउत्तरदो पुण बादालं होंति रज्जूणं ॥ १२१ ॥

पूर्वापरेण परिधिः एकोनचत्वारिंशत् साधिकं तु रज्जूनाम् ।
दक्षिणोत्तरतः पुनः द्वाचत्वारिंशत् भवंति रज्जूनाम् ॥ १२१ ॥

पुव्वा । पूर्वापरेण परिधिः एकोनचत्वारिंशत् ३९ साधिका $\frac{४३}{१२०}$ रज्जूनां, दक्षिणोत्तरतः पुनर्द्वाचत्वारिंशद्भवंति रज्जूनाम् ॥ १२१ ॥

साधिकत्वं कथमिति चेदाह;—

भुजकोडिकदिसमासो कण्णकदी होदि वग्गरासिस्स ।
गुणयारभागहारा वग्गाणि हवंति णियमेण ॥ १२२ ॥

भुजकोटिकृतिसमासः कर्णकृतिः भवति वर्गराशेः ।
गुणकारभागहारौ वर्गौ भवतः नियमेन ॥ १२२ ॥

भुज । भुज ७ कोटि ३ कृति ४९।९ समासः ५८ कर्णकृतिर्भवति । एकपार्श्वस्यैतावति ५८ द्वयोः पार्श्वयोः किमिति वर्गराशेर्गुणकारभागहारौ वर्गात्मकौ भवतः ५८।२२ नियमेन । एतत्संगुण्य २३२ मूले गृहीते १५ $\frac{७}{३०}$ अधोलोकस्य साधिकत्वमभूत् । भुज $\frac{७}{२}$ कोटि २ कृति $\frac{४९}{४}$ । ४ चतुर्भिस्समछेदेन समासे $\frac{६५}{४}$ कर्णकृतिः एक पार्श्वस्यैताबति $\frac{६५}{४}$ चतुर्णां-किमिति संपात्यापवर्त्य गुणयित्वा २६० मूले गृहीते १६ $\frac{४}{३२}$ ऊर्ध्वलोकस्य साधिकत्वमभूत् । मिलितोभयपरिधिरज्जुषु ३१ अधोलोकाधःपरिधिः ७ ऊर्ध्वलोकपरिधेश्च १ मेलने ८ व्येकचत्वारिंशत्वं ३९ अधिकोभयहारा ३०।३२ वर्धीकृत्य १५।१६ ताभ्यामन्योन्यमंशछेदौ १६ $\frac{७}{३०}$ $\frac{४}{३२}$ १५ गुणयित्वा $\frac{११२}{४८०}$ $\frac{६०}{४८०}$ संमेल्य $\frac{१७२}{४८०}$ चतुर्भिरपवर्तने $\frac{४३}{१२०}$ उभयलोका-धिक्यं स्यात् । दक्षिणोत्तरपरिधिः सुगमः ॥ १२२ ॥

अथ लोकपरिवेष्टितवायुस्वरूपादिनिर्णयार्थमाह;—

गोमुत्तमुग्गणाणावण्णाण घणंबुघणतणूण हवे ।
वादाणं वलयतयं रुक्खस्स तयं व लोगस्स ॥ १२३ ॥

गोमूत्रमुद्गनानावर्णानां घनांबुघनतनूनां भवेत् ।
वातानां वलयत्रयं वृक्षस्य त्वगिव लोकस्य ॥ १२३ ॥

गोमुत्त । गोमूत्रमुद्गनानावर्णानां घनोदधिघनवाततनुवातानां वलयत्रयं लोकस्य भवेत् वृक्षस्य त्वगिव ॥ १२३ ॥

अथ तद्वायूनां बाहुल्यनिर्णयार्थमाह;—

जोयणवीससहस्सं बहलं वलयत्तयाण पत्तेयं ।
भूलोयतले पासे हेट्ठादो जाव रज्जुत्ति ॥ १२४ ॥

योजनविंशसहस्रं बाहुल्यं वलयत्रयाणां प्रत्येकम् ।
भूलोकतले पार्श्वे अधस्तात् यावत् रज्जुरिति ॥ १२४ ॥

जोयण । योजनविंशतिसहस्रं बाहुल्यं वलयत्रयाणां प्रत्येकं भवेत् । कुत्र कुत्रेतिचेत् । भुवां ८ तले लोकतले पार्श्वे अधस्ताद्यावदेका रज्जुस्तावत्१२४

अथोपरिमवायुबाहुल्यनिर्णयार्थमाह;—

सत्तमखिदिपणिधिम्हि य सग पणचत्तारिपणचउक्कतियं
तिरिये बम्हे उड्ढे सत्तमतिरिए च उत्तकमं ॥ १२५ ॥

सप्तमक्षितिप्रणिधौ च सप्त पंच चतुष्कं पंच चतुष्कं त्रिकम् ।
तिरश्चि ब्रह्मे ऊर्ध्वे सप्तमतिरश्चि च उत्क्रमः ॥ १२५ ॥

सत्तम । सप्तमक्षितिसदृशे च वायुत्रयाणां यथासंख्येन सप्त पंच चतुष्कं बाहुल्यं, तिर्यक्क्षितिप्रणिधौ पंच चतुष्कं त्रिकं बाहुल्यं । ब्रह्मलोकोर्ध्वलोकप्रणिधौ पुनः सप्तमतिर्यक्क्षितौ उत्क्रमः ॥ इदानीं सप्तमक्षितिमारभ्य तिर्यग्भूमिपर्यंतं मध्यक्षितीनां हानिः मुह १२ भूमीण १६ विसेसे ४ उदय ६ हृतेत्यादिना हानिं आनीय $\frac{4}{6}$ भूमौ १६ एकं निष्काश्य समच्छिन्ने $\frac{6}{6}$ तस्मिन् तद्धानिं स्फेटयित्वा $\frac{2}{6}$ अपवर्तिते $\frac{1}{3}$ षष्ठभूप्रणिधिवायुबाहुल्यं स्यात् $\frac{15}{3}$ तत्रैकं गृहीत्वा तद्धानि $\frac{4}{6}$ मेव तथा स्फेटयित्वा $\frac{2}{6}$ पवर्त्य $\frac{1}{3}$ प्राक्तनात्रिभागमेलने पंचमभूवायुबाहुल्यं स्यात् $\frac{14}{6}$ । एवमेव तिर्यग्लोकपर्यंतं वायुहानिबाहुल्यं ज्ञातव्यं १४ $\frac{13}{6}$ — $\frac{12}{6}$ १२ । इतः ऊर्ध्वलोकवायुचयं मुख १२ भूम्योः १६ विशेषं कृत्वा ४ आहुट्ठोदयस्य $\frac{7}{2}$ चतुश्चये ४ अर्धद्वितीयोदयस्य $\frac{3}{2}$ कियान् चय इति संपात्यानीय तत् $\frac{12}{7}$ एतावन्मुखे १२ समच्छेदेन $\frac{84}{7}$ संयोज्य $\frac{96}{7}$ भक्ते $\frac{13}{5}$ दिवड्ढप्रणिधिवायुबाहुल्यं स्यात् । एवमेव तत्र तत्र पृथक् पृथक् त्रैराशिकविधिना उपरितनतत्तद्वायुचयहानिबाहुल्यमानयेत् ॥ १२५ ॥

अथ लोकाग्रवायुबाहुल्यं द्योतयन्नाह;—

कोसाणं दुगमेक्कं देसूणेक्कं च लोयसिहरम्मि।
ऊणधणूण पमाणं पणुवीसज्झहियचारिसयं ॥ १२६ ॥

क्रोशानां द्विकमेकं देशोनैकं च लोकशिखरे।
ऊनधनुषां प्रमाणं पंचविंशाधिकचतुःशतम् ॥ १२६ ॥

कोसाणं। क्रोशानां द्विकमेकं देशोनैकं च लोकशिखरे ऊनधनुषां प्रमाणं। किमित्युक्ते पंचविंशत्यधिकचतुःशतमित्युक्तम् ॥ १२६ ॥

अथ लोकाधस्तनवायुक्षेत्रफलमानयन्नाह;—

लोयतले वादतये बाहल्लं सट्ठिजोयणसहस्सं।
सेढिभुजकोडिगुणिदं किंचूणं वाउखेत्तफलं ॥ १२७ ॥

लोकतले वातत्रये बाहुल्यं षष्ठियोजनसहस्रम्।
श्रेणिभुजकोटिगुणितं किंचिदूनं वायुक्षेत्रफलम् ॥ १२७ ॥

लोयतले। लोकतले वातत्रये बाहुल्यं षष्ठियोजनसहस्रं, श्रेणिभुजकोटिगुणितं पूर्वापरेण समचतुरस्रत्वाभावात् किंचिन्न्यूनवेधं वायुक्षेत्रफलं स्यात् ॥ १२७ ॥

अथ तदुपरि वायुक्षेत्रफलानयनमाह;—

किंचूणरज्जुवासो जगसेढीदीहरं हवे वेहो।
जोयणसट्ठिसहस्सं सत्तमखिदिपुव्वअवरे य ॥ १२८ ॥

किंचिदूनरज्जुव्यासः जगच्छ्रेणिदैर्घ्यं भवेत् वेधः।
योजनषष्टिसहस्रं सप्तमक्षितिपूर्वापरे च ॥ १२८ ॥

किंचूण। किंचिन्न्यूनरज्जुव्यासः जगच्छ्रेणिदैर्घ्यं भवेत्। वेधः योज-

नषष्ठिसहस्रं सप्तमपृथिव्याः पूर्वापरद्वयोः क्षेत्रयोः फलं । भुजकोटिवधेत्यादिना एकभागस्यैतावति द्वयोर्भागयोः किमिति संपातेन चानेतव्यम् ॥ १२८ ॥

इतः परं सिद्धफलमाह;—

जगपदरसत्तभागं सट्ठिसहस्सेहि जोयणेहि गुणं ।
विगगुणिदमुभयपासे वादफलं पुव्वअवरे य ॥ १२९ ॥

जगत्प्रतरसप्तभागः षष्टिसहस्रैः योजनैः गुणः ।
द्विकगुणितः उभयपार्श्वे वातफलं पूर्वापरयोः च ॥ १२९ ॥

जग । जगत्प्रतरसप्तमभागः षष्ठिसहस्रैर्योजनैर्गुणितः द्विकगुणितः उभयपार्श्वे वातफलं पूर्वापरयोः ॥ १२९ ॥

अथ दक्षिणोत्तरवातक्षेत्रफलानयनप्रकारमाह;—

उदयमुहभूमिवेहो रज्जुससत्तमछरज्जुसेढी य ।
जोयणसट्ठिसहस्सं सत्तमखिदिदक्खिणुत्तरदो ॥ १३० ॥

उदयमुखभूमिवेधाः रज्जुससप्तमषड्रज्जुश्रेण्यः च ।
योजनषष्टिसहस्रं सप्तमक्षितिदक्षिणोत्तरतः ॥ १३० ॥

उदय । उदयमुखभूमिवेधाः यथासंख्यं रज्जुससप्तमषड्रज्जुश्रेण्यः योजनषष्ठिसहस्रं सप्तमक्षितिदक्षिणोत्तरतः । मुखभूमिजोगदलेत्यादिना प्राग्वत्त्रैराशिकविधिना चानेतव्यम् ॥ १३० ॥

तथैव तत्फलमुच्चारयति;—

तस्स फलं जगपदरो सट्ठिसहस्सेहि जोयणेहि हदो ।
बाणउदिगुणो सगघणसंभजिदो उभयपासम्हि ॥ १३१ ॥

तस्य फलं जगत्प्रतरः षष्टिसहस्रैः योजनैः हतः ।
द्वानवतिगुणः सप्तघनसंभक्तः उभयपार्श्वे ॥ १३१ ॥

तस्स । छायामात्रमेवार्थः ॥ १३१ ॥

अथ तदुपरि पूर्वापरपार्श्ववातफलमानयन्नाह;—

सेढी छरज्जु चोद्दसजोयणमायामवासमुस्सेहं ।
पुव्ववरपासजुगले सत्तमदो तिरियलोगोत्ति ॥ १३२ ॥

श्रेणी षट्रज्जु चतुर्दशयोजनं आयामव्यासोत्सेधम् ।
पूर्वापरपार्श्वयुगले सप्तमतः तिर्यग्लोकांतं ॥ १३२ ॥

सेढी । श्रेणी षट्रज्जुचतुर्दशयोजनानि आयामव्यासोत्सेधाः पूर्वापरपार्श्वयुगले सप्तमतस्तिर्यग्लोकपर्यंतं । भुजकोटीत्यादिना द्विरपवर्त्योभयपार्श्वार्थं द्वाभ्यां संगुण्य नेतव्यम् ॥ १३२ ॥

अथ तस्य सिद्धफलमुच्चारयति;—

तव्वादरुद्धखेत्तं जोयणचउवीसगुणिदजगपदरं ।
उभयदिसासंजणिदं णादव्वं गणिदकुसलेहिं ॥ १३३ ॥

तद्वातरुद्धक्षेत्रं योजनचतुर्विंशतिगुणितजगत्प्रतरम् ।
उभयदिशासंजातं ज्ञातव्यं गणितकुशलैः ॥ १३३ ॥

तव्वाद । तद्वातावरुद्धक्षेत्रं योजनचतुर्विंशतिगुणितजगत्प्रतरं उभयदिशासंजातं ज्ञातव्यं गणितकुशलैः ॥ १३३ ॥

अथ दक्षिणोत्तरपार्श्ववातफलमानयति;—

उदयं भूमुह वेहो छरज्जु सत्तमछरज्जु रज्जू य ।
जोयण चोद्दस सत्तमतिरियोत्ति हु दक्खिणुत्तरदो ।१३४।

उदयः भूमुखं वेधः षड्रज्जवः सप्तमषट्रज्जवः रज्जुश्च ।
योजनचतुर्दश सप्तमास्तिर्यगंतं हि दक्षिणोत्तरतः ॥ १३४ ॥

उदयं । उदयः भूमुखं वेधः षड्रज्जवः ससप्तमषड्रज्जवः एकरज्जुः

-योजनचतुर्दशसप्तमतास्तिर्यक्पर्यंतं खलु दक्षिणोत्तरतः मुखभूमीत्येकवारम-पवर्त्यानेतव्यम् ॥ १३४ ॥

अथ तत्सिद्धफलमुच्चारयति;—

तत्थाणिलखेत्तफलं उभये पासम्हि होइ जगपदरं ।
छस्सयजोयणगुणिदं पविभत्तं सत्तवग्गेण ॥ १३५ ॥

तत्रानिलक्षेत्रफलं उभयस्मिन् पार्श्वे भवति जगत्प्रतरः ।
षट्छतयोजनगुणितः प्रविभक्तः सप्तवर्गेण ॥ १३५ ॥

तत्था । छायामात्रमेवार्थः ॥ १३५ ॥

अथोर्ध्वलोकपूर्वापरचतुःपार्श्ववायुफलमानयन्नाह;—

आउट्ठरज्जुसेढी जोयणचोद्दस य वासभुजवेहो ।
बम्होत्ति पुव्वअवरे फलमेदं चदुगुणं सव्वं ॥ १३६ ॥

अर्धचतुर्थरज्जुश्रेणिः योजनचतुर्दश च व्यासभुजवेधः ।
ब्रह्मांतं पूर्वापरं फलमेतत् चतुर्गुणं सर्वम् ॥ १३६ ॥

आउट्ठ । अर्धचतुर्थरज्जुश्रेणिर्योजनचतुर्दश च व्यासभुजवेधा ब्रह्म-लोकपर्यंतं पूर्वापरे फलमेतच्चतुर्गुणं सर्वं भुजकोटीत्यानेतव्यम् ॥ १३६ ॥

अथोर्ध्वलोकदक्षिणोत्तरचतुःपार्श्ववायुफलमाह;—

पंचाहुट्ठिगिरज्जू भूतुंगमुहं बिसत्तजोयणयं ।
वेहो तं चउगुणिदं खेत्तफलं दक्खिणुत्तरदो ॥ १३७ ॥

पंचार्धचतुर्थैकरज्जवः भूतुंगमुखं द्विसप्तयोजनकः ।
वेधः तच्चतुर्गुणितं क्षेत्रफलं दक्षिणोत्तरतः ॥ १३७ ॥

पंचा । पंचार्धचतुर्थैकरज्जवः भूतुंगमुखानि द्विसप्त १४ योजनो वेधः तच्चतुर्गुणितं क्षेत्रफलं दक्षिणोत्तरतः मुखभूमीत्यानेतव्यम् ॥ १३७ ॥

अथ लोकाग्रवायुफलमानयति;—

वासुदयभुजं रज्जू इगिजोयणवीसतिसदखंडेसु ।
सतितिसदं सेढी फलमीसिपभारुवरि दंडवाऊणं ॥१३८॥

व्यासोदयभुजा रज्जुः एकयोजनविंशत्रिशतखंडेषु ।
सत्रित्रिशतं श्रेणिः फलमीषत्प्राग्भारोपरि दंडवायूनाम् ॥ १३८ ॥

वासु। व्यासोदयभुजा रज्जु एकयोजनविंशत्युत्तरात्रिशतखंडेषु सत्रित्रिशतं ३०३ श्रेणिश्च एतदीषत्प्राग्भारोपरि दंडवायूनां फलं। वीसातिसदखंडेसु सतितिसदमित्यस्य बीजमुच्यते। दंडीकृतद्विक्रोश ४००० एकक्रोश २००० पंचविंशत्याधिकचतुशतःशतहीनैकक्रोशानां १५ ७५ मेलनं कृत्वा ७५७५ एतावतां दंडानां ८००० एकयोजने एतावतां ७५७५ कियद्योजनमिति संपात्य पंचविंशातिभिरपवर्तने कृते तद्वासनाबीजं स्यात्। भुजकोटीतिफलमानेतव्यम्। लोकाग्रवायुफलं मुक्त्वा इतरेषां वायुफलानां सप्तघन सप्तवर्ग सप्तघन सप्त सप्तघन सप्तघनैः समच्छेदं कृत्वा $\frac{५८८००००}{३४३}+\frac{५५२००००}{३४३}+\frac{८२३२}{३४३}+\frac{४२००}{३४३}+\frac{९६०४}{३४३}+\frac{४११६}{३४३}+$ मेलनं विधाय $\frac{३२००६१५२}{३४३}$ एतत्सर्वं विंशत्युत्तरात्रिशतेन ३२० सप्तवर्गभक्तभणितोपरितनवायुफलेन $\frac{१४८४७}{१०९७६०}$ सह समच्छेदं कृत्वा $\frac{१०२४१९६८६४०}{१०९७६०}$ अनयोर्मेलने $\frac{१०२४१९८३४८७}{१०९७६०}$ सर्ववाताविरुद्धक्षेत्रफलं भवति ॥ १३८ ॥

एतत्सिद्धफलमुच्चारयति;—

सत्तासीदिचदुस्सदसहस्सतेसीदिलक्ख उणवीसं ।
चउवीसहियं कोडिसहस्सगुणियं तु जगपदरं ॥ १३९ ॥

सप्ताशीतिचतुःशतसहस्रत्र्यशीतिलक्षैकोनविंशं ।
चतुर्विंशाधिकं कोटिसहस्रगुणितं तु जगत्प्रतरम् ॥ १३९ ॥

सत्तासी । सप्ताशीतिचतुःशतसहस्रत्र्यशीतिलक्षैकोनविंशतिचतुर्विंशतिसहितकोटिसहस्रगुणितजगत्प्रतरं फलं भवति ॥ १३९ ॥

अस्य भागहारमाह;—

सट्ठीसत्तसएहि णवयसहस्सेगलक्खभजियं तु ।
सव्वं वादारुद्धं गणियं भणियं समासेण ॥ १४० ॥

षष्टिसप्तशतैः नवकसहस्रैकलक्षभक्तं तु ।
सर्वं वातारुद्धं गणितं भणितं समासेण ॥ १४० ॥

सट्ठी । छायामात्रमेवार्थः ॥ १४० ॥

अथ सिद्धानां जघन्योत्कृष्टेनावगाहक्षेत्रमाह;—

णवपण्णारसलक्खा सयाण खंडाणमेयखंडम्हि ।
सिद्धाणं तणुवादे जहण्णमुक्कस्सयं ठाणं ॥ १४१ ॥

नवपंचदशलक्षं शतानां खंडानामेकखंडे ।
सिद्धानां तनुवाते जघन्यमुत्कृष्टं स्थानम् ॥ १४१ ॥

णव । नवलक्षपंचदशशतयोजन ९००००।१५०० खंडानां मध्ये एकस्मिन् खंडे सिद्धानां तनुवाते जघन्यमुत्कृष्टं च स्थानम् ॥ १४१ ॥

अथ तदवगाहं व्यवहारं कुर्वन्नाह;—

पणसयगुणतणुवादं इच्छियउग्गाहणेण पविभत्तं ।
हारो तणुवादस्स य सिद्धाणोगाहणाणयणे ॥ १४२ ॥

पंचशतगुणतणुवातः इच्छितावगाहनेन प्रविभक्तः ।
हारस्तनुवातस्य च सिद्धानामवगाहनानयने ॥ १४२ ॥

पण । पंचशत ५०० गुणित ७८७५०० तनुवातः १५७५ ईप्सितावगाहनेन प्रविभक्तः $\frac{9}{\text{८}}$ हारस्तनुवातस्य च सिद्धानामवगाहनानयने ।

एतावत्खंडानां ९०००० एतावत्सु ७८७५०० व्यवहारदंडेषु एकखंडस्य कियंतो दंडा इति संपात्य एतावता ११२५०० अपवर्तने $\frac{७}{८}$ जघन्यावगाहः एवमुत्कृष्टावगाहो ज्ञातव्यः। उभयत्र चतुर्धापवर्तनविधिश्च ज्ञातव्यः ॥१४२॥

अथ त्रसनालीस्वरूपमाह;—

लोयबहुमज्झदेसे रुक्खे सारव्व रज्जुपदरजुदा ।
चोद्दसरज्जुत्तुंगा तसणाली होदि गुणणामा ॥ १४३ ॥

लोकबहुमध्यदेशे वृक्षे सार इव रज्जुप्रतरयुता
चतुर्दशरज्जूत्तुंगा त्रसनाली भवति गुणनामा ॥ १४३ ॥

लोय । लोकबहुमध्यदेशे वृक्षे सार इव रज्जुप्रतरयुता चतुर्दशरज्जूत्तुंगा त्रसनाली भवति गुणनामा । भुजकोटीत्यादिना तत्फलमानेतव्यं $\frac{१४}{३४३}$ ॥ १४३ ॥

अथ त्रसनाल्यधस्थभूभेदादिमाह;—

मुरवदले सत्तमही उवरीदो रयणसक्करावालू ।
पंका धूमतमोमहतमप्पहा रज्जुअंतरिया ॥ १४४ ॥

मुरजदले सप्तमह्यः उपरितो रत्नशर्करा बालुः ।
पंका धूमतमोमहातमप्रभा रज्ज्वंतरिता ॥ १४४ ॥

मुख । मुरजदले सप्तमह्यः उपरित आरभ्य रत्नशर्करा वालुका पंकधूमतमोमहातमःप्रभाः सर्वा रज्ज्वंतरिताः । अत्र प्रभाशब्दः प्रत्येकमभिसंबध्यः ॥ १४४ ॥

अथ तासां संज्ञांतराण्याह;—

घम्मा वंसा मेघा अंजणरिट्ठा य होंति अणिउज्झा ।
छट्ठी मघवी पुढवी सत्तमिया माघवी णामा ॥ १४५॥

घर्मा वंशा मेघा अंजनारिष्टा च भवंति अनियोध्याः।

षष्ठी मघवी पृथ्वी सप्तमिका माघवी नाम ॥ १४५ ॥

घम्मा। धर्मा वंशा मेघा अंजनारिष्टाश्च भवंति अनियोध्या याद्दच्छिक-नामानः षष्ठी मघवी पृथ्वी सप्तमी माघवी नाम ॥ १४५ ॥

अथ तत्र प्रथमपृथिवीभेदमाह;—

रयणप्पहा तिहा खरभागा पंकापबहुलभागात्ति।
सोलस चउरासीदी सीदी जोयणसहस्सबाहल्ला॥१४६॥

रत्नप्रभा त्रिधा खरभागा पंकाप्बहुलभागा इति।

षोडश चतुरशीतिः अशीतिः योजनसहस्रबाहुल्या॥ १४६ ॥

रथ। रत्नप्रभा त्रिधा खरभागा पंकभागा अप्बहुलभागा चेति षोडश चतुरशीति अशीतियोजनसहस्रबाहुल्या ॥ १४६ ॥

षोडशभुवां संज्ञा गाथाद्वयेनाह;—

चित्ता वज्जा वेलुरियलोहिदक्खा मसारगल्लवणी।
गोमेदा य पवाला जोदिरसा अंजणा णवमी ॥१४७॥

चित्रा वज्रा वैडूर्या लोहिताख्या मसारकल्पावनिः।

गोमेदा च प्रवाला जोतिरसा अंजना नवमी ॥ १४७ ॥

चित्ता। चित्रा वज्रा वैडूर्या लोहिताख्या मसारकल्पावनिः गोमेदा च प्रवाला ज्योतिरसा अंजना नवमी ॥ १४७ ॥

अंजणमूलिय अंका फलिहा चंदण सवत्थगा वकुला।
सेलक्खा य सहस्सा एगेगा लोगचरिमक्खा ॥ १४८ ॥

अंजनमूलिका अंका स्फटिका चंदना सर्वार्थका बकुला ।
शैलाख्या च सहस्रा एकैका लोकचरमगता ॥ १४८ ॥

अंजण । अंजनमूलिका अंका स्फटिका चंदना सर्वार्थका बकुला शैलाख्या च सहस्रप्रमिता एकैका लोकचरमगताः ॥ १४८ ॥

अथ द्वितीयादीनां बाहुल्यमाह;—

बत्तीसमट्ठवीसं चउवीसं वीस सोलसट्ठाणि ।
हेट्ठिमछप्पुढवीणं सहस्समाणेहिं बाहुलियं ॥ १४९ ॥

द्वात्रिंशदष्टाविंशतिः चतुर्विंशतिः विंशतिः षोडशाष्टौ ।
अधस्तनषट्पृथ्वीनां सहस्रमानैः बाहुल्यं ॥ १४९ ॥

बत्तीस । द्वात्रिंशदष्टाविंशतिः चतुर्विंशतिः विंशतिः षोडशाष्टौ अधस्तनषट्पृथ्वीनां योजनसहस्रबाहुल्यम् ज्ञेयम् ॥ १४९ ॥

अथ तासु स्थितपटलानां स्थानान्याह;—

सत्तमखिदिबहुमज्झे बिलाणि सेसासु अप्पबहुलोत्ति ।
हेट्ठुवरिं च सहस्सं वज्जिय पडलक्कमे होंति ॥ १५० ॥

सप्तमक्षितिबहुमध्ये बिलानि शेषासु अब्बहुलांतं ।
अध उपरि च सहस्रं वर्जयित्वा पटलक्रमेण भवंति ॥ १५० ॥

सत्तम । सप्तमक्षितिबहुमध्ये बिलानि शेषासु अब्बहुलभागपर्यंतं अध-उपरि च सहस्रयोजनं वर्जयित्वा पटलक्रमेण भवंति ॥ १५० ॥

अथ प्रथमादीनां बिलसंख्यामाह;—

तीसं पणुवीसं पण्णरसं दस तिण्णि पंचहीणेक्कं ।
लक्खं सुद्धं पंच य पुढवीसु कमेण णिरयाणि ॥ १५१ ॥

त्रिंशत् पंचविंशतिः पंचदश दश त्रीणि पंचहीनैकं ।
लक्षं शुद्धं पंच च पृथ्वीषु क्रमेण निरयाणि ॥ १५१ ॥

तीसं । त्रिंशत् पंचविंशतिः पंचदश दश त्रीणि पंचहीनैकं एतत्सर्वं लक्षं शुद्धं पंच च पृथ्वीषु क्रमेण निरयाणि विलानि इत्यर्थः ॥ १५१ ॥

अथ तास्वतिशीतोष्णविभागमाह;—

रयणप्पहपुढवीदो पंचमतिचउत्थओत्ति अदिउण्हं ।
पंचमतुरिए छट्ठे सत्तमिए होदि अदिसीदं ॥ १५२ ॥

रत्नप्रभापृथ्वीतः पंचमात्रिचतुर्थांतं अत्युष्णम् ।
पंचमतुरीये षष्ठ्यां सप्तम्यां भवति अतिशीतम् ॥ १५२ ॥

रयण । रत्नप्रभापृथ्वीमारभ्य पंचमभुवः त्रिचतुर्थभागपर्यंतं अत्युष्णं पंचमभुवश्चतुर्थे भागे षष्ठ्यां सप्तम्यां च भुवि भवत्यतिशीतम् ॥ १५२ ॥

अथ तास्विंद्रकश्रेणीबद्धसंख्यामाह;—

तेरादि दुहीणिंदय सेढीबद्धा दिसासु विदिसासु ।
उणवण्णडदालादी एक्केक्केणूणया कमसो ॥ १५३ ॥

त्रयोदशाद्या द्विहीना इंद्रकाः श्रेणीबद्धा दिशासु विदिशासु ।
एकोनपंचाशदष्टचत्वारिंशादि एकैकेन न्यूनाः क्रमशः ॥ १५३ ॥

तेरादि । त्रयोदशाद्या द्विहीना इंद्रकाः श्रेणीबद्धा दिशासु यथासंख्यमेकोनपंचाशदष्टचत्वारिंशदादि पटलं पटलं प्रत्येकैकेन न्यूनाः क्रमशः॥ १५३॥

अथ तास्विंद्रकसंज्ञां गाथाषट्केनाह;—

सीमंतणिरयरोरवभंतुब्भंतिंदया य संभंतो ।
तत्तोवि असंभंतो वीभंतो णवमओ तत्थो ॥ १५४ ॥

सीमंतनिरयरौरवभ्रांतोद्भ्रांतेंद्रकाः च संभ्रांतः ।
ततोपि असंभ्रांतः विभ्रांतः नवमः त्रस्तः ॥ १९४ ॥

सीमंत । सीमंतनिरयरौरवभ्रांतोद्भ्रांतेंद्रकाः च संभ्रांतः ततोऽप्यसंभ्रांतः विभ्रांतः नवमः त्रस्तः ॥ १५४ ॥

तसिदो वक्कंतक्खो होदि अवक्कंतणाम विक्कंतो ।
पढमे तदगो थणगो वणगो मणगो खडा खडिगा॥१५५॥

त्रसितो वक्रांताख्यः भवति अवक्रांतनाम विक्रांतः ।
प्रथमायां ततकः स्तनकः वनकः मनकः खडा खडिका ॥ १९९ ॥

तसिदो । त्रसितो वक्रांताख्यो भवति अवक्रांतनाम विक्रांतः प्रथमपृथिव्यां १३ ततकस्तनकः वनकः मनकः खडा खडिका ॥ १५५ ॥

जिब्भा जिब्भिगसण्णाती लोलिगलोलवत्थथणलोलो ।
विदिए तत्तो तविदो तवणो तावणणिदाहा य ॥१५६॥

जिह्वा जिह्विकसंज्ञा ततो लोलिकलोलवत्सस्तनलोलाः ।
द्वितीयायां तप्तः तपितः तपनः तापननिदाघौ च ॥ १९६ ॥

जिब्भा । जिह्वा जिह्विकसंज्ञा ततो लोलिकलोलवत्सस्तनलोलाः द्वितीयायां ११ तप्तस्तपितस्तपनस्तापननिदाघौ च ॥ १५६ ॥

उज्जलिदो पज्जलिदो संजलिदो संपजलिदणामा य ।
तदिए आरा मारा तारा चच्चा य तमगी य ॥ १५७ ॥

उज्वलितः प्रज्वलितः संज्वलितः संप्रज्वलितनामा च ।
तृतीयायां आरा मारा तारा चर्चा च तमकी च ॥ १९७ ॥

उज्ज । उज्ज्वलितः प्रज्वलितः संज्वलितः संप्रज्वलितनामा च तृतीयायां ९ आरा मारा तारा चर्चा च तमकी च ॥ १५७ ॥

घाडा घडा चउत्थे तमगा भमगा य झसग अद्धिंदा ।
तिमिसा य पंचमे हिमवद्दललल्लगितयं छट्ठे ॥ १५८ ॥

घाटा घटा चतुर्थ्यां तमका भ्रमका च झषगा अंधेंद्रा ।
तिमिश्रा च पंचम्यां हिमवार्दलिल्लकात्रितयं षष्ठ्याम् ॥ १५८ ॥

घाडा । घाटा घटा चतुर्थ्यां ७ तमका भ्रमका च झषका अंधेंद्रा तिमिश्रा च पंचम्यां ५ हिमवार्दलिल्लक्यः इति त्रयं ३ षष्ठ्यां ॥ १५८ ॥

ओहिट्ठाणं चरिमे तो सीमंतादिसेढिबिलणामा ।
पुव्वादिदिसे कंखापिवास महकंख अइपिवासा य॥१५९॥

अप्रतिस्थानं चरमे ततः सीमंतादिश्रेणिबिलनामानि ।
पूर्वादिदिशायां कांक्षा पिपासा महाकांक्षा अतिपिपासा च ॥ १५९ ॥

ओहि । अवधिस्थानं अप्रतिष्ठितस्थानं वा चरमे चरमायां । ततः सीमंतादिश्रेणिविलनामानि । घर्मायाः पूर्वादिदिशायां कांक्षा पिपासा महाकांक्षा अतिपिपासा च ॥ १५९ ॥

अथोत्तरार्धस्य पातनिकां गर्भीकृत्य गाथात्रयमाह;—

वंसतदगे अणिच्छा अविज्ज महणिच्छ महअविज्जा य ।
तत्ते दुक्खा वेदा महदुक्ख महादिवेदा य ॥ १६० ॥

वंशाततके अनिच्छा अविद्या महानिच्छा महाऽविद्या च ।
तप्ते दुःखा वेदा महादुःखा महादिवेदा च ॥ १६० ॥

वंस । वंशायास्ततकेंद्रके अनिच्छा अविद्या महानिच्छा महाविद्या च । मेघायाः तप्तेंद्रके दुःखा वेदा महादुःखा महावेदा च ॥ १६० ॥

आराए दु णिसिट्ठाणिरोहअणिसिट्ठमहणिरोहा य ।
तमग णिरुद्धविमद्दण अइपुव्वणिरुद्धमहविमद्दणया ॥

आरायां तु निसृष्टा निरोधा अनिसृष्टा महानिरोधा च ।
तमके निरुद्धविमर्दनअतिपूर्वनिरुद्धमहाविमर्दनाः ॥ १६१ ॥

आराए । अंजनायाः आरेंद्रके तु निसृष्टा निरोधा अनिसृष्टा महानिरोधा च अरिष्टायाः तमकेंद्रके निरुद्धविमर्दनअतिनिरुद्धमहाविमर्दनकाश्च ॥ १६१ ॥

हिमगा णीला पंका महणील महादिपंक सत्तमय ।
पढमो कालो रउरवमहकालमहादिरउरवया ॥ १६२ ॥

हिमके नीला पंका महानीला महादिपंका सप्तमायाम् ।
प्रथमः कालः रौरवमहाकालमहादिरौरवाः ॥ १६२ ॥

हिमगा । मघव्याः हिमकेंद्रके नीला पंका महानीला महापंका च सप्तमायां प्रथमः कालः रौरवमहाकालमहारौरवाः ॥ १६२ ॥

अथ प्रतिपृथ्वि प्रथमपटलधनं धृत्वा चरमपटलधनमानेतुं चरमपटलधनं धृत्वा प्रथमपटलधनमानेतुं वा गाथामाह;—

वेगपदं चयगुणिदं भूमिह्मि मुहम्मि रिणधनं च कए ।
मुहभूमीजोगदले पदगुणिदे पदधणं होदि ॥ १६३ ॥

व्येकपदं चयगुणितं भूमौ मुखे ऋणं धनं च कृते ।
मुखभूमियोगदले पदगुणिते पदधनं भवति ॥ १६३ ॥

वेगपदं । प्रथमपटलदिग्विदिग्गतश्रेणिबद्धे द्वे ४९+४८ मेलयित्वा ९७ चतुर्भिः संगुणिते ३८८ भूमिर्भवति । चरमपटलदिग्विदिग्गतश्रेणिबद्धे द्वे ३७+३६ मेलयित्वा ७३ चतुर्भिर्गुणिते २९२ मुखं स्यात् । तत्र

भूमौ ३८८ मुखे च २९२ यथासंख्येन किंतैकं पदं १२ चय ८ गुणितं ९६ ऋणे धने च कृते २९२।३८८ मुखभूमी स्यातां । तयोर्योगे ६८० दलिते ३४० पद १३ गुणिते ४४२० प्रथमपृथ्वीश्रेणिबद्धसंकलितपद-धनं भवति । इंद्रकसहितमेवामानेतव्यं ४४३३ । समस्तपृथ्वीश्रेणी-बद्धानयनेऽप्येवमेवानेतव्यम् । तत्र मुखं ५ भूमिः ३८९ ॥ १६३ ॥

इंद्रकश्रेणीबद्धप्रमाणानयने संकलितसूत्रमाह;—

पदमेगेणविहीणं दुभाजिदं उत्तरेण संगुणिदं ।
पभवजुदं पदगुणिदं पदगणिदं तं विजणाहि ॥ १६४ ॥

पदमेकेन विहीनं द्विभक्तं उत्तरेण संगुणितं ।
प्रभवयुतं पदगुणितं पदगणितं तत् विजानीहि ॥ १६४ ॥

पद । पदं १३ एकेन हीनं १२ द्वाभ्यां भक्तं ६ उत्तरेण संगुणितं ४८ प्रभव २९२ युतं ३४० पद १३ गुणितं ४४२० तत्संकलितपदगणित मिति विजानीहि । एवं द्वितीयादि सर्वपृथिव्यामानेतव्यं ॥ १६४ ॥

अथ प्रकारांतरेण संकलितानयनमाह;—

पुढविंदयमेगूणं अद्धकयं वग्गियं च मूलजुदं ।
अट्ठगुणं चउसहितं पुढविंदयताडियं च पुढविधणं १६५

पृथ्वींद्रकमेकोनं अर्धकृतं वर्गितं च मूलयुतम् ।
अष्टगुणं चतुःसहितं पृथ्वींद्रकताडितं च पृथ्विधनम् ॥ १६५ ॥

पुढविं । पृथ्वींद्रकसंख्या १३ एकोनां १२ संस्थाप्य अनेन हानि-वृद्ध्योरभावात् प्रथमपटले चयशलाका प्ररूपिता । अर्धीकृतां चयश-लाकां ६।८ स्थापयेत् । अनेन सर्वत्र पटलेषु रूपोनगच्छार्धमात्र्यश्चय-शलाकाः समीकृता जाता इति अद्धकय मित्युक्तं । वग्गियं च अत्र

दिग्गतेषु सर्वत्र रूपचतुष्टयमपनीय पृथक् संस्थाप्य अपनीतदिग्विदिग्गत संख्या ३६।८ सर्वत्र समाना । इदमेवादिंदयं । इदं सर्वत्र सदृशमेवावतिष्ठते । इदं दृष्ट्वा वर्गितं चेत्युक्तं । मूलजुदं आदिधनवर्गमूल प्रमाणया चयशलाकया ६।८ युतं आदिधनं ३६।८ गुणकारयोः साम्यात् आदिधने ३६ चयशलाका ६ संयोज्या ४२ अट्ठगुणं दिग्विदिग्गतगुणकाराष्टकेन ८ चयशलाकायुतादि ३६।८ धनं ४२ गुणयेत् ३३६ । अत्र चउसहियं पूर्वं पृथक्स्थापितदिग्गताधिकरूपचतुष्टयं मेलयेत् ३४० पुढविंदयताडियं च इदं समीकरणवशात् सर्वेषु पटलेषु समानमिति कृत्वा एकस्मिन् पटले १ एतावंति श्रेणिनिबद्धानि यदि स्युः ३४० तदा त्रयोदशसु पटलेषु १३ कियंति स्युरिति त्रैराशिकेन समुत्पन्नगुणकारेण पृथ्वींद्रकप्रमाणेन ताडिते पुढविधणं पृथ्वीगतश्रेणीबद्धप्रमाण स्यात् ४४२० । एवं द्वितीयादिषु पृथ्वीष्वपि श्रेणिबद्धप्रमाणमानेतव्यम् ॥ १६५ ॥

अथ प्रकीर्णकसंख्यानयनमाह;—

सेढीणं विच्चाले पुप्फपइण्णय इव ट्ठिया णिरया ।
होंति पइण्णयणामा सेढिंदयहीणरासिसमा ॥ १६६ ॥

श्रेणीनां अंतराले पुष्पप्रकीर्णकानि इव स्थितानि निरयाणि ।
भवंति प्रकीर्णकनामानि श्रेणींद्रकहीनराशिसमानि ॥ १६६ ॥

सेढीणं । श्रेणीनां विच्चाले अंतराले पुष्पाणि प्रकीर्णकानीव स्थितानि निरयाणि भवंति । प्रकीर्णकनामानि श्रेणींद्रक ४४२०।१३ हीनराशि ३०००००० समानानि २९९५५६७ । एवं पृथ्वीं प्रत्यानेतव्यम् ॥ १६६ ॥

अथ नरकबिलानां विस्तारप्रतिपादनार्थमाह;—

पंचमभागपमाणा णिरयाणं होंति संखवित्थारा ।
सेसचउपंचभागा असंखवित्थारया णिरया ॥ १६७ ॥

पंचमभागप्रमाणा निरयाणां भवंति संख्यविस्तारा: ।
शेषचतु:पंचभागा असंख्यविस्ताराणि नरकाणि ॥ १६७ ॥

पंचम । पंचमभागप्रमाणा ३०००००० नरकाणां भवंति संख्येय-विस्तारा: ६००००० तच्छेषचतु:पंचभागा: २४००००० असंख्येय-विस्ताराणि नरकाणि संख्येयविस्तारेषु ६००००० इंद्रकापनयने १३ कृते ५९९९८७ अवशिष्टानि संख्येयविस्तारप्रकीर्णकानि भवंति । असंख्येयविस्तारेषु २४००००० श्रेणीबद्धा ४४२० पनयने कृते २३९५५८० शेषाणि असंख्येयविस्तारप्रकीर्णकानि भवंति प्रत्येकं द्वितीयादिपृथिव्यां समस्ते च धने एवमेवमानेतव्यं ॥ १६७ ॥

अथ संख्यातासंख्यातयोर्नियतत्वं प्रदर्शयन्नाह;—

इंदयसेढीबद्धा पइण्णयाणं कमेण वित्थारा ।
संखेज्जमसंखेज्जं उभयं च य जोयणाण हवे ॥ १६८ ॥

इंद्रकश्रेणीबद्धप्रकीर्णकानां क्रमेण विस्तारा: ।
संख्येयमसंख्येयमुभयं च च योजनानां भवेत् ॥ १६८ ॥

इंदय । छायामात्रमेवार्थ: ॥ १६८ ॥

अथेंद्रकगतरुंद्रत्वं विशेषयति;—

माणुसखेत्तपमाणं पढमं चरिमं तु जंबुदीवसमं ।
उभयविसेसे रूऊणिंदयभजिदम्हि हाणिचयं ॥ १६९ ॥

मानुषक्षेत्रप्रमाणं प्रथमं चरमं तु जंबूद्वीपसमम् ।
उभयविशेषे रूपोनेंद्रकभक्ते ह्यनिचयं ॥ १६९ ॥

माणुस । मानुषक्षेत्रप्रमाणं ४५००००० प्रथमेंद्रकप्रमाणं चरमेंद्रकं जंबूद्वीप १००००० समं उभयोर्विशेषे शोधने ४४००००० रूपन्यूनेंद्रक

४८ भक्ते शेषे च $\frac{३२}{४८}$ षोडशभिरपवर्तिते ९१६६६$\frac{२}{३}$ हानिचयं ज्ञातव्यं । एतद्धानिचयं पंचचत्वारिंशल्लक्षे स्फेटने कृते ४४०८३३३$\frac{१}{३}$ द्वितीयेंद्रकायामप्रमाणं स्यात् । एवमुपर्युपरींद्रकायामप्रमाणे ४४०८३३३$\frac{१}{३}$ तद्धानिमेव ९१६६६$\frac{२}{३}$ स्फेटयित्वा अवशिष्टमधो ४८४ इंद्रकायामप्रमाणं स्यात् ॥ १६९ ॥

अथेंद्रकादित्रयाणां बाहुल्यं प्रमाणयति;—

छक्कट्ठचोद्दसादिसु पडिपुढविमुखद्धसहियकोसेसु ।
छहिं भजिदेसु बहलं इंदयसेढीपइण्णाणं ॥ १७० ॥

षट्काष्टचतुर्दशादिषु प्रतिपृथ्वीमुखार्धसहितक्रोशेषु ।
षड्भिः भक्तेषु बाहुल्यं इंद्रकश्रेणीप्रकीर्णानाम् ॥ १७० ॥

छक्कट्ठ । षट्का ६ ष्ट ८ चतुर्दशसु १४ आदिषु प्रथमपृथ्वींद्रकादिषु षड्भिभक्तेषु १ $\frac{४}{३}$ $\frac{७}{३}$ प्रथमक्षितींद्रकादिबाहुल्यं स्यात् । द्वितीयादि प्रतिपृथ्विमुखार्ध ३ । ४ । ७ । सहितेषु तेषु ६ । ८ । १४ क्रोशेषु ९ । १२ । २१ छ १२ । १६ । २८ छ १५ । २० । ३५ छ १८ । २४ छ २१ । २८ । ४९ छ २४ । ३२ । ० षड्भिर्भक्तेषु $\frac{३}{२}$ । २ । $\frac{७}{२}$ इत्यादि, बाहुल्यं इंद्रकश्रेणीबद्धप्रकीर्णकानाम् ॥ १७० ॥

अथ पुनरपि तद्बाहुल्यं प्रकारांतरेणाह;—

रूवहियपुढविसंखं तियचउसत्तेहि गुणिय छब्भजिदे ।
कोसाणं बेहुलियं इंदयसेढीपइण्णाणं ॥ १७१ ॥

रूपाधिकपृथ्विसंख्यां त्रिकचतुःसप्तभिः गुणयित्वा षड्भक्ते ।
क्रोशानां बाहुल्यं इंद्रकश्रेणीप्रकीर्णानाम् ॥ १७१ ॥

रूप । रूपाधिकपृथ्विसंख्यां २ । २ । २ । छ ३ । ३ । ३ छ ४ । ४ । ४ छ । इत्यादि त्रि ३ चतुः ४ सप्तभि ७ गुणयित्वा ६ । ८ । १४

छ ९ । १२ । २१ । छ १२ । १६ । २८ इत्यादि प्रत्येकं षड्भिर्भागे कृते १ । $\frac{४}{३}$ । $\frac{७}{३}$ । $\frac{३}{२}$ । २ । $\frac{७}{२}$ । २ । $\frac{८}{३}$ । $\frac{१४}{३}$ । इत्यादि क्रोशानां बाहुल्यं इंद्रक-श्रेणीबद्धप्रकीर्णकानाम् ॥ १७१ ॥

अथेंद्रकप्रभृतीनां व्यवधानप्रमाणमाह;—

पदराहय बिलबहलं पदरट्ठिदभूमिदो विसोहित्ता ।
रूऊणपदहिदाए बिलंतरं उड्ढगं तीए ॥ १७२ ॥

प्रतराहतं बिलबाहल्यं प्रतरास्थितभूमितः विशोध्य ।
रूपोनपदहृतायां बिलांतरं ऊर्ध्वगं तस्याः ॥ १७२ ॥

पदर । प्रतरा १३ हतं बिलबाहल्यं इंद्रक १ श्रेणीबद्ध $\frac{४}{३}$ प्रकीर्णकानां $\frac{७}{३}$ बाहुल्यं १३ । $\frac{५३}{३}$ । $\frac{९१}{३}$ चतुःक्रोशानां एकयोजने इयतां क्रोशानां किमिति संपात्य योजनं कृत्वा तत् $\frac{१३}{४}$ । $\frac{५२}{१२}$ । $\frac{९१}{१२}$ प्रतरस्थित-भूमितः उपर्यधः सहस्रसहस्रयोजनहीनाशीतिसहस्रे ७८००० तथा हीन-बत्तीस ३०००० मट्ठावीसादि २६००० सहस्रे च समानछेदेनापनीय $\frac{३११९८७}{११}$ श्रेणीबद्धं चतुर्भिरपवर्त्यापनीय $\frac{२३३९८७}{३}$ प्रकीर्णकं समच्छेदे-नापनीय $\frac{९३५९०९}{१२}$ रूपन्यूनपद १२ हृतायां सत्यां $\frac{३११९८७}{४८}$ । $\frac{२३३९८७}{३६}$ $\frac{९३५९०९}{१४४}$ तत्पृथिव्या ऊर्ध्वगं बिलांतरं भवति ॥ १७२ ॥

अथोपरिमाधस्तनपटलयोरंतरं निरूपयति;—

उवरिमपच्छिमपडला हिट्ठिमपढमिल्लपत्थरंतरयं ।
रज्जू तिसहस्सूणिदघम्मा वंसुदयपरिहीणा ॥ १७३ ॥

उपरिमपश्चिमपटलात् अधस्तनप्रथमप्रस्तरांतरका ।
रज्जुः त्रिसहस्रोनितघर्मा वंशोदयपरिहीना ॥ १७३ ॥

उवरिम । उपरिमपश्चिमपटलात् अधस्तनप्रथमपटलांतरगा रज्जुः । सा कथंभूता ? घर्मोपरिमचित्रासंबद्धघर्मापश्चिमपटलाधस्तनसहस्रं वंशा-

प्रथमपटलोपरितनसहस्रमिति त्रिसहस्रोनितघर्मा १८०००० वंशो ३२०००० दय २११२०००० परिहीना स्यात् ७२०९००० ॥ १७३ ॥

अथ ततोप्यधोधो भूमीनां पटलयोरंतरं निरूपयति;—

कमसो बिसहस्सूणियमेघादीणं च वेहपरिहीणा ।
चरिमे बितिभागाहियजोयणतिसहस्सपरिवज्जा ॥ १७४ ॥

क्रमशो द्विसहस्रोनितमेघादीनां च वेधपरिहीना ।
चरमे द्वित्रिभागाधिकयोजनत्रिसहस्रपरिवर्जा ॥ १७४ ॥

कमसो । क्रमशो द्विसहस्रोनितमेघादीनां च वेध २८०००/२००० । २४/२००० ॥ २०००/२००० । १६०००/२००० परिहीना चरमांतरानयने द्वित्रिभागा २/३ धिकयोजनत्रिसहस्रपरिवर्जा रज्जुः । **बितिभागाहिय** इत्यादेर्वासनोच्यते-सप्तमपृथ्वीबाहल्ये ८०००, श्रेणीबद्धबाहल्यं १६/३ योजनीकृत्य १६/३४ अपवर्तितश्रेणीबद्धबाहल्यं ४/३ समच्छेदेन २४०००/३ अपनीय २३९९६/३ अर्धीकृत्य ११९९८/३ भक्त्वा ३९९९१/३ षष्ठक्षित्यधस्तनपटलाधः सहस्रमत्र मेलयित्वा ४९९९१/३ ॥ इदं सप्तमपृथ्वीबाहल्ये ८००० स्फेटने तद्वासना भवति ॥ १७४ ॥

अथ बिलानां तिर्यगंतरं गाथाद्वयेन निरूपयति—

संखेज्जवासणिरए तेरिच्छं अंतरं जहण्णमिणं ।
इगिजोयणमद्धजुदं जोयणतिदयं हवे जेट्ठं ॥ १७५ ॥

संख्यातव्यासनिरये तैरश्चमंतरं जघन्यमिदं ।
एकयोजनमर्धयुतं योजनत्रितयं भवेत् ज्येष्ठम् ॥ १७५ ॥

संखेज्ज । संख्यातव्यासनरकबिले प्रकीर्णके तिर्यगंतरं जघन्यमिदं एकयोजनमर्धयुतं ३/२ योजनत्रयं भवति ज्येष्ठम् ॥ १७५ ॥

जोयणसत्तसहस्सं असंखवित्थारजुत्तणिरयाणं ।
अंतरमवरं णेयं जेट्ठमसंखेज्जजोयणयं ॥ १७६ ॥

योजनसप्तसहस्रं असंख्यविस्तारयुक्तनिरयाणाम् ।
अंतरमवरं ज्ञेयं ज्येष्ठमसंख्येययोजनकम् ॥ १७६ ॥

जोयण । योजनसप्तसहस्रं असंख्यविस्तारयुक्तनरकाणां तिर्यगंतरमवरं ज्ञेयं ज्येष्ठमसंख्येययोजनकम् ॥ १७६ ॥

अथ तेषां विलानां संस्थानादिकं निरूपयति;—

वज्जघणभित्तिभागा वट्टतिचउरंसबहुविहायारा ।
णिरया सयावि भरिया सव्विंदियदुक्खदाईहिं ॥ १७७ ॥

वज्रघनभित्तिभागा वृत्तत्रिचतुरस्रबहुविधाकाराः ।
निरयाः सदापि भृताः सर्वेंद्रियदुःखदायिभिः ॥ १७७ ॥

वज्ज । वज्रघनभित्तिभागा वृत्तत्र्यस्रचतुरस्रबहुविधाकारा निरयाः सदापि भृताः सर्वेन्द्रियदुःखदायिभिर्द्रव्यैः ॥ १७७ ॥

अथ तत्रस्थदुर्गंधं दृष्टांतमुखेन निर्दिशति;—

मज्जारसाणसूयरखरवाणरकरहहत्थिपहुदीणं ।
कुहिदादहिदुग्गंधा णिरया णिच्चंधयारचिदा ॥ १७८ ॥

मार्जारश्वसूकरखरवानरकरभहस्तिप्रभृतीनाम् ।
कुथितादतिदुर्गंधा निरया नित्यांधकारचिताः ॥ १७८ ॥

मज्जार । छायामात्रमेवार्थ ॥ १७८ ॥

अथ तत्रोत्पद्यमानजीवान् तदुत्पत्तिस्थानं च निर्दिशति;—

उप्पज्जंति तहिं बहुपरिग्गहारंभसंचिदाउस्सा ।
उट्टादिमुखायारेसुवरिल्लुववादठाणेसु ॥ १७९ ॥

उत्पद्यंते तेषु बहुपरिग्रहारंभसंचितायुष्याः ।
उष्ट्रादिमुखाकारेषु उपरितनोपपादस्थानेषु ॥ १७९ ॥

उप्पज्जंति । उत्पद्यंते तेषु वहुपरिग्रहारंभसंचितनरकायुषाः उष्ट्रादिमुखाकारेषु उपरितनोपपादनस्थानेषु ॥ १७९ ॥

अथ तेषामुपपादस्थानानां व्यासबाहल्ये कथयति;—

इगिबितिकोसो वासो जोयणमवि जोयणं सयं जेट्ठं ।
उट्टादीणं बहलं सगवित्थारेहिं पंचगुणं ॥ १८० ॥

एकद्वित्रिक्रोशः व्यासः योजनमपि योजनशतं ज्येष्ठं ।
उष्ट्रादीनां बाहल्यं स्वकविस्तारेभ्यः पंचगुणम् ॥ १८० ॥

इगिवि । एकद्वित्रिक्रोशो व्यासः योजनमपि एकद्वित्रियोजनानां शतं । एतानि सप्तपृथ्वीनां यथासंख्येन ज्येष्ठव्यासप्रमाणानि उष्ट्राद्युपपादस्थानानां तद्बाहल्यं स्वकविस्तारेभ्यः पंचगुणम् ॥ १८० ॥

अथोपपादस्थानेषूत्पन्नाः किंकुर्वंतीत्यत आह;—

अंतोमुहुत्तकाले तदो चुदा भूतलम्हि तिक्खाणं ।
सत्थाणमुपरि पडिदूणुड्डीय पुणोवि णिवडंति ॥१८१॥

अंतर्मुहूर्त्तकाले ततश्चुता भूतले तीक्ष्णानाम् ।
शस्त्राणामुपरि पतित्वा उड्डीय पुनरपि निपतंति ॥ १८१ ॥

अंतो । छायामात्रमेवार्थः ॥ १८१ ॥

अथ कियदुड्डीयंते इत्यत आह;—

पणघणजोयणमाणं सोलहिदं उप्पडंति णेरइया ।
घम्माए वंसादिसु दुगुणं दुगुणंति णादव्वं ॥ १८२ ॥

पंचघनयोजनमानं षोडशहृतं उत्पतंति नैरयिकाः ।
घर्मायां वंशादिषु द्विगुणं द्विगुणं इति ज्ञातव्यम् ॥ १८२ ॥

पण । पंचघनयोजनमानं षोडशहृतं उत्पतंति नैरयिकाः घर्मायां वंशादिषु पुनर्द्विगुणं द्विगुणमिति ज्ञातव्यम् ॥ १८२ ॥

अथ तत्रस्थाः पुराणनारका उड्डीय पतितान् किं कुर्वंति इत्यत्र आह;—

पोराणिया तदा ते दट्ठूणइणिट्ठुरारवागम्म ।
खोवंति णिसिंचंति य वणेसु बहुखारवारीणि ॥ १८३ ॥

पौराणिकाः तदा तान् दृष्ट्वा अतिनिष्ठुरारवा आगम्य ।
घ्नंति निषिंचंति च व्रणेषु बहुक्षारवारीणि ॥ १८३ ॥

पौरा । पौराणिका नारकास्तदा तान् नूतनान् दृष्ट्वा अतिनिष्ठुरारवा आगम्य घ्नंति निषिंचंति च व्रणेषु बहुक्षारवारीणि ॥ १८३ ॥

अथ ते नूतनाः किं कुर्वंतीत्यत आह;—

तेवि विहंगेण तदो जाणिदपुव्वावरारिसंबंधा ।
असुहापुहविक्किरिया हणंति हण्णंति वा तेहिं ॥१८४॥

तेपि विभंगेन ततः ज्ञातपूर्वापरारिसंबंधाः ।
अशुभापृथग्विक्रिया घ्नंति हन्यंते वा तैः ॥ १८४ ॥

तेवि । तेपि विभंगेन ततः परं ज्ञातपूर्वापरारिसंबंधाः अशुभापृथग्विक्रियाः संतः घ्नंति परान् स्वयं हन्यंते वा तैरन्यैः ॥ १८४ ॥

अथापृथग्विक्रियाकरणप्रकारमाह;—

वयवग्घघूगकागहिविच्छियभल्लूकगिद्धसुणयादिं ।
सूलग्गिकोंतमोग्गरपहुदी संगे विकुव्वंति ॥ १८५ ॥

वृकव्याघ्रघूककाकाहिवृश्चिकभल्लूकगृध्रशुनकादिं ।
शूलाग्निकुंतमुद्गरप्रभृतिं स्वांगे विकुर्वंति ॥ १८५ ॥

वय । छायामात्रमेवार्थः ॥ १८५ ॥

अथ क्षेत्रगतपदार्थक्रौर्यं गाथाद्वयेनाह;—

वेदालगिरी भीमा जंतसयुक्कडगुहा य पडिमाओ ।
लोहणिहग्गिकणड्ढा परसूछुरिगासिपत्तवणं ॥ १८६ ॥

वेतालगिरयः भीमा यंत्रशतोत्कटगुहाश्च प्रतिमाः ।
लोहनिभाग्निकणाढ्याः परशुछुरिकासिपत्रवनम् ॥ १८६ ॥

वेदाला । वेतालाकृतिगिरयः भीमाः यंत्रशतोत्कटगुहाश्च तत्रस्थाः प्रतिमा लोहनिभाग्निकणाढ्या वनं च परशुछुरिकासिपत्रवनम् ॥ १८६ ॥

कूडा सामलिरुक्खा वयिदरणिणदीउ खारजलपुण्णा ।
पूहरुहिरा दुगंधा दहा य किमिकोडिकुलकलिदा १८७॥

कूटाः शाल्मलिवृक्षाः वैतरणिनद्यः क्षारजलपूर्णाः ।
पूयरुधिरा दुर्गंधाः ह्रदाश्च कृमिकोटिकुलकलिताः ॥ १८७ ॥

कूडा । कूटाः असत्याः शाल्मलिवृक्षाः वैतरण्याख्या नद्यः क्षारजलपूर्णाः पूयरुधिरा दुर्गंधाः ह्रदाश्च क्रिमिकोटिकुलकलिताः ॥ १८७ ॥

अथ तथाविधनदीमाप्य किं भवंतीत्यत आह;—

अग्गिभया धावंता मण्णंता सीयलंति पाणीयं ।
ते वइदरणिं पविसिय खारोदयदड्ढसव्वंगा ॥ १८८ ॥

अग्निभयाद्धावंतः मन्यमानाः शीतलमिति पानीयं ।
ते वैतरणीं प्रविश्य क्षारोदकदग्धसर्वांगाः ॥ १८८ ॥

६

अग्गि । अग्निभयाद्धावंतः मन्यमानाः शीतलमिति पानीयं ते नूतन-नारका वैतरणीं प्रविश्य क्षारोदकदग्धसर्वांगाः संतः ॥ १८८ ॥

अथ ते पुनः किं कुर्वंतीत्यत आह;—

उट्ठिय वेगेण पुणो असिपत्तवणं पयांति छायेत्ति ।
कुंतासिसत्तिजट्ठिहिं छिज्जंते वादपडिदेहिं ॥ १८९ ॥

उत्थाय वेगेन पुनः असिपत्रवनं प्रयांति छायेति ।
कुंतासिशक्तियष्टिभिश्छिद्यंते वातपतितैः ॥ १८९ ॥

उट्ठिय । तत्रेति शेषः । छायामात्रमेवार्थः ॥ १८९ ॥

अथ तेषां बहिर्दुःखसाधनमाह;—

लोहोदयभरिदाओ कुंभीओ तत्तबहुकडाहा य ।
संतत्तलोहफासा भू सूईसट्टुलाइण्णा ॥ १९० ॥

लोहोदकभरिताः कुंभ्यः तप्तबहुकटाहाश्च ।
संतप्तलोहस्पर्शा भूः सूचीशाड्वलाकीर्णा ॥ १९० ॥

लोहो । छायामात्रमेवार्थः ॥ १९० ॥

अथ क्षेत्रस्पर्शजदुःखं दृष्टांतमुखेनाह;—

विच्छियसहस्सवेयणसमधियदुक्खं धरित्तिफासादो ।
कुक्खक्खिसीसरोगगच्छुधतिसभयवेयणा तिव्वा ॥ १९१ ॥

वृश्चिकसहस्रवेदनासमधिकदुःखं धरित्रीस्पर्शात् ।
कुक्ष्यक्षिशीर्षरोगगक्षुधातृषाभयवेदना तीव्राः ॥ १९१ ॥

विच्छिय । स्यादिति शेषः । छायामात्रमेवार्थः ॥ १९१ ॥

अथ ते किं भुंजंते इत्यत आह;—

सादिकुहिदातिगंधं सणिमय्यं मट्टियं विभुंजंति ।
घम्मभवा वंसादिसु असंखगुणिदासुहं तत्तो ॥ १९२ ॥

श्वादिकुथितातिगंधां शनैरल्यां मृत्तिकां विभुंजंते ।
घर्मभवा वंशादिषु असंख्यगुणिताशुभां ततः ॥ १९२ ॥

सादि । श्वादिकुथितादतिदुर्गंधां शनैरल्यां मृत्तिकां विभुंजंते घर्मभवा वंशादिषु ततः असंख्यगुणिताशुभां मृत्तिकां विभुंजंते ॥ १९२ ॥

अथ तदाहारदुःखकरणसामर्थ्यं वर्णयति;—

पढमासणमिह खित्तं कोसद्धं गंधदो विमारेदि ।
कोसद्धद्धहियधराट्ठियजीवे पत्थरक्कमदो ॥ १९३ ॥

प्रथमाशनमिह क्षिप्तं क्रोशार्धं गंधतो विमारयति ।
क्रोशार्धार्धाधिकधरास्थितजीवान् प्रस्तरक्रमतः ॥ १९३ ॥

पढमा । प्रथमपृथ्वीप्रथमपटलाशनं इह मनुष्यक्षेत्रे क्षिप्तं चेत् क्रोशार्धं गंधतो विमारयति । क्रोशार्धार्धाधिकधरास्थितान् जीवान् ततःपरं प्रस्तर-क्रमतः विमारयति ॥ १९३ ॥

अथ एतैर्दुःखसाधनैर्म्रियंते किमित्याशंकायामाह;—

ण मरंति ते अकाले सहस्सखुत्तोवि छिण्णसव्वंगा ।
गच्छंति तणुस्स लवा संघादं सूदगस्सेव ॥ १९४ ॥

न म्रियंते ते अकाले सहस्रकृत्वोपि छिन्नसर्वांगाः ।
गच्छंति तनोः लवाः संघातं सूतकस्येव ॥ १९४ ॥

ण मरंति । छायामात्रमेवार्थः ॥ १९४ ॥

अथैतैर्दुःखसाधनैः सर्वदा सर्वे दुःखमाप्नुवंति किमित्यत्राह;—

तित्थयरसंतकम्मुवसग्गं णिरए णिवारयंति सुरा ।
छम्मासाउगसेसे सग्गे अमलाणमालंको ॥ १९५ ॥

तीर्थकरसत्कर्मोपसर्गं निरये निवारयंति सुराः ।
षण्मासायुष्कशेषे स्वर्गे अम्लानमालांकः ॥ १९५ ॥

तित्थ । तीर्थसत्कर्मणां जीवानामुपसर्गं निरये निवारयंति सुराः षण्मासायुःशेषे स्वर्गे अम्लानमालांकः ॥ १९५ ॥

अथ तेषां देहविलीनप्रकारमाह;—

अणवट्टसगाउस्से पुण्णे वादाहदब्भपडलं वा ।
णेरइयाणं काया सव्वे सिग्घं विलीयंते ॥ १९६ ॥

अनवर्त्यस्वकायुष्ये पूर्णे वाताहताभ्रपटलमिव ।
नैरयिकाणां कायाः सर्वे शीघ्रं विलीयंते ॥ १९६ ॥

अणवट्ट । छायामात्रमेवार्थः ॥ १९६ ॥

अथ तैरनुभूयमानदुःखभेदानाह; —

खेत्तजणिदं असादं सारीरं माणसं च असुरकयं ।
भुंजंति जहावसरं भवट्ठिदीचरिमसमयोत्ति ॥ १९७ ॥

क्षेत्रजनितं असातं शारीरं मानसं च असुरकृतम् ।
भुंजंते यथावसरं भवस्थितेश्चरमसमयांतम् ॥ १९७ ॥

खेत्त । अंतं पर्यंतं । छायामात्रमेवार्थ ॥ १९७ ॥

अथ प्रतिपटलं तदायुर्जघन्योत्कर्षं गाथात्रयेणाह;—

पढमिंदे दसणउदीवाससहस्साउगं जहण्णिदरं ।
तो णउदिलक्ख जेट्ठं असंखपुव्वाण कोडी य ॥ १९८ ॥

प्रथमेंद्रके दशनवतिवर्षसहस्रायुष्कं जघन्येतरत् ।
ततः नवतिलक्षं ज्येष्ठं असंख्यपूर्वाणां कोट्यश्च ॥ १९८ ॥

पढ । प्रथमेंद्रके दश १०००० नवति ९०००० वर्ष सहस्रायुष्यं जघन्यमितरत् तत् उपरि वक्ष्यमाणं सर्वं ज्येष्ठं नवतिलक्षं असंख्यपूर्वाणां कोट्यश्च ॥ १९८ ॥

सायरदसमं तुरिये सगसगचरमिंदयम्हि इगि तिण्णि ।
सत्त दसं सत्तरसं उवही बावीस तेत्तीसं ॥ १९९ ॥

सागरदशमं तुरीये स्वकस्वकचरमेंद्रके एकं त्रीणि ।
सप्त दश सप्तदश उदधयः द्वाविंशतिः त्रयस्त्रिंशत् ॥ १९९ ॥

सायर । तुरीये चतुर्थे, उदधयः सागरोपमाणि इत्यर्थः । शेषं छायामात्रमेवार्थः ॥ १९९ ॥

आदी अंतविसेसे रूऊणद्धाहिदम्हि हाणिचयं ।
उवरिम जेट्ठं समयेणहियं हेट्ठिमजहण्णं तु ॥ २०० ॥

आदिः अंतविशेषे रूपोनाद्धाहिते हानिचयं ।
उपरिमं ज्येष्ठं समये नाधिकं अधस्तनजघन्यं तु ॥ २०० ॥

आदी । आदिः सागरदशमांशादिकं १/१०।१।३।७।१०।१७।२२ अंते एकसागरोपमादौ १।३।७।१०।१७।२२।३३ यथायोग्यं समच्छेदेन स्फेटिते तत्तत्पृथ्वीनां हानिचयौ स्यातां ९/१०।२।४।३।७।५।११ कथितायुःप्रमाण-पटलत्रयं मुक्त्वा प्राक्तनपटलसहितंरूपोनतत्तत्पटलानां ९।११।९।७।५।३।१ प्रतिपृथ्वि एतावदेतावदायुश्चये ९/१०।२।४।३।७।५।११ एकादिपटलानां कियदायुरिति संपात्य यथायोग्यमपवर्त्य गुणिते तत्तत्पटलानामायुश्चयं भवति । १/१०।२/११।४/९।३/७।७/५।५/३।११/१ एतच्चये प्राक्तनप्राक्तनस्थितौ संयोजिते तत्तत्पटलानामुत्कृष्टायुःप्रमाणं स्यात् । उपरिमज्येष्ठं ९०००० इत्यादि समयेनाधिकं चेत् अधस्तनाधस्तनजघन्यं स्यात् ॥ २०० ॥

अथ तेषां नारकाणां पटलं प्रत्युत्सेधमाह;—

पढमे सत्त ति छक्कं उदयं धणुरयणि अंगुलं सेसे।
दुगणकमं पढमिंदे रयणितियं जाण हाणिचयं॥२०१॥

प्रथमे सप्त त्रिषट्कं उदयः धनू रत्न्यंगुलानि शेषे ।
द्विगुणक्रमं प्रथमेंद्रके रत्नित्रयं जानीहि हानिचयम् ॥ २०१ ॥

पढमे । प्रथमपृथिव्याश्चरमपटले सप्त ७ त्रि ३ षट्कं ६ उदयः धनूरत्न्यंगुलानि । द्वितीयादिपृथ्व्याश्चरमपटले द्विगुणक्रमं, प्रथमपृथ्व्याः प्रथमेंद्रके रत्नित्रयं । एतद्भूत्वा हानिचयं जानीहि । हानिचयसाधनं कथमिति चेत्, आदि ३ अंते दंड ७ हस्त ३ अंगुल ६ शोधयित्वा हस्तस्थाने स्फेटयित्वा ७।०६ रूपोनाध्वहृते $\frac{७}{१२}$ । $\frac{०}{१२}$ । $\frac{६}{१२}$ भागो भवेद्दंडं हस्तादिकं कृत्वा भक्ते हस्तः २ शेषमंगुलं कृत्वा $\frac{९६}{१२}$ तत्र प्राक्तनांगुलं $\frac{६}{१२}$ मेलयित्वा $\frac{१०२}{१२}$ भक्ते लब्धमंगुलं ८ शेषे षड्भिरपवर्तिते अंगुलं $\frac{१}{२}$ एतत्सर्वं प्रथमपृथ्व्या हानिचयं दं० । ह २ । अं ८ भा $\frac{१}{२}$ इदं उपरितनस्वस्वजातौ मेलयित्वा दंडादौ पृथक्कृतेधस्तनपटलदेहोत्सेधः १।१।८ भा $\frac{१}{२}$ तत्रैव पुनस्तद्धानिचयं दं०।२।८।$\frac{१}{२}$ मेलने १।३।१७।० तदधस्तनदेहोत्सेधः। एवमेव सर्वत्र पटले योज्यः । एवं द्वितीयादि पृथिव्यां हानिचयमुत्सेधश्चानेतव्यः ॥ २०१ ॥

अथ नारकाणामवधिक्षेत्रमाह;—

रयणप्पहपुढवीए चउरो कोसा य ओहिखेत्तं तु ।
तेण परं पडिपुढवी कोसद्धविवज्जियं होदि ॥ २०२ ॥

रत्नप्रभापृथिव्याश्चत्वारः क्रोशाश्चावधिक्षेत्रं तु ।
ततः परं प्रतिपृथ्वि क्रोशार्धविवर्जितं भवति ॥ २०२ ॥

रयण । छायामात्रमेवार्थः ॥ २०२ ॥

अथ नरकान्निसृतस्य जीवस्योत्पत्तिनियममाह;—

णिरयादो णिस्सरिदो णरतिरिए कम्मसण्णिपज्जत्ते ।
गब्भभवे उप्पज्जदि सत्तमपुढवीदु तिरिए व ॥ २०३ ॥

निरयान्निसृतः नरतिरश्चोः कर्मसंज्ञिपर्याप्ते ।
गर्भभवे उत्पद्यते सप्तमपृथिव्यास्तु तिरश्चि एव ॥ २०३ ॥

णिरया । निरयान्निसृतः नरतिरश्च्योर्गत्योः कर्मभूमौ संज्ञिनि पर्याप्ते गर्भभवे उत्पद्यते । सप्तमपृथिव्यास्तु निर्गतस्तादृग्विधतिरश्चां गतौ उत्पद्यते ॥ २०३ ॥

अथ णरतिरिए इति नियमे तत्रापि किं सर्वत्रेत्याशंकायामाह;—

णिरयचरो णत्थि हरी बलचक्की तुरियपहुदिणिस्सरिदो ।
तित्थचरमंगसंजद मिस्सतियं णत्थि णियमेण ॥२०४॥

निरयचरो नास्ति हरिः बलचक्रिणौ तुरीयप्रभृतिनिःसृतः ।
तीर्थचरमांगसंयताः मिश्रत्रयं नास्ति नियमेन ॥ २०४ ॥

णिर । नरकचरो नास्ति हरिः बलचक्रिणौ तुर्यप्रभृतिनिःसृतः यथासंख्यं तीर्थकरचरमांगसंयता मिश्रत्रया मिश्रासंयतदेशसंयता न संति नियमेन । असंयतत्वस्यनिषिद्धत्वादर्थात्सासादनत्वस्याप्यभाव एव ॥ २०४ ॥

अथ नरकं गच्छतां जीवानां पृथ्वीं प्रति नियममाह;—

अमणसरिसपविहंगम फणिसिंहित्थीण मच्छमणुवाणं ।
पढमादिसु उप्पत्ती अडवारादो दु दोण्णिवारोत्ति २०५

अमनस्कसरीसृपविहंगमफणिसिंहस्त्रीणां मत्स्यमनुष्याणाम् ।
प्रथमादिषु उत्पत्तिः अष्टवारतस्तु द्विवार इति ॥ २०५ ॥

अमण । अमनस्कसरीसृपविहंगमफणिसिंहस्त्रीणां मत्स्यमनुष्याणां प्रथमादिषु यथासंख्यमुत्पत्तिः । निरंतरं कथमिति चेत्, अष्टवारतः आरभ्य

द्विवारपर्यंतं अमनस्कः प्रथमनरकं गत्वा ततो निर्गत्य संज्ञि भूत्वा मृत्वा पुनरत्रैवासंज्ञि संभूय मृत्वा प्रथमनरकं गच्छति । इदमेकवारं । एवमसंज्ञिनोष्टवारं निरंतरं योजयेत् । निरंतरासंभवेन एकमंतरं गृह्णीयात्, नैवं सरीसृपादिषु । मत्स्यः सप्तमनरकं गत्वा ततः प्रच्युत्य तिर्यग्जीवो भूत्वा मृत्वा मत्स्यः संभूय मृत्वा सप्तमनरकं गच्छति । नरस्यैवं निरंतरं द्विवारं योजयेत् ॥ २०५ ॥

अथ प्रथमादिपृथिव्या उत्कृष्टेन जननमरणयोरंतरमाह;—

चउवीसमुहुत्तं पुण सत्ताहं पक्खमेक्कमासं च ।
दुगचदुछम्मासं च य जम्मणमरणंतरं णिरये ॥ २०६ ॥

चतुर्विंशतिर्मुहूर्ताः पुनः सप्ताहानि पक्षः एकमासश्च ।
द्विकचतुःषण्मासाश्च च जननमरणांतरं निरये ॥ २०६ ॥

चउवीस । यथासंख्यं इति शेषः । छायामात्रमेवार्थः ॥ २०६ ॥

तेषां दुःखप्रागल्भ्यमाह;—

अच्छिणिमीलणमेत्तं णत्थि सुहं दुक्खमेव अणुबद्धं ।
णिरए णेरइयाणं अहोणिसं पच्चमाणाणं ॥ २०७ ॥

अक्षिनिमीलनमात्रं नास्ति सुखं दुःखमेव अनुबद्धम् ।
निरये नैरयिकाणां अहर्निशं पच्यमानानाम् ॥ २०७ ॥

अच्छि । छायामात्रमेवार्थः ॥ २०७ ॥ इति **नरकस्वरूपनिरूपणं** ।

इति श्री**नेमिचंद्राचार्य**विरचिते **त्रिलोकसारे**
लोकसामान्याधिकारः ॥ १ ॥

———

भवनाधिकारः ॥ २ ॥

अथ लोकस्य सामान्यवर्णनां कृत्वा "भवणव्वेंतर" इत्यादिगाथासूचितपंचाधिकाराणां मध्ये तथैव भवनाधिकारं प्रक्रममाणस्तदधिष्ठानभूतां रत्नप्रभां तत्सहचरितां शर्कराप्रभादिभूमिं तद्गतनरकप्रस्तरान् तद्गतनारकायुरादिकं च प्रासंगिकं सर्वं व्याख्याय प्रकृतं भवनाधिकारं प्रवक्तुकामस्तदादौ भवनलोकचैत्यालयान् वंदमान इदं मंगलमाह;—

भवणेसु सत्तकोडी बावत्तरिलक्ख होंति जिणगेहा ।
भवणामरिंदमहिया भवणसमा ताणिं वंदामि ॥२०८॥

भवनेषु सप्तकोट्यः द्वासप्ततिलक्षाणि भवंति जिनगेहानि ।
भवनामरेंद्रमहितानि भवनसमानि तानि वंदे ॥ २०८ ॥

भवणे । भवनेषु सप्तकोट्यः द्वासप्ततिलक्षाणि भवंति जिनगेहानि । भवनामरेंद्रमहितानि तेषां भवनसमानानि तानि वंदे ॥ २०८ ॥

अथ भवनवासिनां कुलभेदं तेषामिंद्रनामानि च गाथात्रयेणाह;—

असुराणागसुवण्णादीवोदहिविज्जुथणिददिसअग्गी ।
वादकुमारा पढमे चमरो वइरोइणो इंदो ॥ २०९ ॥

असुरो नागसुपर्णौ द्वीपोदधिविद्युत्स्तनितदिगग्नयः ।
वादकुमारः प्रथमे चमरो वैरोचन इंद्रः ॥ २०९ ॥

असुरा । असुरः नागसुवर्णौ द्वीपोदधिविद्युत्स्तनितदिगग्नयः वातकुमारः । कुमारशब्दः प्रत्येकमभिसंबध्यते । प्रथमे कुले चमरो वैरोचनश्चेति द्वाविंद्रौ ॥ २०९ ॥

भूदाणंदो धरणाणंदो वेणू य वेणुधारी य।
पुण्णवसिट्ठ जलप्पह जलकंतो घोसमहघोसो ॥ २१० ॥
हरिसेणो हरिकंतो अमिदगदी अमिदवाहणग्गिसिही।
अग्गीवाहणणामा वेलंबपभंजणा सेसे॥ २११ ॥ जुम्मं।

भूतानंदो धरणानंदः वेणुश्च वेणुधारी च ।
पूर्णवशिष्टौ जलप्रभः जलकांतः घोषमहाघोषौ ॥ २१० ॥
हरिषेणः हरिकांतः अमितगतिः अमितवाहनः अग्निशिखी ।
अग्निवाहननामा वेलंवप्रभंजनौ शेषे ॥ २११ ॥ युग्मं ।

भूदा। शेषे नागादिकुले इत्यर्थः। शेषस्य छायामात्रमेवार्थः २१०।२११॥

अथ तेषां परस्परस्पर्धास्थानमाह;—

चमरो सोहम्मेण य भूदाणंदो य वेणुणा तेसिं।
विदिया विदियेहिं समं ईसंति सहावदो णियमा।२१२।

चमरः सौधर्मेण च भूतानंदश्च वेणुना तेषां ।
द्वितीया द्वितीयैः समं ईर्ष्यंति स्वभावतो नियमात्॥ २१२ ॥

चमरो। छायामात्रमेवार्थः ॥ २१२ ॥

अथ कुलेशानामसुरादीनां चिह्नमाह;—

चूडामणिफणिगरुडं गजमयरं वड्डमाणगं वज्जं।
हरिकलसस्सं चिह्नं मउले चेत्तदुमाह धया ॥ २१३ ॥

चूडामणिफणिगरुडं गजमकरं वर्धमानकं वज्रं ।
हरिकलशाश्वं चिह्नं मुकुटे चैत्यद्रुमा अथ ध्वजाः ॥ २१३ ॥

चूडा। तेषां चिह्नाः इति शेषः। छायामात्रमेवार्थः ॥ २१३ ॥

अथ तच्चैत्यवृक्षभेदानाह;—

अस्सत्थसत्तसामलिजंबूवेतसकदंबकपियंगू।
सिरिसं पलासरायद्दुमा य असुरादिचेत्ततरू ॥ २१४ ॥

अश्वत्थसप्तच्छदशाल्मलिजंबूवेतसकदंबकाप्रियंगवः।
शिरीषः पलाशराजद्रुमौ च असुरादिचैत्यतरवः ॥ २१४ ॥

अस्स । छायामात्रमेवार्थः ॥ २१४ ॥

अथ चैत्यद्रुमाणामन्वर्थतां समर्थयति;—

चेत्ततरूणं मूले पत्तेयं पडिदिसम्हि पंचेव।
पलियंकठिया पडिमा सुरच्चिया ताणि वंदामि ॥२१५॥

चैत्यतरूणां मूले प्रत्येकं प्रतिदिशं पंचैव।
पर्यंकस्थिताः प्रतिमाः सुरार्चिताः ताः वंदे ॥ २१५ ॥

चेत्त । छायामात्रमेवार्थः ॥ २१५ ॥

अथ तत्प्रतिमाग्रस्थमानस्तंभस्वरूपमाह;—

पडिदिसयं णियसीसे सगसगपडिमाजुदा विराजंति।
तुंगा माणत्थंभा रयणमया पडिदिसं पंच ॥ २१६ ॥

प्रतिदिशं निजशीर्षे सप्तसप्तप्रतिमायुता विराजंते।
तुंगा मानस्तंभा रत्नमया प्रतिदिशं पंच ॥ २१६ ॥

पडि । छायामात्रमेवार्थः ॥ २१६ ॥

अथेंद्राणां भवनसंख्यां ज्ञापयन्नाह;—

चोत्तीसं चउदालं अडतीसं छसुवि ताल पण्णासं।
चउचउविहीण ताणि य इंदाणं भवणलक्खाणि॥२१७॥

चतुस्त्रिंशच्चतुश्चत्वारिंशदष्टाविंशत् षट्सु अपि चत्वारिंशत् पंचाशत् ।
चतुश्चतुर्विहीनानि तानि च इंद्राणां भवनलक्षाणि ॥ २१७ ॥

चोत्तीस । चतुस्त्रिंशच्चतुश्चत्वारिंशत् अष्टत्रिंशत् षट्सु स्थानेषु चत्वारिंशत् पंचाशदुत्तरेंद्रान् प्रति चतुश्चतुर्विहीनानि तानि इंद्राणां भवनलक्षाणि ॥ २१७ ॥

अथ तेषां भवनानां विशेषस्वरूपमाह;—

ससुगंधपुप्फसोहियरयणधरा रयणभित्ति णिच्चपहा ।
सव्विंदियसुहदाइहिं सिरिखंडादिहिं चिदा भवणा २१८

ससुगंधपुष्पशोभितरत्नधरा रत्नभित्तयः नित्यप्रभाः ।
सर्वेंद्रियसुखदायिभिः श्रीखंडादिभिश्चिता भवनाः ॥ २१८ ॥

ससुगंध । छायामात्रमेवार्थः ॥ २१८ ॥

अथ तत्रत्यदेवानामैश्वर्यमाह;—

अट्ठगुणिड्ढिविसिट्ठा णाणामणिभूसणेहि दित्तंगा ।
भुंजंति भोगमिट्ठं सगपुव्वतवेण तत्थ सुरा ॥ २१९ ॥

अष्टगुणर्धिविशिष्टाः नानामणिभूषणैः दीप्तांगाः ।
भुंजंति भोगमिष्टं स्वकपूर्वतपसा तत्र सुराः ॥ २१९ ॥

अट्ठ । छायामात्रमेवार्थः ॥ २१९ ॥

अथ तेषां भवनानां भूगृहोपमानानां व्यासादिकमाह;—

जोयणसंखासंखाकोडी तव्वित्थडं तु चउरस्सा ।
तिसयं बहलं मज्झं पडि सयतुंगेक्ककूडं च ॥ २२० ॥

योजनसंख्यासंख्यकोट्यः तद्विस्तारस्तु चतुरस्राः ।
त्रिशतं बाहल्यं मध्यं प्रति शततुंगैककूटश्च ॥ २२० ॥

जोयण । जघन्येन योजनानां संख्यातकोटयः उत्कर्षेण असंख्यातकोटयः तद्विस्तारस्तु चतुरस्राः त्रिशतयोजनबाहल्यं । तत्र प्रतिमध्यं शततुंगैककूटस्तदुपरि चैत्यालयश्च ॥ २२० ॥

अथ तेषां भवनावस्थितिस्थानानि गाथाद्वयेनाह;—

वेंतर अप्पमहड्ढियमज्झिमभवणामराण भवणाणि ।
भूमीदोधो इगिदुगवादालसहस्सइगिलक्खे ॥ २२१ ॥

व्यंतराणां अल्प महर्धिकमध्यमभवनामराणां भवनानि ।
भूमितोधः एकद्विकद्वाचत्वारिंशत्सहस्रएकलक्षाणि ॥ २२१ ॥

वेंतर । व्यंतराणां अल्पार्धिमहार्धिकमध्यमर्धिभवनामराणां च भवनानि चित्राभूमितः अधोधः एकसहस्रद्विसहस्रद्वाचत्वारिंशत्सहस्रएकलक्षाणि गत्वा भवंति ॥ २२१ ॥

रयणप्पहपंकड्ढे भागे असुराण होंति आवासा ।
भौम्मेसुरक्खसाणं अवसेसाणं खरे भागे ॥ २२२ ॥

रत्नप्रभापंकाढ्ये भागे असुराणां भवंति आवासाः ।
भौमेषु राक्षसानां अवशेषाणां खरे भागे ॥ २२२ ॥

रमण । भौमेषु व्यंतरेषु, अवशेषाणां नागादीनां इत्यर्थः । शेषं छायामात्रमेवार्थः ॥ २२२ ॥

इदानीमिंद्रादिभेदमाह;—

इंदपडिंददिगिंदा तेत्तीससुरा समाणतणुरक्खा ।
परिसत्तयआणीया पइण्णगभियोगकिब्भिसिया २२३॥

इंद्रप्रतींद्रादिगींद्राः त्रयस्त्रिंशत्सुराः सामानिकतनुरक्षकौ ।
परिषत्त्रयानीकौ प्रकीर्णकाभियोग्यकिल्विषिकाः ॥ २२३ ॥

इंद । छायामात्रमेवार्थः ॥ २२३ ॥

अथ इंद्रादिपदवीनां दृष्टांतमाह;—

रायजुवतंतराए पुत्तकलत्तंगरक्खवरमज्झे ।
अवरे तंडे सेणापुरपरिजणगायणेहि समा ॥ २२४ ॥

राजयुवतंत्रराजैः पुत्रकलत्रांगरक्षवरमध्येन ।
अवरेण तंडेण सेनापुरपरिजनगायकैः समाः ॥ २२४ ॥

राय । राजयुवतंत्रराजैश्च पुत्रकलत्रांगरक्षैः वरेण मध्येन अवरेण च तंडेण अवलोगनसेनापुरपरिजनगायकैः समाः ॥ २२४ ॥

अथ चतुर्निकायामरेष्विंद्रादीनां संभवप्रकारमाह;—

वेंतरजोयिसियाणं तेत्तीससुरा ण लोयपाला य ।
भवणे कप्पे सव्वे हवंति अहमिंदया तत्तो ॥ २२५ ॥

व्यंतरज्योतिष्काणां त्रयस्त्रिंशत्सुरा न लोकपालाः च ।
भवने कल्पे सर्वे भवंति अहमिंद्रका ततः ॥ २२५ ॥

वेंतरं । व्यंतरज्योतिष्काणां त्रयस्त्रिंशत्सुरा न संति लोकपालश्च भवने कल्पे च सर्वे भवंति ततः परमहमिंद्राः ॥ २२५ ॥

अथ भावनेष्विंद्रादिपरिषत्त्रयांतानां संख्यां गाथात्रयेणाह;—

इंदसमा हु पडिंदा सोमो यम वरुण तहं कुवेरा य ।
पुव्वादिलोयवाला तेत्तीससुरा हु तेत्तीसा । २२६ ॥

इंद्रसमाः खलु प्रतींद्राः सोमो यमो वरुणस्तथा कुवेरश्च ।
पूर्वादिलोकपालाः त्रयस्त्रिंशत्सुराः हि त्रयस्त्रिंशत् ॥ २२६ ॥

इंद । हि एव इत्यर्थः । शेषं छायामात्रमेवार्थः ॥ २२६ ॥

चमरातिये सामाणियतणुरक्खाणं पमाणमणुकमसो।
अडसोलकदिसहस्सा चउसोलसहस्सहीणकमा॥२२७॥

चमरत्रिके सामानिकतनुरक्षाणां प्रमाणमनुक्रमशः।
अष्टषोडशकृतिसहस्राणि चतुःषोडशसहस्रहीनक्रमाणि॥२२७

चमर। चमरत्रिके सामानिकनुमरक्षाणां प्रमाणमनुक्रमशः अष्टकृति-षोडशकृतिसहस्राणि चतुःसहस्रषोडशसहस्रहीनः क्रमः॥ २२७॥

पण्णसहस्स बिलक्खा सेसे तट्ठाण परिसमादिल्लं।
अडछव्वीसं छच्चउसहस्स दुसहस्सवड्ढिकमा॥ २२८॥

पंचाशत्सहस्राणि द्विलक्षे शेषे तत्स्थाने परिषदादिमा।
अष्टषड्विंशषट्चतुःसहस्राणि द्विसहस्रवृद्धिक्रमः॥ २२८॥

पण्ण। पंचाशत्सहस्राणि द्विलक्षे शेषे नागादिषु तत्स्थाने चमरत्रिक-शेषस्थाने आदिमा परिषदष्टविंशातिसहस्राणि षड्विंशतिसहस्राणि षट्सह-स्राणि चतुःसहस्राणि मध्यमबाह्यपरिषदोस्तु उक्तसहस्रेष्वेव द्विसहस्रवृद्धि-क्रमो ज्ञातव्यः॥ २२८॥

अथ परिषत्रयाणां विशेषाभिधानमाह;—

पढमा परिसा समिदा विदिया चंदोत्ति णामदो होदि।
तदिया जदुअहिधाणा एवं सव्वेसु देवेसु॥ २२९॥

प्रथमा परिषत् समित् द्वितीया चंद्रा इति नामतो भवति।
तृतीया जत्वभिधाना एवं सर्वेषु देवेषु॥ २२९॥

पढमा। छायामात्रमेवार्थः॥ २२९॥

इदानीमानीकभेदं तत्संख्यां चाह;—

सत्तेव य आणीया पत्तेयं सत्तसत्तकक्खजुदा।
पढमं ससमाणसमं तद्दुगुणं चरिमकक्खोत्ति॥ २३०॥

सप्तैव च आनीकाः प्रत्येकं सप्तसप्तकक्षयुताः ।

प्रथमं स्वसामानिकसमं तद्विगुणं चरमकक्षं इति ॥ २३० ॥

सत्तेव । सप्तैवानिकाः प्रत्येकं सप्तसप्तकक्षयुताः प्रथमानीकं स्वसामानिकसमं तद्विगुणं चरमकक्षं यावत् ॥ २३० ॥

अथ गुणोत्तरक्रमेणागतसप्तानीकधनानयने प्रयुक्तमिदं गुणसंकलितसूत्रम्;—

पदमेत्ते गुणयारे अण्णोण्णं गुणिय रूवपरिहीणे ।

रूऊणगुणेणहिए मुहेण गुणियम्मि गुणगणियं ॥२३१॥

पदमात्रान् गुणकारान् अन्योन्यं गुणयित्वा रूपपरिहीणे ।

रूपोन गुणेन हृते मुखेन गुणिते गुणगणितम् ॥ २३१ ॥

पद । पदमात्रगुणकारान् २।२।२।२।२।२।२ अन्योन्यं संगुण्य लब्धे १२८ रूपेण परिहीणे १२७ रूपोनगुणेन हृते $\frac{१२७}{१}$ मुखेन ६४००० गुणिते सति ८१२८००० गुणसंकलितधनमायाति । एतस्मिन् सप्तभिर्गुणिते ५६८९६००० सप्तानीकसमस्तधनमायाति । एवं वैरोचनादिषु ज्ञातव्यं । अस्य करणसूत्रस्य वासना उदाहरणांतरेण दर्श्यते । आदि २ गुणोत्तर ५ गच्छ ४ अस्य न्यासः २।५।५।५।१ अस्य समस्तधनं पदमेत्तेत्यानीतं ३१२ ऋणन्यासः २।५।५।५।३। तद्यथा । आदेरात्मप्रमाणे एकस्मिन्रूपे २।१ रूपोनगुणोत्तरगुणितमादिमात्र २।४ ऋणप्रक्षेपणे अंकस्यांकसदृशं दर्शयित्वा असदृशस्थाने मेलयेत् । २।५ इदं द्वितीयधने योजने अंकस्यांकसदृशं दर्शयित्वा असदृशस्थाने उपरितनात्मप्रमाणैकरूपे अधस्तनात्मप्रमाणैकरूपं युंज्यात् २५।२ अत्र द्विरूपोनगुणकारगुणितगुणघ्नमादि २५।३ ऋणं निक्षिप्य २५५ इदं तृतीयधने युंज्यात् । २५५२ । अत्र द्विरूपोनगुणघ्नगुणकारवर्गगुणितमादि २५५३ ऋणं निक्षिप्य २५५५ चतुर्थधने युंज्यात् २५५५२ । अत्र द्विरूपोनगुणघ्नगुणकारघनगुणितमादि २५५५३ ऋणं

निक्षिपेत् २५५५५ एवमुपरि सर्वत्र द्विरूपोनगुणेन रूपोनगच्छमात्रगुण-कारैश्च गुणितमादिं ऋणं निक्षिपेत् । तथा च सति अंतधने आदेर्गच्छ-मात्रा गुणकारा भवंति । एतत्सर्वं मनसि कृत्य "पदमेत्ते गुणयारे अण्णो-ण्णं गुणिये" त्युक्तं । एवमिष्टगच्छमात्रेषु गुणकारेषु अन्योन्यं गुणितेष्वेवं २।६२५ इदं ऋणसहितं धनं । अत्र प्राग्निक्षिप्तऋणापनयने तावत्प्रथमे ऋणे एकरूपगुणितमादि २।१ उद्धृत्यापनयेत् । इदमेवावधार्य रूपप-रिहीणे इत्युक्तं । अपनीतशेषमिदं २।६२४। अत्र सर्वऋणसंकलितमिदं २।६२४। $\frac{3}{4}$ रूपोनगुणेन समच्छेदीकृते अस्मिन् २।६२४।$\frac{3}{4}$ अपनयेत् । अपनीते सत्येवं २।६२४ । $\frac{1}{4}$ इदं मनसा संप्रधार्य "रूऊणगुणेण-हिये" इति उक्तं । पुनरपवर्त्य आदिना गुणिते गुणसंकलितधनमा-गच्छति ३१२ । इदं विचार्य " मुहेण गुणियम्मि " इत्युक्तं । एवं सर्वत्र ऋणराशिः रूपोनगुणकारविभक्तसमस्तराशेर्बहुभागप्रमाणो जायते शुद्ध-धनराशिस्तु तदेकभागो जायते इति व्याप्तिः सर्वत्र योज्या ॥ २३१ ॥

इदानीमानीकभेदस्वरूपं गाथाद्वयेनाह;—

असुरस्स महिसतुरगरथेभपदाती कमेण गंधव्वा ।
णिच्चाणीय महत्तर महत्तरी छक्क एक्का य ॥ २३२ ॥

असुरस्य महिषतुरगरथेभपदातयः क्रमेण गंधर्वः ।
नृत्यानीकं महत्तरा महत्तरी षट् एका च ॥ २३२ ॥

असुर । असुरस्य महिषतुरगरथेभपदातयः क्रमेण गंधर्वः नृत्यानीकं प्रथमा षट् महत्तरा नृत्यानीकमेकं महत्तरी ॥ २३२ ॥

णावा गरुडिभमयरं करभं खग्गी मिगारिसिविगस्सं ।
पढमाणीयं सेसे सेसाणीया हु पुव्वं व ॥ २३३ ॥

नौर्गरुडेभमकरं करभः खड्गी मृगारिशिबिकाश्वम् ।
प्रथमानीकं शेषे शेषानीकास्तु पूर्वे इव २३३ ॥

णावा । शेषे नागादौ इत्यर्थः । अन्यच्छायामात्रं ॥ २३३ ॥

अथ भावनदेवानामसंख्यातत्वात् प्रकीर्णकादिदेवानामसंख्यातत्वमनुक्तमप्यवगंतव्यमिति तत्प्रमाणमनुक्त्वा सांप्रतमसुरादिदेवीनां संख्यां गाथाद्वयेनाह;—

असुरतिए देवीओ छप्पण्णसहस्स तत्थ वल्लभिया ।
सोलसहस्सं छक्कसहस्सेणूणक्कमो होइ ॥ २३४ ॥

असुरत्रिके देव्यः षट्पंचाशत्सहस्राणि तत्र वल्लभिकाः ।
षोडशसहस्राणि षट्सहस्रेणोनक्रमो भवति ॥ २३४ ॥

असुर । तत्र तासु देवीषु इत्यर्थः । शेषं छायामात्रं ॥ २३४ ॥

बत्तीस बे सहस्सा सेसे पण पण सजेट्ठदेवीओ ।
तिसु अट्ठ छस्सहस्सं विगुव्वणामूलतणुसहियं ॥ २३५॥

द्वात्रिंशत् द्वे सहस्राणि शेषे पंच पंच स्वज्येष्ठदेव्यः ।
त्रिषु अष्ट षट्सहस्रं विकुर्वणामूलतनुसहिताः ॥ २३५ ॥

बत्तीस । द्वात्रिंशत्सहस्राणि द्वे सहस्रे शेषे द्वीपादौ तासां मध्ये पंच पंच ज्येष्ठदेव्यः असुरादिदेवीत्रिस्थानेषु शेषे च ज्येष्ठदेव्यः अष्टसहस्रषट्सहस्रविकुर्वणामूलतनुसहिताः ॥ २३५ ॥

अथ चमरवैरोचनयोः पट्टदेवीनां संज्ञामाह;—

किण्ह सुमेघसुकड्डा रयणि य जेट्ठित्थि पउम महपउमा ।
पउमसिरी कणयसिरी कणयादिममाल चमरदुगे ।२३६।

कृष्णा सुमेघा सुकाढ्या रत्नी च ज्येष्ठास्त्रियः पद्मा महापद्मा ।
पद्मश्रीः कनकश्रीः कनकादिमाला चमरद्विके ॥ २३६ ॥

किण्ह । कृष्णा सुमेघा सुकाढ्या रत्नी च जेष्ठास्त्रियः पद्मा महापद्मा पद्मश्रीः कनकश्रीः कनकमाला एताश्चमरद्विके ॥ २३६ ॥

अथेंद्रादिपंचानां देवीमानं समानमित्यनुक्त्वा इतरेषां कांता निरूपयति गाथात्रयेण;—

अड्ढाइज्जं तिसयं पण्णासूणं कमं तु चमरदुगे ।
पारिसदेवी णागे बिसयं तु ससट्ठितालसयं ॥ २३७ ॥

अर्धतृतीयं त्रिशतं पंचाशदूनः क्रमस्तु चमरद्विके ।
पारिषद्देव्यः नागे द्विशतं तु सषष्ठिचत्वारिंशच्छतं ॥ २३७ ॥

अड्ढा । अर्धतृतीयं शतं त्रिशतं पंचाशदूनक्रमस्तु ज्ञातव्यश्चमरद्विके पारिषद्देव्यः । नागे तु द्विशतं सषष्ठिशतं सचत्वारिंशच्छतं ॥ २३७ ॥

गरुडे सेसे सोलसचउदस दससंगुणं तु वीसूणा ।
सयसयदेवी पेधामहत्तराणंगरक्खाणं ॥ २३८ ॥

गरुडे शेषे षोडशचतुर्दश दशसंगुणाः तु विंशोनाः ।
शतशतदेव्यः पृतनामहत्तराणां अंगरक्षाणाम् ॥ २३८ ॥

गरुडे । गरुडे शेषे दशसंगुणाः षोडश दशसंगुणाश्चतुर्दश । तत्रैव मध्यबाह्यपरिषदोर्विंशत्यूनाः शतशतदेव्यः पृतनामहत्तराणां अंगरक्षाणाम् ॥ २३८ ॥

सेणादेवाणं पुण देवीयो तस्स अद्धपरिमाणं ।
सव्वाणिगिंदसुराणं बत्तीसा होंति देवीओ ॥ २३९ ॥

सेनादेवानां पुनः देव्यः तस्य अर्धपरिमाणं ।
सर्वनिकृष्टसुराणां द्वात्रिंशद्भवंति देव्यः ॥ २३९ ॥

सेणा। तस्य तस्य सेनामहत्तरस्य ५० इत्यर्थः। शेषं छायामात्रं ॥२३९॥

अथ भवनवासिनामग्रे वक्ष्यमाणव्यंतराणां च जघन्योत्कृष्टमायुराचष्टे;-

असुरादिचदुसु सेसे भौम्मे सायर तिपल्लमाउस्सं ।
दलहीणकमं जेट्ठं दसवाससहस्समवरं तु ॥ २४० ॥

असुरादिचतुर्षु शेषे भौमे सागरं त्रिपल्यं आयुष्यम् ।
दलहीनक्रमः ज्येष्ठं दशवर्षसहस्रं अवरं तु ॥ २४० ॥

असुरा। असुरादिषु चतुर्षु शेषे ६ भौमे च यथासंख्यं सागरोपमं त्रिपल्यं आयुष्यं दलहीनक्रमः। एतत्सर्वं ज्येष्ठं अवरं त्वायुर्दशवर्षसहस्रं ॥ २४० ॥

अथोक्तानामेव सविशेषेणायुः कथयन् तदेवान्यत्रेति निरूपयति;—

असुरचउक्के सेसे उदही पल्लत्तियं दलूणकमं ।
उत्तरइंदाणहियं सरिसं इंदादिपंचण्हं ॥ २४१ ॥

असुरचतुष्के शेषे उदधिः पल्यत्रिकं दलोनक्रमः ।
उत्तरेंद्राणामधिकं सदृशं इंद्रादिपंचानाम् ॥ २४१ ॥

असुर। असुरचतुष्के शेषे उदधिः पल्यत्रिकं दलोनक्रमः। एतदेवोत्तरेंद्राणां साधिकं सदृशमिंद्रादिपंचानाम् ॥ २४१ ॥

अथ तदेव सादृश्यं विशेषेण निरूपयति;—

आऊपरिवारिड्ढीविक्किरियाहिं पडिंदयादि चऊ ।
सगसगइंदेहिं समा दहरच्छत्तादिसंजुत्ता ॥ २४२ ॥

आयु:परिवारर्धिविक्रियाभिः प्रतींद्रादयः चत्वारः ।
स्वकस्वकेंद्रैः समा दभ्रच्छत्रादिसंयुक्ताः ॥ २४२ ॥

आऊ । दभ्रं ह्रस्वं तेन इत्यर्थः । शेषं छायामात्रं ॥ २४२ ॥

असुरादींद्रदेवीनामायु:प्रमाणमाह;—

अड्ढाइज्जतिपल्लं चमरदुगे णागगरुडसेसाणं ।
देवीणमट्ठमं पुण पुव्वावस्साण कोडितयं ॥ २४३ ॥

अर्धतृतीयत्रिपल्यं चमरद्विके नागगरुडशेषाणां ।
देवीनामष्टमं पुनः पूर्ववर्षाणां कोटित्रयम् ॥ २४३ ॥

अड्ढा । अर्धतृतीयं पल्यं त्रिपल्यं चमरद्विके देवीनां नागगरुडशेषाणां देवीनां यथासंख्यं पल्याष्टमभागः पुनः पूर्वकोटित्रयं वर्षाणां कोटित्रयं ज्ञातव्यं ॥ २४३ ॥

अंगरक्षपरिषत्त्रयाणामायुष्यं गाथाचतुष्केणाह;—

चमरंगरक्खसेणामहत्तराणाउगं हवे पल्लं ।
साणीकवाहणाणं दलं तु वइरोयणे अहियं ॥२४४॥

चमरांगरक्षसेनामहत्तराणामायुष्यं भवेत् पल्यं ।
सानीकवाहनानां दलं तु वैरोचने अधिकम् ॥ २४४ ॥

चमरं । चमरांगरक्षसेनामहत्तराणामायुष्यं भवेत्पल्यं आनीकः आरोहकः तेन सहितानां वाहनानां दलं अर्धपल्यं एतदेव वैरोचने साधिकम् ॥२४४॥

फणिगरुडसेसयाणं तट्ठाणे पुव्ववस्सकोडी य ।
वस्साण कोडि लक्खं लक्खं च तदद्धयं कमसो ॥२४५॥

फणिगरुडशेषाणां तत्स्थाने पूर्ववर्षकोटिः च ।
वर्षाणां कोटिः लक्षं लक्षं च तदर्धकं क्रमशः ॥ २४५ ॥

फणि । फणिगरुडशेषाणां ७ तत्स्थाने अंगरक्षसेनामहत्तरानीकवाहनस्थाने पूर्वकोटिः वर्षकोटिश्च वर्षाणां कोटिः वर्षाणां लक्षं लक्षं च तदर्द्धकं क्रमशः ॥ २४५ ॥

चमरदुगे परिसाणं अड्ढाइज्जं तिपल्लमद्धूणं ।
णागे अट्ठमभागं सोलस बत्तीसभागं तु ॥ २४६ ॥

चमरद्विके परिषदां अर्धतृतीयं त्रिपल्यमर्धोनम् ।
नागे अष्टमभागं षोडश द्वात्रिंशद्भागं तु ॥ २४६ ॥

चमर । चमरद्विके परिषत्त्रयाणां अर्धतृतीयं पल्यं त्रिपल्यं । मध्यमबाह्यपरिषदोरर्धार्धपल्योनं । नागे पल्याष्टमभागं पल्यषोडशभागं पल्यद्वात्रिंशद्भागमायुः ॥ २४६ ॥

गरुडे सेसे कमसो तिगदुगमेक्कं तु होदि पुव्वाणं ।
वस्साणं कोडीओ परिसाणब्भंतरादीणं ॥ २४७ ॥

गरुडे शेषे क्रमशः तिस्रः द्वे एका तु भवति पूर्वाणाम् ।
वर्षाणां कोट्यः पारिषदानां अभ्यंतरादीनाम् ॥ २४७ ॥

गरुडे । गरुडे शेषे च क्रमशः तिस्रः द्वे एका तु भवति पूर्वाणां कोट्यः तथा वर्षाणां कोट्यः पारिषदानामभ्यंतरादीनाम् ॥ २४७ ॥

असुरादीनामुच्छ्वासाहारक्रमं कथयति;——

असुरे तित्तिसु सासाहारा पक्खं समासहस्सं तु ।
समुहुत्तदिणाणद्धं तेरस बारस दलूणट्ठं ॥ २४८ ॥

असुरे त्रिस्त्रिषु श्वासाहारौ पक्षं समासहस्रं तु ।
समुहूर्तदिनयोः अर्धत्रयोदश द्वादश दलोनाष्टमं ॥ २४८ ॥

असुरे । असुरे त्रिस्त्रिषु च उच्छ्वासाहारौ पक्षे एकवारं समासहस्रे च एकवारं समुहूर्तदिनयोरर्धत्रयोदशे द्वादशे दलोनाष्टमे भागे एकैकवारं ॥२४८॥

अथ भवनत्रयाणामुत्सेधमाह;—

पणवीसं असुराणं सेसकुमाराण दसधणू चेव ।
विंतरजोइसियाणं दससत्त सरीरउदओ दु ॥ २४९ ॥

पंचविंशतिः असुराणां शेषकुमाराणां दशधनुषां चैव ।
व्यंतरज्योतिष्कयोः दशसप्त शरीरोदयः तु ॥ २४९ ॥

पणवीसं । पंचविंशतिः असुराणां धनुषामुदयः शेषकुमाराणां दश-धनुषां चैवोदयः । व्यंतरज्योतिष्कयोः दशसप्तधनुः शरीरोदयस्तु ॥२४९॥

इति श्री**नेमिचंद्रा**चार्यविरचिते **त्रिलोकसारे**
भवनलोकाधिकारः ॥ २ ॥

व्यंतरलोकाधिकारः ॥ ३ ॥

इदानीं व्यंतरलोकं निरूपयितुमनास्तावत्तल्लोकस्थितचैत्यालयानां प्रमाणपूर्वकं नतिं वितनोति;—

तिण्णिसयजोयणाणं कदिहिदपदरस्स संखभागमिदे ।
भौमाणं जिणगेहे गणणातीदे णमंसामि ॥ २५० ॥

त्रिशतयोजनानां कृतिहृतप्रतरस्य संख्यभागमितान् ।
भौमानां जिनगेहान् गणनातीतान् नमस्यामि ॥ २५० ॥

तिण्णि। अंगुलसूच्यंगुलीकृतत्रिशतयोजनानां कृतिहृतप्रतरस्य संख्यातभागमितान् भौमानां जिनगेहान् गणनातीतान् नमस्यामि । त्रिशतयोजनस्य कृतिं गृहीत्वा ९०००० एकयोजनस्य १ एतावत्सु ७६८००० अंगुलेषु सत्सु इयतां योजनानां ९०००० किमिति त्रैराशिकविधिनांगुलानि कर्तव्यानि । वर्गराशेर्गुणकारभागहारौ वर्गरूपेण भवत इति न्यायेन गुणकारोयं वर्गात्मको भवति २=७६८०००।७६८००० तत्रेदमंगुलांकं त्रिभिर्भेदयित्वा २५६।३।२५६।३ गुण्यगुणकारस्थितशून्यदशकं पृथक् कृत्वा बेसदछप्पण्णद्वयगुणने पण्णट्ठिर्जाता । परस्परगुणितत्रिकद्वयेन ९ प्राक्तननवके गुणिते एकाशीतिरभूत् । पुनरमुं राशिं ६५=८१।१० शून्य अंगुलरूपं । एकस्यांगुलस्य एकस्मिन् सूच्यंगुले २ सति इयतां किमिति संपात्य सूच्यंगुलं वर्गीकृत्य ४ गुणयेत् । पुनरनेन जगत्प्रतरे भक्ते =४।६५=८१।१० शून्य व्यंतरपरिमाणं स्यात् । तदुक्तं-“ तिण्णिसयजोयणाणं बेसदछप्पण्ण अंगुलाणं च । कदिहिदपदरं वेंतरजोइसियाणं च परिमाणं ॥ ” इति । पुन संख्यातदेवानां प्र. एकस्मिन् जिनगेहे फ. १ इयतां=४।६५=८१।१० शून्य । किमिति संपात्य संख्यातेन

जगत्प्रतरे भक्ते=४।६५=८१।१० शू.। व्यंतराणां जिनगेहप्रमाणं स्यात्॥ २५०॥

अथ व्यंतराणां कुलभेदं निरूपयति;—

किंणरकिंपुरिसा य महोरगगंधव्व जक्खणामा य।
रक्खसभूयपिसाया अट्ठविहा वेंतरा देवा॥ २५१॥

किंनरकिंपुरुषौ च महोरगगंधर्वयक्षनामानः च।
राक्षसभूतपिशाचाः अष्टविधा व्यंतरा देवाः॥ २५१॥

किंणर। छायामात्रमेवार्थः॥ २५१॥

अथ तेषां शरीरवर्णं निरूपयति;—

तेसिं कमसो वण्णो पियंगुफलधवलकालयासियामं।
हेमं तिसुवि सियामं किह्लं बहुलेवभूसा य॥ २५२॥

तेषां क्रमशः वर्णाः प्रियंगुफलधवलकालश्यामाः।
हेमः त्रिष्वपि श्यामः कृष्णः बहुलेपभूषा च॥ २५२॥

तेसिं। तेषां क्रमशः शरीरवर्णाः प्रियंगुफलधवलकालश्यामा हेमवर्णस्त्रिष्वपि श्यामवर्णः कृष्णवर्णः। ते देवा बहुलेपभूषणाः॥ २५२॥

अथ तेषां चैत्यतरुभेदमाह;—

तेसिं असोयचंपयणागा तुंबुरुवडो य कंटतरू।
तुलसी कदंबणामा चेत्ततरू होंति हु कमेण॥ २५३॥

तेषां अशोकचंपकनागाः तुंबुरुवटाश्च कंटतरुः।
तुलसी कदंबनामा चैत्यतरवो भवंति खलु क्रमेण॥ २५३॥

तेसिं। नागा नागकेसर इत्यर्थः। शेषं छायामात्रं॥ २५३॥

अथ तच्चैत्यतरुमूलस्थजिनप्रतिमादिमाह;—

तम्मूले पलियंकगजिणपडिमा पडिदिसम्हि चत्तारि ।
चउतोरणजुत्ता ते भवणेसु च जंबुमाणद्धा ॥ २५४ ॥

तन्मूले पल्यंकगजिनप्रतिमाः प्रतिदिशं चतस्रः ।
चतुस्तोरणयुक्तास्ताः भवनेषु च जंबूमानार्धाः ॥ २५४ ॥

तम्मूले । जंबूमानार्धाः चैत्यतरवः जंबूवृक्षपरिकरप्रमाणार्द्धा इत्यर्थः । शेषं छायामात्रमेव ॥ २५४ ॥

अथ तदग्रस्थमानस्तंभं सविशेषं निरूपयति;—

पडिपडिमं एक्केक्का माणत्थंभातिवीढसालजुदा ।
मोत्तियदामं सोहइ घंटाजालादियं दिव्वं ॥ २५५ ॥

प्रतिप्रतिमां एकैका मानस्तंभाः त्रिपीठशालयुताः ।
मौक्तिकदाम शोभते घंटाजालादिकं दिव्यम् ॥ २५५ ॥

पडि । प्रतिप्रतिमां एकैका मानस्तंभाः त्रिपीठत्रिशालयुताः । तत्र मौक्तिकं दाम शोभते दिव्यं घंटाजालादिकं च ॥ २५५ ॥

अथ अष्टविधव्यंतराणां प्रतिकुलमवांतरभेदमाह;—

किंणरचउ दसदसधा सेसा बारसगसत्तचोदसधा ।
दो द्दो इंदा दो द्दो वल्लभिया पुह सहस्सदेविजुदा॥२५६

किंनरचत्वारः दशदशधा शेषाः द्वादशसप्तचतुर्दशधा ।
द्वौ द्वौ इंद्रौ द्वे द्वे वल्लभिके पृथक् सहस्रदेवीयुते ॥ २५६ ॥

किंणर । किंनरादयः चत्वारः दशधा दशधा भिद्यंते शेषाः यक्षादयः

द्वादशधा सप्तधा चतुर्दशधा । अत्र द्वौ द्वौ इंद्रौ तयोर्द्वंद्वे वल्लभिके पृथक् पृथक् सहस्रदेवीयुते ॥ २५६ ॥

अथ तेषां संज्ञां षोडशगाथाभिर्निरूपयति;—

किंपुरिसकिंणरावि य हिदयंगमगा य रूपपाली य ।
किंणरकिंणरऽणिंदित मणरम्मा किंणरुत्तमगा ॥२५७॥

किंपुरुषकिंनरावपि च हृदयंगमश्च रूपपाली च ।
किंनरकिंनरः अनिंदितः मनोरमः किंनरोत्तमः ॥ २५७ ॥

किंपुरिस । छायामात्रमेवार्थः ॥ २५७ ॥

रतिपियजेट्ठा इंदा किंपुरिसाकिंणरावतंसा हु ।
केतुमती रतिसेणा रतिप्पिया होंति वल्लभिया ॥२५८॥

रतिप्रियज्येष्ठौ इंद्रौ किंपुरुषकिंनरौ अवतंसा हि ।
केतुमती रतिसेना रतिप्रिया भवंति वल्लभिकाः ॥ २५८ ॥

रतिपिय । रतिप्रियज्येष्ठौ १० तत्रेन्द्रौ किंपुरुषाकिंनरौ तयोरवतंसा केतुमतीरतिसेनारतिप्रियाः भवंति वल्लभिकाः ॥ २५८ ॥

पुरुसा पुरुसुत्तमसप्पुरुसमहापुरुसपुरुसपहणामा ।
अतिपुरुसा मरुओ मरुदेवमरुप्पहजसोवंतो ॥ २५९ ॥

पुरुषः पुरुषोत्तमसत्पुरुषमहापुरुषपुरुषप्रभनामानः ।
अतिपुरुषः मरुर्मरुदेवमरुत्प्रभयशस्वंतः ॥ २५९ ॥

पुरुसा । छायामात्रमेवार्थः ॥ २५९ ॥

सप्पुरुसमहापुरुसा किंपुरिसिंदा कमेण वल्लभिया ।
रोहिणिया णवमी हिरि पुप्फवदी य इयरस्स ॥ २६०॥

सत्पुरुषमहापुरुषौ किंपुरुषेंद्रौ क्रमेण वल्लभिकाः ।
रोहिणी नवमी ह्री पुष्पावती च इतरस्य ॥ २६० ॥

सप्पुरुस । सत्पुरुषमहापुरुषौ किंपुरुषेंद्रौ । क्रमेण वल्लभिकाः रोहिणी नवमी देवी पूर्वेंद्रस्य ह्री पुष्पवती चेतरस्य ॥ २६० ॥

भुजगा भुजंगसाली महकायतिकाय खंधसाली य ।
मणहर असणिजवक्खा महसरगंभीरपियदरिसा॥२६१॥

भुजगः भुजंगशाली महाकायो अतिकायः स्कंधशाली च ।
मनोहरः अशनिजवाख्यः महैश्वर्यगंभीरप्रियदर्शिनः ॥ २६१ ॥

भुजग । छायामात्रमेवार्थः ॥ २६१ ॥

महकायो अतिकायो महोरगेंदा हु भोग भोगवदी ।
इदरस्स पुप्फगंधी अणिंदिता होंति वल्लभिया ॥२६२॥

महाकायो अतिकायः महोरगेंद्रौ हि भोगा भोगवती ।
इतरस्य पुष्पगंधी अनिंदिता भवतः वल्लभिके ॥ २६२ ॥

महकायो । महाकायोऽतिकायश्चेति महोरगेंद्रौ खलु । भोगा भोगवती पूर्वस्य, इतरस्य पुष्पगंधी अनिंदिता भवतः वल्लभिके ॥ २६२ ॥

हाहा हूहू णारयतुंबुरुककदंबवासवक्खा य ।
महसर गीतरतीवि य गीतयसा दइवता दसमा ॥२६३॥

हाहा हूहू नारदतुंबुरुककदंबवासवाख्याश्च ।
महास्वरो गीतरतिः अपि च गीतयशा दैवता दशमः ॥२६३॥

हाहा । छायामात्रमेवार्थः ॥ २६३ ॥

गीतरती गीतयसो गंधव्विंदा हवंति वल्लभिया ।
सरसति सरसेणावि य णंदिणि पियदरिसिणादेवी २६३

गीतरतिः गीतयशा गंधर्वेन्द्रौ भवतः वल्लभिकाः ।
सरस्वति स्वरसेनापि च नंदिनी प्रियदर्शनादेवी ॥ २६४ ॥

गीतरती । वल्लभिकाः तयोरिति शेषः । अन्यच्छायामात्रं ॥ २६४ ॥

अह माणिपुण्णसैलमणोभद्दा भद्दगा सुभद्दा य ।
तह सव्वभद्द माणुस धणपाल सुरूवजक्खा य ॥ २६५ ॥

अथ माणिपूर्णशैलमनोभद्राः भद्रकः सुभद्रः च ।
तथा सर्वभद्रः मानुषः धनपालः सुरूपयक्षश्च ॥ २६५ ॥

अह । अथ माणिभद्रपूर्णभद्रशैलभद्रमनोभद्राः भद्रकः सुभद्रश्च तथा सर्वभद्रः मानुषः धनपालः सुरूपयक्षश्च ॥ २६५ ॥

जक्खुत्तमा मणोहरणामा तह माणिपुण्णभद्दिंदा ।
कुंद बहुपुत्तदेवी तारा पुण उत्तमा देवी ॥ २६६ ॥

यक्षोत्तमो मनोहरनामा तत्र माणिपूर्णभद्रेंद्रौ ।
कुंदा बहुपुत्रदेवी तारा पुनरुत्तमा देवी ॥ २६६ ॥

जक्खु । यक्षोत्तमो मनोहरनामा १२ तत्र माणिभद्रपूर्णभद्राविंद्रौ । तयोर्देव्यः कुंदा बहुपुत्रदेवी तारापुनरुत्तमा देवी ॥ २६६ ॥

भीममहभीमविग्घविणायक तह उदकरक्खसा य तहा ।
रक्खसरक्खस तह बम्हरक्खसा होंति सत्तमया ॥ २६७ ॥

भीमो महाभीमः विघ्नविनायकः तथा उदकः राक्षसश्च तथा ।
राक्षसराक्षसः तथा ब्रह्मराक्षसः भवंति सप्तमकः ॥ २६७ ॥

भीम । छायामात्रमेवार्थः ॥ २६७ ॥

भीमो य महाभीमो रक्खसइंदा हवंति वल्लभिया ।
पउमा वसुमित्ताविय रयणड्ढा कणयपह देवी ॥ २६८॥

भीमश्च महाभीमो राक्षसेंद्रौ भवतः वल्लभिका ।
पद्मा वसुमित्रापि च रत्नाढ्या कनकप्रभा देवी ॥ २६८ ॥

भीमो । वल्लभिकाः तयोरिति शेषः । अन्यच्छायामात्रं ॥ २६८ ॥

भूदाणं तु सुरूपा पडिरूवा भूदउत्तमा तत्तो ।
पडिभूद महाभूदा पडिछण्णागासभूद इदि ॥ २६९ ॥

भूतानां तु सुरूपः प्रतिरूपः भूतोत्तमः ततः ।
प्रतिभूतः महाभूतः प्रतिछन्नः आकाशभूत इति ॥ २६९ ॥

भूदाणं । छायामात्रमेवार्थः ॥ २६९ ॥

इंदा य सुपडिरूवा वल्लभिया तह य होदि रूववदी ।
बहुरूवा य सुसीमा सुमुहा य हवंति देवीयो ॥ २७०॥

इंद्रौ च सुप्रतिरूपौ वल्लभिकाः तथा च भवंति रूपवती ।
बहुरूपा च सुषीमा सुमुखा च भवंति देव्यः ॥ २७० ॥

इंदा । इंद्रौ च सुरूपप्रातिरूपौ तयोर्वल्लभिका तथा भवंति रूपवती बहुरूपा च सुषीमा सुमुखा च एता देव्यो भवंति ॥ २७० ॥

कुम्भंड रक्ख जक्खा संमोहो तारका अचोक्खा य ।
काल महकाल चोक्खा सतालया देह महदेहा॥२७१॥

कूष्मांडो रक्षोयक्षः संमोहः तारकः अशुचिश्च ।
कालः महाकालः शुचिः सतालकः देहः महादेहः ॥ २७१॥

कुंभं । छायामात्रामेवार्थः ॥ २७१ ॥

तुण्हिय पवयणणामा इंदा तेसिं तु कालमहकाला।
कमलकमलप्पहुप्पलसुदरिसणा होंति वल्लभिया॥२७२॥

तूष्णीकः प्रवचननामा इंद्रौ तेषां तु कालमहाकालौ।
कमलाकमलप्रभोत्पलासुदर्शना भवंति वल्लभिकाः॥ २७२॥

तुण्हिय। तूष्णीकः प्रवचननामा १४ इंद्रौ तेषां तु कालमहाकालौ कमला कमलप्रभा उत्पला सुदर्शनिका एतास्तयोर्वल्लभिकाः॥ २७२॥

अथ पुनरिंद्रसंज्ञामेव पृथग्गृह्णाति गाथाद्वयेनाह;—

किंपुरुस किंणरा सप्पुरुसमहापुरुसणामया कमसो।
महकायो अतिकायो गीतरती गीतयसणामा॥ २७३॥

किंपुरुषः किन्नरः सत्पुरुषः महापुरुषनामा क्रमशः।
महाकायः अतिकायः गीतरतिः गीतयशोनामा॥ २७३॥

किंपुरुस। छायामात्रमेवार्थः॥ २७३॥

तो माणिपुण्णभद्दा भीममहाभीमया सुरूवा य।
पडिरूवो काल महाकालो भोम्मेसु जुगलिंदा॥२७४॥

ततो माणिपूर्णभद्रौ भीममहाभीमौ सुरूपश्च।
प्रतिरूपः कालः महाकालः भौमेषु युगलेंद्राः॥ २७४॥

तो। ततो माणिभद्रः पूर्णभद्रः भीमः महाभीमः सुरूपश्च प्रतिरूपः कालो महाकालः एते सर्वे भौमेषु युगलेंद्राः॥ २७४॥

अथ किंपुरुषादींद्राणां गणिकामहत्तरीर्गाथाचतुष्टयेन कथयति;—

गणिकामहत्तरीयो इंदं पडि पल्लदलठिदी दो द्दो।
मधुरा मधुरालावा सुस्सर मउभासिणी कमसो॥२७५॥

गणिकामहत्तर्यः इंद्रं प्रति पल्यदलस्थितयः द्वे द्वे ।
मधुरा मधुरालापा सुस्वरा मृदुभाषिणी क्रमशः ॥ २७५ ॥

गणिका । छायामात्रमेवार्थः ॥ २७५ ॥

पुरिसपिया पुंकंता सोमा पुंदरिसिणी य भोगक्खा ।
भोगवदी य भुजंगा भुजंगपिया तो सुघोस विमलेत्ति२७६

पुरुषप्रिया पुंकांता सौम्या पुंदर्शिनी च भोगाख्या ।
भोगवती च भुजंगा भुजंगप्रिया ततः सुघोषा विमला इति ॥२७६॥

पुरिस । छायामात्रमेवार्थः ॥ २७६ ॥

सुस्सर अणिंदिदक्खा भद्द सुभद्दा य मालिणी होंति ।
पउमादिमालिणीवि य तो सव्वरि सव्वसेणेत्ति ॥२७७॥

सुस्वरा अनिंदिताख्या भद्रा सुभद्रा च मालिनी भवंति ।
पद्मादिमालिनी अपि च ततः शर्वरी सर्वसेना इति ॥ २७७ ॥

सुस्सर । छायामात्रमेवार्थः ॥ २७७ ॥

रुद्दक्ख रुद्ददरिसिण भूदादीकंद भूद भूदादी ।
दत्त महाभुज अंबा कराल सुलसा सुदरिसणया॥२७८॥

रुद्राख्या रुद्रदर्शना भूतादिकांता भूता भूतादि ।
दत्ता महाभुजा अंबा कराला सुरसा सुदर्शनका ॥ २७८ ॥

रुद्दक्ख । भूतादिकांता भूतकांता इत्यर्थः । भूतादिदत्ता भूतदत्ता इत्यर्थः । शेषं छायामात्रं ॥ २७८॥ ।

अथ किंपुरुषादींद्राणां सामानिकादीनां संख्याभेदमाह;—

इंदसमा हु पडिंदा समाणुतणुरक्खपारिसपरिमाणं ।
चउसोलसहस्सं पुण अट्ठसयं बिसदवड्ढिकमो ॥ २७९ ॥

इंद्रसमाः खलु प्रतींद्राः सामानिकतनुरक्षपारिषद्प्रमाणं ।
चतुःषोडशसहस्रं पुनरष्टशतं द्विशतवृद्धिक्रमः ॥ २७९ ॥

इंदसमा । इंद्रसमाः खलु प्रतींद्राः सामानिकतनुरक्षपारिषद्प्रमाणं चतुःसहस्रं षोडशसहस्रं पुनरष्टशतं मध्यमबाह्यपारिषदोः द्विशतवृद्धिक्रमः॥२७९॥

अथ तेषां सप्तानीकं कथयति;—

कुंजरतुरयपादद्दीरहगंधव्वा य णच्चवसहेत्ति ।
सत्तेवय आणीया पत्तेयं सत्त सत्त कक्खजुदा ॥ २८० ॥

कुंजरतुरगपदातिरथगंधर्वाश्च नृत्यवृषभाविति ।
सप्तैव अनीकाः प्रत्येकं सप्त सप्त कक्षयुताः ॥ २८० ॥

कुंजर । छायामात्रमेवार्थः ॥ २८० ॥

अथ तत्सेनामहत्तरभेदमाह;—

सेणामहत्तरा सुज्जेट्ठा सुग्गीवविमलमरुदेवा ।
सिरिदामा दामसिरी सत्तमदेवो विसालक्खो ॥ २८१ ॥

सेनामहत्तराः सुज्येष्ठः सुग्रीवविमलमरुदेवाः ।
श्रीदामा दामश्रीः सप्तमदेवो विशालाख्यः ॥ २८१ ॥

सेणा । छायामात्रमेवार्थः ॥ २८१ ॥

अथ तदानीकसंख्यामाह;—

अट्ठावीससहस्सं पढमं दुगुणं कमेण चरिमोत्ति ।
सव्विंदाणं सरिसा पइण्णयादी असंखमिदा ॥ २८२ ॥

अष्टाविंशसहस्राणि प्रथमं द्विगुणं क्रमेण चरमांतम् ।
सर्वेंद्राणां सदृशाः प्रकीर्णकादयः असंख्यमिताः ॥ २८२ ॥

अट्ठावीस । अष्टाविंशतिः सहस्राणि प्रथमं प्रमाणं क्रमेण द्विगुणं चरमं यावत् । सर्वेंद्राणां सदृशाः आनीकसंख्याः चतुर्निकायेषु प्रकीर्णकादयः असंख्यातमिताः ॥ २८२ ॥

अथ व्यंतरेंद्राणां नगराश्रयद्वीपसंज्ञामाह;—

अंजणकवज्जधाउकसुवण्णमणोसिलकवज्जरजदेसु ।
हिंगुलिके हरिदाले दीवे भोम्मिंदणयराणि ॥ २८३ ॥

अंजनकवज्रधातुकसुवर्णमनःशिलकवज्ररतत्रेषु ।
हिंगुलिके हरिताले द्वीपे भौमेंद्रनगराणि ॥ २८३ ॥

अंजणक । छायामात्रमेवार्थः ॥ २८३ ॥

अथ तन्नगरसंज्ञामायामं चाह;—

भोमिंदंकं मज्झे पहकंतावत्तमज्झ चरिमंका ।
पुव्वादिसु जंबुसमा पणपणणयराणि समभागे ॥ २८४ ॥

भौमेंद्रांकं मध्ये प्रभकांतावर्तमध्याः चरमांकाः ।
पूर्वादिषु जंबूसमानि पंच पंच नगराणि समभागे ॥ २८४ ॥

भोमिंदं । भौमेंद्रः किंनरस्तद्देवांकं मध्ये पुरि प्रभकांतावर्तमध्याः भौमेंद्रांकचरमांकाः पूर्वादिषु जंबूद्वीपसमानि पंच पंच नगराणि समभागे ॥ २८४ ॥

अथ तन्नगरप्राकारद्वारयोरुदयादिभेदमाह;—

तप्पायारुदयतियं पणहत्तरिपणवीसपंचदलं।
दारुदओ वित्थारो पंचघणद्धं तदद्धं च॥ २८५॥

तत्प्राकारोदयत्रयं पंचसप्ततिपंचविंशतिपंचदलम्।
द्वारोदयो विस्तारः पंचघनार्धं तदर्धं च॥ २८५॥

तप्पाया। तत्प्राकारोदयत्रयं पंचसप्ततिदलं $\frac{७५}{२}$ पंचविंशतिदलं $\frac{२५}{२}$ पंचदलं $\frac{५}{२}$ तद्द्वारोदयो विस्तारश्च पंचघनार्धं $\frac{१२५}{२}$ तदर्धं च $\frac{१२५}{४}$।२८५।

अथ तदुपरिमप्रासादस्वरूपं निरूपयति;--

तस्सुवरिं पासादो पणहत्तरितुंगओ सुधम्मसहा।
पणकदिदल तद्दल णव दीहरवासुदय कोस ओगाढा२८६

तस्योपरि प्रासादः पंचसप्ततितुंगः सुधर्मसभा।
पंचकृतिदलं तद्दलं नव दीर्घव्यासोदयाः क्रोशः अवगाढः॥२८६॥

तस्सुव। तस्योपरि प्रासादः पंचसप्ततितुंगः स एव सुधर्मसभेत्याख्यायते। पंचकृतिदलं $\frac{२५}{२}$ तद्दलं $\frac{२५}{४}$ नव ९ एते यथासंख्यं दीर्घव्यासोदयाः तदवगाढः कुट्टिमा भूमिः एकक्रोशः॥ २८६॥

अथ तत्प्रासादस्य द्वारोदयादीन्निरूपयति;—

तिस्से दारुदओ दुगइगि वासो दक्खिणुत्तरिंदाणं।
सव्वेसिं णगराणं पायारादीणि सरिसाणि॥ २८७॥

तस्याः द्वारोदयः द्विकमेकं व्यासः दक्षिणोत्तरेंद्राणाम्।
सर्वेषां नगराणां प्राकारादीनि सदृशानि॥ २८७॥

तिस्से । तस्याः सुधर्मसभायाः द्वारोदयः द्वियोजनं एकयोजनव्यासः । दक्षिणोत्तरेंद्राणां सर्वेषां नगराणां प्राकारादीनि सदृशानि ॥ २८७ ॥

अथ तन्नगरबाह्यवनस्वरूपं निरूपयति;—

पुरदो गंतूण बहिं चउद्दिसं जोयणाणि बिसहस्सं ।
इगिलक्खायद तद्दलवासजुदा रम्मवणखंडा ॥ २८८ ॥

पुराद्गत्वा बहिः चतुर्दिशं योजनानि द्विसहस्रं ।
एकलक्षायताः तद्दलव्यासयुताः रम्यवनखंडाः ॥ २८८ ॥

पुरदो । पुराद्गत्वा बहिश्चतसृषु दिशासु योजनानि द्विसहस्रैकलक्षायताः तदर्धव्यासयुता रम्यवनखंडाः ॥ २८८ ॥

अथ तद्द्वीपस्थितगणिकानगरविस्तारसंख्यादिकं निरूपयति;—

तत्थेव य गणिकाणं चुलसीदिसहस्सविउलणयराणि ।
सेसाणं भोम्माणं अणेयदीवे समुद्दे य ॥ २८९ ॥

तत्रैव च गणिकानां चतुरशीतिसहस्रविपुलनगराणि ।
शेषाणां भौमानां अनेकद्वीपे समुद्रे च ॥ २८९ ॥

तत्थेव । तत्रैव द्वीपे गणिकानां चतुरशीतिसहस्रविपुलनगराणि शेषाणां भौमानां अनेकद्वीपे अनेकसमुद्रे च नगराणि ॥ २८९ ॥

अथ कुलविशेषमवलंब्य निलयभेदमाह;—

भूदाण रक्खसाणं चउदस सोलस सहस्स भवणाणि ।
सेसाण वाणवेंतरदेवाणं उवरि णिलयाणि ॥ २९० ॥

भूतानां राक्षसानां चतुर्दश षोडश सहस्रं भवनानि ।
शेषाणां वानव्यंतरदेवानां उपरि निलयानि ॥ २९० ॥

भूदाण । भूतानां खरभागे राक्षसानां पंकभागे चतुर्दश षोडशसहस्र-भवनानि शेषाणां वानव्यंतरदेवानां उपरि मध्यलोके निलयानि संति ॥२९०॥

अथ नीचोपपादादिव्यंतरविशेषान् गाथाद्वयेनाह;—

हत्थपमाणे णिच्चुववादा दिगुवासि अंतरणिवासी ।
कुंभंडा उप्पण्णाणुप्पण्ण पमाणया गंधा ॥ २९१ ॥

हस्तप्रमाणे नीचोपपादाः दिग्वासिनः अंतरनिवासिनः ।
कूष्मांडाः उत्पन्ना अनुत्पन्नाः प्रमाणका गंधाः ॥ २९१ ॥

हत्थ । छायामात्रमेवार्थः ॥ २९१ ॥

महगंध भुजग पीदिक आगासुववण्णगा य उवरुवरिं ।
तिसु दसहत्थसहस्सं वीससहस्संतरं सेसे ॥ २९२ ॥

महागंधा भुजगाः प्रीतिका आकाशोत्पन्नाश्च उपर्युपरि ।
त्रिषु दशहस्तसहस्राणि विंशतिसहस्रांतरं शेषे ॥ २९२ ॥

मह । महागंधा भुजगाः प्रीतिका आकाशोत्पन्नाश्च १२ एते सर्वे भूतविशेषा चित्राभूमित उपर्युपरि । त्रिषु दशहस्तसहस्राणि अंतरं शेषे उत्पन्नादौ विंशतिहस्तसहस्राणि अंतरं ॥ २९२ ॥

अथ तेषां नीचोपपादादीनां क्रमेणायुष्यमाह;—

दसवरिससहस्सादो सीदी चुलसीदिकं सहस्सं तु ।
पल्लट्ठमं तु पादं पल्लद्धं आउगं कमसो ॥ २९३ ॥

दशवर्षसहस्रात् अशीतिः चतुरशीतिकं सहस्रं तु ।
पल्याष्टमं तु पादं पल्यार्धमायुष्यं क्रमशः ॥ २९३ ॥

दस । दशवर्षसहस्रादारभ्य दशसहस्रोत्तरवृद्धिक्रमेणाशीतिसहस्रपर्यंतं, ततश्चतुरशीतिसहस्राणि पल्याष्टमभागं पल्यचतुर्थांशं पल्यार्धमायुष्यं क्रमशः ॥ २९३ ॥

अथ व्यंतराणां निलयभेदमाह;—

विंतरणिलयतियाणि य भवणपुरावासभवणणामाणि ।
दीवसमुद्दे दहगिरितरुम्हि चित्तावणिम्हि कमे ॥२९४॥

व्यंतरनिलयत्रयाणि च भवनपुरावासभवननामानि ।
द्वीपसमुद्रे द्रहगिरितरौ चित्रावन्यां क्रमेण ॥ २९४ ॥

विंतर । व्यंतराणां निलयत्रयाणि च भवनपुरं आवासं भवनमिति नामानि । इह कुत्र कुत्रेति चेत् । द्वीपसमुद्रे ह्रदगिरितरौ चित्रावन्यां च क्रमेण भवंति ॥ २९४ ॥

अथ निलयत्रयं विवृणोति;—

उड्ढगया आवासा अधोगया विंतराण भवणाणि ।
भवणपुराणि य मज्झिमभागगया इदि तियं णिलयं२९५

ऊर्ध्वगताः आवासा अधोगता व्यंतराणां भवनानि ।
भवनपुराणि च मध्यमभागगतानीति त्रयं निलयम् ॥ २९५ ॥

उड्ढगया । छायामात्रमेवार्थः ॥ २९५ ॥

अथ सर्वेषां व्यंतराणां यथासंभवं निवासप्रदेशमुपदिशति;—

चित्तवइरादु जावय मेरुदयं तिरियलोयवित्थारं ।
भोम्मा हवंति भवणे भवणपुरावासगे जोग्गे ॥ २९६॥

चित्रावज्रातः यावत् मेरूदयं तिर्यग्लोकविस्तारं ।
भौमा भवंति भवने भवनपुरावासके योग्यं ॥ २९६ ॥

चित्त । चित्रावज्रामध्यादारभ्य यावन्मेरूदयं यावत्तिर्यग्लोकविस्तारं तावति क्षेत्रे भौमा भवंति स्वस्वयोग्यभवने भवनपुरे आवासे च ॥ २९६ ॥

अथ निलयसंक्रममावेदयति;—

भवणं भवणपुराणि य भवणपुरावासयाणि केसिंपि ।
भवणामरेसु असुरे विहाय केसिं तियं णिलयं ॥२९७॥

भवनं भवनपुरे च भवनपुरावासकानि केषांचित् ।
भवनामरेषु असुरान् विहाय केषां त्रयं निलयम् ॥ २९७ ॥

भवणं । केषांचित् भवनमेव, केषांचिद्भवनपुरे च भवतः, केषांचिद्भवनभवनपुरावासकानि च भवंति । भवनामरेषु असुरान् विहाय केषांचित् त्रयं निलयम् ॥ २९७ ॥

अथ निलयत्रयाणां व्यासादिकं गाथात्रयेण कथयति;—

जेट्ठावरभवणाणं बारसहस्सं तु सुद्ध पणुवीसं ।
बहलं तिसय तिपादं बहलतिभागुदयकूडं च ॥२९८॥

ज्येष्ठावरभवनयोः द्वादशसहस्रं तु शुद्धपंचविंशतिः ।
बाहल्यं त्रिशतं त्रिपादं बाहल्यत्रिभागोदयकूटं च ॥ २९८ ॥

जेट्ठा । जेष्ठजघन्यभवनयोर्विस्तारौ द्वादशसहस्रयोजनानि शुद्धा पंचविंशतिः, तयोर्बाहल्यं त्रिशतयोजनानि त्रिपादयोजनं तयोर्मध्ये तद्बाहल्यत्रिभागोदयकूटं चास्ति ॥ २९८ ॥

जेट्ठभवणाण परिदो वेदी जोयणदलुच्छिया होदि ।
अवराणं भवणाणं दंडाणं पण्णुवीसुदया ॥ २९९ ॥

ज्येष्ठभवनानां परितः वेदी योजनदलोच्छ्रिता भवति ।
अवराणां भवनानां दंडानां पंचविंशत्युदया ॥ २९९ ॥

जेट्ठं । वेदीशब्दः द्विवारं संबध्यते । अन्यत् छायामात्रमेवार्थः ॥२९९॥

वट्टादीण पुराणं जोयणलक्खं कमेण एक्कं च ।
आवासाणं बिसयाहियबारसहस्स य तिपादं ॥ ३०० ॥

वृत्तादीनां पुराणां योजनलक्षं क्रमेण एकं च ।
आवासानां द्विशताधिकद्वादशसहस्राणि च त्रिपादम् ॥३००॥

वट्टा । वृत्तादीनां पुराणां योजनलक्षमुत्कृष्टविस्तारः क्रमेण जघन्यमेकयोजनं । वृत्तादीनामावासानां द्विशताधिकद्वादशसहस्राण्युत्कृष्टविस्तारः जघन्यं त्रिपादयोजनं $\frac{3}{4}$ ॥ ३०० ॥

अथ निलयत्रयाणां विशेषस्वरूपं भौमाहारोच्छ्वासं च कथयति;—

भवणावासादीणं गोउरपायारणच्चणादिघरा ।
भोम्माहारुस्सासा साहियपणदिणमुहुत्ता य ॥ ३०१ ॥

भवनावासादीनां गोपुरप्राकारनर्तनादिगृहाणि ।
भौमाहारोच्छ्वासौ साधिकपंचदिनानि मुहूर्ताश्च ॥ ३०१ ॥

भवणा । भवनावासादीनां गोपुरप्राकारनर्तनादिगृहाणि भवंति । भौमाहारोच्छ्वासौ यथाक्रमेण साधिकपंचदिनानि साधिकपंचमुहूर्ताश्च ॥ ३०१ ॥

इति श्रीनेमिचंद्राचार्यविरचिते **त्रिलोकसारे व्यंतरलोकाधिकारः** ॥ ३ ॥

अथ ज्योतिर्लोकाधिकारः ॥ ४ ॥

अथ व्यंतरलोकाधिकारं निरूप्य तदनंतरोद्देशभाजं ज्योतिर्लोकाधिकारं निरूपयितुकामस्तदादौ ज्योतिर्बिंबसंख्याप्रदर्शनगर्भं ज्योतिर्लोकचैत्यालयवंदनालक्षणं मंगलमाह;——

बेसदछप्पण्णंगुलकदिहिदपदरस्स संखभागमिदे ।
जोइसजिणिंदगेहे गणणातीदे णमंसामि ॥ ३०२ ॥

द्विशतषट्पंचाशदंगुलकृतिहृतप्रतरस्य संख्यातभागमितान् ।
ज्योतिष्कजिनेंद्रगेहान् गणनातीतान्नमस्यामि ॥ ३०२ ॥

बेसद । छायामात्रमेवार्थः ॥ ३०२ ॥

अथ तद्गेहस्थज्योतिष्कभेदमाह;—

चंदा पुण आइच्चा गह णक्खत्ता पइण्णतारा य ।
पंचविहा जोइगणा लोयंतघणोदहिं पुट्ठा ॥ ३०३ ॥

चंद्राः पुनः आदित्या ग्रहा नक्षत्राणि प्रकीर्णकताराश्च ।
पंचविधा ज्योतिर्गणा लोकांतघनोदधिं स्पृष्टवंतः ॥ ३०३ ॥

चंदा । छायामात्रमेवार्थः ॥ ३०३ ॥

अथ द्वीपसमुद्रनिरूपणमंतरेण ज्योतिर्गणनिरूपणासंभवात् तदाधारद्वीपसमुद्रान् गाथाचतुष्केण निरूपयति;—

जंबूधादकिपुक्खरवारुणिखीरघदखोदवरदीओ ।
णंदीसररुणअरुणब्भासा वर कुंडलो संखो ॥ ३०४ ॥

जंबूधातकिपुष्करवारुणिक्षीरघृतक्षौद्रवरद्वीपाः ।
नंदीश्वरारुणारुणाभासा वराः कुंडलः शंखः ॥ ३०४ ॥

जंबू । जंबूद्वीपः धातुकीसंडद्वीपः पुष्करवरः वारुणिवरः क्षीरवरः घृतवरः क्षौद्रवरः नंदीश्वरवरः अरुणवरः अरुणाभासवरः कुंडलवरः शंखवरः ॥ ३०४ ॥

तो रुजगभुजगकुसगयकोंचवरादी मणस्सिला तत्तो ।
हरिदालदीवसिंदुरसियामगंजणयहिंगुलिया ॥ ३०५ ॥

ततो रुचकभुजगकुशगक्रौंचवरादयः मनःशिला ततः ।
हरितालद्वीपसिंदूरश्यामकांजनकाहिंगुलिकाः ॥ ३०५ ॥

तो । ततो रुचकवरः भुजगवरः कुशगवरः क्रौंचवरादयः । एते अभ्यंतरषोडशद्वीपाः । तत उपरि असंख्यातद्वीपसमुद्रान् त्यक्त्वा अंत्यषोडशद्वीपानाह–ततो मनःशिलाद्वीपः हरितालद्वीपः सिंदूरवरः श्यामवरः अंजनकवरः हिंगुलिकवरः ॥ ३०५ ॥

रूप्पसुयण्णयवज्जयवेलुरिययणागभूदजक्खवरा ।
तो देवाहिंदवरा सयंभुरमणो हवे चरिमो ॥ ३०६ ॥

रूप्यसुवर्णकवज्रकवैडूर्यकनागभूतयक्षवराः ।
ततो देवाहिंद्रवरौ स्वयंभूरमणो भवेत् चरमः ॥ ३०६ ॥

रूप्प । रूप्यवरः सुवर्णवरः वज्रवरः वैडूर्यवरः नागवरः भूतवरः यक्षवरः ततो देववरः अहींद्रवरः स्वयंभूरमणो भवेच्चरमः ॥ ३०६ ॥

लवणंबुहि कालोदयजलही तत्तो सदीवणामुवही ।
सव्वे अड्ढाइज्जुद्धारुवहिमेत्तया होंति ॥ ३०७ ॥

लवणांबुधिः कालोदकजलधिः ततः स्वद्वीपनामोदधयः।
सर्वे अर्धतृतीयोद्धारोदधिमात्रा भवंति ॥ ३०७ ॥

लवणं। लवणांबुधिः कालोदकजलधिः ततः स्वस्वद्वीपनामान उदधयः सर्वे द्वीपसमुद्राः कियंत इतिचेत्, अर्धतृतीयोद्धारसागरोपममात्रा भवंति ३०७

इदानीं तेषां विस्तारं संस्थानं च निरूपयति;—

जंबू जोयणलक्खो वट्टो तद्दुगुणदुगुणवासेहिं।
लवणादिहि परिखित्तो सयंभुरमणुवहियंतेहिं ॥३०८॥

जंबू योजनलक्षः वृत्तः तद्द्विगुणाद्विगुणव्यासैः।
लवणादिभिः परिक्षिप्तः स्वयंभूरमणोदध्यंतैः ॥ ३०८ ॥

जंबू। जंबूद्वीपः योजनलक्षव्यासः वृत्तः तद्द्विगुणद्विगुणव्यासैः लवणसमुद्रादिभिः परिक्षिप्तः परिवेष्टितः स्वयंभूरमणोदध्यंतैः ॥ ३०८ ॥

अथ तत्राभिमतस्य द्वीपस्य समुद्रस्य वा सूचीव्यासं बलयव्यासं चानेतुं करणसूत्रमिदम्;—

रूऊणाहियपदमिदुगसंवग्गे पुणोवि लक्खहदे।
गयणतिलक्खविहीणे वासो बलयस्स सूइस्स ॥ ३०९ ॥

रूपोनाधिकपदमिताद्विकसंवर्गे पुनरपि लक्षहते।
गगनत्रिलक्षविहीने व्यासो वलयस्य सूचेः ॥ ३०९ ॥

रुऊणा। द्वीपसमुद्राणामिष्टगच्छप्रमाणं कालोदके एकत्र रूपोनमन्यत्र रूपाधिकं च कृत्वा स्थापनीयं ३।५ तद्द्वयमपि विरलयित्वा ॥ १११। ११११। रूपं प्रति द्विकं दत्वा २२२ ।२२२२२। अन्योन्यसंवर्गे ईदृशौ राशी जायेते ८।३२ पुनर्लक्षेण हन्यात्। ८ ल ३२ ल.

तत्र प्रथमराशौ शून्यं विशोधयेत् द्वितीयराशौ लक्षत्रयं विशोधयेत् । एवं कृते सति वलयव्यासः ८ ल. सूचीव्यासश्च जायते २९ ल. । अत्र वलयव्यासानयने वासना । तद्यथा । जंबूद्वीपव्यासात् १ ल. अस्माल्लवणसमुद्रादिव्यासाः द्विगुणाद्विगुणप्रमाणा भवंति इति हेतोः रूपोनगच्छमात्राद्विकैर्जंबूद्वीपव्यासे गुणिते तत्र तत्रेष्टस्थाने वलयव्यासो भवति। इदं मनसि कृत्य “ रूऊणपदमिदद्दुगसंवग्गे ” इत्युक्तं । अथ सूचीव्यासानयने वासना । इष्टस्य द्वीपस्य समुद्रस्य वा वलयव्यासं उभयदिग्गतमेलनात् द्विगुणं स्थापयित्वा १६ ल. तथा ततोर्वाचीनानां द्वीपसमुद्राणां वलयव्यासं द्विगुणं द्विगुणं स्थापयेत् ८ ल. । ४ ल. । जंबूद्वीपस्य दिग्द्वयाभावादात्मप्रमाणमेव १ ल. स्थापयेत् । ततः व्यासानां न्यासः । १६ ल. ८. ल. ४ ल. १ ल. गुणसंकलनार्थः । अत्र द्वितीयस्थाने शून्ये लक्षद्वयमृणं प्रक्षिपेत् । एवंकृते रूपाधिकगच्छोत्पत्तिः भवति । इदं संप्रधार्य “ रूवाहियपदद्दुगं संवग्गे ” इत्युक्तं । अत्र “ पदमेत्ते गुणयारे ” इत्यनेन गुणसंकलनसूत्रेण रूपाधिकपदमात्रद्विकसंवर्गेणोत्पन्नराशावेकरूपं प्राक् प्रक्षिप्तं ऋणद्वयं चापनयेत् । इदमेवावधार्य “ तिलक्खविहीणं ” इत्युक्तं । एवं कृते इष्टस्थाने सूचीव्यासप्रमाणमुत्पद्यते ॥ ३०९ ॥

तथाभ्यंतरमध्यमबाह्यसूच्यानयने इदं करणसूत्रम्;—

लवणादीणं वासं दुगतिगचदुसंगुणं तिलक्खूणं ।
आदिममज्झिमबाहिरसूइत्ति भणंति आइरिया ॥३१०॥

लवणादीनां व्यासं द्विकत्रिकचतुःसंगुणं त्रिलक्षोनम् ।
आदिममध्यमबाह्यसूची इति भणंति आचार्याः ॥ ३१० ॥

लवणा । लवणसमुद्रादीनां मध्ये इष्टस्य द्वीपस्य समुद्रस्य वा वलयव्यासं द्विसंगुणं कृत्वा तत्र लक्षत्रये शोधिते अभ्यंतरसूचीप्रमाणं भवति । तथाहि । विवक्षितवलयव्यास उभयदिक्संजनितः अर्वाचीनानां द्वीपसमु-

द्राणां उभयदिक्संजनितवलयव्यासयुतेः सकाशात् त्रिलक्षाधिको यतस्ततः त्रिलक्षोनःउभयदिक्संजनितो विवक्षितवलयव्यासः अभ्यंतरसूचीप्रमाणमित्यभिप्रायः। विवक्षितवलयव्यासं त्रिसंगुणं कृत्वा तत्र लक्षत्रये शोधिते मध्यमसूचीप्रमाणं भवति। तथाहि। विवक्षितस्य द्वीपस्य समुद्रस्य वा वलयव्यासो द्विगुणितस्त्रिलक्षोनश्चेत् तदा तदभ्यंतरसूचीप्रमाणं भवति यतस्ततः कारणात् तस्मिन्नभ्यंतरसूचीप्रमाणे विवक्षितवलयव्यासमध्यात्तदर्धस्य दिग्द्वयगतस्य विवक्षितवलयव्यासप्रमाणस्याभ्यधिकत्वात् मध्यमसूचीप्रमाणं त्रिगुणितत्रिलक्षोनविवक्षितवलयव्यासप्रमितमिति भावः। विवक्षितवलयव्यासं चतुःसंगुणं कृत्वा तत्र लक्षत्रये शोधिते बाह्यसूचीप्रमाणं भवति। तथाहि। यतो द्विगुणितत्रिलक्षोनविवक्षितवलयव्यासप्रमिते अभ्यंतरसूचीप्रमाणे विवक्षितवलयव्यासस्य दिग्द्वयगतस्य प्रक्षेपणात् बाह्यसूचीप्रमाणमुत्पद्यते ततः कारणात् चतुर्गुणितत्रिलक्षोनविवक्षितवलयव्यासप्रमिता बाह्यसूचीत्याचार्याभिप्रायः॥ ३१०॥

अथोक्तसूचीव्यासमाश्रित्य तत्तत्क्षेत्रबादरसूक्ष्मपरिधिं तत्तद्बादरसूक्ष्मक्षेत्रफलं चानयति;—

तिगुणियवासं परिही दहगुणवित्थारवग्गमूलं च।
परिहिहदवासतुरियं बादर सुहुमं च खेत्तफलं॥३११॥

त्रिगुणितव्यासः परिधिः दशगुणविस्तारवर्गमूले च।
परिधिहतव्यासतुर्यं बादरं सूक्ष्मं च क्षेत्रफलम्॥ ३११॥

तिगुणिय। त्रिगुणितव्यासो बादरपरिधिः ३ ल. दशगुणविस्तारवर्गः १ ल १ ल १० तस्मिन् मूले ग्रहीते सूक्ष्मपरिधिः योजन ३१६२२७ तच्छेषयोजनभागं ४८४४७१ चतुर्भिः संगुण्य क्रोशं कृत्वा १९३७८८४ पूर्वभागहारेण ६३२४५४ भागे कृते क्रो ३ तत्क्रोशशेषं ४०५२२ सहस्रद्वयेन २००० संगुण्य दंडान् विधाय ८१०४४००० प्राक्तनभागहारेण

भक्के तस्मिन् दंडाः स्युः १२८ तद्दंडशेषं ८९८८८ चतुर्भिः हस्ते कृते ३५९५५२ भागाभावात् चतुर्विंशत्यांगुलं कृत्वा ८६२९२४८ प्राक्तनहारेण भक्के तस्मिन् अंगुलानि स्युः १३ तदंगुलशेषं ४०७३४६ यावद्भागेन अपवर्तितं साधिकैकं तावद्भागेन तद्धारोपि ६३२४५४ इत्यपवर्त्यते चेत् द्वे भवतः। एवं सति साधिकार्धं $\frac{1}{2}$ भवति। तत् योजनादिकं सर्वं सूक्ष्मपरिधिः स्थूलपरिधिना ३ ल व्यास १ ल चतुर्थांशेन २५००० हतो ७५।८ जंबूद्वीपस्य बादरक्षेत्रफलं स्यात्। इदानीं योजनरूपसूक्ष्मपरिधिं ल ३१६२२७ व्यासचतुर्थांशेन २५००० गुणयित्वा ७९०५६७५००० अत्रैव क्रोशलक्षणसूक्ष्मपरिधिं क्रो ३ तेनैव २५००० संगुण्य ७५००० चतुर्भागेन योजनं कृत्वा १८७५० मेलयेत् ७८०५६९३७५० अत्रैव पुनर्दंडलक्षणसूक्ष्मपरिधिं १२८ तेनैव २५००० संगुण्य ३२००००० अष्टसहस्रभागेन योजनं कृत्वा ४०० मेलयेत् ७९०५६९४१५० अंगुललक्षणं सूक्ष्मपरिधिं १३$\frac{1}{2}$ समच्छेदेनान्योन्यं मेलयित्वा $\frac{27}{2}$ द्वाभ्यां तिर्यगपवर्तितपंचविंशतिसहस्रेण १२५०० गुणयित्वा ३३७५०० तस्मिन् क्रोशांगुलेन १९२००० भक्के साधिकक्रोशो भवति। एतत्सर्वं जंबूद्वीपस्य सूक्ष्मक्षेत्रफलं स्यात्। एवमेव सर्वेषां द्वीपसमुद्राणां च स्थूलसूक्ष्मक्षेत्रफले चानेतव्ये ॥ ३११ ॥

अथ जंबूद्वीपस्य सूक्ष्मपरिधेः सिद्धांकमुच्चारयति;—

जोयणसगदुदु छक्किगि तिदयं तिक्कोसमट्ठदुगि दंडो।
अहियदलंगुलतेरस जंबूए सुहुमपरिणाहो ॥ ३१२ ॥

योजनानां सप्तद्विद्वि षडेकं त्रयं त्रिकोशा अष्टद्व्येके दंडाः।
अधिकदलांगुलत्रयोदश जंबौ सूक्ष्मपरिणाहः ॥ ३१२ ॥

जोयण। योजनानां सप्तद्विद्विषडेकत्रयः त्रयः क्रोशाः अष्टद्व्येके दंडाः

अधिकदलानि त्रयोदशांगुलानि एतत्सर्वं जंबूद्वीपस्य सूक्ष्मपरिधिप्रमाणं भवति ॥ ३१२ ॥

अथ तत्क्षेत्रफलस्य सिद्धांकमुच्चारयति;—

पण्णासमेकदालं णव छप्पण्णाससुण्णणवसदरी।
साहियकोसं च हवे जंबूदीवस्स सुहमफलं ॥ ३१३ ॥

पंचाशदेकत्वारिंशन्नवषट् पंचाशच्छून्यं नवसप्ततिः।
साधिकक्रोशश्च भवेज्जंबूद्वीपस्य सूक्ष्मफलम् ॥ ३१३ ॥

पण्णास। छायामात्रमेवार्थः ॥ ३१३ ॥

अथ जंबूद्वीपस्य परिधिमाधारं कृत्वा विवक्षितपरिध्यानयने **करण**-सूत्रमिदम्;—

जंबूउभयं परिही इच्छियदीउवहिसूइ संगुणिय।
जंबूवासविभत्ते इच्छियदीउवहिपरिही दु ॥ ३१४ ॥

जंबूभयं परिधी इच्छितद्वीपोदधिसूच्या संगुण्य।
जंबूव्यासविभक्ते ईप्सितद्वीपोदधिपरिधी तु ॥ ३१४ ॥

जंबू। जंबूद्वीपस्योभयपरिधी स्थूल ३ ल. सूक्ष्म ३१६२२७ क्रो. दंड १२८ अंगुल १३ भा $\frac{1}{2}$ ईप्सितद्वीपोदधिसूच्या लवणे ५ ल. धातकीखंडे १३ ल. संगुण्य १५ लल स्थू. १५८११३९ ल. सूक्ष्मजंबूव्यासविभक्ते १५ ल. १५८११३९ ईप्सितद्वीपोदध्योः परिधी भवतः ॥ ३१४ ॥

इदानीमुभयक्षेत्रफलमानयति;—

अंताइसूइजोगं रुंदद्धं गुणित्तु दुप्पडिं किच्चा।
तिगुणं दसकरणिगुणं बादरसुहुमं फलं वलये ॥ ३१५ ॥

अंतादिसूचियोगं रुंद्रार्धेन गुणयित्वा द्विःप्रतिं कृत्वा ।
त्रिगुणं दशकरणिगुणं बादरसूक्ष्मं फलं वलये ॥ ३१५ ॥

अंताइ । लवणस्यांतादिसूच्योः ५ ल. १ ल. योगं ६ ल. रुंद्रार्धेन १ ल. गुणयित्वा ६ लल द्विःप्रतिं कृत्वा ६ लल, ६ लल, एकं त्रिगुणितं १८ लल, अपरं दशकरणिगुणितं चेत् ६ लल ६ लल १० बादरसूक्ष्मफले भवतः । स्थूल १८ लल, सूक्ष्म १८९७३६६५९६१० वलये वृत्ते क्षेत्रे ॥ ३१५ ॥

अथ जंबूद्वीपप्रमाणेन लवणसमुद्रादीनां खंडान्यानयति;—

बाहिरसूईवग्गं अब्भंतरसूइवग्गपरिहीणं ।
जंबूवासविभत्ते तत्तियमेत्ताणि खंडाणि ॥ ३१६ ॥

बाह्यसूचीवर्गः अभ्यंतरसूचिवर्गपरिहीनः ।
जंबूव्यासविभक्तः तावन्मात्राणि खंडानि ॥ ३१६ ॥

बाहिर । बाह्यसूचीः २५ लल, अभ्यंतरसूची १ ल वर्गः १ ल १ ल परिहीनः २४ ल ल जंबूव्यासेन वर्गराशित्वाद्वर्गात्मकेन १ ल ल विभक्तश्चेदागतानि तावन्मात्रखंडानि २४ ॥ ३१६ ॥

अथ प्रकारांतरेण खंडानयने गाथाद्वयमाह;—

रूऊणसलाबारससलागगुणिदे दुवलयखंडाणि ।
बाहिरसूइसलागा कदी तदंताखिला खंडा ॥ ३१७ ॥

रूपोनशला द्वादशशलाकगुणितास्तु वलयखंडानि ।
बाह्यसूचिशलाका कृतेः तदंताखिलानि खंडानि ॥ ३१७ ॥

रूऊण । तत्तद्वलयव्यासलक्षवाराः अत्र शलाका इत्युच्यंते । लवणे तत्तद्रूपोनशलाकाः १ द्वादशभिः १२ शलाकाभ्यां च २ गुणिता २४

वलयखंडानि । बाह्यसूचीशलाकाकृतेरेव २५ तदंताखिलानि खंडानि स्युः ॥ ३१७ ॥

बाहिरसूई वलयव्वासूणा चउगुणिट्ठवासहदा ।
इगिलक्खवग्गभजिदा जंबूसमवलयखंडाणि ॥ ३१८ ॥

बाह्यसूची वलयव्यासोना चतुर्गुणितेष्टव्यासहता ।
एकलक्षवर्गभक्ता जंबूसमवलयखंडानि ॥ ३१८ ॥

बाहिर । तत्तद्बाह्यसूची ५ ल, वलयव्यासो (२ ल) ना ३ ल, चतुर्गुणिते (८ ल) ष्टव्यासहता २४ ल ल एक लक्ष वर्ग १ ल ल भक्ता २४ जंबूसमवलयखंडानि । एवं धातकीखंडादिषु सर्वत्र प्राक्तनगाथापंचकविधानं ज्ञातव्यम् ॥ ३१८ ॥

अधुनोदधीनां रसविशेषमाह;—

लवणं वारुणितियमिदि कालदुगंतिमसयंभुरमणमिदि ।
पत्तेयजलसुवादा अवसेसा होंति इच्छुरसा ॥ ३१९ ॥

लवणं वारुणित्रयमिति कालद्विकमंतिमस्वयंभूरमणमिति ।
प्रत्येकजलस्वादा अवशेषा भवंति इक्षुरसाः ॥ ३१९ ॥

लवणं । लवणसमुद्रः वारुणिवरक्षीरवरघृतवरा इति त्रयश्चेति चत्वारः कालोदकपुष्करवरांतिमस्वयंभूरमणसमुद्रा इति त्रयश्च यथासंख्येन प्रत्येकजलस्वादवः स्वनामानुगुणस्वादव इत्यर्थः जलस्वादवः । अवशिष्टाः असंख्यातसमुद्रा इक्षुरसस्वादवो भवंति ॥ ३१९ ॥

अथ तेषु जीवानां संभवासंभवौ सकारणमाह;—

जलयरजीवा लवणे कालेयंतिमसयंभुरमणे य ।
कम्ममहीपडिबद्धे ण हि सेसे जलयरा जीवा ॥ ३२० ॥

जलचरजीवा लवणे कालेऽतिमस्वयंभुरमणे च ।
कर्ममहीप्रतिबद्धे न हि शेषे जलचरा जीवा ॥ ३२० ॥

जलयर । जलचरजीवा लवणसमुद्रे कालोदकसमुद्रे अंतिमस्वयंभूरमणसमुद्रे च कर्ममहीप्रतिबद्धत्वात् संति । शेषेषु न हि जलचरा जीवाः ३२०

अथ स्थाननिर्देशेन समुद्रत्रयावस्थितमत्स्यानां देहावगाहनमाह;—

लवणदुगंतसमुद्दे णदीमुहुवहिम्हि दीह णव दुगुणं ।
दुगुणं पणसय दुगुणं मच्छे वासुदयमद्धकमं ॥ ३२१ ॥

लवणद्विकांत्यसमुद्रे नदीमुखोदधौ दैर्घ्यं नव द्विगुणं ।
द्विगुणं पंचशतं द्विगुणं मत्स्ये व्यासोदयौ अर्धक्रमौ ॥ ३२१ ॥

लवण । लवणद्विके लवणकालोदकयोः अंत्यसमुद्रे च नदीप्रवेशमुखे उदधौ च समुद्रमध्ये यथासंख्यं लवणोदके मत्स्यदैर्घ्यं नव ९ तद्द्विगुणं १८ कालोदके तयोर्द्विगुणं १८ । ३६ स्वयंभूरमणे पंचशतं ५०० तद्द्विगुणं १००० मत्स्यव्यासोदयौ तत्तदर्धार्धक्रमौ भवतः ॥ ३२१ ॥

सांप्रतं मनुष्यक्षेत्रेतरविभागस्य कर्मभोगभूमिविभागस्य च सीमानमानयतोः पर्वतयोः स्वरूपं निरूपयन् तद्विभागमेव समर्थयितुं गाथात्रयमाह;—

पुक्खरसयंभुरमणाणद्धे उत्तरसयंपहा सेला ।
कुंडलरुचगद्धं वा सव्वं पुव्वं परिक्खित्ता ॥ ३२२ ॥

पुष्करस्वयंभुरमणयोरर्धे उत्तरस्वयंप्रभौ शैलौ ।
कुंडलरुचकार्धं वा सर्वे पूर्वं परिक्षिप्ताः ॥ ३२२ ॥

पुक्खर । पुष्करार्धे स्वयंभूरमणार्धे च यथासंख्यं मानुषोत्तरस्वयंप्रभौ शैलौ भवतः कुंडलरुचकार्धमिव कुंडलगिरिः रुचकार्धे रुचकगिरिर्यथेत्यर्थः । एते सर्वे पर्वताः पूर्वं स्वस्वाभ्यंतरद्वीपसमुद्रान् परिक्षिप्य तिष्ठंति ॥ ३२२ ॥

मणुसुत्तरोत्ति मणुसा मणुसुत्तरलंघसत्तिपरिहीणा।
परदो सयंपहोत्ति य जहण्णभोगावणीतिरिया॥३२३॥

मानुषोत्तरांतं मनुष्याः मानुषोत्तरलंघशक्तिपरिहीनाः।
परतः स्वयंप्रभांतं च जघन्यभोगावनितिर्यंचः॥ ३२३॥

मणुसु। मानुषोत्तरपर्वतपर्यंतं मनुष्याः मानुषोत्तरलंघनशक्तिपरिहीणाः। अस्मात् परतः स्वयंप्रभाचलपर्यंतं जघन्यभोगावनीतिर्यंचो भवंति॥ ३२३॥

कम्मावणिपडिबद्धो बाहिरभागो सयंपहगिरिस्स।
वरओगाहणजुत्ता तसजीवा होंति तत्थेव॥ ३२४॥

कर्मावनिप्रतिबद्धो बाह्यभागः स्वयंप्रभगिरेः।
वरावगाहनयुक्ताः त्रसजीवा भवंति तत्रैव॥ ३२४॥

कम्माव। छायामात्रमेवाऽर्थः॥ ३२४॥

अथैतद्गतापरार्धोक्तोत्कृष्टावगाहनमेकेंद्रियावगाहनपुरस्सरमाह;—

अधियसहस्सं बारस तिचउत्थेक्कं सहस्सयं पउमे।
संखे गोम्हि भमरे मच्छे वरदेहदीहो दु॥ ३२५॥

अधिकसहस्रं द्वादश त्रिचतुर्थमेकं सहस्रकं पद्मे।
संखे ग्रैष्मे भ्रमरे मत्स्ये वरदेहदीर्घं तु॥ ३२५॥

अधिय। साधिकसहस्रयोजनानि द्वादशयोजनानि योजनत्रिचतुर्थं एक-योजनसहस्रयोजनं च यथासंख्येन पद्मे, शंखे, ग्रैष्मे सहस्रपद्याख्यत्र-सविशेषे इत्यर्थः, भ्रमरे, मत्स्ये वरदेहदैर्घ्यं स्यात्॥ ३२५॥

अथ तेषामेव व्यासोदयौ कथयति;—

वासिगि कमले संख मुहुदओ चउपंचचरणमिह गोम्ही
वासुदओ दिग्घद्धमतद्दलमलिए तिपाददलं॥ ३२६॥

व्यास एकं कमले शंखे मुखोदयौ चतुःपंचचरणं इह ग्रैष्मे ।
व्यासोदयौ दीर्घाष्टमतद्दलमलौ त्रिपाददलम् ॥ ३२६ ॥

वासिगि । व्यासः एक योजनं कमलनाले तद्बाहुल्यं समवृत्तत्वात्तदेव शंखे मुखोदयौ चत्वारि योजनानि पंच भवंति चरणाः चतुर्थांशाः योजनस्य । इह ग्रैष्मे व्यासोदयौ दीर्घ्या (३/४) ष्टमभागदीर्घषोडशभागौ ३/३२।३/६४ भ्रमरे व्यासोदयौ त्रयश्चरणा योजनस्य दलं च स्यातामर्धयोजनमित्यर्थः । " वासो तिगुणो परिही " इत्यादिना कमलस्य सर्वक्षेत्रफल ७५० मानयेत् ॥ ३२६ ॥

अथ वासनारूपेण शंखस्य मुरजक्षेत्रफलमानयति;—

आयामकदी मुहदलहीणा मुहवास अद्धवग्गजुदा ।
बिगुणा वेहेण हदा संखावत्तस्स खेत्तफलं ॥ ३२७ ॥

आयामकृतिः मुखदलहीना मुखव्यास अर्धवर्गयुता ।
द्विगुणा वेधेन हता संखावर्तस्य क्षेत्रफलम् ॥ ३२७ ॥

आयाम । एतावदुदय १२ मुखव्यासे ४ शंखे एतावन्मात्रे ऋणे विक्षिप्ते संपूर्णमुरजाकारो भवति । मुखायामसमासार्धमध्यफलमिति कृते एवं भवति । खंडद्वये कृते एवं । अत्रैकखंडस्य क्षेत्रफलमानीयते । खंडितत्वादिदमर्धमृणं भवति । " विक्खंभवग्गदहगुणकरणी वट्टस्स परियो होदी " इत्यनेन एकखंडस्य मुख ४ भूम्यो ८ वर्गमूलमग्रे क्षेत्रखंडनानुगुणेन गृहीत्वा १२ १६/२४।२४ ६४/४८ मुखमूलशेषे १६/२४ अष्टभिरपवर्तिते २/३ भूमिमूलशेषे ६४/४८ षोडशभिरपवर्तिते ४/३ तयोः सूक्ष्मपरिधी स्यातां । इदं क्षेत्रबाहुल्यं ८ मध्य ४ पर्यंतं खंडयित्वा प्रसारिते परिधिप्रमाणेन तिष्ठति तत् क्षेत्रं तत्रत्योभयपार्श्वे पुनः मुख ० भूमि ४ समासार्ध मध्यफलमिति वेधरूपमध्यफलं साधयित्वा तत्रत्योभयपार्श्वस्थितक्षेत्रं गृहीत्वा चतुरस्ररूपेण संधिते एवं । तत्र खातपूरणार्थं कोणद्वयस्थितयोरेकैकरूपं गृहीत्वा शून्यस्थाने

निक्षिप्तेपि संपूर्णं न भवतीति एतावति ऋणे निक्षिप्ते संपूर्णं भवति । पार्श्वद्वयवर्तित्रिकोणक्षेत्ररहितशेषचतुरस्रक्षेत्रं एकस्योपरि एकस्मिन् विपर्यासरूपेण निक्षिप्ते एवं । तस्योपरि पूर्वमानीते क्षेत्रे निक्षिप्ते एवं । अत्रत्यतृतीयांशं पृथक् स्थापयित्वा त्रिधा खंडिते सत्येवं । अस्मिन् खंडत्रये एकभुजरूपेण संधिते सत्येवं । तदपि तिर्यग्रूपेण दलयित्वा पार्श्वे संस्थाप्य संधिते एवं । ते पुनरपि तिर्यग्रूपेण दलयित्वा पृथक् स्थापिते क्षेत्रद्वये एवं । अत्रैकक्षेत्रं द्वितीयऋणेन समानमिति तस्मै दातव्यं । त्रिभागरहितबृहत्क्षेत्रं तिर्यग्रूपेण दलयित्वा पार्श्वे संस्थाप्य संधिते एवं । तदपि पुनस्तिर्यग्रूपेण दलयित्वा ऊर्ध्वभागे ६ संधिते सत्येवं । एवं समभुजकोटौ सत्यां आयामकदीत्युक्तं । तत्रायामकृतौ १४४ वेधस्य $\frac{५}{४}$ वेधं $\frac{५}{४}$ दर्शयित्वा प्रथमऋणक्षेत्रफलं २ अधुना स्फेट्यते इति हेतोः मुहदलहीनेत्युक्तं । तत्र मुखदलसमऋणहीनराशौ १४२ ऋणाय दत्वा अवशिष्टक्षेत्रफल ४ वेधसमं दर्शयित्वा अधुना संयुज्यत इति कृत्वा " मुहवास अद्धवग्गजुदा " इत्युक्तं । तत्र मुखव्यासार्धवर्गयुक्तराशिः १४६ एक मुरजखंडस्यैतावति १४६ द्वयोस्तथा खंडयोः किमित्यागतेन गुणकारद्वयेन गुण्यत इति दृष्ट्वा " बिगुणा " इत्युक्तं । एष द्विहतराशिः २९२ वेधेन चतुर्भिरपवर्तितेन ७३।५ हन्यत इति "वेहेण हदा" इत्युक्तं। एतच्छंखावर्तसर्वक्षेत्रफलं ३६५ भवति । त्रींद्रियचतुरिंद्रियपंचेंद्रियाणां खातफलं "भुजकोटि बधा " दित्यादिना नेतव्यं । एकेंद्रियादिखातफलानां अंल्पबहुप्रदेशत्वज्ञापनार्थमिदमुच्यते । तत्रात्यल्पं त्रींद्रियखातफलं $\frac{२७}{८११२}$ एकयोजनस्यैतावत्स्वंगुलेषु ७६८००० एतावतः $\frac{२७}{८११२}$ किमिति संपात्य घनरूपराशित्वात्तद्गुणकारमपि घनरूपेणैव संस्थाप्यांगुलं कृत्वा $\frac{२७}{८११२}$। ७६८०००।७६८०००।७६८००० तथैवैकांगुलस्य सूच्यंगुलप्रदेशे एतावदंगुलानां किमिति संपातेन सूच्यंगुलं कृत्वा सूच्यंगुलस्य प्रमाणांगुलत्वात् व्यवहाररूपप्राक्तनांगुलानां $\frac{२७}{८११२}$।७६८०००।७६८०००।७६८००० प्रमाणांगुलकरणार्थं पंचशत ५०० व्यवहारांगुलानामेकस्मिन् प्रमाणांगुले एतावद्व्यवहारांगुलानां $\frac{२७}{८११२}$।७६८०००।७६८०००।७६८००० किमिति सं-

पातं कृत्वा पंचशतगतषट्शून्यानि अंगुलगतषट्शून्यैरपवर्त्य तदंगुलानि $\frac{७६८}{७६८}$ त्रिभिः संभेद्य $\frac{२५६}{२५६}$।$\frac{३}{३}$ पण्णट्ठिं नव च कृत्वा तत्खातफलहारेण ८१९२ पण्णाट्ठिमपवर्त्य ८ पंचघनेन १२५ अवशिष्टांगुले ७६८००० अपवर्तिते एवं ६१४४ एषां २७।८।६१४४।९ परस्परगुणने घनांगुलस्य ६ गुणकारो भवति। अस्य गुणकारं सर्वं एकसंख्यातं कृतवंतः ६ १। एवं चतुरिंद्रियखातफलस्य कर्तव्यं। तत्रैतावता ६१४४ सह तत्रत्य ८ भागहारे अष्टभिरपवर्तिते एवं ७६८ एष गुणकारः ६५५३६।७६८।९।३ त्रींद्रियगुणकारात्संख्याताधिकमिति घनांगुलस्य संख्यातद्वयं गुणकारं कृतवंतः ६ ११। एवं द्वींद्रियस्य संख्यातत्रयं एकेंद्रियस्य संख्यातचतुष्टयं, पचेंद्रियस्य संख्यातपंचकं घनांगुलस्य गुणकारं कृतवंतः॥ ३२७॥

एवमुत्कृष्टावगाहप्रसंगे एकेंद्रियादीनां पृथिव्यादिविशेषणविशिष्टानामुत्कृष्टजघन्यस्थितिप्रतिपादनार्थं गाथात्रयमाह;—

सुद्धखरभूजलाणं बारस बावीस सत्त य सहस्सा।
तेउतिए दिवसतियं सहस्सतियं दस य जेट्ठाओ॥३२८॥

शुद्धखरभूजलानां द्वादश द्वाविंशतिः सप्त च सहस्राणि।
तेजस्त्रये दिवसत्रयं सहस्रत्रयं दश च ज्येष्ठम्॥ ३२८॥

सुद्ध। शुद्धखरभूजलानामायुर्ज्येष्ठं यथासंख्यं द्वादशवर्षसहस्राणि। द्वाविंशतिवर्षसहस्राणि सप्तवर्षसहस्राणि। तेजस्त्रये तेजोवातवनस्पतिकायिके यथासंख्यं दिवसत्रयं सहस्रवर्षत्रयं दशवर्षसहस्राणि ज्येष्ठमायुः ३२८

वासदिणमास बारसमुगुवण्णं छक्क वियलजेट्ठाओ।
मच्छाण पुव्वकोडी णव पुव्वंगा सरिसपाणं॥ ३२९॥

वर्षदिनमासाः द्वादशैकोनपंचाशत् षट्काः विकलज्येष्ठम्।
मत्स्यानां पूर्वकोटिः नव पूर्वांगानि सरीसृपाणाम्॥ ३२९॥

वास। वर्षदिनमासाः द्वादश १२ एकोनपंचाशत् ४९ षट्का: ६ विकलेंद्रियाणां यथासंख्यं ज्येष्ठमायुः मत्स्यानां पूर्वकोटिः नवपूर्वांगानि नवगुणितचतुरशीतिलक्षवर्षाणीत्यर्थः सरीसृपाणाम् ॥ ३२९ ॥

बावत्तरि बादालं सहस्समाणाहि पक्खिउरगाणं।
अंतोमुहुत्तमवरं कम्ममहीणरतिरिक्खाऊ ॥ ३३० ॥

द्वासप्ततिः द्वाचत्वारिंशत् सहस्रमानानि पक्ष्युरगाणाम्।
अंतर्मुहूर्तमवरं कर्ममहीनरतिरश्चमायुः ॥ ३३० ॥

बावत्तरि। द्वासप्ततिः द्वाचत्वारिंशत् सहस्रप्रमितानि पक्षिणामुरगाणां च अंतर्मुहूर्तमवरमायुः शुद्धभुवादीनां सर्वेषां कर्ममहीनरतिरश्चाम् ॥३३०॥

अथ प्रागायुष्यं निरूप्येदानीं तेषामेव वेदगतविशेषं निरूपयति;—

णिरया इगिविगला संमूछणपंचक्खा होंति संढा हु।
भोगसुरा संढूणा तिवेदगा गब्भणरतिरिया ॥ ३३१ ॥

निरया एकविकलाः संमूर्छनपंचाक्षाः भवंति षंढाः खलु।
भोगसुराः षंढोनाः त्रिवेदगा गर्भनरतिर्यंचः ॥ ३३१ ॥

णिरया। नारका एकेंद्रियाः विकलत्रयाः संमूर्छनपंचेंद्रियाश्च भवंति षंढा खलु। भोमभूमिजाः सुराश्च षंढवेदेनोनाः। त्रिवेदगा गर्भजनरतिर्यंचः ॥ ३३१ ॥

एवं प्रासंगिकानुषंगिकार्थं प्रतिपाद्येदानीं प्रकृतार्थं तारादिस्थितिस्थानं गाथात्रयेण निर्दिशति;—

णउदुत्तरसत्तसए दस सीदी चदुदुगे तियचउक्के।
तारिणससिरिक्खबुहा सुक्कगुरुंगारमंदगदी ॥ ३३२ ॥

नवत्युत्तरसप्तशतानि दश अशीतिः चतुर्द्विके त्रिकचतुष्के।
तारेनशशिऋक्षबुधाः शुक्रगुर्वंगारमंदगतयः ॥ ३३२ ॥

णउडु । चित्रातः आरभ्य नवत्युत्तरसप्तशतयोजनानि, तत उपरि दशयोजनानि, ततः अशीतियोजनानि, ततश्चत्वारि चत्वारि योजनानि द्विस्थाने, ततस्त्रीणि त्रीणि योजनानि चतुस्थाने गत्वा यथासंख्येन ताराः इनाः शशिनः ऋक्षाणि बुधाः शुक्राः गुरवः अंगाराः मंदगतयश्च तिष्ठंति ॥ ३३२ ॥

अवसेसाण गहाणं णयरीओ उवरि चित्तभूमीदो ।
गंतूण बुहसणीणं विच्चाले होंति णिच्चाओ ॥ ३३३ ॥

अवशेषाणां ग्रहाणां नगर्य उपरि चित्राभूमितः ।
गत्वा बुधशन्योः विचाले भवंति नित्याः ॥ ३३३ ॥

अवसेसा । अवशिष्टानां ग्रहाणां ८३ नगर्यः उपरि चित्राभूमितो गत्वा बुधशनैश्चरयोर्विचाले अंतराले भवंति नित्याः ॥ ३३३ ॥

अत्थइ सणी णवसये चित्तादो तारगावि तावदिए ।
जोइसपडलबहल्लं दससहियं जोयणाण सयं ॥ ३३४ ॥

आस्ते शनिः नवशतानि चित्रातः तारका अपि तावंतः ।
ज्योतिष्कपटबाहल्यं दशसहितं योजनानां शतम् ॥ ३३४ ॥

अत्थइ । आस्ते शनिर्नवशतयोजनानि चित्रातः तारका अपि तावन्नवशतयोजनपर्यंत तिष्ठंति । ज्योतिष्कपटलबाहल्यं दशसहितं योजनानां शतम् ॥ ३३४ ॥

अथ प्रकीर्णकतारकाणां त्रिविधमंतरं निरूपयति;—

तारंतरं जहण्णं तेरिच्छे कोससत्तभागो दु ।
पण्णासं मज्झिमयं सहस्समुक्कस्सयं होदि ॥ ३३५ ॥

तारांतरं जघन्य तिर्यक् क्रोशसप्तभागस्तु ।
पंचाशत् मध्यमकं सहस्रमुत्कृष्टकं भवति ॥ ३३५ ॥

तारंतरं । तारकायाः सकाशात् तारकांतरं जघन्यं तिर्यग्रूपं क्रोशसप्तमभागः $\frac{1}{7}$ पंचाशद्योजनानि मध्यमांतरं योजनसहस्रमुत्कृष्टांतरं भवति ॥ ३३५ ॥

इदानीं ज्योतिर्विमानस्वरूपं निरूपयति;—

उत्ताणट्ठियगोलकदलसरिसा सव्वजोइसविमाणा ।
उवरिं सुरनगराणि य जिणभवणजुदाणि रम्माणि ३३६

उत्तानस्थितगोलकदलसदृशाः सर्वज्योतिष्कविमानाः ।
उपरि सुरनगराणि च जिनभवनयुतानि रम्याणि ॥ ३३६ ॥

उत्ताणं । उपरि 'तेषामुपरि' इत्यर्थः । शेषश्छायामात्रमेवार्थः ॥ ३३६ ॥

अथ तेषां विमानव्यासं बाहल्यं च गाथाद्वयेनाह;—

जोयणमेक्कट्ठिकए छप्पण्णडदालचंदरविवासं ।
सुक्कगुरिदरतियाणं कोसं किंचूणकोस कोसद्धं ॥ ३३७ ॥

योजनं एकषष्टिकृते षट्पंचाशदष्टचत्वारिंशत् चंद्ररविव्यासौ ।
शुक्रगुर्वितरत्रयाणां क्रोशः किंचिदूनक्रोशः क्रोशार्धम् ॥ ३३७ ॥

जोयण । एकयोजने एकषष्ठिभागे कृते तत्र षट्पंचाशद्भागा अष्टचत्वारिंशद्भागाश्च क्रमेण चंद्ररविविमानव्यासौ भवतः । शुक्रगुर्वोरितरत्रयाणां बुधमंगलशनीनां विमानव्यासः क्रोशः किंचिन्न्यूनक्रोशः क्रोशार्धं च स्यात् ॥ ३३७ ॥

कोसस्स तुरियमवरं तुरियहियकमेण जाव कोसोत्ति ।
ताराणं रिक्खाणं कोसं बहलं तु वासद्धं ॥ ३३८ ॥

क्रोशस्य तुरीयमवरं तुर्याधिकक्रमेण यावत् क्रोश इति ।
ताराणां ऋक्षाणां क्रोशं बाहल्यं तु व्यासार्धम् ॥ ३३८ ॥

कोसस्स । क्रोशस्य च तुर्यांशः अवरो व्यासतुर्याधिकक्रमेण यावदेकः क्रोशो भवति तत्रार्धः $\frac{1}{2}$ त्रिचरण $\frac{3}{4}$ क्रोशो मध्यमः एकक्रोशः उत्कृष्टताराणां ऋक्षाणां विमानव्यासः क्रोशः सर्वेषां बाहल्यं स्वस्वव्यासार्धं ॥ ३३८ ॥

अथ राह्वरिष्टग्रहयोर्विमानव्यासं तत्कार्यं तदवस्थानं च गाथाद्वयेनाह;—

राहुअरिट्ठविमाणा किंचूणं जोयणं अधोगंता ।
छम्मासे पव्वंते चंदरवी छादयंति कमे ॥ ३३९ ॥

राह्वरिष्टविमानौ किंचिदूनौ योजनं अधोगंतारौ ।
षण्मासे पर्वांते चंद्ररवी छादयतः क्रमेण ॥ ३३९ ॥

राहु । राह्वरिष्टविमानौ किंचिन्न्यूनयोजनव्यासौ चंद्ररव्योरधोगंतारौ षण्मासे पर्वांते चंद्ररवी छादयतः क्रमेण ॥ ३३९ ॥

राहुअरिट्ठविमाणधयादुवरि पमाणअंगुलचउक्कं ।
गंतूण ससिविमाणा सूरविमाणा कमे होंति ॥ ३४० ॥

राह्वरिष्टविमानध्वजादुपरि प्रमाणांगुलचतुष्कम् ।
गत्वा शशिविमानाः सूर्यविमाना क्रमेण भवंति ॥ ३४० ॥

राहु । राह्वरिष्टविमानध्वजदंडादुपरि प्रमाणांगुलचतुष्कं गत्वा शशिविमानाः सूर्यविमानाश्च क्रमेण भवंति ॥ ३४० ॥

अथ चंद्रादीनां किरणप्रमाणं तत्स्वरूपं चाह;—

चंदिण बारसहस्सा पादा सीयल खरा य सुक्के दु ।
अड्ढाइज्जसहस्सा तिव्वा सेसा हु मंदकरा ॥ ३४१ ॥

चंद्रेनयोः द्वादशसहस्राः पादाः शीतलाः खराश्च शुक्रे तु ।
अर्धतृतीयसहस्राः तीव्राः शेषा हि मंदकराः ॥ ३४१ ॥

चंदिण । चंद्रादित्ययोः द्वादशसहस्राः पादाः कराः शीतलाः खराः उष्णाश्च । शुक्रेत्वर्धतृतीय २५०० सहस्राः तीव्राः प्रकाशेनोज्ज्वलाः शेषास्तु मंदकराः मंदप्रकाशाः ॥ ३४१ ॥

अथ चंद्रमंडलस्य वृद्धिहानिक्रममावेदयति;—

चंदो णियसोलसमं किण्हो सुक्को य पण्णरदिणोत्ति ।
हेट्ठिल्ल णिच्च राहूगमणाविसेसेण वा होदि ॥ ३४२ ॥

चंद्रो निजषोडशं कृष्णः शुक्लश्च पंचदशदिनांतम् ।
अधस्तनं नित्यं राहुगमनविशेषेण वा भवति॥ ३४२ ॥

चंदो । चंद्रः निजषोडशभागमामिव्याप्य कृष्णः शुक्लश्च भवति । पंचदशदिनपर्यंतं षोडशकलाना १६ मेतावति विंबक्षेत्रे ५६/६१ एककलायाः किमिति संपात्याष्टाभिरपवर्त्य गुणिते एवं ७/१२२ एककलायाः एतावति क्षेत्रे ७/१२२ षोडशकलानां १६ किमिति संपात्य द्वाभ्यामपवर्त्य गुणिते एवं ५६/६१ आचार्यांतराभिप्रायेणाधस्तनानित्यराहुगमनाविशेषेण वा भवति ॥ ३४२ ॥

अथ चंद्रादीनां विमानवाहकदेवानामाकाराविशेषं तत्संख्यां चाह;—

सिंहगयवसहजडिलस्सायारसुरा वहंति पुव्वादिं ।
इंदुरवीणं सोलससहस्समद्धद्धमिदरतिये ॥ ३४३ ॥

सिंहगजवृषभजटिलाश्वाकारसुरा वहंति पूर्वादिम् ।
इंदुरवीणां षोडशसहस्रं अर्धार्धमितरत्रये ॥ ३४३ ॥

सिंह । सिंहगजवृषभजटिलाश्वाकारसुरा वहंति तद्विमानपूर्वादिकं तत्संख्यां इंदुरवीणां षोडशसहस्राणि तदर्धार्धक्रमामितरत्रये ग्रहनक्षत्रतारकारूपे ॥ ३४३ ॥

अथाकाशे चरतां कियन्नक्षत्राणां दिग्विभागमाह;—

उत्तरदक्खिणउड्ढाधोमज्झे अभिजिमूलसादी य ।
भरणी कित्तिय रिक्खा चरंति अवराणमेवं तु ॥ ३४४ ॥

उत्तरदक्षिणोर्ध्वाधोमध्ये अभिजिन्मूलस्वातिश्च ।
भरणी कृत्तिका ऋक्षाणि चरंति अवराणामेवं तु ॥ ३४४ ॥

उत्तर । उत्तरदक्षिणोर्ध्वाधोमध्ये यथासंख्यं अभिजित्मूलस्वातिभरणिकृत्तिकाश्च नक्षत्राणि चरंति । अवराणां क्षेत्रांतरगतानामभिजिदादिपंचानामेवमेवावस्थितिः ॥ ३४४ ॥

अथ मंदरगिरेः कियद्दूरं गत्वा कथं चरंतीत्यारेकायामाह;—

इगिवीसेयारसयं विहाय मेरुं चरंति जोइगणा ।
चंदतियं वज्जित्ता सेसा हु चरंति एक्कपहे ॥ ३४५ ॥

एकविंशैकादशशतानि विहाय मेरुं चरंति ज्योतिर्गणाः ।
चंद्रत्रयं वर्जयित्वा शेषा हि चरंति एकपथे ॥ ३४५ ॥

इगि । एकविंशत्युत्तरैकादशशतानि योजनानि मेरुं विहाय चरंति ज्योतिर्गणाः चंद्रादित्यग्रहा इति त्रयं वर्जयित्वा शेषाः खलु चरंत्येकस्मिन् पथि ॥ ३४५ ॥

इदानीं जंबूद्वीपमारभ्य पुष्करार्धपर्यंतं चंद्रादित्यप्रमाणं निरूपयति;—

दो दोवग्गं बारस बादाल बहत्तरिदुइणसंखा ।
पुक्खरदलोत्ति परदो अवट्ठिया सव्वजोइगणा ॥ ३४६ ॥

द्वौ द्विवर्गं द्वादश द्वाचत्वारिंशत् द्वासप्ततिरिंद्विनसंख्या ।
पुष्करदलांतं परतः अवस्थिताः सर्वज्योतिर्गणाः ॥ ३४६ ॥

दो दो । जंबूद्वीपादारभ्य द्वौ द्विवर्गद्वादश द्वाचत्वारिंशत् द्वासप्ततयः यथासंख्यमिंद्विनानां संख्या पुष्करदलं यावत् । ततः परतः अवस्थिताः सर्वज्योतिर्गणाः ॥ ३४६ ॥

अथ तत्र स्थितस्थिरतारा निरूपयति;—

छक्कदि णवतीससयं दसयसहस्सं खबार इगिदालं।
गयणतिदुगतेवण्णं थिरतारा पुक्खरदलोत्ति ॥ ३४७ ॥

षट्कृतिः नवत्रिंशशतं दशकसहस्रं खद्वादश एकचत्वारिंशत्।
गगनत्रिद्विकत्रिपंचाशत् स्थिरताराः पुष्करदलांतम् ॥ ३४७ ॥

छक्कदि। षट्कृतिः ३६ नवत्रिंशदुत्तरशतं १३९ दशोत्तरसहस्रं १०१० खद्वादशोत्तरैकचत्वारिंशत्सहस्राणि ४११२० गगनत्रिद्विकोत्तरत्रिपंचाशत्सहस्राणि ५३२३० स्थिरताराः पुष्करार्धपर्यंतम् ॥ ३४७ ॥

अथ ज्योतिर्गणानां चारक्रमं विचारयति;—

सगसगजोइगणद्धं एक्के भागम्हि दीवउवहीणं।
एक्के भागे अद्धं चरंति पंतिक्कमेणेव ॥ ३४८ ॥

स्वकस्वकीयज्योतिर्गणार्धं एकस्मिन् भागे द्वीपोदधीनाम्।
एकस्मिन् भागे अर्धं चरंति पंक्तिक्रमेणैव ॥ ३४८ ॥

सग। छायामात्रमेवार्थः ॥ ३४८ ॥

अथ मानुषोत्तरात्परतश्चंद्रादित्यानामवस्थानक्रमं निरूपयति;—

मणुसुत्तरसेलादो वेदियमूलादु दीवउवहीणं।
पण्णाससहस्सेहि य लक्खे लक्खे तदो वलयं ॥ ३४९ ॥

मानुषोत्तरशैलात् वेदिकामूलात् द्वीपोदधीनाम्।
पंचाशत्सहस्रैश्च लक्षे लक्षे ततो वलयं ॥ ३४९ ॥

मणुसो। मानुषोत्तरशैलात् द्वीपोदधीनां वेदिकामूलाच्च पंचाशत्सहस्रयोजनानि गत्वा वलयं भवति। ततः परं लक्षलक्षयोजनानि गत्वा वलयानि भवंति ॥ ३४९ ॥

अथ तेषु वलयेषु व्यवस्थितानां चंद्रादित्यानां संख्यामाख्याति;—

दीवद्धपढमवलये चउदालसयं तु वलयवलयेसु।
चउचउवड्ढी आदी आदीदो दुगुणदुगुणकमा ॥३५०॥

द्वीपार्धप्रथमवलये चतुश्चत्वारिंशच्छतं तु वलयवलयेषु।
चतुश्चतुर्वृद्धयः आदिः आदितः द्विगुणद्विगुणक्रमः ॥ ३५० ॥

दीव। मानुषोत्तराद्बहिः स्थितपुष्करद्वीपार्धप्रथमवलये चतुश्चत्वारिंशदुत्तरशतं १४४ तत उपरि वलयवलयेषु चतस्रश्चतस्रो वृद्धयो भवंति। १४८।१५२।१५६।१६०।१६४।१६८।१७२ उत्तरोत्तरद्वीपस्य समुद्रस्य वा आदिः प्रथमप्रथमस्य द्वीपस्य समुद्रस्य वा प्राक्तनवलयस्यादितः द्विगुणद्विगुणक्रमः ॥ २८८ ॥ ३५० ॥

अथ तत्तद्वलयव्यवस्थितचंद्रचंद्रांतरं सूर्यसूर्यांतरं च निवेदयति;—

सगसगपरिधिं परिधिगरविंदुभजिदे दु अंतरं होदि।
पुस्सम्हि सव्वसूरट्ठिया हु चंदा य अभिजिम्हि ॥३५१॥

स्वकस्वकपरिधिं परिधिगरवींदुभक्ते तु अंतरं भवति।
पुष्ये सर्वसूर्याः स्थिता हि चंद्राश्च अभिजिति ॥ ३५१ ॥

सग। स्वकीयसूक्ष्मपरिधौ परिधिगतरवींदुप्रमाणेन भक्ते सति अंतरं भवति। तत्र तावज्जंबूद्वीपादारभ्योभयभागगततत्तद्द्वीपसमुद्रवलयव्यासमेलनसंजातद्वितीयपुष्करार्धप्रथमबलयसूचीव्यासस्य ४६००००० विक्खंभवग्ग इत्यादिना परिधिमानीय १४५४६४७७ तस्मिन् तत्परिधिगतरवींदुप्रमाणेन १४४ भक्ते बिंबसहितांतरं चंद्रादित्यानां १०१२७ शेष $\frac{२९}{१४४}$ बिंबरहितांतरानयने बिंबसाहितांतरलब्धादेकमपनीय १०१०१६ शेषेण $\frac{२९}{१४४}$ सह समच्छेदं कृत्वा $\frac{१४४}{१४४}$ तच्छेषे मेलयित्वा $\frac{१७३}{१४४}$ अनेन सह चंद्रबिंबं $\frac{५६}{६१}$ सूर्यबिंबं वा $\frac{४८}{६१}$ परस्परहारगुणने समच्छेदं कृत्वा शेषं

$\frac{१०५५३}{८७८४}$ चंद्र $\frac{८०६४}{८७८४}$ सूर्य $\frac{६९१२}{८७८४}$ बिंबे तस्मिन् चंद्रबिंबे अपनीते $\frac{२४८९}{८७८४}$ सूर्यबिंबे अपनीते $\frac{३६४१}{८७८४}$ बिंबरहितं चंद्रसूर्यांतरं स्यात् । पुष्ये सर्वे सूर्याः स्थिताः चंद्राश्च अभिजिति स्थिताः ॥ ३५१ ॥

अथासंख्यातद्वीपसमुद्रगतचंद्रादिसंख्यानयने गच्छमानयन् तत्कारण-भूतासंख्यातद्वीपसमुद्रसंख्यां गाथाष्टकेनाह;—

रज्जूदलिदे मंदिरमज्झादो चरिमसायरंतोत्ति ।
पडदि तदद्धे तस्स दु अब्भंतरवेदिया परदो ॥ ३५२ ॥

रज्जूदलिते मंदरमध्यतः चरमसागरांत इति ।
पतति तदर्धे तस्य तु अभ्यंतरवेदिका परतः ॥ ३५२ ॥

रज्जू । रज्जूद्दलने कृते सति मंदरमध्यतः आरभ्य चरमसागरांतं यावत् तावद्गत्वा पतति तस्यां पुनरप्यर्धितायां तस्य चरमसागरस्याभ्यंतरवेदिका-परतः ॥ ३५२ ॥

दसगुणपण्णत्तरिसयजोयणमुवगम्म दिस्सदे जम्हा ।
इगिलक्खहिओ एक्को पुव्वगसव्वुवहिदीवेहिं ॥ ३५३ ॥

दशगुणपंचसप्ततिशतयोजनमुपगम्य दृश्यते यस्मात् ।
एकलक्षाधिकः एकः पूर्वगसर्वोदधिद्वीपेभ्यः ॥ ३५३ ॥

दस । दशगुणपंचसप्ततिशत ७५००० योजनमुपगम्य रज्जुर्दृश्यते । कुत इतिचेत् । यस्मात् कारणात् पूर्वस्थितेभ्यः सर्वोदधिद्वीपेभ्यः सकाशात् उत्तरः एकः कश्चिद्द्वीपः समुद्रो वा एकलक्षाधिकः । एतदेव स्पष्टीकरोति । एकं ३२ ल, स्वयंभूरमणं संकल्प्य जंबूद्वीपगतार्धलक्षसहितं सर्वं द्वीपसमुद्रव-लयव्यासांकं ५००००।२ ल।४ ल।८ ल।१६ ल।३२ल। इत्यादि मेलयित्वा ६२५०००० अर्धीकृते ३१२५००० द्वितीयवारच्छिन्नरज्जुप्रमाणं। तस्मिन् तस्मात्प्राक्तनसर्ववलयव्यासे ३०५०००० न्यूने सति तदभ्यंतरवेदिकापरतो

गत्वा पतितरज्जुप्रमाणं स्यात् ७५०००। तस्मिन्नर्धितेपि ३१२५००० आर्धिते १५६२५०० तृतीयवारछिन्नरज्जुप्रमाणं स्यात् । तस्मिन् तस्मात्प्राक्तनसर्ववलयव्यासे १४५०००० अपनीते सति तदभ्यंतरवेदिकापरतः पतितरज्जुक्षेत्रफलप्रमाणं स्यात् ११२५०० । एवमेव तत्तत्प्राक्तनार्धमर्धीकृत्य तस्मिन् तस्मात्प्राक्तनसर्ववलयव्यासमपनीय तत्तदभ्यंतरवेदिकापरतः पतितरज्जुक्षेत्रप्रमाणं ज्ञातव्यम् ॥ ३५३ ॥

पुणरवि छिण्णे पच्छिमदीवब्भंतरिमवेदियापरदो ।
सगदलजुदपण्णत्तरिसहस्समोसरिय णिवडदि सा ३५४

पुनरपि छिन्नायां पश्चिमद्वीपाभ्यंतरवेदिकापरतः ।
स्वदलयुतपंचसप्ततिसहस्रमपसृत्य निपतति सा ॥ ३५४ ॥

पुण । द्वितीयवारछिन्नरज्ज्वां ३१२५००० पुनरपि छिन्नायां सत्यां १५६२५००० पश्चिमद्वीपाभ्यंतरवेदिकापरतो गत्वा स्वकीयदल ३७५०० युक्तपंचसप्ततिसहस्र ११२५०० मपसृत्य निपतति सा रज्जुः ॥ ३५४ ॥

दलिदे पुण तदणंतरसायरमज्झंतरत्थवेदीदो ।
पडदि सदलचरणण्णिदपण्णत्तरिदससयं गत्ता ॥३५५॥

दलिते पुनः तदनंतरसागरमध्यांतरस्थवेदीतः ।
पतति स्वदलचरणान्वितपंचसप्ततिदशशतं गत्वा ॥ ३५५ ॥

दलिदे । तस्मिन् तृतीयवारछिन्नखंडे १५६२५०० दले ७८१२५० पुनस्तदनंतरसागराभ्यंतरस्थवेदिकापरतः पतति स्वकीयदल ३७५०० चतुर्थांशाभ्यां १८७५० अन्वितपंचसप्ततिदशशतं १३१२५० गत्वा ॥ ३५५ ॥

इदि अब्भंतरतडदो सगदलतुरियट्ठमादिसंजुत्तं ।
पण्णत्तरिं सहस्सं गंतूण पडेदि सा ताव ॥ ३५६ ॥

इति आभ्यंतरतटतः स्वकदलतुर्याष्टमादिसंयुक्तम् ।
पंचसप्ततिसहस्रं गत्वा पतति सा तावत् ॥ ३५६ ॥

इदि । इति अभ्यंतरतटतः आरभ्य स्वकीयदल $\frac{७५०००}{२}$ तुर्याष्टमाद्यंशैः संयुक्तं पंचसप्ततिसहस्रं आदिशब्दात् षोडशांश $\frac{७५०००}{१६}$ द्वात्रिंशांशा $\frac{७५०००}{३२}$ द्यर्धार्धक्रमेण गत्वा पतति सा रज्जुस्तावत् यावदेवमर्धार्धक्रमेणैकयोजनमुद्धरति ते पंचसप्ततिसहस्रच्छेदा इयंतः १७ उद्धरितैकयोजनमंगुलं कृत्वा ७६८००० यावदेकांगुलमुद्धरति तावत्तेष्वंगुलेषु छिन्नेषु इयंतश्छेदा १९ तांश्छेदान् सर्वान् १७।१९ संख्यातं कृत्वा ? तत्संख्यातं अवशिष्टैकांगुलं कृत्वा तस्य छेदेषु । छे छे मिलितामिति छे छे ? मनसि धृत्वा संखेज्जेति गाथामाह ॥ ३५६ ॥

संखेज्जरूवसंजुदसूईअंगुलछिदिप्पमा जाव ।
गच्छंति दीवजलही पडदि तदो साद्धलक्खेण ॥३५७॥

संख्येयरूपसंयुतसूच्यंगुलछेदप्रमा यावत् ।
गच्छंति द्वीपजलधयः पतति ततः सार्धलक्षेण ॥ ३५७ ॥

संखेज्ज । संख्यातरूपसंयुतसूच्यंगुलछेदप्रमाणं यावत्तावद्गच्छंति ते द्वीपजलधयः तत्छेदसमाप्तौ ततः परं सर्वेषु द्वीपोदधिषु सार्धलक्षमेव गत्वा गत्वा पतति । एतत्कथमितिचेत्, अंतधणं ७५००० गुण २ गणियं १५०००० आदिविहीणं १५०००० रूऊणुत्तरभाजिअं । इति कृते भवति । ७५०००।$\frac{७५०००}{२}$।$\frac{७५०००}{२२}$। ०० सू । २।$\frac{२}{२}$।$\frac{२}{४}$।$\frac{२}{८}$।००।४।२।१ अर्थसंदृष्टिः । तथा अंकसंदृष्टिः । ६४।३२।१६।८। एवं सार्धलक्षक्रमेणैव लवणसमुद्रपर्यंतमसंख्यातद्वीपसमुद्रं गत्वा ॥ ३५७ ॥

लवणे दु पडिदेक्कं जंबूए देज्जमादिमा पंच ।
दीउदही मेरुसला पयदुवजोगी ण छच्चेदे ॥ ३५८ ॥

लवणे द्विः पतितः एकं जंबौ देहि आदिमाः पंच ।

द्वीपोदधयः मेरुशाखाः प्रकृतोपयोगिनः न षट् चैते ॥ ३५८ ॥

लवणे । लवणसमुद्रे द्विः छेदः पतितः तत्रैकं जंबूद्वीपे देहि । तत्र छेदे आदिमाः पंच दीपोदधिच्छेदाः मेरुशलाका च षडेते प्रकृते ज्योतिर्विंबानयने उपयोगिनो न भवंति इत्यग्रेपनेष्यंते ॥ ३५८ ॥

कुत्रेति चेदाह;—

तियहीणसेढिछेदणमेत्तो रज्जुच्छिदी हवे गच्छो ।

जंबूदीवच्छिदिणा छरूपजुत्तेण परिहीणा ॥ ३५९ ॥

त्रिकहीनश्रेणिछेदनमात्रः रज्जुछेदः भवेत् गच्छः ।

जंबूद्वीपछेदेन षड्रूपयुक्तेन परिहीनः ॥ ३५९ ॥

तिय । त्रिहीनश्रेणिछेदनमात्रो रज्जुछेदः तस्मिन् जंबूद्वीपस्याभ्यंतरे बहिश्च पंचाशत्पंचाशत्सहस्राणि इति मिलित्वा एकलक्षयोजनानि तेषां छेदान् १७ तद्गतांगुल ७६८००० छेदान् १९ मेरुमध्यैकछेदं च मेलयित्वा तत् सर्वमेकसंख्यातं कृत्वा तेन सहितसूच्यंगुलछेदान् अपनयनत्रैराशिकविधिना अपनीते द्वीपसमुद्राणां संख्या भवति । कथमपनयनत्रैराशिकविधिरितिचेत् । एतावत् । प्र=छे छे ३ गुणकारं प्रदर्श्य यदि गुण्ये छे । एकं फल=१ रूपमपनीयेत एतावत् इ छे छे गुणकारं प्रदर्श्य कियदपनीयते इति त्रैराशिकेन फलगुणितामिच्छां प्रमाणेन विभज्य गुणकार छे छे ? भागहारयोः छे छे ३ पल्य छेदवर्ग पल्यछेदवर्गेण सदृशं प्रदर्श्य अधस्तनं छे छे ३ यावद्भागेनैकं उपरितनं छे छे ? तावद्भागेन साधिकैकमित्यपवर्त्य $\frac{1}{3}$ एतद्रज्जुछेदस्य गुण्ये छे छे छे ३ अपनयेत् । इदमेव द्वीपसमुद्राणां संख्या भवति । इदानीं प्रकृतमनुसंधयति । जंबूद्वीपछेदेन षड्रूपयुक्तेन छे छे परिहीनो रज्जुछेद एव समस्तद्वीपसमुद्रगतचंद्रादित्यप्रमाणानयने गच्छो भवति ॥ ३५९ ॥

अथ ज्योतिर्बिंबसंख्यानयनगच्छस्यादिमाह;—

पुक्खरसिंधुभयधणं चउघणगुणसयछहत्तरीपभओ ।
चउगुणपचओ रिणमवि अडकदिमुहमुवरि दुगुणकमं

पुष्करसिंधूभयधनं चतुर्घनगुणशतषट्सप्ततिः प्रभवः ।
चतुर्गुणप्रचयः ऋणमपि अष्टकृतिमुखमुपरि द्विगुणक्रमं ॥ ३६० ॥

पुक्खर । पुष्करसमुद्रस्याद्युत्तरधनमानेतव्यं । कथमितिचेत् । आदी आदीदो दुगुण दुगुण कमे इति न्यायेन पुष्करोत्तरार्धस्यादितः १४४ पुष्करसिंधोरादिर्द्विगुणा १४४।२ भवति । तं मुखं कृत्वा पद ३२ हत मुखं १४४।२।३२ मुखस्थितेन द्विकेन २ पदं ३२ गुणयित्वा स्थापिते १४४।६४ आदिधनं स्यात् । व्येकपद ३१ अर्ध $\frac{३१}{२}$ प्रचय ४ गुणो गच्छः $\frac{३१}{२}$।४।३२ अत्राधस्तनद्विकमुपरितनचतुष्केनापवर्त्य अवशिष्ट-द्विकेन पदे गुणिते एवं ३१।६४ अस्मिन्नुत्तरधने ऋणनिक्षेपार्थं उत्तरधन-गतगुणकारस्य ३१।६४ ऋण १।६४ गुणकारं ६४ सदृशं प्रदर्श्य १।६४ आत्मप्रमाणैकरूपं ऋणं निक्षिप्य ३२।६४ इदमप्यादिधने १४४।६४ तथा सादृशं प्रदर्श्य चतुरुत्तरचत्वारिंशच्छतरूपे १४४।६४ आदिधन-गुण्ये द्वात्रिंशद्रूपोत्तरधनगतगुण्ये ३२।६४ मिलिते सति चतुर्घनगुणित-षट्सप्तत्युत्तरशतरूप १७६।६४ पुष्करसिंधूभयधनमेव ज्योतिर्बिम्बानयन-गच्छस्य प्रभवः स्यात् । एवमुत्तरत्र वारुणिवरद्वीपादिषु सर्वत्र प्राक्तनादितः १४४।२ द्विगुणक्रमेण स्थितं मुखं १४४।२।२ पदहतं कृत्वा १४४।२।२। ६४ द्विकद्वयमन्योन्यं संगुण्य चतुःषष्टिरग्रे स्थापिते आदिधनं १४४। ६४।४।१ व्येकपदेत्यादिना उत्तरधनमप्यानीय $\frac{६३}{२}$।४।६४। तस्मिन्नप-वर्तितद्विकं चतुःषष्टिरग्रे संस्थाप्य ६३।६४।२ अत्रैतद्गुणकारगुणितैकरूपं ऋणं ६४।२ निक्षिप्य सर्वत्र चउघणगुणसयछहत्तरिणा भवितव्यमि-त्येतदर्थं द्वात्रिंशदवशिष्यते यथा तथा संमेद्य तद्द्विकेन पूर्वद्विकं संगुण्य

३२।६४।४ आदिधन १४४।६४।४ उत्तरधनयोः ३२।६४।४ मेलने १७६।६४।४ चतुर्गुणप्रचयो भवतीति ज्ञातव्यं । एवं सर्वत्र धनं चतुर्गुणोत्तरक्रमेण गच्छति । ऋणमपि अष्टकृतिमुखं उपर्युपरि द्विगुणोत्तरक्रमः च स्यात् ॥ ३६० ॥

अथैवमादि १७६।६४ उत्तर ४ गच्छ छे छे ३ मानीय तत्संकलितधनमानयन् सर्वज्योतिर्बिंबानयनप्रकारमाह;—

आणिय गुणसंकलिदं किंचूणं पंचठाणसंठविदं ।
चंदादिगुणं मिलिदे जोइसबिंबाणि सव्वाणि ॥ ३६१ ॥

आनाय्य गुणसंकलितं किंचिदूनं पंचस्थानसंस्थापितम् ।
चंद्रादिगुणं मिलिते ज्योतिष्कबिंबानि सर्वाणि ॥ ३६१ ॥

आणिय । पदमेत्ते गुणयारे इत्यादिना पदगतोपरितनराशि छे छे ३ मात्रगुणकारप्रमाणद्विके २।२ अन्योन्यं गुणिते सति ‘ तम्मेतदुगे गुणे रासी ’ इति न्यायेन श्रेणिर्भवति । तन्मात्रगुणकारापरद्विके गुणिते अपरा श्रेणिर्भवति । पदगताधस्तनराशि $\frac{१}{३}$ गतैकलक्षयोजनछेद १७ मात्रद्विकद्वये परस्परं गुणिते लक्षवर्गो भवति १ ल । १ ल, तद्गतांगुल ७६८००० छेद १९ मात्रद्विकद्वये अन्योन्यं गुणिते अंगुलवर्गो भवति ।७६८०००। ७६८००। सूच्यंगुलछेदमात्रद्विकद्वये अन्योन्यं गुणिते चतुषःष्टिवर्गो भवति ६४।६४तद्गतत्रिकमात्रद्विकद्वये अन्योन्यं गुणिते सप्तवर्गो भवेत् ७।७ पदमात्रगुणकारहतराशावेकस्मिन्रूपे अपनीयते रूपन्यूनगुणकारेण ३ हते मुखेन १७६।६४ गुणिते च संकलितधनं भवतीति $\frac{१७६६४}{४७६८०००}$ । ७६८००० । १ ल १ ल ६४।६४।७।७।३ एवमेव ऋणसंकलितधनमप्यानेतव्यं । $\frac{१६४}{२७६८०००}$ । १ ल ७।६४।१ संकलितधनराशिस्थोपरितनषट्सप्ततिशतं १७६ अधस्तनचतुःषष्ट्या ६४ सह षोडशभिरपवर्तनीयं । उपरितनचतुःषष्टिं ६४ अधस्तनचतुःषष्ट्या ६४ सह तावतैवा ६४ पव-

र्तयेत् । अंगुलगतषट्शून्यानि लक्षगतदशशून्यैः सह षोडशशून्यानि पृथक् कृत्वा स्थापयेत् । अंगुलांकवर्गं त्रिभिः संभेद्य बेसदछप्पणवर्गमन्योन्यं गुणिते पण्णट्ठी स्यात् । अधस्तनत्रिकत्रयमन्योन्यं गुणयित्वा २७ तेन सप्तवर्गं ४९ संगुण्य १३२३ अवशिष्टचतुष्केण गुणयित्वा तस्मिन् तानि शून्यानि मेलयेत् $\frac{१}{४}$ । $\frac{११}{६५}$=५२९२०००००००००००००००० एवमानीते गुणसंकलिते जंबूद्वीपादारभ्य " दो द्दो वग्गं " इत्याद्युक्तं । चंद्राद्यंकं सर्वं २।४।१२।४२।७२ मेलयित्वा १३२ तस्मिन् पुनः पुष्करोत्तरार्धगतचंद्राणां संकलितधनं " पदमेगेण विहीणं ७ दुभाजिदं $\frac{७}{२}$ उत्तरेण संगुणिदं $\frac{७}{२}$ । ४ अपवर्त्य १४ पभव १४४ जुदं १५८ पद ८ गुणिदं १२६४ इत्यानीय मेलयित्वा १३९६ इदं ऋणसंकलितधनेन समच्छेदं कृत्वा सू $\frac{१३९६}{२}$ सू २७६८००० । १ ल. ।६४।७।१।७६८०००।१ ल ६४।७।१ एतत्सर्वं संख्यातं सूच्यंगुलं कृत्वा सू २ ? ऋणस्य ऋणं राशेर्धनं भवतीति न्यायेन ऋणसंकालितधनश्रेणावपनीय सु $\frac{१}{२}$ । $\frac{१}{६४}$ । ७६८००० १ ल । ७।६४।१ एवंभूतऋणसंकालितधनैकश्रेण्या सह ऋणसहितधनसंकलितं समानछेदं कृत्वा सू २।६४।७६८०००।१ ल ७।६४।३।४।७६८०००।७६८०००।१ ल । १ ल । ७।७।६४।६४।२ तस्य सूच्यंगुलव्यतिरिक्तगुणकारं सर्वं संख्यातं कृत्वा तत्संख्यातसूच्यंगुलगुणकारश्रेणी सू २ ? संकलितधनैकश्रेण्या साम्यं प्रदर्श्य तत्रैवापरस्यां श्रेणावपनीते किंचिन्न्यूनं भवति २ । ? । ११ । ४ । ६५=५२९२।१६ एतत्पंचसु स्थानेषु संस्थाप्य चंद्रादिप्रमाणेन गुणयित्वा २। ? ११।१।४।६५। ५२९२।१६॥२?।११।४।६५=५२९२।१६॥२?।११।८८।४।६५=५२९२। १६॥२।?।११।२८।४।६५=५२९२।१६॥२।?।११।६६९७५।१४।४।६५= ५२९२।१६ संमिलिते $\frac{७३६७२५००००००००००००१२९८}{४६५५२९२०००००००००००००००००}$ अत्र स्थानसदृशापवर्तनन्यायेन विंशतिस्थानान्यपवर्त्यंते । इदं मनसि कृत्य " बेसदछप्पण्णंगुलकदिहिदपदरस्स " इत्याद्युक्तं । एतदेव असंख्यातद्वीपसमुद्रगतसर्वज्योतिर्बिंबप्रमाणं स्यात् ॥ ३६१ ॥

अडसीदट्ठावीसा गहरिक्खा तार कोडकोडीणं ।
छावट्ठिसहस्साणि य णवसयपणत्तरिगि चंदे ॥ ३६२ ॥

अष्टाशीत्यष्टाविंशतिः ग्रहऋक्षयोस्ताराः कोटिकोटीनाम् ।
षट्षष्टिसहस्राणि च नवशतपंचसप्ततिरेकस्मिन् चंद्रे ॥ ३६२ ॥

अड । अष्टाशीत्यष्टाविंशति ८८।२८ ग्रहनक्षत्रयोः तारकाणां प्रमाणं षट्षष्ठिसहस्राणि नवशतपंचसप्ततिकोटीकोट्यः एकस्मिन् चंद्रे परिवाराः ३६२

अथाष्टाशीतिग्रहाणां नामान्यष्टाभिर्गाथाभिर्निरूपयति;—

कालविकालो लोहिदणामो कणयक्ख कणयसंठाणा ।
अंतरदो तो कवयव दुंदुभि रत्तणिहरूवणिब्भासो॥३६३॥

कालविकालो लोहितनामा कनकाख्यः कनकसंस्थानः ।
अंतरदस्ततः कवयवः दुंदुभिः रत्ननिभः रूपनिर्भासः ॥ ३६३ ॥

काल । छायामात्रमेवार्थः ॥ ३६३ ॥

णीलो णीलब्भासो अस्सस्सट्ठाण कोस कंसादि ।
वण्णा कंसो संखादिमपरिमाणो य संखवण्णोवि॥३६४॥

नीलो नीलाभासोऽश्वोऽश्वस्थानः कोशः कंसादिः ।
वर्णः कंसः शंखादिपरिमाणः च शंखवर्णोपि ॥ ३६४ ॥

णीलो । कंसादिः वर्णः कंसवर्णः शंखादिपरिमाणः शंखपरिमाण इत्यर्थः । शेषं छायामात्रं ॥ ३६४ ॥

तो उदय पंचवण्णा तिलो य तिलपुच्छ छाररासीओ ।
तो धूम धूमकेदिगिसंठाणण्णो कलेवरो वियडो॥३६५॥

तत उदयः पंचवर्णस्तिलश्च तिलपुच्छः क्षारराशिः ।
ततो धूमो धूमकेतुः एकसंस्थानः अज्ञः कलेवरो विकटः ॥३६५॥

तो उदय । छायामात्रमेवार्थः ॥ ३६५ ॥

इह भिण्णसंधि गंठी माण चयुप्पाय विज्जुजिब्भणभा।
तो सरिस णिलय कालय कालादीकेउ अणयक्खा ३६६

इहाभिन्नसंधिः ग्रंथिः मानश्चतुःपादो विद्युज्जिह्वो नभः।
ततः सदृशो निलयः कालश्च कालादिकेतुरनयाख्यः॥ ३६६॥

इह। छायामात्रमेवार्थः। कालादिः केतुः कालकेतुः॥ ३६६॥

सिंहाउ विउल काला महकालो रुद्दणाम महरुद्दा।
संताणसंभवक्खा सव्वट्ठि दिसाय संति वत्थूणो॥३६७॥

सिंहायुर्विपुलः कालो महाकालो रुद्रनामा महारुद्रः।
संतानः संभवाख्यः सर्वार्थी दिशः शांतिर्वस्तूनः॥ ३६७॥

सिंहाउ। छायामात्रमेवार्थः (१२)॥ ३६७॥

णिच्चलपलंभणिम्मंतज्जोदिमंता सयंपहो होदि।
भासुर विरजा तत्तो णिदुक्खो वीदसोगो य॥ ३६८॥

निश्चलः प्रलंभो निर्मंत्रो ज्योतिष्मान् स्वयंप्रभो भवति।
भासुरो विरजस्ततो निर्दुक्खो वीतशोकश्च॥ ३६८॥

णिच्चल। छायामात्रमेवार्थः (९)॥ ३६८॥

सीमंकर खेमभयंकर विजयादिचउ विमलतत्था य।
विजयिण्हु वीयसो करिकाट्ठिगिजडिअग्गिजालजलकेदू॥

सीमंकरः क्षेमभयंकरः विजयादिचरः विमलस्त्रस्तश्च।
विजयिष्णुः विकसः करिकाष्ठःएकजटिरग्निज्वालः ज्वलकेतुः।३६९।

सीमंकर। सीमंकरः क्षेमंकरः अभयंकरः विजयो वैजयंतो जयंतो अपराजित इति चत्वारः। विमलस्त्रस्तश्च विजयिष्णुर्विकसः करिकाष्ठः एकजटिरग्निज्वालो ज्वलकेतुः १५॥ ३६९॥

केदूखीरसऽघस्सवणा राहू महगहा य भावगहो।
कुजसणि बुहसुक्कगुरू गहाण णामाणि अडसीदी ३७०

केतुः क्षीरसः अघः स्रवणो राहुः महाग्रहश्च भावग्रहः।
कुजः शनिः बुधः शुक्रः गुरुः ग्रहाणां नामानि अष्टाशीतिः ३७०

केदू। इति इतिशेषः। ८८। छायामात्रमेवार्थः॥ ३७०॥

अथ जंबूद्वीपस्थभरतादिक्षेत्रपर्वतानां तारा गाथाद्वयेन विभजयति;—

णउदिसयभजिदतारा सगदुगुण दुगुणसलसमभत्था।
भरहादि विदेहोत्ति यतारा वस्से य वस्सधरे॥ ३७१॥

नवतिशतभक्ततारा: स्वकद्विगुणद्विगुणशलासमभ्यस्ताः।
भरतादिविदेहांतं च ताराः वर्षे च वर्षधरे॥ ३७१॥

णउदि। नवत्युत्तरशतशलाकानां १९० चंद्रद्वयताराश्चेत् १३३९५। २५ भरतादिक्षेत्रप्रमाणरूपैकशलाकादीनां १।२।४।८।१६।३२।६४।३२। १६।८।४।२।१ कियंत्यस्ताराः स्युरिति त्रैराशिकविधिनानवतिभक्तताराः ७०५।१४ स्वकीयस्वकीयाद्विगुणाद्विगुणशलाकासमभ्यस्ता भरतादिविदेह-पर्यंतं वर्षे क्षेत्रे वर्षधरे पर्वते च तारा भवंति॥ ३७१॥

अथ लब्धांकमुच्चारयति;—

पंचुत्तरसत्तसया कोडाकोडी य भरहताराओ।
दुगुणा हु विदेहोत्ति य तेणपरं दलिददलिदकमा ३७२

पंचोत्तरसप्तशतकोटिकोट्यः च भरततारा:।
द्विगुणाहि विदेहांतं च तेन परं दलितदलितक्रमः॥ ३७२॥

पंचुत्तर। पंचोत्तरसप्तशतकोटिकोट्यः ७०५।१४ भरतताराः स्युः। द्विगुणद्विगुणाः खलु विदेहपर्यंतं हिमवति पर्वते १४१।१५ हैमवतक्षेत्रे

२८२।१५ महाहिमवति पर्वते ५६४।१५ हरिक्षेत्रे ११२८।१५ निषधपर्वते २२५६।१५ विदेहक्षेत्रे ४५१२।१५ ततः परं दलितदलितक्रमो ज्ञातव्यः । नीलपर्वते २२५६।१५ रम्यकक्षेत्रे ११२८।१५ रुक्मिपर्वते ५६४।१५ हैरण्यवतक्षेत्रे २८२।१५ शिखरिपर्वते १४१।१५ ऐरावतक्षेत्रे ७०५।१४ ॥ ३७२ ॥

अथ लवणादिपुष्करार्धांतस्थितचंद्रार्काणामंतरमाह;--

सगरविदलबिंबूणा लवणादी सगदिवायरद्धहिया ।
सूरंतरं तु जगदीआसण्णपहंतरं तु तस्स दलं ॥ ३७३ ॥

स्वकरविदलबिंबोनं लवणादेः स्वकदिवाकरार्धाधिकं ।
सूर्यांतरं तु जगत्यासन्नपथांतरं तु तस्य दलम् ॥ ३७३ ॥

सगदल । स्वकीयस्वकीयरवि ४ प्रमाणार्ध २ गुणितरविबिंब $\frac{४८}{६१}$ प्रमाणेन $\frac{९६}{६१}$ न्यूनसमानछेदीकृतलवणादिव्यासः २ ल. । $\frac{१२१९९९०४}{६१}$ द्वयोरंतरयो २ रेतावत्यंतरे $\frac{१२१९९९०४}{६१}$ एकस्य कियदंतरमिति संपातेनागतस्वकीयदिवाकरा ४ र्ध २ हृतश्चेत् ९९९९९ शेषे $\frac{२६}{१२२}$ द्वाभ्यामपवर्तिते $\frac{१३}{६१}$ लवणसमुद्रगतसूर्यसूर्यांतरं जगत्याः आसन्नपथांतरं पुनस्तस्य दलप्रमाणं स्यात् ४९९९९ विषमत्वाद्दलनं कथमितिचेत्, राशावेकमपनीय ९९९९८ दलित्वा ४९९९९ अपनीतैकं दलरूपेण संस्थाप्य $\frac{१}{२}$ प्राक्तनशेषमपि $\frac{१३}{६१}$ तद्राश्यंशत्वाद्दलित्वा $\frac{१३}{६१}$।२ अस्मिन्नपनीतदलरूपं समानछेदं कृत्वा $\frac{६१}{६१}$ ।२ मेलयित्वा $\frac{७४}{६१}$।२ द्वाभ्यामपवर्तिते $\frac{३७}{६१}$ जगत्यासन्नपथांतरस्य शेषो भवति । एवं धातकीखंडकालोदकसमुद्रपुष्करार्धस्थितसूर्यसूर्यांतरं जगत्यासन्नपथांतरं चानेतव्यं ॥ ३७३ ॥

इदानीं चारक्षेत्रमाह;--

दो द्दो चंदरविं पडि एक्केक्कं होदि चारखेत्तं तु ।
पंचसयं दससहियं रविबिंबहियं च चारमही ॥ ३७४ ॥

द्वौ द्वौ चंद्ररवी प्रति एकैकं भवति चारक्षेत्रं तु ।
पंचशतं दशसहितं रविबिंबाधिकं च चारमही ॥ ३७४ ॥

दो द्दो । द्वौ द्वौ चंद्ररवी प्रति एकैकं भवति चारक्षेत्रं । समस्तचारक्षेत्रं पुनः कियदिति चेत्, पंचशतानि दशसहितानि रविबिंबप्रमाणेनाधिकानि ५१०$\frac{४८}{६१}$ चारमहीप्रमाणं स्यात् ॥ ३७४ ॥

अथ तयोश्चारक्षेत्रविभागनियममाह;—

जंबुरविंदू दीवे चरंति सीदिं सदं च अवसेसं ।
लवणे चरंति सेसा सगसगखेत्ते व य चरंति ॥ ३७५ ॥

जंबूरवींदवः द्वीपे चरंति अशीतिंशतं च अवशेषम् ।
लवणे चरंति शेषाः स्वकस्वकक्षेत्रे एव च चरंति ॥ ३७५ ॥

जंबू । जंबूद्वीपस्थरवींदवः अशीतिशतयोजनानि १८० द्वीपे चरंति अवशिष्टयोजनानि ३३०$\frac{४८}{६१}$ लवणसमुद्रे चरंति । शेषाः पुष्करार्धपर्यंत-चंद्रादित्याः स्वकीयस्वकीयक्षेत्रे एव चरंति ॥ ३७५ ॥

अथ तत्र सूर्याचंद्रमसोर्वीथीप्रमाणं कथयति;—

पडिदिवसमेक्कवीथिं चंदाइच्चा चरंति हु कमेण ।
चंदस्स य पण्णरसा इणस्स चउसीदिसय वीथी ॥३७६॥

प्रतिदिवसं एकवीथिं चंद्रादित्याः चरंति हि क्रमेण ।
चंद्रस्य च पंचदश इनस्य चतुरशीतिशतं वीथ्यः ॥ ३७६ ॥

पडिदिवस । द्वौ द्वौ मिलित्वा प्रतिदिवसमेकवीथीं चंद्रादित्याश्चरंति खलु क्रमेण चंद्रस्य पंचदश वीथ्यः इनस्य चतुरशीतिशतवीथ्यः स्युः ३७६

अथ वीथीनामंतरेण दिवसगतिं कथयति;—

पथवासपिंडहीणा चारक्खेत्ते णिरेयपथभजिदे ।
वीथीणं विच्चालं सगबिंबजुदो दु दिवसगदी ॥ ३७७ ॥

पथव्यासपिंडहीना चारक्षेत्रे निरेकपथभक्ते ।
वीथीनां विचालं स्वकबिंबयुतं तु दिवसगतिः ॥ ३७७ ॥

पथ । पथव्यासेन $\frac{४८}{६१}$ गुणिता वीथ्यः १८४ पथव्यासपिंडः $\frac{८८३२}{६१}$ समानछेदीकृते दशोत्तरपंचशते $\frac{३१११०}{६१}$ आदित्यबिंबे $\frac{४८}{६१}$ मिलिते सति $\frac{३११५८}{६१}$ चारक्षेत्रं स्यात् । अस्मिन् पथव्यासपिंडे $\frac{८८३२}{६१}$ अपनीते सति एवं $\frac{२२३२६}{६१}$ अत्रस्थभागहार ६१ निरेकपथेन १८३ गुणयित्वा ११६६३ अनेन भागहारेण अपनीतव्यासपिंडे $\frac{२२३२६}{१११६३}$ भक्ते सति २ वीथीनां विचालं अंतरालं स्यात् । एतत्स्वकीयबिंब $\frac{४८}{६१}$ युक्तं चेत् $\frac{१७०}{६१}$ प्रतिदिवसं गमनक्षेत्रप्रमाणं स्यात् । एवमेव चंद्रस्य चारक्षेत्रं $\frac{३११५८}{६१}$ पथव्यासपिंडं $\frac{८४०}{६१}$ वीथ्यंतरालं ३५ । $\frac{२१४}{४२७}$ दिवसगतिं ३६ । $\frac{१७९}{४२७}$ चानेतव्यं ॥ ३७७ ॥

एवमानीतदिवसगतिमाश्रित्यमेरोरारभ्य प्रतिमार्गमंतरं तत्तत्परिधिं चाह;—

सुरगिरिचंदरवीणं मग्गं पडि अंतरं च परिहिं च ।
दिणगदितप्परिहीणं खेवादो साहए कमसो ॥ ३७८ ॥

सुरगिरिचंद्ररवीणां मार्गं प्रत्यंतरं च परिधिः च ।
दिनगतितत्परिधीनां क्षेपात् साधयेत् क्रमशः ॥ ३७८ ॥

सुरगिरी । सुरगिरिचंद्ररवीणां मार्गं प्रत्यंतरं च परिधिश्चानेतव्यौ । कथमिति चेत्, जंबूद्वीपव्यासे एकस्मिन् लक्षे १ ल, तद्द्वीपाभ्यंतरोभयपार्श्वस्थचारक्षेत्रप्रमाण (३६०) मपनीयते चेत् अभ्यंतरवीथीविष्कंभः ९९६४० स्यात् । तदेव सूर्यसूर्यांतरं स्यात् । तत्र मेरुव्यास १००० मपनीय ८९६५० अर्धीकृते ४४८२० सुरगिर्यभ्यंतरवीथीस्थसूर्यांतरं स्यात् । तत्र दिवस २।$\frac{४८}{६१}$ गतिक्षेपे कृते सति ४४८२२$\frac{४८}{६१}$ द्वितीयवीथीगतसूर्यसुरगिर्योरंतरं स्यात् । एवं प्राचीनप्राचीनसुरगिरिसूर्यांतरे

द्विनगतिक्षेपे कृते उत्तरोत्तरसुरगिरिसूर्यांतरं स्यात् । अभ्यंतरवीथीविष्कंभे ९९६४० द्विगुणदिनगतिं $\frac{३४०}{६१}$ भक्त्वा ५।$\frac{३५}{६१}$ क्षेपे कृते ९९६४५$\frac{३५}{६१}$ द्वितीयवीथीगतसूर्यसूर्ययोरंतरं स्यात् । एवं स्वस्वाभ्यंतरे विष्कंभे द्विगुणदिनगतिक्षेपं ५।$\frac{३५}{६१}$ कृत्वा उत्तरोत्तरसूर्यसूर्ययोरंतरं ज्ञातव्यं । विक्खंभेत्यादिनाभ्यंतरविष्कंभस्य परिधिमानीय तस्मिन् अभ्यंतरवीथीपरिधौ ३१५०८९ द्विगुणदिनगति $\frac{३४०}{६१}$ परिधिं विक्खंभ $\frac{३४०}{६१}$ वग्गदहगुण $\frac{११५६०००}{६१६१}$ करणी $\frac{१०७५}{६१}$ त्यादिनानीय निजहारेण भक्त्वा १७।$\frac{३८}{६१}$ निक्षिप्ते ३१५१०६$\frac{३८}{६१}$ द्वितीयवीथीपरिधिः स्यात् । अमुमेव द्विगुणदिनगतिपरिधिं पूर्वपूर्वपरिधौ क्षेपे कृते उत्तरोत्तरवीथीपरिधिः स्यात् । एवमुक्तप्रकारेण दिनगतिक्षेपात् द्विगुणदिनगतिक्षेपात् द्विगुणदिनगतिपरिधिक्षेपाच्च सुरगिरिसूर्यांतरं परिधिं च साधयेत्क्रमशः ॥ ३७८ ॥

अथैवमुक्तपरिधौ परिभ्रमतः सूर्यस्य दिनरात्रिहेतुत्वं तयोः प्रमाणं च भार्गाश्रयेणाह;—

सूरादो दिणरत्ती अट्ठारस बारसा मुहुत्ताणं ।
अब्भंतरम्हि एदं विवरीयं बाहिरम्हि हवे ॥ ३७९ ॥

सूर्यात् दिनरात्री अष्टादश द्वादश मुहूर्तानाम् ।
अभ्यंतरे एतत् विपरीतं बाह्ये भवेत् ॥ ३७९ ॥

सूरादो । सूर्यात् मुहूर्तानामष्टादश द्वादशसंख्ये द्वे यथासंख्यं दिनरात्री स्यातां । क्वेति चेद्, अभ्यंतरपरिधौ एतदेव विपरीतं बाह्यपरिधौ भवेत् ॥ ३७९ ॥

अथ सूर्यस्यावस्थितिस्वरूपं दिनरात्र्योर्हानिचयं चाह;—

कक्कडमयरे सव्वब्भंतरबाहिरपहट्ठिओ होदि ।
मुहभूमीण विसेसे वीथीणंतरहिदे य चयं ॥ ३८० ॥

कर्कटमकरे सर्वाभ्यंतरबाह्यपथस्थितो भवति ।
मुखभूम्योः विशेषे वीथीनामंतराहिते च चयः ॥ ३८० ॥

कक्कड । कर्कटके मकरे च यथासंख्यं सर्वाभ्यंतरपथस्थितो बाह्यपथस्थितश्च भवति सूर्यः । अथ तद्राशिसमाप्तिपर्यंतं किं तावत्येव १८।१२ तिष्ठतीत्याशंक्य प्रतिदिनं हानिचयोस्तीत्याह । मुख १२ भूम्यो १८ विशेषे ६ त्र्यशीतिशत १८३ वीथ्यंतराणां दिनरूपाणां षण्मुहूर्ता यदि एक वीथ्यंतरस्य कियन्मुहूर्ता इति संपातेनागतेन वीथीनामंतरेण १८३ हृते $\frac{६}{१८३}$ भागाभावात् त्रिभिरपवर्तिते च $\frac{२}{६१}$ प्रतिदिनं हानिचयो भवति ॥ ३८० ॥

अथैवमुक्तदिनरात्र्योस्तापतमसो वर्तमानकालत्वात् तत्तापक्षेत्रप्रमाणं निरूपयन् श्रावणमाघमासादीनां दक्षिणोत्तरानयनं निरूपयति;—

सावणमाघे सव्वब्भंतरबाहिरपहट्ठिओ होदि ।
सूरट्ठियमासस्स य तावतमा सव्वपरिहीसु ॥ ३८१ ॥

श्रावणमाघे सर्वाभ्यंतरबाह्यपथस्थितो भवति ।
सूर्यस्थितमासस्य च तापतमसी सर्वपरिधीषु ॥ ३८१ ॥

सावण । श्रावणमासे माघमासे यथासंख्यं सर्वाभ्यंतरपथबाह्यपथस्थितो भवति सूर्यः । तस्य सूर्यस्थितमासस्य तापतमसी सर्वपरिधिष्वानेतव्ये । षण्णां मासानामेतावत्सु दिनेषु १८३ श्रावणाद्येकादिमासानां किमिति संपात्यापवर्तिते तत्तन्मासानां दिनसंख्याः स्युः । श्रा $\frac{६१}{२}$ भा ६१ आ $\frac{१८३}{२}$ का १२२ मा $\frac{३०५}{२}$ पु १८३ मा $\frac{६१}{२}$ फा ६१ चै $\frac{१८३}{२}$ वै १२२ ज्ये $\frac{३०५}{२}$ आ १८३ इमान्येव दक्षिणायनोत्तरायणदिनानि स्युः ॥ ३८१ ॥

अथ सर्वपरिधिषु तापतमसोरानयनप्रकारमाह;—

गिरिअब्भंतरमज्झिमबाहिरजलछट्ठभागपरिहिं तु।
सट्ठिहिदे सूरट्ठियमुहुत्तगुणिदे दु तावतमा ॥ ३८२ ॥

गिर्यभ्यंतरमध्यमबाह्यजलषष्ठभागपरिधिं तु ।
षष्ठिहिते सूर्यस्थितमुहूर्तगुणिते तु तापतमसी ॥ ३८२ ॥

गिरि । गिरिविष्कंभः १०००० एतावानेव जंबूद्वीपप्रमाणे १०००० द्वीपचारक्षेत्रं १८० द्विगुणीकृत्य ३६० अपनीते अभ्यंतरवीथीविष्कंभः, ९९६४०, चारक्षेत्र ५१० मर्धीकृत्य २५५ अस्मिन् द्वीपचारक्षेत्र १८० मपनीय ७५ इदमुभयपार्श्वार्थं द्विगुणीकृत्य १५० जंबूद्वीपे १ ल निक्षिप्ते १००१५० मध्यमवीथीविष्कंभः, लवणसमुद्रचारक्षेत्र ३३० मुभयपार्श्वार्थं द्विगुणीकृत्य ६६० जंबूद्वीपे १ ल मिलिते १००६६० बाह्यवीथीविष्कंभः । लवणसमुद्रप्रमाणं २ ल षड्भिर्भक्त्वेदं ३३३३३$\frac{२}{६}$ पार्श्वद्वयार्थं द्विगुणीकृत्य ६६६६६$\frac{४}{६}$ शेषमपवर्त्य $\frac{२}{३}$ इदं जंबूद्वीपे निक्षिप्ते १६६६६६$\frac{२}{३}$ जलषष्ठभागविष्कंभः स्यात् । एतान् पंचविष्कंभान् धृत्वा " विक्खंभवग्ग " इत्यादिना गिरिपरिधिं ३१६२२ अभ्यंतरपरिधिं ३१५०८९ मध्यमपरिधिं ३१६७०२ बाह्यपरिधिं ३१८३१४ जलषष्ठभागपरिधिं ५२७०४६ चानीय एतेषां गिरिपरिध्यादीनां मध्येविवक्षितपरिधि- ३१६२२ मुहूर्तषष्ठ्या विभज्य ५२७$\frac{१}{३०}$ यस्मिन् मासे सूर्यस्तिष्ठति तन्मासदिनरात्रिमुहूर्तैः १८।१७।१६।१५।१४।१३।१२ गुणिते ९४८६ शेषे $\frac{१८}{३०}$ षड्भिरपवर्तिते $\frac{३}{५}$ च लब्धं तस्मिन् मासे तापतमसोर्विषयक्षेत्रमागच्छति । विवक्षितपरिधिं ३१६२२ मुहूर्तषष्ठ्या ६० विभज्य मासं प्रति मुहूर्तवृद्ध्या गुणिते ५२७$\frac{१}{३०}$ मासं प्रति क्षेत्रहानिचयमागच्छति । मासं प्रत्येकमुहूर्तवृद्धिरिति कथं ? एकस्मिन् दिने मुहूर्तस्य द्व्येकषष्ठिभागमात्रे $\frac{२}{६१}$ हानिचये एकषष्ठिदिनदलस्य $\frac{६१}{२}$ कियद्धानिचयमिति

संपात्यापवर्तिते लब्धमुहूर्त एकः १ । एतं धृत्वा षष्टिमुहूर्तानामेतावति क्षेत्रे गते ३१६२२ एक मुहूर्तस्य कियत् क्षेत्रमिति संपात्यापवर्तिते लब्धमिदं ५२७ $\frac{१}{३०}$ मासं प्रति क्षेत्रहानिचयं स्यात् । इदं दाक्षिणायने तत्तन्मासे तापक्षेत्रे अपनयेत् तमः क्षेत्रे युज्यांत्। उत्तरायणे तत्तन्मासतापक्षेत्रे युंज्यात् तमःक्षेत्रे अपनयेत्। एवं कृते विवाक्षितमासे विवक्षितपरिधौ तापतमसोर्विषयक्षेत्रमागच्छति ॥ ३८२ ॥

अथैवमानीततापतमसोर्वर्तनाक्षेत्रमाह;—

परिधिह्मि जह्मिं चिट्ठदि सूरो तस्सेव तावमाणदलं ।
बिंबपुरदो पसप्पदि पच्छाभागे य सेसद्धं ॥ ३८३ ॥

परिधौ यस्मिन् तिष्ठति सूर्यः तस्यैव तापमानदलम् ।
बिंबपुरतः प्रसर्पति पश्चाद्भागे च शेषार्धम् ॥ ३८३ ॥

परिधि ।यस्मिन् परिधौ सूर्यास्तिष्ठति तस्यैव तापप्रमाणदलं बिंबपुरतः प्रसर्पति, शेषार्धं पश्चाद्भागे अपसर्पति ॥ ३८३ ॥

इदानीं तापतमसोर्हानिवृद्धिमाह;—

पणपरिधीयो भजिदे दसगुणसूरंतरेण जल्लद्धं ।
सा होदि हाणिवड्ढी दिवसे दिवसे च तावतमे ॥३८४॥

पंचपरिधिषु भक्तेषु दशगुणसूर्यांतरेण यल्लब्धं ।
सा भवति हानिवृद्धिर्दिवसे दिवसे च तापतमसोः ॥ ३८४ ॥

पण । षष्टिमुहूर्तानां पंचपरिध्यन्यतरप्रमितेषु क्षेत्रेषु गतेषु द्व्येकषष्टि $\frac{२}{६१}$ मुहूर्तानां कियत् क्षेत्रमिति संपातेन पंचपारिधिषु दशगुणसूर्यांतरेण १८३० भक्तेषु यल्लब्धं १७ $\frac{५१२}{१८३०}$ सा भवति हानिर्वृद्धिर्दिवसे दिवसे च तापतमसोः ॥ ३८४ ॥

अथ पंचपरिधीनां सिद्धांकं गाथाद्वयेन कथयति;—

बावीस सोलतिण्णिय उणणउदी पण्णमेक्कतीसं च ।
दुखसत्तद्विगितीसं चोद्दस तेसीदि इगितीसं ॥ ३८५ ॥

द्वाविंशतिः षोडशत्रीणि एकोननवतिपंचाशदेकत्रिंशच्च ।
द्विखसप्तषष्ठ्येकत्रिंशत् चतुर्दशत्र्यशीतिएकत्रिंशत् ॥ ३८५ ॥

बावीस । द्वाविंशतिषोडशत्रीणि ३१६२२ गिरिपरिधिः एकोननवति पंचाशदेकत्रिंशदभ्यंतरपरिधिः ३१५८९ द्विखसप्तषष्ठेकत्रिंशत् मध्यपरिधिः ३१६७०२ चतुर्दशत्र्यशीत्येकत्रिंशद्बाह्यपरिधिः ३१८३१४ ॥ ३८५ ॥

छादालसुण्णसत्तयबावण्णं होंति मेरुपहुदीणं ।
पंचण्णं परिधीओ कमेण अंकक्कमेणेव ॥ ३८६ ॥

षट्चत्वारिंशच्छून्यसप्तकाद्विपंचाशत् भवंति मेरुप्रभृतीनाम् ।
पंचानां परिधयः क्रमेण अंकक्रमेणैव ॥ ३८६ ॥

छादाल । षट्चत्वारिंशच्छून्यसप्तद्विपंचाशज्जलषष्ठभागपरिधिः ५२-७०४६ इति भवंति मेरुप्रभृतीनां पंचानां परिधयः क्रमेणांकक्रमेणैव।३८६।

अथ विसदृशान् परिधीन् कथं समानकालेन समापयति इत्यत्राह;—

णीयंता सिग्घगदी पविसंता रविससी दु मंदगदी ।
विसमाणि परिरयाणि दु साहंति समाणकालेण॥३८७॥

निर्यांतौ शीघ्रगती प्रविशंतौ रविशशिनौ तु मंदगती ।
विषमान् परिधींस्तु साधयतः समानकालेन ॥ ३८७ ॥

णीयंता । निर्यांतौ शीघ्रगती भूत्वा प्रविशंतौ रविशशिनौ मंदगती भूत्वा विषमान् परिधींस्तु साधयतः समापयतः समानकालेन ॥ ३८७ ॥

अथ तयो रविशशिनोर्गमनप्रकारं पुनर्दृष्टांतमुखेनाह;—

गयहयकेसरिगमणं पढमे मज्झंतिमे य सूरस्स ।
पडिपरिहिं रविससिणो मुहुत्तगदिखेत्तमाणिज्जो ३८८

गजहयकेसरिगमनं प्रथमे मध्ये अंतिमे च सूर्यस्य ।
प्रतिपरिधि रविशशिनोः मुहूर्तगतिक्षेत्रमानेयम् ॥ ३८८ ॥

गय । गजगमनं हयगमनं केसरिगमनं प्रथमे मध्यमे अंतिमे च पथि सूर्याचंद्रमसोर्भवति । इदानीं रविशशिनोः प्रतिपरिधि मुहूर्तगतिक्षेत्रमानेयं । कथमिति चेत् । षष्टिमुहूर्ताना ६० मेतावति क्षेत्रे ३१५०८९ एकमुहूर्तस्य कियत् क्षेत्रमिति संपातेनानेतव्यं । सूर्यस्याभ्यंतरपरिधौ मुहूर्तगतिरियं ५२५१।२९/६० चंद्रस्याप्येवं त्रैराशिकविधिनानेतव्यं । चंद्रस्य परिधिसमापनकालः ६२ २३/२२१ समच्छेदेनानयोर्मेलने प्रमाणराशिः १३७२५/२२१ फल ३१५०८९ इच्छा मुहूर्त १ लब्ध ५०७३ शेष ७७४४/१३७२५ ॥ ३८८ ॥

अथाभ्यंतरवीथीस्थसूर्यस्य चक्षुःस्पर्शाध्वानमानयति गाथात्रिकेन;—

सट्ठिहिदपढमपरिहिं णवगुणिदे चक्खुपासअद्धाणं ।
तेणूणं णिसहाचलचावद्धं जं पमाणमिणं ॥ ३८९ ॥

षष्टिहितप्रथमपरिधौ नवगुणिते चक्षुःस्पर्शाध्वा ।
तेनोनं निषधाचलचापार्धं यत् प्रमाणमिदम् ॥ ३८९ ॥

सट्ठि । षष्टिमुहूर्तानां एतावति गमनक्षेत्रे ३१५०८९ नव ९ मुहूर्तानां कियत् क्षेत्रमिति संपातक्रमेण षष्टिभिर्हृते प्रथमपरिधौ ३१५०८९ त्रिभिरपवर्तितैः ३१५०८९/२०।३ गुणयित्वा १४५२६७/२० भक्ते सति ४७२६३ शे ७/२० चक्षुःस्पर्शाध्वा भवति । निषधाचलचापा १२३७६८ १८/१९ र्धं ६१८८४ शे ९/१९ तेन चक्षुःस्पर्शाध्वना न्यूनं यत्तत्प्रमाणमिदं पुरो गाथायां कथ्यमानं ॥ ३८९ ॥

इगिवीसछदालसयं साहियमागम्म णिसहउवरिमिणो ।
दिस्सदि अउज्झमज्झे तेणूणो णिसहपाससभुजो ॥३९०॥

एकविंशतिषट्चत्वारिंशच्छतं साधिकं आगत्य निषधोपरि इनः ।
दृश्यते अयोध्यामध्ये तेनोनः निषधपार्श्वभुजः ॥ ३९० ॥

इगिवीस । एकविंशत्युत्तरषट्चत्वारिंशच्छतं साधिकं १४६२१ किंतत्साधिकं, अध्वचापयोः शेषं $\frac{७}{२०}$ । $\frac{९}{१९}$ परस्परहारेणाधः उपरि गुणयित्वा $\frac{१३३}{३८०}$ । $\frac{१८०}{३८०}$ शेषिते $\frac{४७}{३८०}$ एवमनेन साधिकमित्युच्यते । एतावन्निषधस्योपर्यागत्य इनो दृश्यते अयोध्यामध्ये उत्कृष्टपुरुषैः । निषधपार्श्वभुजः २०१९६ तेनागतक्षेत्रेण १४६२१ न्यूनः अग्रे वक्ष्यमाणं भवति ॥ ३९० ॥

णिसहुवरिं गंतव्वं पणसगवण्णास पंच देसूणा ।
तेत्तियमेत्तं गत्ता णिसहे अत्थं च जादि रवी ॥ ३९१ ॥

निषधोपरि गंतव्यं पंचसप्तपंचाशत् पंचदेशोना ।
तावन्मात्रं गत्वा निषधे अस्तं च याति रविः ॥ ३९१ ॥

णिसहु । निषधोपरि गंतव्यं पंच सप्त पंचाशत् पंच देशो ना ५५७५ एतावन्मात्रमेव निषधस्योपरि गत्वा रविः अस्तं याति ॥ ३९१ ॥

इदानीं प्रकृतचापानयनार्थं तद्बाणानयनप्रकारमाह;—

जंबूचारधरूणो हरिवस्ससरो य णिसहबाणो य ।
इह बाणावट्टं पुण अब्भंतरवीहिवित्थारो ॥ ३९२ ॥

जंबूचारधरोनः हरिवर्षशरः च निषधबाणश्च ।
इह बाणवृत्तं पुनः अभ्यंतरवीथीविस्तारः ॥ ३९२ ॥

जंबूचार । अंतधणं १६ गुण २ं गुणियं ३२ आदिविहीणं ३१ रूऊणुत्तरभाजियं $\frac{३१}{१}$ इति शलाकामानीय एतावच्छलाकानां १९० एतावति क्षेत्रे

१००००० एताद्धारिविर्षशलाकानां ३१ निषधशलाकानां च ६३ कियत्क्षेत्र-मिति संपात्य गुणिते हरिवर्षबाणः $\frac{३१००००}{१९}$ निषधबाणः $\frac{६३००००}{१९}$ एतौ हरिवर्षनिषधबाणौ समानछेदीकृते $\frac{३४२०}{१९}$ जंबूचारधरा १८० न्यूनौ चेत् इह चक्षुरध्वानयने बाणौ स्यातां $\frac{३०६५८०}{१९}$ । $\frac{६२६५८०}{१९}$ तयोर्वृत्तविष्कंभः पुनः जंबूद्वीपे १ ल द्वीपचारक्षेत्रं १८० द्विगुणीकृत्य ३६० अपनीते अभ्यंतरवीथीविस्तारः स्यात् ९९६४० अमुं विष्कंभं समच्छेदीकृत्य $\frac{१८९३१६०}{१९}$ अत्रेसु $\frac{३०६५८०}{१९}$ हीणं विक्खंभं $\frac{१५८६५८०}{१९}$ चउगुणिदिसुणा $\frac{१२२६३२०}{१९}$ हदे दु जीवकदी- $\frac{१९४५}{३}$ । $\frac{६५४७८५६००}{६१}$ बाणकदिं $\frac{९३९९१२९६४००}{३६१}$ छहिगुणिदे $\frac{५६३९४७७७८४००}{३६१}$ तत्थ जुदे धणुकदी होदी २५०।$\frac{९६०२५६४०००}{३६१}$ तन्मूलं १५८।$\frac{४१७२}{१९}$ स्वहारेण भक्तं चेत् ८३३७७$\frac{९}{१९}$ शेषं हरिवर्षचापं स्यात्। निषधस्य तावत् समच्छेदीकृते तास्मि-९९६४० न्नेव विष्कंभे $\frac{१८९३१६०}{१९}$ इसु $\frac{६२६५८०}{१९}$ हीणं विक्खंभं $\frac{१२६६५८०}{१९}$ चउगुणिदिसुणा $\frac{२५०६३२०}{१९}$ हदे दु जीवकदी $\frac{३१७४४५४७८५६००}{३६१}$ बाणकदिं $\frac{३९२६०२४९६४००}{३६१}$ छहिगुणिदे $\frac{२३५५६१४९७८४००}{३६१}$ तत्थ जुदे धणुकदी होदि $\frac{५५३००६९७६४०००}{३६१}$ तन्मूलं $\frac{२३५१६१०}{१९}$ एतस्मिन् स्वहारेण १९ भक्ते १२३७६८ शेषे $\frac{१८}{१९}$ निषधगिरिचापं स्यात् ॥ ३९२ ॥

अथैवमानीतयोश्चापयोः किं कर्तव्यमित्यत्राह;—

हरिगिरिधणुसेसद्धं पासभुजो सत्तसगतितेसीदी।
हरिवस्से णिसहधणू अडछस्सगतीसबारं च ॥ ३९३ ॥

हरिगिरिधनुः शेषार्धं पार्श्वभुजः सप्तसप्तत्रित्र्यशीतिः ।
हरिवर्षे निषधधनुः अष्टषट्सप्तत्रिंशद्द्वादश च ॥ ३९३ ॥

हरि । हरिक्षेत्रधनुः ८३३७७$\frac{९}{१९}$ निषधगिरिधनुषि १२३७६८$\frac{१८}{१९}$ शोषिते ४०३९१$\frac{९}{१९}$ शे साति तद्राशावेक १ मपनीयार्धीकृत्य २०१९५

शेषं चार्धीकृत्य ९/१९।२ अस्मिन्नपनीतार्धे १/२ समच्छेदीकृत्य १९/१९।२ अन्योन्यं संयोज्य २८/३८ तदप्यपवर्त्य १४/१९ इदं किंचिन्न्यूनं अगणयित्वा एकयोजनं कृत्वा हरिगिरिधनुश्शेषार्धे २०१९५ संयोजिते २०१९६ सति निषधस्य पार्श्वभुजो भवति । इदानीं हरिगिरिधनुषोः सिद्धांकमुच्चारयति- सप्तसप्तत्रिभ्यशीतिर्योजनानि ८३३७७ हरिवर्षक्षेत्रधनुः निषधपर्वते धनुः अष्टषट्सप्तत्रिंशद्वादश च योजनानि १२३७६८ ॥ ३९३ ॥

अथोक्तयोर्धनुषोः शेषांकं पार्श्वभुजांकं चोच्चारयति;—

माहवचंदुद्धरिया णवयकला णयपदप्पमाणगुणा ।
पासभुजो चोद्दसकदि वीससहस्सं च देसूणा ॥ ३९४ ॥

माधवचंद्रोद्धृता नवककला नयपदप्रमाणगुणाः ।
पार्श्वभुजः चतुर्दशकृतिः विंशसहस्रं च देशोनानि ॥ ३९४ ॥

माहव । माधवचंद्रेणो १९ द्धृता नवकला ९/१९ एताः हरिक्षेत्रस्य चापशेषाः एता एव ९/१९ नयस्थानप्रमाण २ गुणिताः १८/१९ निषधचापस्यांशाः । निषधस्य पार्श्वभुजः पुनः चतुर्दशकृतिर्विंशतिसहस्रयोजनानि २०१९६ देशोनानि ॥ ३९४ ॥

अथायनविभागमकृत्वा सामान्येन चारक्षेत्रे उदयप्रमाणप्रतिपादनार्थमिदमाह;—

दिणगदिमाणं उदयो ते णिसहे णीलगे य तेसट्ठी ।
हरिरम्मगेसु दो द्दो सूरे णवदससयं लवणे ॥ ३९५ ॥

दिनगतिमानं उदयः ते निषधे नीलके च त्रिषष्ठिः ।
हरिरम्यकयोः द्वौ द्वौ सूर्ये नवदशशतं लवणे ॥ ३९९ ॥

दिणगदि । दिनगतिक्षेत्रमिदं १७०/६१ एतावति क्षेत्रे यद्येकः सूर्यस्योदयो भवेत् । तदा एतावति ५१० क्षेत्रे कियन्त उदया इति संपात्य भक्ते

लब्धोदयाः १८३ पर्यन्ते शेषरविबिम्बावष्टब्धे क्षेत्रे $\frac{४८}{६१}$ एक उदयः मिलित्वा चारक्षेत्रे चतुरशीत्युत्तरशतमुदयाः । कुतः, प्रतिवीथ्येकैकोदयसंभवात् । ते दिनगत्युदया निषधे ६३ नीले च ६३ प्रत्येकं त्रिषष्टिः हरि २ वर्षरम्यकवर्षयोः २ द्वौ द्वौ । लवणसमुद्रे एकान्नविंशं शतं ११९ ॥ ३९५॥

अथ दक्षिणायने चारक्षेत्रे द्वीपवेदिकोदधिविभागेनोदयप्रमाणप्ररूपणार्थं त्रैराशिकोत्पत्तिमाह;—

दीउवहिचारखित्ते वेदीए दिणगदीहिदे उदया ।
दीवे चउ चंदस्स य लवणसमुद्दह्मि दस उदया ॥३९६॥

द्वीपोदधिचारक्षेत्रे वेद्यां दिनगतिहिते उदयाः ।
द्वीपे चतुः चंद्रस्य च लवणसमुद्रे दश उदयाः ॥ ३९६ ॥

दीउवहि । एतावति दिनगतिक्षेत्रे $\frac{१७०}{६१}$ यद्येक उदयो १ लभ्यते तदा एतावति वेदिका ४ रहितद्वीपचारक्षेत्रे १७६ कियन्त उदया इति सम्पात्य भक्ते लब्धोदयाः ६३ एषु प्रथमपथोदयस्य प्राक्तनायनसम्बन्धित्वेनाग्रहणात् द्वाषष्टिरेवोदयाः ६२ शेष $\frac{२६}{१७०}$ अत्र त्रिषष्टिर्दिनगतिशलाकाद्वीपचरमान्तरपर्यन्ते समाप्ताः अवशिष्टा उदयांशाः षड्विंशतिः सप्ततिशतभागा $\frac{२६}{१७०}$ एकस्योदयस्य १ यद्येतावत् क्षेत्र $\frac{१७०}{६१}$ मागच्छति तदा एतावदुदयांशानां $\frac{२६}{१७०}$ कियत्क्षेत्रमित्यनेन त्रैराशिकेन फलेच्छयोर्गुणकारात्संजातक्षेत्रयोजनांशाः षड्विंशतिरेकषष्टिभागाः $\frac{२६}{६१}$ एते द्वीपसम्बन्धिनः पौरस्त्यपथगतवेदिकायां पुनरेतावति क्षेत्रे $\frac{१७०}{६१}$ यद्येक उदयो १ भवेत्तदा एतावति ४ वेदिकाक्षेत्रे कियंत उदयाः स्युः इति संपात्य हारस्य हारेण $\frac{१७०}{६१}$ एकषष्ट्या गुणयित्वा $\frac{२४४}{१७०}$ अस्मिन्सप्ततिशतेन १७० हारेण भक्ते लब्ध उदयः । एकः शेषोदयांशाः चतुः सप्ततिशतभागाः । एतेषु भागेषु $\frac{७४}{१७०}$ पूर्वोक्तन्यायेन क्षेत्रीकृतेषु चतुःसप्ततिरेकषष्टिभागा $\frac{७४}{६१}$ योजनस्य । एतेषु द्वाविंशतिमेकषष्टिभागा $\frac{२२}{६१}$ न्गृहीत्वा द्वीपचरमपथांशेषु प्रागानीतेषु $\frac{२६}{६१}$

मेलयेत् । मिलितेषु तत्पथव्यासः अष्टचत्वारिंशदेकषष्टिभागप्रमाणः सम्पूर्णो भवति $\frac{४८}{६१}$ एवं कृते अभ्यन्तरपथादारभ्य चतुःषष्टितमपथव्यासः द्वीपगतैः षड्विंशत्या एकषष्टिभागैः $\frac{२६}{६१}$ वेदिकागतैर्द्वाविंशत्या एकषष्टिभागैश्च $\frac{२२}{६१}$ सिद्धो भवति । द्वीपवेदिकां सन्धौ सूर्यस्य चतुःषष्टितमी वीथी भवतीति तात्पर्यं वेदितव्यम्। अतः पुरस्तात् वेदिकायोजनद्वय २ मन्तरमातिक्रम्य सूर्यस्य एकः पंथा $\frac{४८}{६१}$ ततः पुरस्तात् द्वापंचाशदेकषष्टिभागाः $\frac{५२}{६१}$ अवशिष्टा अन्तरे देयाः । एवं द्वीपवेदिकासन्धिपथव्यासगतद्वाविंशत्येकषष्टिभागेभ्यः $\frac{२२}{६१}$ आरभ्य चतुर्योजनप्रमाणं वेदिकाक्षेत्रं समाप्तम् ॥ अथ लवणसमुद्रे एतावति क्षेत्रे $\frac{१७०}{६१}$ यद्येक उदयस्तदा बाह्यपथवर्जितसमुद्रचारक्षेत्रे ३३० एतावति कियन्त उदया इति सम्पात्यापवर्तिते लब्धोदया अष्टादशशतं ११८ शेषोदयांशाः सप्ततिशतभागाः $\frac{७०}{१७०}$ एतेषु पूर्ववत्क्षेत्रीकृतेषु योजनांशाः सप्ततिरेकषष्टिभागाः $\frac{७०}{६१}$ एतान् वेदिकासम्बन्धिपूर्वान्तरगतेषु द्विपंचाशदेकषष्टिसागरेषु $\frac{५२}{६१}$ प्रक्षेप्य एकषष्ठ्या विभक्ते लब्धं योजनद्वयं सम्पूर्णमन्तरप्रमाणं स्यात् । अतः परं रविबिम्बसहितान्तरप्रमाणदिनगतिशलाकाः चरमान्तरपर्यंताः अष्टादशोत्तरशतप्रमिताः ११८ सुगमाः तत्रोदयाश्च तावन्त एव ११८ ततः पुरस्तात् बाह्यपथव्यासे एक उदयः इति सर्वे मिलित्वा लवणसमुद्रे एकान्नविंशं शतमुदयाः ११९ एवं दक्षिणायने समस्तोदयाः त्र्यशीत्युत्तरशतं १८३ अथोत्तरायणे लवणसमुद्रे रविबिम्बाधिकचारक्षेत्रमिदं ३३०।$\frac{४८}{६१}$ समच्छेदीकृत्य युक्ते एवं $\frac{२०१७८}{६१}$ एतावत्क्षेत्रस्य $\frac{१७०}{६१}$ यद्येका १ दिनगतिशलाका तदा एतावत्क्षेत्रस्य $\frac{२०१७८}{६१}$ कियन्त्यो दिनगतिशलाकाः इति सम्पात्य भक्ते ११८ शेषे $\frac{११८}{१७०}$ अत्र रूपोनदिनगतिशलाकामात्रोदयाः ११७ कुतः बाह्यपथोदयस्य दक्षिणायनसम्बन्धित्वेनाग्रहणात् । शेषांशेषु $\frac{११८}{१७०}$ क्षेत्रीकृतेषु $\frac{११८}{६१}$ अष्टचत्वारिंशदेकषष्टिभागान् $\frac{४८}{६१}$ पौरस्त्यपथव्यासे दद्यात् । तत्र एक उदयः एवं समस्तलवणसमुद्रे उत्तरायणे उदयाः अष्टादशोत्तरं शतं अवशिष्टाः सप्ततिरेकषष्टिभागाः $\frac{७०}{६१}$ पौरस्त्ये अन्तरे देयाः इति-

समुद्रचारक्षेत्रं समाप्तम् । वेदिकायां प्रागानीत एव एक उदयः चतुःसप्ततिरेकषष्टिभागाः ए $\frac{७४}{६१}$ तेषु भागेषु द्वापंचाशदेकषष्टिभागाः $\frac{५२}{६१}$ प्रकृतान्तरे देयाः एवं समुद्रवेदिकांशैर्योजनद्वय २ प्रमितं अन्तरं सम्पूर्णं भवति । अत एकस्यां दिनगतावेक उदयः अवशिष्टविंशतिरेकषष्टिभागाः $\frac{२२}{६१}$ अग्रे तत्पथव्यासोदया एवं चतुर्योजनप्रमितं वेदिकाक्षेत्रं समाप्तम् । अथ वेदिकावर्जितद्वीपचारक्षेत्रे १७६ अभ्यन्तरपथव्यास $\frac{४८}{६१}$ न्यूने $\frac{१०६८८}{६१}$ एतावत्क्षेत्रस्य $\frac{१७०}{६१}$ यद्येका दिनगतशलाका १ तदा एतावत्क्षेत्रस्य $\frac{१०६८८}{६१}$ कियन्त्यो दिनगतिशलाका इति सम्पात्य भक्ते ६२ शेष $\frac{१४८}{१७०}$ लब्धदिनगतिशलाका । शेषांशेषु पूर्ववत्क्षेत्रीकृतेषु $\frac{१४८}{६१}$ षड्विंशतिरेकषष्टिभागाः द्वीपवेदिकासन्धिपथव्यासे देयाः, एवं कृते तत्पथव्यासः सम्पूर्णो भवति । शेषांशेषु एकषष्ट्या भक्तेषु लब्धं योजनद्वयं पुरस्तादन्तरं भवति । ततः परं द्विषष्टिप्रमिता दिनगतिशलाकाः उदयाश्च तावन्त एव । अभ्यन्तरपथे एक उदयः । एवं वेदिकावर्जिते द्वीपचारे सन्ध्युदयेन सह चतुःषष्ट्युदयाः । एवं मिलित्वा उत्तरायणे उदयाः त्र्यशीत्युत्तरं शतं १८३ सूर्यस्य ज्ञातव्यं । चन्द्रस्याप्ययनविभागमकृत्वा सामान्येन द्वीपचारक्षेत्रे १८० पंचोदयाः समुद्रचारक्षेत्रे ३३०।$\frac{४८}{६१}$ दशोदयाः समस्तं मिलित्वा पंचदशोदयाः १५ अथ दक्षिणायने पथव्यासपिण्डहीणे इत्यादिना आनीते एतावति चन्द्रस्य दिनगतिक्षेत्रे $\frac{१५५५१}{४२७}$ यद्येक १ उदयस्तदा एतावति द्वीपचारक्षेत्रे १८० कियन्त उदया इति सम्पात्य भक्ते लब्धोदयाश्चत्वारः ४ शेषे $\frac{१४६५६}{१५५५१}$ एतास्मिन्नेकोदयस्य एतावति क्षेत्रे सति $\frac{१५५५१}{४२७}$ एतावदुदयांयशस्य $\frac{१४६५६}{१५५५१}$ कियत्क्षेत्रमिति सम्पात्य तिर्यगपवर्त्य $\frac{१४६५६}{४२७}$ अस्मिन् चन्द्रपथव्यासप्रमाणं $\frac{५६}{६१}$ सप्तभिः संमच्छेदीकृतं $\frac{३९२}{४२७}$ गृहीत्वा द्वीपचरमान्तरस्य पुरस्तात् पथि देयं तत्रैक उदयः इति पंचसूदयेषु मध्ये अभ्यन्तरपथोदयस्य उत्तरायणसम्बन्धित्वेनाग्रहणात् द्वीपे चत्वार उदयाः शेषमिदं $\frac{१४२६४}{४२७}$ अस्मिन्प्रकृतहारेण भक्ते ३३ शेष $\frac{१७३}{४२७}$ एवं इदं पुरस्तादन्तरे देयं । अथ समुद्रे

चारक्षेत्रमिद ३३०$\frac{४८}{६१}$ समच्छेदीकृत्य मिलिते एवं $\frac{२०१७८}{६१}$ एतावति क्षेत्रे $\frac{१५५५१}{४२७}$ यद्येक उदयस्तदा एतावति क्षेत्रे $\frac{२०१७५}{६१}$ कियन्त उदयाः स्युरिति सम्पात्य एकषष्ट्यापवर्त्य तैः सप्तभिर्गुणयित्वा $\frac{१४१२४६}{१५५५१}$ भक्ते लब्धोदयाः नव ९ शेषामिदं $\frac{१२८७}{१५५५१}$ पूर्ववत्क्षेत्रीकृत्य $\frac{१२८७}{४२७}$ अस्मात् चन्द्रबिम्बप्रमाणं $\frac{५६}{६१}$ सप्तभिः समच्छेदीकृत्य $\frac{३९२}{४२७}$ गृहीत्वा बाह्यपथि देयं। एवं सति लवणसमुद्रे चन्द्रस्य दशोदयाः शेषं $\frac{८९५}{४२७}$ स्वहारेण भक्त्वा यो २ शेष $\frac{४१}{४२७}$ इदं प्राक्तने पंचमेऽन्तरे द्वीपगतांशे यो ३३ शेषे $\frac{१७३}{४२७}$ देयं। एवमुभयांशमेलनात् यो ३५$\frac{२१४}{४२७}$ पंचममन्तरं सम्पूर्णं भवति। एवं चन्द्रस्य दक्षिणायने द्वीपोदध्योर्मिलित्वा चतुर्दशोदयाः। अथोत्तरायणे समुद्रचारक्षेत्रे ३३०$\frac{४८}{६१}$ प्राक्प्रक्रियया आनीता उदयाः नव ९ शेषोदयांशाः। $\frac{१२८७}{१५५५१}$ पूर्ववत्क्षेत्रीकृताः $\frac{१२८७}{४२७}$ अस्माच्चन्द्रबिम्बप्रमाणं $\frac{५६}{६१}$ सप्तभिः समच्छेदीकृतं $\frac{३९२}{४२७}$ गृहीत्वा बाह्यपथान्तरादारभ्य नवमान्तरस्य पौरस्त्ये पथव्यासे देयं तस्मिन्नेक उदयः इति समुद्रे दशसूदयेषु बाह्यपथोदयस्य दक्षिणायनसम्बन्धित्वेनाग्रहणान्नवैवोदयाः शेषं भक्त्वा यो २$\frac{४१}{४२७}$ इदं दशमे अन्तरे देयं। एवं कृते समुद्रचारक्षेत्रं समाप्तं। अथ द्वीपचारक्षेत्रे उदयाः ४ शेषं $\frac{१४६५६}{१५५५१}$ पूर्ववत् क्षेत्रीकृत्य $\frac{१४६५६}{४२७}$ अस्मात् यो ३३ शेषे $\frac{१७३}{४२७}$ एतत्समच्छेदीकृत्य युक्तं $\frac{१४२६४}{४२७}$ गृहीत्वा दशमे अन्तरे देयं। इत्थं दशममन्तरं परिपूर्णं भवति। अवशिष्टं $\frac{३९२}{४२७}$ उपर्यधश्च सप्तभिरपवर्त्य $\frac{५६}{६१}$ इदमभ्यन्तरपथव्यासे देयं अस्मिन्नेक उदयः एवं द्वीपे चन्द्रस्य उत्तरायणे पंचोदयाः। अत्र सूर्यचन्द्रम रुत्तरायणे उदयविभागः सूत्रकारैरनुक्तोऽपि दक्षिणायनोदयमार्गेणाऽ भिरभ्यूह्य कथितः॥ ३९६॥

इदानीं दक्षिणोत्तरोर्ध्वाधरेषु सूर्यातापस्य क्षेत्रविभागमाह;—

मन्दरगिरिमज्झादो जावय लवणुवहिछट्ठभागो दु।
हेट्ठा अट्ठरससया उवरिं सयजोयणा ताओ॥ ३९७॥

मंदरगिरिमध्यात् यावत् लवणोदधिषष्ठभागस्तु ।
अधस्तनो अष्टादशशतानि उपरि शतयोजनानि तापः ॥ ३९७॥

मन्दर । अभ्यन्तरवीथौ स्थितस्य सूर्यस्य जम्बूद्वीपार्द्धं ५०००० द्वीपचारक्षेत्र १८० मपनीतं चेदिदं ४९८२० मन्दरमध्यादारभ्यअभ्यन्तरवीथीपर्यन्तं उत्तरतापं विदुः । लवणोदधिं २००००० षड्भिर्भक्त्वा ३३३३३ शेष $\frac{1}{3}$ अत्र द्वीपचारक्षेत्रे १८० मेलने ३३५१३ शे $\frac{1}{3}$ अभ्यन्तरवीथ्याः आरभ्य लवणसमुद्रषष्ठभागपर्यन्तं दक्षिणतापं विदुः । सूर्यबिम्बादधस्तादष्टादशशतानि १८०० योजनानि अधस्तापं विदुः । तद्बिम्बस्योपरि शतयोजनानि ऊर्ध्वतापं विदुः ॥ ३९७ ॥

अथेदानीं चन्द्रादित्यग्रहाणां नक्षत्रभुक्तिं प्रतिपादयितुकामस्तावदेकैकनक्षत्रसम्बधिसीमागगनखंडमाह;—

अभिजिस्स गगणखंडा छस्सयतीसं च अवरमज्झवरे ।
छप्पण्णरसे छक्के इगिदुतिगुणपणयुतसहस्सा ॥ ३९८॥

अभिजितः गगनखंडानि षट्शतत्रिंशत् च अवरमध्यवराणि ।
षट्पंचदशे षट्के एकद्वित्रिगुणपंचयुतसहस्राणि ॥ ३९८ ॥

अभिजिस्स । अभिजितः गगनखण्डानि षट्शतत्रिंशत् ६३० जघन्यमधमोत्कृष्टनक्षत्रे यथाक्रमं ष ६ ट् पंचदश १५ षट् ६ प्रमाणे यथासंख्यं एकद्वित्रिगुणितपंचयुतसहस्रं गगनखंडानि ज १००५ म २०१० उ ३०१५ ॥ ३९८ ॥

अथ तानि जघन्यमध्यमोत्कृष्टनक्षत्राणि गाथाद्वयेनाह;—

सदभिस भरणी अद्दा सादि असिलेस्स जेट्ठमवर वरा।
रोहिणि विसा पुणव्वसु तिउत्तरा मज्झिमा सेसा ३९९

शतभिषा भरणी आर्द्रा स्वातिः आश्लेषा ज्येष्ठा अवराणि वराणि ।
रोहिणी विशाखा पुनर्वसुः त्र्युत्तराः मध्यमा शेषाः ॥ ३९९ ॥

सदभिस । शतभिषक् शतविशाखेत्यर्थः भरणी आद्रा स्वातिः अश्लेषा ज्येष्ठा इत्यवरनक्षत्राणि ६ वराणि ३ रोहिणी विशाखा पुनर्वसु त्रिउत्तरा उत्तराफाल्गुनी उत्तराषाढा उत्तरभाद्रपदेत्यर्थः शेषाः तारा मध्यमाः ॥३९९॥

अथ ताः शेषाः का इत्याह;—

अस्सिणिकित्तियमियसिर पुस्समहाहत्थ चित्त अणुराहा
पुव्वतिय मूल सवणासधणिट्ठा रेवदी य मज्झिमया ४००

अश्विनी कृतिका मृगशीर्षा पुष्यः मघा हस्तः चित्रा अनुराधा ।
पूर्वात्रिका मूलं श्रवणं सधनिष्ठा रेवती च मध्यमाः ॥ ४०० ॥

अस्सिणि । अश्विनी कृत्तिका मृगशीर्षा पुष्यः मघा हस्तः चित्रा अनुराधा पूर्वत्रिका पूर्वाफाल्गुनी पूर्वाषाढा पूर्वाभाद्रपदेत्यर्थः । मूलं श्रवणं धनिष्ठा रेवतीति मध्यमास्ताराः ॥ ४०० ॥

अथोक्तानि गगनखण्डानि पिण्डीकृत्य चन्द्रादित्यनक्षत्राणां परिधिभ्रमणकालमाह;—

दोचंदाणं मिलिदे अट्ठसयं णवसहस्समिगिलक्खं ।
सगसगमुहुत्तगादिणभखंडहिदे परिधिगमुहुत्ता ॥ ४०१ ॥

द्विचंद्रयोः मिलिते अष्टशतं नवसहस्रं एकलक्षं ।
स्वस्वकमुहूर्तगतिनभःखंडहिते परिधिमुहूर्ताः ॥ ४०१ ॥

दोचंदाणं । जघन्यमध्यमोत्कृष्टनक्षत्रखण्डानि ज१००५ म २००१ उ ३०१५ तत्तन्नक्षत्रप्रमाणेन ६।१५।६ गुणयित्वा ६०३०।३०१५०।१८०९०

एतानि खण्डानि अभिजित्खण्ड ६३० सहितानि सर्वाणि मेलयित्वा ५४९०० चन्द्रद्वयार्थं द्विगुणीकृत्य मिलितानि समुदितानि अष्टशतं नवसहस्रैकलक्ष १०९८०० प्रमाणानि भवन्ति। एतेषु स्वकीयमुहूर्तगतिप्रमाणनभःखण्डैः हृतेषु सत्सु। कथं हरणामिति चेदुच्यते। एतावतां खण्डानां गतौ १७६८ एकस्मिन्मुहूर्त्ते इयतां खण्डानां गतौ १०९८०० कियन्तो मुहूर्त्ता इति सम्पात्य भक्ते चन्द्रस्य परिधिभ्रमणकालः मु६२ शेषं $\frac{१८४}{१७६८}$ अष्टाभिरपवर्तिते $\frac{२३}{२२१}$ तन्मुहूर्त्तांशाः। एवमादित्यनक्षत्राणामांनेतव्यं प्र १८३० फ १ इ १०९८०० लब्धं मु ६० अयमादित्यस्य परिधिभ्रमणकालः। प्र १८३५ फ=मु १ इ १०९८०० लब्धं मु ५९ शे $\frac{१५३५}{१८३५}$ पंचभिरपवर्तिते $\frac{३०७}{३३७}$ मुहूर्तांशाः अयं नक्षत्रस्य परिधिभ्रमणकालः एवं सति परिधिगतमुहूर्ता भवन्ति ॥ ४०१ ॥

अथ ताः स्वकीयस्वकीयमुहूर्त्तगतयः का इत्यत्राह;—

अट्ठट्ठी सत्तरसयमिंदू छावट्ठि पंचअहियकमं।
गच्छन्ति सूररिक्खा णभखंडाणिगिमुहुत्तेण ॥४०२॥

अष्टषष्ठिः सप्तदशशतं इंदुः षट्षष्ठिः पंचाधिकक्रमाणि।
गच्छंति सूर्यऋक्षाणि नभःखंडानि एकमुहूर्तेन ॥ ४०२ ॥

अट्ठट्ठी। अष्टषष्टिः सप्तदशशतगगनखण्डानि इन्दुः १७६८ तान्येव द्विषष्ट्या ६२ धिकान्यादित्यः १८३० तान्येव पुनः पंचाधिकक्रमाणि नभःखण्डानि नक्षत्राणि गच्छन्ति १८३५ एकमुहूर्त्तेन ॥ ४०२ ॥

अथ चन्द्रादितारान्तानां गमनविशेषस्वरूपमाह;—

चंद्रो मंदो गमणे सूरो सिग्घो तदो गहा तत्तो।
तत्तो रिक्खा सिग्घा सिग्घयरा तारया तत्तो ॥ ४०३ ॥

चंद्रो मंदो गमने सूरः शीघ्रः ततो ग्रहाः ततः ।
ततः ऋक्षाणि शीघ्राणि शीघ्रतराः तारकाः ततः ॥ ४०३ ॥

चंदो मंदो । चन्द्रो मन्दो गमने ततः सूर्यः शीघ्रः ततो ग्रहाः शीघ्राः ततो नक्षत्राणि शीघ्राणि ततः शीघ्रतरास्तारकाः ॥४०३ ॥

अथ साम्प्रतं चन्द्रादित्ययोर्नक्षत्रभुक्तिमाह;—

इंदुरवीदो रिक्खा सत्तट्ठी पंच गगणखंडहिया ।
अहियाहिदरिक्खखंडा रिक्खे इंदुरविअत्थणमुहुत्ता४०४

इंदुरवितः ऋक्षाणि सप्तषष्ठिः पंच गगनखंडाधिकानि ।
अधिकहितऋक्षखंडानि ऋक्षे इंदुरविअस्तमनमुहूर्ताः ॥ ४०४ ॥

इंदुरवी । इन्दुरविगगनखण्डेभ्यः यथाक्रमं १७६८ रवि १८३० ऋक्षाणि सप्तषष्टिगगनखण्डैः ६७ पंचगगनखंडैर्वाधिकानि १८३५ एकस्यां वेलायां गमनं प्रारभ्य चन्द्रो नक्षत्राणि च एकस्मिन्मुहूर्ते स्वस्वगगनखण्डसमाप्तिकरणे चन्द्रो नक्षत्रात्सप्तषष्टिखण्डानि पृष्ठभागे अपसरति एतदपसरणं धृत्वा एतावद-धिकखण्डा ६७ पसरणे यद्येको मुहूर्त्तस्तदा एतावत् अभिजित्खण्डा ६३० पसरणे कियन्तो मुहूर्त्ताः स्युरिति संपातविधिना अधिकेन ६७ अभिजिदा-दिजघन्यमध्यमोत्कृष्टनक्षत्रखण्डेषु अभिजितः ६३० जघ १००५ म २०१० उ ३०१५ हृतेषु तत्तन्नक्षत्रे इन्दुरव्योः आसन्नमुहूर्त्ताः स्युः अभिजितो मु ९ भा $\frac{२७}{६७}$ ज १५ म ३० उ ४५ जघन्यनक्षत्रे त्रिंशन्मुहूर्त्तानामे-कस्मिन् दिने इयतां १५ मुहूर्त्तानां किमिति संपात्य पंचदशभिरपवर्तिते लब्धादिन $\frac{१}{२}$ म दिन १ उ=न=मु=४५ एतद्दिनं कृत्वा पंचदशभिरपवर्तिते एवं $\frac{३}{२}$ एवमेवादित्यस्य नक्षत्राणां भुक्तिकालो ज्ञातव्यः । अभिजितः दि=४। मु ६। ज=दि ६ मु=२१ म=दि १३। मु १२। उ=दि २० मु ३ ॥४०४॥

अथ राहोर्गगनखण्डाभिधानद्वारेण तस्य नक्षत्रभुक्तिमाह;—

रविखंडादो बारसभागूणं वज्जदे जदो राहू ।
तह्मा तत्तो रिक्खा बारहिदिगिसट्ठिखंडहिया ॥४०५॥

रविखंडतः द्वादशभागोनं व्रजति यतो राहुः ।
तस्मात्ततः ऋक्षाणि द्वादशाहितैकषष्ठिखंडाधिकानि ॥ ४०५ ॥

रवेर्गगनखण्डेभ्यः १८३० द्वादशभागो $\frac{१}{१२}$ नैतावत्खण्डानि १८२९ शे $\frac{११}{१२}$ एकस्मिन्मुहूर्ते व्रजाति राहुर्यतः तस्मात् ततो राहुगगनखण्डेभ्यः १८२९ शे $\frac{११}{१२}$ ऋक्षखण्डानि १८३५ द्वादशहृतैकषाष्टिखण्डाधिकानि $\frac{६१}{१२}$ ।एताव-दाधिकं कथं ? राहुगगनखण्डानि १८२९ । $\frac{११}{१२}$ नक्षत्रगगनखंडेषु १८३५ अपनीय शेषं ६ तच्छेषेण $\frac{११}{१२}$ समच्छेदीकृत्य $\frac{७२}{१२}$ अत्र तच्छेषे $\frac{११}{१२}$ अप-नीते सति अधिकखण्डस्य प्रमाणं भवाति । $\frac{६१}{१२}$ एतदाधिकं धृत्वा अहियाहिद्-रिक्खखण्डेति न्यायेन राहोरेतावतां खण्डानां $\frac{६१}{१२}$ अपसरणे एकस्मिन्मुहूर्ते १ एतावतामाभिजित्खण्डानां ६३० किमिति सम्पात्य $\frac{६३०}{७३२}$ हारस्य हारं १२ राशेर्गुणकारं कृत्वा $\frac{७८६०}{६१}$ तानेव मुहूर्तान् त्रिंशता भागेन दिनानि कृत्वा $\frac{६३०}{६१}$ । $\frac{१२}{३०}$ पश्चाद् द्वादशत्रिंशता समं षड्भिरपवर्त्या $\frac{६३०}{६१}$ । $\frac{२}{५}$ त्रैव पुनः त्रिंशदुत्तरषट्छतानि पंचभिः समं पंचभिरपवर्त्य $\frac{२५२}{६१}$ इदं स्वगुणकारेण २ गुणयित्वा $\frac{२५२}{६१}$ भक्ते लब्धदिनानि ४ भागे $\frac{८}{६१}$ इदं राहोरभिजिति-भुक्तिः । एवमेव जघन्यमध्यमोत्कृष्टनक्षत्रेषु राहोर्भुक्तिरानेतव्या । ज दि ६ भागे $\frac{३६}{६१}$ म दि १३ भा $\frac{११}{६१}$ उ दि १९ । भाग $\frac{४७}{६१}$ ॥ ४०५ ॥

अथ प्रकान्तरेण राहोर्नक्षत्रमाह;—

णक्खत्तसूरजोगजमुहुत्तरासिं दुवेहि संगुणिय ।
एकट्ठिहिदे दिवसा हवंति णक्खत्तराहुजोगस्स ॥४०६॥

नक्षत्रसूरयोगजमुहूर्तराशिं द्वाभ्यां संगुण्य ।
एकषष्ठिहिते दिवसा भवंति नक्षत्रराहुयोगस्य ॥ ४०६ ॥

णक्खत्त । अभिजिदादिनक्षत्रसूर्ययोगजनितराशिं दि ४ मु ६ त्रिंशद्गुणनेन मुहूर्त्तं कृत्वा १२६ तं राशिं द्वाभ्यां संगुण्य २५२ । एकषष्ट्या हृते सति दि ४ भा $\frac{८}{६१}$ दिवसा भवन्ति नक्षत्रराहुयोगस्य । एवमितरनक्षत्राणां कर्त्तव्यम् ॥ ४०६ ॥

अथैकस्मिन्नयने नक्षत्रभुक्तिसहितरहितदिनानि निगदति;—

अभिजादि तिसीदिसयं उत्तरअयणस्स होंति दिवसाणि
अधिकदिणाणं तिण्णि य गद दिवसा होंति इगि अयणे॥

अभिजिदादि त्र्यशीतिशतं उत्तरायणस्य भवंति दिवसानि ।
अधिकदिनानां त्रीणि च गतदिवसानि भवंति एकस्मिन् अयने ४०७

अभिजिदादि । अभिजिदादीनां पुष्यान्तानां जघन्यमध्यमोत्कृष्टनक्षत्राणां त्र्यशीत्युत्तरशत १८३ मुत्तरायणस्य भवन्ति दिवसानि एभ्योऽतिरिक्तान्यधिकादिनानि ननु । त्रीणि च गतदिवसानि भवन्ति एकस्मिन्नयने ॥ ४०७ ॥

अथाधिकदिनानामुत्पत्तिमाह;—

एक्कपहलंघणं पडि जदि दिवसिगिसट्ठिभागमुवलद्धं ।
किं तेसीदिसदस्सिदि गुणिदे ते होंति अहियदिणा४०८

एकपथलंघनं प्रति यदि दिवसैकषाष्ठिभागं उपलब्धं ।
किं त्र्यशीतिशतस्येति गुणिते ते भवंति अधिकादिनानि ॥ ४०८ ॥

एक्कपह । एकपथलंघनं प्रति यदि दिवसैकषष्ठि $\frac{१}{६१}$ भाग उपलभ्यते तदा त्र्यशीतिशत १८३ दिवसानां किमिति सम्पात्यैकषष्ट्या तिर्यगपवर्त्त्य

गुणिते अधिकदिनानि ३ भवन्ति । एकस्मिन्नयने कथं त्र्यशीतिशतदिनानीति चेत्, आदित्यस्य नक्षत्रात् पंचखण्डापसरणे एकस्मिन्मुहूर्ते सति अभिजित्खण्डा ६३० पसरणे कियन्तो मुहूर्त्ता इत्यागतान्मुहूर्तान् $\frac{६३०}{५}$ पुनस्त्रैराशिकेन दिनानि $\frac{६३०}{१५०}$ अथ उपरि त्रिंशतापवर्त्य लब्धमिदं $\frac{२१}{५}$ अभिजिति संस्थाप्यं । एवं जघन्यमध्यमोत्कृष्टनक्षत्राणां श्रवणादिपुनर्वस्वंतानां त्रैराशिकविधिना मुहूर्त्तान् दिनानि च कृत्वा यथासंख्यं पंचदशाभिः १५ त्रिंशता ३० पंचदशभि १५ श्चापवर्त्य लब्धं तत्र तत्र नक्षत्रे स्थापयेत् ॥ ४०८ ॥

अथ पुष्ये तु विशेषप्रतिपादनार्थमाह;—

सतिपंचमचउदिवसे पुस्से गमियुत्तरायणसमत्ती ।
सेसेदक्खिणआदीसावणपाडिवदि रविस्स पढमपहे ४०९

सत्रिपंचमचतुर्दिवसान् पुष्ये गत्वा उत्तरायणसमाप्तिः ।
शेषान् दक्षिणादिः श्रावणप्रतिपदि रवेः प्रथमपथे ॥ ४०९ ॥

सतिपंचम । सत्रिपंचम $\frac{३}{५}$ चतुर्दिवसा ४ न् पुष्ये गत्वा उत्तरायणसमाप्तिरिति कृत्वा प्राग्वत्पुष्यनक्षत्रे दिनान्यानीय $\frac{६७}{५}$ तेभ्यः समच्छेदीकृतसत्रिपंचमचतुर्दिवसान् $\frac{२३}{५}$ अपनीय उत्तरायणसमाप्तौ दत्वा शेषेभ्यः $\frac{४४}{५}$ कोष्ठपूर्णार्थं तावदेवा $\frac{२३}{५}$ पनीय दक्षिणायनप्रथमकोष्ठे दत्ते सति इदमेव श्रावणमासे प्रतिपदि रवेः प्रथमपथे दक्षिणायनस्यादिः अवशिष्टशेषान् $\frac{२१}{५}$ द्वितीयकोष्ठे दद्यात् । एवमश्लेषाद्युत्तराषाढान्तानामादित्यभुक्तिमानीय तत्र तत्र नक्षत्रे संस्थापयेत् । एवमभिजितश्चन्द्रस्य भुक्तिमानीय $\frac{२१}{६७}$ तस्यैव जघन्यमध्यमोत्कृष्टनक्षत्राणां श्रवणादिपुनर्वस्वन्तानां भुक्तिं सप्तषष्टिं सर्वत्र सप्तषष्ट्यापवर्त्य त्रिंशद्वारं जघन्योत्कृष्टानां पंचदशभिरपवर्त्य मध्यमानां तु त्रिंशतैवापवर्त्य लब्धं तत्र तत्र नक्षत्रे स्थापयेत् । पुष्यस्य तु आदित्यस्यैतावद्भुक्तौ $\frac{६७}{५}$ चन्द्रस्य यद्येकं दिनं तदा पुष्ये आदित्यस्यैतावद्भुक्तौ $\frac{२३}{५}$ चन्द्रस्य कियद्भुक्तिरिति सम्पात्यापवर्त्य आगतां भुक्तिं $\frac{२३}{६७}$ पुष्ये

स्थापयेत् । एवं दाक्षिणायने कर्त्तव्यम् । एवं राहोरभिजिदादिपुनर्वस्वन्तानां भुक्तिमानीय तत्र तत्र नक्षत्रे स्थापयेत् । पुष्ये तु राहुभुक्तिं आदित्यस्यैतावद्भुक्तौ $\frac{६७}{५}$ राहोर्यदेतावान्ति दिनानि $\frac{८०४}{६१}$ तदा पुष्ये आदित्यस्यैतावद्भुक्तौ $\frac{२३}{५}$ राहोः कियद्भुक्तिरिति सम्पात्यापवर्त्यानीय $\frac{२७६}{६१}$ उत्तरायणसमाप्तौ पुष्ये स्थापयेत् । प्राग्वद्दक्षिणायने कर्त्तव्यम् । एवमानीतेषु चन्द्रस्य नक्षत्रभुक्तिदिनेषु सर्वेषु समच्छेदीकृत्य मिलितेषु अयनदिनानि १३ भा $\frac{४४}{६७}$ भवन्ति उभयायनमेलने वर्षदिनानि २७ भा $\frac{२१}{६७}$ भवन्ति । एवमादित्यस्यायनदिनानि १८३ वर्षदिनानि च ३६६ आनेतव्यानि । एवं राहोश्चायनदिनानि १८० वर्ष ४ दिनानि च ३६० आनेतव्यानि ॥ ४०९ ॥

अथाधिकमासप्रकारप्रतिपादनार्थमाह;—

इगिमासे दिणवड्ढी वस्से बारह दुवस्सगे सदले ।
अहिओ मासो पंचयवासप्पजुगे दुमासहिया ॥ ४१० ॥

एकस्मिन् मासे दिनवृद्धिः वर्षे द्वादश द्विवर्षके सदले ।
अधिको मासः पंचवर्षात्मकयुगे द्विमासौ अधिकौ ॥ ४१० ॥

इगिमासे । एकस्मिन्मासे दिनैकवृद्धिः एकस्मिन्वर्षे द्वादशदिनवृद्धिः दलसहिते द्विवर्षे एकमासोऽधिकः पंचवर्षात्मके युगे द्वौ मासौ अधिकौ एक १ वर्षस्य द्वादश १२ दिनवृद्धौ सत्यां सदलद्विवर्षस्य $\frac{५}{२}$ कियन्ति दिनानि वर्द्धन्ते इति सम्पात्यापवर्त्तिते लब्धदिनानि ३० । एवं युगेऽपि द्रष्टव्यम् ।

प्राक्तनगाथार्थमेव गाथाष्टकेन विवृणोति;—

आसाढपुण्णमीए जुगणिप्पत्ती दु सावणे किह्ले ।
अभिजिह्मि चंदजोगे पाडिवदिवसह्मि पारंभो ॥४११॥

आषाढपूर्णिमायां युगनिष्पत्तिः तु श्रावणे कृष्णे ।
अभिजिति चंद्रयोगे प्रतिपद्दिवसे प्रारंभः ॥ ४११ ॥

आसाढपुण्ण । आषाढमासि पूर्णिमापराह्णे उत्तरायणसमाप्तौ पंचवर्षात्मकयुगनिष्पत्तिः तु पुनः श्रावणमासकृष्णपक्षे अभिजिति चन्द्रयोगे प्रतिपद्दिवसे दक्षिणायनप्रारम्भः स्यात् ॥ ४११ ॥

अथ कस्यां वीथौ कस्यायनस्य प्रारम्भ इति चेत्;—

पढमंतिमवीहीदो दक्खिणउत्तरदिगयणपारंभो ।
आउट्टी एगादी दुगुत्तरा दक्खिणाउट्टी ॥ ४१२ ॥

प्रथमांतिमवीथीतः दक्षिणोत्तरदिगयनप्रारंभः ।
आवृत्तिः एकादि द्विकोत्तरा दक्षिणावृत्तिः ॥ ४१२ ॥

पढमंतिम । प्रथमान्तिमवीथीतो यथासंख्यं दक्षिणोत्तरा दिक् अयनप्रारम्भः स एव दक्षिणायनस्योत्तरायनस्य च प्रथमा आवृत्तिः स्यात् । तत्र एकाद्युत्तरा दक्षिणावृत्तिः स्यात् ॥ ४१२ ॥

उत्तरायणावृत्तिः कथमिति चेत्;—

उत्तरगा य दुआदी दुचया उभयत्थ पंचयं गच्छो ।
विदिआउट्टी दु हवे तेरसि किह्णेसु मियसीसे ॥४१३ ॥

उत्तरगा च द्व्यादिः द्विचया उभयत्र पंचकं गच्छः ।
द्वितीयावृत्तिः तु भवेत् त्रयोदश्यां कृष्णेषु मृगशीर्षायाम् ॥४१३॥

उत्तरगा । उत्तरगावृत्तिः द्व्यादिः द्विचया स्यात् उभयत्र पंचकं गच्छः द्वितीयावृत्तिस्तु भवेत् । कृष्णपक्षे त्रयोदश्यां मृगशीर्षायां ॥ ४१३ ॥

तृतीयाद्यावृत्तिः कदेति चेत्;—

सुक्कदसमीविसाहे तादिया सत्तमिगकिह्णरेवदिए ।
तुरिया दु पंचमी पुण सुक्कचउत्थीए पुव्वफग्गुणिये ४१४

शुक्लदशमीविशाखे तृतीया सप्तमीकृष्णरेवत्याम् ।
तुरीया तु पंचमी पुनः शुक्लचतुर्थ्यां पूर्वफाल्गुन्याम् ॥ ४१४ ।

सुक्कदसमी । शुक्लपक्षे दशम्यां विशाखायां तृतीयाद्यावृत्तिः स्यात् । कृष्णपक्षे सप्तम्यां रेवत्यां तुर्यावृत्तिस्तु स्यात् । शुक्लपक्षे चतुर्थ्यां तिथौ पूर्वाफाल्गुन्यां नक्षत्रे पुनः पंचमी आवृत्तिः स्यात् ॥ ४१४ ॥

एतावता किं स्यादिति चेत्;—

दक्खिणअयणे पंचसु सावणमासेसु पंचवस्सेसु ।
एदाओ भणिदाओ पंचणियट्टीउ सूरस्स ॥ ४१५ ॥

दक्षिणायने पंचसु श्रावणमासेषु पंचवर्षेषु ।
एताः भणिताः पंचनिवृत्तयः सूर्यस्य ॥ ४१५ ॥

दक्खिणअयणे । दक्षिणायने पंचसु श्रावणमासेषु पंचवर्षेषु एताः पंचनिवृत्तयः सूर्यस्य भणिताः ॥ ४१५ ॥

उत्तरावृत्तिः कथमिति चेत्;—

माघे सत्तमि किह्णे हत्थे विणिवित्तिमेदि दक्खिणदो ।
बिदिया सदभिससुक्के चोत्थीए होदि तदिया दु ॥४१६ ॥

माघे सप्तम्यां कृष्णे हस्ते विनिवृत्तिं एति दक्षिणतः ।
द्वितीया शतभिषि शुक्ले चतुर्थ्यां भवति तृतीया तु ॥ ४१६ ॥

माघे सत्तमि । माघमासे सप्तम्यां तिथौ कृष्णपक्षे हस्तनक्षत्रे विनिवृत्तिमेति दक्षिणायनतः द्वितीयावृत्तिः शतभिषग्नक्षत्रे शुक्लपक्षे चतुर्थ्यां तिथौ भवति तृतीया त्वावृत्तिः ॥ ४१६ ॥

कथमिति चेत्;—

पडवदि किह्ले पुस्से चोत्थी मूले य किह्लतेरसिए।
कित्तियरिक्खे सुक्के दसमीए पंचमी होदि ॥ ४१७ ॥

प्रतिपदि कृष्णे पुष्ये चतुर्थी मूले च कृष्णत्रयोदश्याम्।
कृतिकाऋक्षे शुक्ले दशम्यां पंचमी भवति ॥ ४१७ ॥

पडवदि। कृष्णपक्षे प्रतिपदि तिथौ पुष्यनक्षत्रे स्यात्, चतुर्थ्यावृत्तिः कृष्णत्रयोदश्यां मूलनक्षत्रे स्यात्, शुक्लपक्षे दशम्यां कृत्तिकानक्षत्रे पंचमी आवृत्तिर्भवति ॥ ४१७ ॥

उक्तार्थं सङ्कलयति;—

ताओ उत्तरअयणे पंचसु वासेसु माघमासेसु।
आउट्टीओ भणिदा सूरस्सिह पुव्वसूरीहिं ॥ ४१८ ॥

ताः उत्तरायणे पंचसु वर्षेषु माघमासेषु।
आवृत्तयः भणिताः सूर्यस्येह पूर्वसूरिभिः ॥ ४१८ ॥

ताओ उत्तर। ता एता आवृत्तयः उत्तरायणे पंचसु वर्षेषु माघमासेषु पूर्वसूरिभिरिह सूर्यस्य भणिताः । उक्तगाथानां रचनोद्धारविधानमुच्यते। पंचवर्षात्मकयुगप्रारम्भस्य दक्षिणायनस्य पंचसु श्रावणमासेषु उक्ताः एकत्रिंशत्तिथीस्तत्र तत्र संस्थाप्य प्रथमश्रावणे कृष्ण १५ शु १५ कृ १ द्वि=श्रा=कृष्ण =३ शु १५ कृ १३ तृ=श्रा=शु ६ कृ १५ शु १०। च=श्रा=कृ=९ शु १५ कृ ७। पं=श्रा=शु=१२ कृ=१५ शु=४ उत्तरायनस्य पंचसु माघमासेषु एकत्रिंशत्तिथीः उक्तक्रमेण तत्र तत्र संस्थाप्य प्रथममाघमासे कृ=९ शु १५ कृ ७ द्वि=मा=शु=१२ कृ=१५ शु=४। तृ=मा=कृ १५ शु=१५ कृ १। च=मा=कृ ३ शु=१५ कृ=१३ पं=मा=शु=१२ कृ=१५ शु=४ तृ=मा=

कृ=१५ शु=१५ कृ १ । च=मा=कृ ३ शु=१५ कृ=१३ । पं=मा=शु=६ कृ=१५ शु=१० दक्षिणायने मध्ये भाद्रपदादिमासेषु उत्तरायणे मध्यगत-फाल्गुनादिमासेषु आदावेकहीनक्रमेण १४।१३।१२ अन्ते एकोत्तरक्रमेण २।३।४।५ एकत्रिंशत्तिथिषु स्थापितासु तस्मिन्मासे तत्र तत्रायने चाधिकदि-नान्यागच्छन्ति । एवं क्रमेण पंचवर्षात्मके युगे द्वावधिकमासौ भवतः ॥४१८॥

अथ दक्षिणोत्तरायणप्रारम्भेषु नक्षत्रानयनप्रकारमाह;—

रूऊणाउट्टिगुणं इगिसीदिसदं तु सहिद इगिवीसं ।
तिघणाहिदे अवसेसा अस्सिणिपहुदीणि रिक्खाणि ४१९

रूपोनावृत्तिगुणं एकाशीतिशतं तु सहितं एकविंशत्या ।
त्रिघनहृते अवशेषाणि अश्विनीप्रभृतीनि ऋक्षाणि ॥ ४१९ ॥

रूऊणा । रूप १ न्यूनावृत्त्या गुणितं यद्येकाशीत्युत्तरशतं १८१ एक-स्मिन्नेकहीने शून्यमवशिष्यत इति खेन गुणितः खामिति शून्यमेव भवति। एकविंशत्या सहितं २१ एतस्मिन् त्रिघनेन २७ हृते सति अवशेषं अश्वि-नीप्रभृतितः गुण्यमानं दक्षिणायनप्रारम्भे श्रावणमासे नक्षत्रं भवति । एवं दक्षिणायने इतरचतुर्षु श्रावणेषु उत्तरायणे पंचसु माघेषु तत्र तत्र नक्षत्राण्याने-तव्यानि ॥ ४१९ ॥

अथ दक्षिणोत्तरायणानां पर्वतिथ्यानयनसूत्रमाह;—

वेगाउट्टिगुणं तेसीदिसदं सहिद तिगुणगुणरूवे ।
पण्णरभजिदे पव्वा सेसा तिहिमाणमयणस्स ॥ ४२० ॥

व्येकावृत्तिगुणं त्र्यशीतिशतं सहितं त्रिगुणगुणरूपेण ।
पंचदशभक्ते पर्वाणि शेषं तिथिमानं अयनस्य ॥ ४२० ॥

वेगाउट्टी । विगतैकावृत्त्या गुणितं त्र्यशीतिशतं त्रिगुणगुणकारेण प्रथमे शून्येन द्वितीयादौ त्रिगुणितविगतैकावृत्त्या सहितमित्यर्थः रूपेण च सहितं

यत्तस्मिन् पंचदशभिर्भक्ते सति लब्धं पर्वाणि। अत्र भागाभावात्पर्वाभावः अवशेषं १=तिथिप्रमाणं दक्षिणोत्तरायणस्य ॥ ४२० ॥

अथ समानदिनरात्रिलक्षणे विषुपे पर्वातिथिनक्षत्राणि गाथाषट्केन दशस्वयनेष्वाह;—

छम्मासद्धगयाणं जोइसयाणं समाणदिणरत्ती।
तं इसुपं पढमं छसु पव्वसु तीदेसु तदियरोहिणिए ॥

षण्मासार्धगतानां ज्योतिष्काणां समानदिनरात्री।
तत् विषुवं प्रथमं षट्सु पर्वसु अतीतेषु तृतीयारोहिण्याम् ॥४२१॥

छम्मासद्ध। अयनलक्षणषण्मासार्द्धगतानां ज्योतिष्काणां समानदिनरात्री भवतः। तदेव विषुवमित्युच्यते। तत्र प्रथमं विषुवं षट्सु पर्वस्वतीतेषु तृतीयायां तिथौ रोहिणीनक्षत्रे भवति ॥ ४२१ ॥

बिगुण णव पव्वऽतीदे णवमीए बिदियगं धणिट्ठाए।
इगितीसगदे तदियं सादीये पण्णरसमह्मि ॥ ४२२ ॥

द्विगुणनवपर्वातीतेषु नवम्यां द्वितीयकं धनिष्ठायाम्।
एकत्रिंशद्गते तृतीयं स्वातौ पंचदश्याम् ॥ ४२२ ॥

बिगुण। द्विगुणनव १८ पर्वस्वतीतेषु नवम्यां द्वितीयं विषुपं धनिष्ठायां स्यात्, एकत्रिंशत्पर्वस्वतीतेषु तृतीयं विषुपं स्वातिनक्षत्रे पंचदशतिथौ स्यात्। कृष्णपक्षत्वादर्थादमावास्यायामेवेत्यर्थः ॥ ४२२ ॥

तेदालगदे तुरियं छट्ठिपुणव्वसुगयं तु पंचमयं।
पणवण्णपव्वतीदे बारसिए उत्तराभद्दे ॥ ४२३ ॥

त्रिचत्वारिंशद्गतेषु तुरीयं षष्ठीपुनर्वसुगतं तु पंचमम्।
पंचपंचाशत्पर्वातीतेषु द्वादश्यां उत्तराभाद्रे ॥ ४२३ ॥

पणवण्णमव्व । त्रिचत्वारिंशत्पर्वस्वतीतेषु तुर्यं विषुपं षष्ठ्यां तिथौ पुनर्वसुनक्षत्रगतं स्यात् । पंचमं विषुपं पंचोत्तरपंचाशत्पर्वस्वतीतेषु द्वादश्या-मुत्तराभाद्रपदे नक्षत्रे स्यात् ॥ ४२३ ॥

अडसहिगदे तदिए मित्ते छट्ठं असीदिपव्वगदे ।
णवमिमघाए सत्तममिह तेणउदिगदे दु अट्ठमयं ॥४२४॥

अष्टषष्ठिगतेषु तृतीयायां मैत्रे षष्ठं अशीतिपर्वगतेषु ।
नवमीमघायां सप्तमं इह त्रिनवतिगतेषु तु अष्टमम् ॥ ४२४ ॥

अडसट्ठि । अष्टषष्टिपर्वसु गतेषु तृतीयायां तिथौ मैत्रे अनुराधायां षष्ठं विषुपं स्यात् । अशीतिपर्वसु गतेषु नवम्यां तिथौ मघानक्षत्रे सप्तमं विषुपं स्यात् । इह त्रिनवतिपर्वसु गतेषु अष्टमं विषुपम् ॥ ४२४ ॥

अस्सिणि पुण्णे पव्वे णवमं पुण पंचजुदसए पव्वे ।
तीते छट्ठितिहीए णक्खत्ते उत्तरासाढे ॥ ४२५ ॥

अश्विनी पूर्णे पर्वणि नवमं पुनः पंचयुतशतेषु पर्वेषु ।
अतीतेषु षष्ठीतिथौ नक्षत्रे उत्तराषाढे ॥ ४२५ ॥

अस्सिणि । अश्विनिनक्षत्रे अमावास्यायां पर्वणि स्यात् नवमं विषुपं पुनः पंचयुतशतपर्वस्वतीतेषु षष्ठ्यां तिथौ उत्तराषाढे नक्षत्रे स्यात् ॥४२५॥

चरिमं दसमं विसुपं सत्तरसुत्तरसएसु पव्वेसु ।
तीदेसु बारसीए जाइदि उत्तरगफग्गुणिए ॥ ४२६ ॥

चरमं दशमं विषुवं सप्तदशोत्तरशतेषु पर्वेषु ।
अतीतेषु द्वादश्यां जायते उत्तराफाल्गुन्याम् ॥ ४२६ ॥

चरिमं दशमं । चरमं दशमं विषुपं सप्तदशोत्तरपर्वस्वतीतेषु द्वादश्यां तिथौ उत्तरफाल्गुन्यां नक्षत्रे जायते ॥ ४२६ ॥

अथ विषुपे पर्वतिथ्यानयनसूत्रमाह;—

बिगुणे सगिट्ठइसुपे रूऊणे छग्गुणे हवे पव्वं ।
तप्पव्वदलं तु तिथी पवट्टमाणस्स इसुपस्स ॥ ४२७ ॥

द्विगुणे स्वकेष्टविषुपे रूपोने षड्गुणे भवेत् पर्व ।
तत्पर्वदलं तु तिथिः प्रवर्तमानस्य विषुवस्य ॥ ४२७ ॥

बिगुणे । द्विगुणे स्वकीयेष्टविषुपे रूपोने षड्भिर्गुणिते सति पर्वसंख्या भवेत् । तत्पर्वदलप्रमाणं तु प्रवर्तमानस्य विषुपस्य तिथिः स्यात् । तस्मिन्पर्वदले पंचदशभ्यः अधिके सति तैर्भक्त्वा लब्धं पर्वाणि मेलयेत् । अवशिष्टं तिथिप्रमाणं स्यात् ॥ ४२७ ॥

अथावृत्तिविषुपयोस्तिथिसंख्यामाह;—

वेगपद छग्गुणं इगितिजुदं आउट्टिइसुपतिहिसंखा ।
विसमतिहीए किण्हो समतिथिमाणो हवे सुक्को॥४२८॥

व्येकपदं षड्गुणं एकत्रियुतं आवृत्तिविषुपतिथिसंख्या ।
विषमतिथौ कृष्णः समतिथिमानो भवेत् शुक्लः ॥ ४२८ ॥

वेगपद । एकहीनामावृत्तिपदं षड्भिर्गुणयित्वा उभयत्र संस्थाप्य तत्रैकस्मिन्नेकयुते सति अपरस्मिन् त्रियुते सति यथासंख्यमावृत्तिविषुपयोस्तिथिसंख्या स्यात् । तयोर्मध्ये विषमतिथौ सत्यां कृष्णपक्षः स्यात् । समतिथिप्रमाणे शुक्लपक्षो भवति ॥ ४२८ ॥

विषुपे नक्षत्राणां सर्वतिथीनां चानयनप्रकारमाह;—

आउट्टिलद्धरिक्खं दहजुद छद्दहदसमगेगूणं ।
इषुपे रिक्खा पण्णरगुणपव्वाजुदतिही दिवसा ॥४२९

आवृत्तिलब्धऋक्षं दशयुतं षष्ठाष्टदशमके एकोनं ।
विषुपे ऋक्षाणि पंचदशगुणपर्वयुततिथयः दिवसानि ॥ ४२९ ॥

आउट्टि । आवृत्तौ लब्धनक्षत्रं दशयुतं कृत्वा तत्र षष्ठाष्टमदशमावृत्तौ एकेनोनं चेत् विषुपे नक्षत्रं स्यात् । पंचदशभिर्गुणितानि आवृत्तिविषुपयोः पर्वाणि तत्तत्तिथियुतानि चेत् यथासंख्यमावृत्तिविषुपयोः समस्तदिनानि भवन्ति ॥ ४२९ ॥

विषुपे नक्षत्रानयनं प्रकारान्तरेण गाथाद्वयेनाह;—

आउट्टिरिक्खमस्सिणिपहुदीदो गणिय तत्थ अट्ठजुदे।
इसुपेसु होंति रिक्खा इह गणणा कित्तियादीदो॥४३०

आवृत्तिऋक्षं अश्विनीप्रभृतितः गणयित्वा तत्र अष्टयुते ।
विषुपेषु भवंति ऋक्षाणि इह गणना कृत्तिकादितः ॥ ४३० ॥

आउट्टि । आवृत्तिनक्षत्रमश्विनीप्रभृतितः गणयित्वा तत्र अष्टयुते सति विषुपेषु नक्षत्राणि भवन्ति । इह लब्धे गणनां कृत्तिकादितः कुर्यात् अष्टयुतराशिरधिकश्चेत् ॥ ४३० ॥

अहियंकादडवीसं छंडेज्जो बिदियपंचमट्ठाणे ।
एक्कं णिक्खिव छट्ठे दसमे विय एक्कमवणिज्जो ॥४३१॥

अधिकांकादष्टविंशं त्याज्याः द्वितीयपंचमस्थाने ।
एकं निक्षिप षष्ठे दशमेपि च एकमपनेयम् ॥ ४३१ ॥

अहियं । अधिकांकादष्टविंशतिस्त्याज्या । द्वितीयपंचमावृत्तिस्थाने एकं निक्षिप षष्ठे दशमेऽपि चावृत्तिस्थाने एकमपनेयं ॥ ४३१ ॥

गाथाद्वयेन नक्षत्रसंज्ञामाह;—

कित्तियरोहिणिमियसिर अद्दपुणव्वसुसपुस्सअसिलेस्सा
मह पुव्वुत्तर हत्था चित्ता सादी विसाह अणुराहा ॥

कृत्तिका रोहिणी मृगशीर्षा आर्द्रा पुनर्वसुः सपुष्यः आश्लेषा।
मघा पूर्वा उत्तरा हस्तः चित्रा स्वातिः विशाखा अनुराधा ४३२

कित्तिय। कृत्तिका रोहिणी मृगशीर्षा आर्द्रा पुनर्वसु पुष्यः आश्लेषा मघा पूर्वाः उत्तराः हस्तः चित्रा स्वातिः विशाखा अनुराधा ॥ ४३२ ॥

जेट्ठा मूल पुवुत्तर आसाढा अभिजिसवणसधणिट्ठा।
तो सदभिसपुव्वुत्तरभद्दपदा रेवदस्सिणी भरणी ॥४३३॥

ज्येष्ठा मूलं पूर्वोत्तरौ आषाढौ अभिजित् श्रवणः सधनिष्ठा।
ततः शतभिषा पूर्वोत्तरभाद्रपदा रेवती अश्विनी भरणी ॥ ४३३॥

जेट्ठा मूल। ज्येष्ठा मूलं पूर्वाषाढः उत्तराषाढः अभिजित् श्रवणः धनिष्ठा ततः शतभिषक् पूर्वाभाद्रपदा उत्तराभाद्रपदा रेवती अश्विनी भरणिः४३३

नक्षत्राणामधिदेवता गाथाद्वयेनाह;—

अग्गि पयावदि सोमोरुद्दो दिति देवमंति सप्पो य।
पिदुभगअरियमदिणयरतोट्ठाणिलिंदग्गिमित्तिंदा॥४३४॥

अग्निः प्रजापतिः सोमः रुद्रः अदितिः: देवमंत्री सर्पश्च।
पिताभगः अर्यमा दिनकरः त्वष्टा अनिलेंद्राग्निमित्रेन्द्राः॥ ४३४॥

अग्गि। अग्निः प्रजापतिः सोमो रुद्रोऽदितिः देवमन्त्री सर्पश्च पिता-भगः। अर्यमा दिनकरः त्वष्टा अनिल इंद्राग्निः मित्रः इन्द्रः॥ ४३४॥

तो णेरिदि जल विस्सो बह्मा विण्हू वसू य वरुणअजा ।
अहिवड्ढि पूसण अस्सा जमो वि अहिदेवदा कमसो ४३५

ततः नैर्ऋतिः जलः विश्वः ब्रह्मा विष्णुः वसुश्च वरुणः अजः ।
अभिवृद्धिः पूषा अश्वः यमोऽपि अधिदेवताः क्रमशः ॥ ४३५ ॥

अहिवड्ढि । ततो नैर्ऋतिः जलो विश्वो ब्रह्मा विष्णुः वसुश्च वरुणः अजः अभिवृद्धिः पूषा अश्वः यमोप्येते कृतिकादीनां अधिदेवताः क्रमशः ॥ ४३५ ॥

नक्षत्राणां स्थितिविशेषविधानमाह;—

कित्तियपडंतिसमये अट्ठम मघारिक्खमेदि मज्झण्हं ।
अणुराहारिक्खुदओ एवं सेसे वि भासिज्जो ॥ ४३६ ॥

कृत्तिकापतनसमये अष्टमं मघाऋक्षं एति मध्याह्नम् ।
अनुराधाऋक्षोदयः एवं शेषेषु अपि भाषणीयम् ॥ ४३६ ॥

कित्तिय । कृत्तिकापतनसमयेऽस्तसमये इत्यर्थः । तस्याष्टमं मघाऋक्षं मध्याह्नमेति तस्या मघायाः सकाशात् अष्टमनुराधानक्षत्रमुदयमेति । एवं शेषेषु रोहिण्यादिषु अस्तमितनक्षत्रादष्टमनक्षत्रं मध्याह्नमेति । तस्मादष्टमं नक्षत्रमुदयमेतीति भाषणीयम् ॥ ४३६ ॥

चन्द्रस्य पंचदशमार्गेषु अस्मिन्नस्मिन्मार्गे एतान्येतानि नक्षत्राणि तिष्ठन्तीति गाथात्रयेणाह;—

अभिजिणव सादिपुव्वुत्तरो य चंदस्स पढममग्गह्मि ।
तदीए मघापुणव्वसु सत्तमिए रोहिणी चित्ता ॥४३७॥

अभिजिन्नव स्वातिः पूर्वोत्तरा च चंद्रस्य प्रथममार्गे ।
तृतीये मघापुनर्वसू सप्तमे रोहिणी चित्रा ॥ ४३७ ॥

अभिजिण। अभिजिदादि नव स्वातिः पूर्वा उत्तरचन्द्रस्य प्रथममार्गोपरित प्रदेशे चरान्ति। तृतीये मार्गे मघापुनर्वसू चरतः। सप्तमे मार्गे रोहिणी चित्रा च चरतः॥ ४३७॥

छट्ठट्ठमदसमेयारसमे कित्तिय विसाह अणुराहा
जेट्ठा कमेण सेसा पण्णारसमह्मि अट्ठेव॥ ४३८॥

षष्ठाष्टमदशमैकादशे कृत्तिका विशाखा अनुराधा।
ज्येष्ठा क्रमेण शेषाणि पंचदशे अष्टैव॥ ४३८॥

छट्ठट्ठमदसमे। षष्ठाष्टमदशमैकादशे मार्गे कृत्तिका विशाखा अनुराधा ज्येष्ठा क्रमेण चरन्ति। शेषाण्यष्टैव नक्षत्राणि पंचदशे मार्गे चरन्ति॥४३८॥

शेषनक्षत्राणि कानीति चेत्;—

हत्थं मूलतियं विय मियसिरदुगपुस्सदोण्णि अट्ठेव।
अट्ठपहे णक्खत्ता तिट्ठंति हु बारसादीया॥ ४३९॥

हस्तः मूलत्रयं अपि मृगशीर्षद्विकं पुष्यद्वयं अष्टैव।
अष्टपथे नक्षत्राणि तिष्ठंति हि द्वादशादीनि॥ ४३९॥

हत्थं मूल। हस्तः मूलत्रयं मूलपूर्वाषाढोत्तराषाढामित्यर्थः। मृगशीर्षाद्विकं मृगशीर्षार्द्रेत्यर्थः। पुष्यद्वयं पुष्याश्लेषेत्यर्थः। इत्यष्टैव एतानि नक्षत्राणि प्रथमादिपथेषु द्वादशादीनि अष्टसु पथेषु तिष्ठन्ति॥ ४३९॥

नक्षत्राणां तारासंख्यां गाथाद्वयेनाह;—

कित्तिय पहुदिसु तारा छप्पण तियएक छत्ति छक्क चऊ।
दोद्दो पंचेकेक्कं चउ छत्तियणवचउक्क चऊ॥ ४४०॥

कृत्तिकाप्रभृतिषु ताराः षट् पंच तिस्रः एका षट् त्रिषट्कचतुः।
द्वे द्वे पंच एकैका चतुःषट् त्रिकनवचतुष्काः चतस्रः॥ ४४०॥

कित्तिय। कृत्तिकाप्रभृतिषु ताराः षट् पंच तिस्र एका षट् तिस्रः षट्काः चतस्रः द्वे द्वे पंच एकैका चतस्रः षट् तिस्रः नव चतुष्काश्चतस्रः ॥ ४४० ॥

तिय तिय पंचेकाराहियसय दो द्दो कमेण बत्तीसा।
पंच य तिण्णि य तारा अट्ठावीसाण रिक्खाणं ॥४४१॥

तिस्रः तिस्रः पंचैकादशाधिकशतं द्वे द्वे क्रमेण द्वात्रिंशत्।
पंच च तिस्रः च तारा अष्टाविंशानां ऋक्षाणाम् ॥ ४४१ ॥

तिय तिय। तिस्रस्तिस्रः पंचैकादशाधिकशतं द्वे द्वे द्वात्रिंशत् पंच तिस्रः एत्येतास्ताराः क्रमेणाष्टाविंशतिनक्षत्राणां भवन्ति ॥ ४४१ ॥

तासां ताराणामाकारविशेषं गाथात्रयेणाह;—

वीयणसयलुद्धीए मियसिरदीवे य तोरणे छत्ते।
वल्मियगोमुत्ते विय सरजुगहत्थुप्पले दीवे॥ ४४२ ॥

वीजनशकटोद्धिका मृगशिरदीपे च तोरणे छत्रे।
वल्मीकगोमूत्रे अपि शरयुगहस्तोत्पले दीपे ॥ ४४२ ॥

वीयण। वीजननिभा शकटोद्धिकानिभा मृगशिरोनिभा दीपनिभा तोरणनिभा छत्रनिभा वल्मीकनिभा गोमूत्रनिभा शरयुगनिभे हस्तनिभा उत्पलनिभा दीपनिभा ॥ ४४२ ॥

अधियरणे वरहारे वीणासिंगे य विच्छिए सरिसा।
दुक्कयवावीहरिगजकुंभे मुरवे पतंतपक्खीए॥ ४४३ ॥

अधिकरणे वरहारे वीणाशृंगे च वृश्चिकेन सदृशाः।
दुष्कृतवापीहरिगजकुंभेन मुरजेन पतत्पक्षिणा ॥ ४४३ ॥

अधियरणे। आधिकरणनिभा वरहारनिभा वीणाशृङ्गनिभा वृश्चिकसदृशा दुःकृतवापीनिभा हरिकुम्भनिभा गजकुम्भनिभा मुरजनिभा पतत्पक्षिनिभा ॥ ४४३ ॥

सेणागयपुव्वावरगत्ते णावा हयस्स सिरसरिसा ।
चुल्लीपासाणणिभा कित्तियआदीणि रिक्खाणि॥४४४॥

सेनागजपूर्वावरगात्रे नावा हयस्य शिरसाःसदृशाः ।
चुल्लीपाषाणनिभाः कृत्तिकादीनि ऋक्षाणि ॥ ४४४ ॥

सेणागय। सेनानिभा गजपूर्वगात्रनिभा गजापरगात्रनिभा नावानिभा हयस्य शिरःसदृशा चुल्लीपाषाणनिभास्ताराः कृत्तिकादीनि नक्षत्राणि भवन्ति ॥ ४४४ ॥

कृत्तिकादीनां परिवारतारा आह;—

एक्कारसयसहस्सं सगसगतारापमाणसंगुणिदं ।
परिवारतारसंखा कित्तियणक्खत्तपहुदीणं ॥ ४४५ ॥

एकादशशतसहस्रं स्वकस्वकताराप्रमाणसंगुणितम् ।
परिवारतारासंख्या कृत्तिकानक्षत्रप्रभृतीनाम् ॥ ४४५ ॥

एक्कारसय। एकादशोत्तरशताधिकसहस्रं ११११ स्वकीयस्वकीयताराप्रमाणसंगुणितं चेत् कृत्तिकानक्षत्रप्रभृतीनां परिवारतारासंख्याप्रमाणं स्यात्॥ ४४५ ॥

पंचप्रकाराणां ज्योतिष्कदेवानामायुःप्रमाणमाह;—

इंदिणसुक्कगुरिदरे लक्खसहस्सा सयं च सहपल्लं ।
पल्लं दलं तु तारे वरावरं पादपादद्धं ॥ ४४६ ॥

इंद्विनशुक्रगुर्वितरेषु लक्षं सहस्रं शतं च सहपल्यं ।
पल्यं दलं तु तारासु वरमवरं पादपादार्धम् ॥ ४४६ ॥

इंदिण । इन्दौ इने शुक्रे गुरौ इतरस्मिन्बुधमंगलशन्यादौ यथासंख्यं लक्षवर्षसहितपल्यं सहस्रवर्षसहितपल्यं शतवर्षसहितपल्यं एकपल्यं अर्द्धपल्यं तारकाणां नक्षत्राणां च वरावरमायुः पादपादार्धं पल्यचतुर्भागः पल्याष्टमभाग इत्यर्थः ॥ ४४६ ॥

चन्द्रादित्ययोर्देवीर्गाथाद्वयेनाह;—

चंदाभा य सुसीमा पहंकरा अच्चिमालिणी चंदे ।
सूरे दुदि सूरपहा पहंकरा अच्चिमालिणी देवी ॥४४७॥

चंद्राभा च सुसीमा प्रभंकरा अर्चिमालिनी चंद्रे ।
सूर्ये द्युतिः सूर्यप्रभा प्रभंकरा अर्चिमालिनी देव्यः ॥ ४४७ ॥

चंदाभा । चन्द्राभा च सुसीमा प्रभंकरा अर्चिमालिनीति चतस्रश्चन्द्रपट्ट-देव्यः । सूर्ये पुनः द्युतिः सूर्यप्रभा प्रभंकरा अर्चिमालिनीति पट्टदेव्यः ४४७

जेट्ठा ताओ पुह पुह परिवारचदुस्सहस्सदेवीणं ।
परिवारदेविसरिसं पत्तेयमिमा विउव्वंति ॥ ४४८ ॥

जेष्ठाः ताः पृथक् पृथक् परिवारचतुःसहस्रदेवीनाम् ।
परिवारदेवीसदृशं प्रत्येकमिमाः विकुर्वंति ॥ ४४८ ॥

जेट्ठा ताओ । पृथक् पृथक् परिवारचतुःसहस्रदेवीनां ता देव्यो ज्येष्ठा इमाः । परिवारदेवीसदृशसंख्यां प्रत्येकं विकुर्वन्ति ॥ ४४८ ॥

ज्योतिष्कदेवीनामायुःप्रमाणमाह;—

जोइसदेवीणाऊ सगसगदेवाणमद्धयं होदि ।
सव्वणिगिट्ठसुराणां बत्तीसा होंति देवीओ ॥ ४४९ ॥

ज्योतिष्कदेवीनामायुः स्वकस्वकदेवानामर्धं भवति।
सर्वनिकृष्टसुराणां द्वात्रिंशत् भवंति देव्यः॥ ४४९॥

जोइस । ज्योतिष्कदेवीनामायुः स्वकीयस्वकीयदेवानामर्द्धं भवति। अत्र सर्वनिकृष्टसुराणां द्वात्रिंशद्देव्यो भवन्ति। मध्ये यथायोग्यं देवीसंख्या अवगन्तव्याः॥ ४४९॥

अथ भवनत्रये उत्पद्यमानजीवानाह;—

उम्मग्गचारि सणिदाणणलादिमुदा अकामणिज्जरिणो।
कुदवा सबलचरित्ता भवणत्तिय जंति ते जीवा॥४५०॥

उन्मार्गचारिणः सनिदानाः अनलादिमृता अकामनिर्जरिणः।
कुतपसः शबलचारित्रा भवनत्रये यांति ते जीवाः॥ ४५०॥

उम्मग्गचारि । उन्मार्गचारिणः सनिदाना अनलादिमृता अकामनिर्जरिणः कुतपसः शबलचारित्रा ये ते जीवा भवनत्रये यान्ति॥ ४५०॥

इतिश्री नेमिचंद्राचार्यविरचिते त्रिलोकसारे ज्योतिर्लोका-
ऽधिकारः॥ ४॥

॥ अथ वैमानिकलोकाधिकारः ॥ ५ ॥

अथानुक्रमेणावतीर्णवैमानिकलोकं व्यावर्णयितुकामस्तावद्विमानसंख्याप्रतिपादनार्थं तेष्ववस्थितानामविनश्वराणां जिनेश्वरगृहाणां प्रमाणपूर्वकं प्रमाणमाह;–

चुलसीदिलक्खसत्ताणउदिसहस्से तहेव तेवीसे।
सव्वे विमानसमणगजिणिंदगेहे णमंसामि ॥ ४५१ ॥

चतुरशीतिलक्षसप्तनवतिसहस्रान् तथैव त्रयोविंशान्।
सर्वान् विमानसमानाजिनेंद्रगेहान् नमस्यामि ॥ ४५१ ॥

चुलसीदि। चतुरशीतिलक्षसप्तनवतिसहस्रान् तथा त्रयोविंशतिसहितान् सर्वान् विमानसमानजिनेन्द्रगेहान्नमस्यामि ॥ ४५१ ॥

अथैतेषां विमानानां कल्पकल्पातीतत्वेन विकल्प्य तावत्कल्पानां नामानि गाथाद्वयेनाह;—

सोहम्मीसाणसणक्कुमारमाहिंदगा हु कप्पा हु।
बह्मब्बह्मुत्तरगो लांतवकापिट्ठगो छट्ठो ॥ ४५२ ॥

सौधर्मैशानसनत्कुमारमाहेंद्रका हि कल्पा हि।
ब्रह्मब्रह्मोत्तरकौ लांतवकापिष्टकौ षष्ठः ॥ ४५२ ॥

सोहम्मी। सौधर्मैशानसनत्कुमारमाहेन्द्रकाश्चत्वारः कल्पाः ब्रह्मब्रह्मोत्तरकौ द्वौ मिलित्वा एकेन्द्रापेक्षया एकः कल्पः लान्तवकापिष्ठावपि तथा षष्ठकल्पः ॥ ४५२ ॥

सुक्कमहासुक्कगदो सदरसहस्सारगो हु तत्तो दु।
आणदपाणदआरणअच्चुदगा होंति कप्पा हु ॥४५३॥

शुक्रमहाशुक्रगतः शतारसहस्रारगो हि ततस्तु।
आनतप्राणतारणाच्युतगा भवंति कल्पा हि ॥ ४९३ ॥

सुक्कमहा। शुक्रमहाशुक्रावपि तथा एकः कल्पः शतारसहस्रारकावपि तथैकः कल्पः। ततस्तु आनतप्राणतारणाच्युता इति चत्वारः कल्पा भवन्ति ॥ ४५३ ॥

इदानीमिन्द्रापेक्षया कल्पसंख्यामाह;—

मज्झिमचउजुगलाणं पुव्वावरजुम्मगेसु सेसेसु।
सव्वत्थ होंति इंदा इदि बारस होंति कप्पा हु ॥ ४५४ ॥

मध्यमचतुर्युगलानां पूर्वापरयुग्मयोः शेषेषु।
सर्वत्र भवंति इंद्रा इति द्वादश भवंति कल्पा हि ॥ ४९४ ॥

मज्झिम। मध्यमचतुर्युगलानां पूर्वयुग्मयोर्ब्रह्मलान्तवयोरेकैकेन्द्रौ। अपरयुग्मयोः महाशुक्रसहस्रारयोरेकैकेन्द्रौ। शेषेष्वष्टसु कल्पेषु सर्वत्रेन्द्रा भवन्ति। इतीन्द्रापेक्षया कल्पा द्वादश भवन्ति ॥ ४५४ ॥

अथ कल्पातीतविमाननामान्याह;—

हिट्ठिममज्झिमउवरिमतित्तिय गेवेज्ज णवअणुद्दिसगा।
पंचाणुत्तरगा विय कप्पादीदा हु अहमिंदा ॥ ४५५ ॥

अधस्तनमध्यमोपरिमत्रित्रिकाणि ग्रैवेयाणि नव अनुदिशानि।
पंचानुत्तरकाणि अपि च कल्पातीता हि अहमिंद्राः ॥ ४९९ ॥

हिट्ठिम। अधस्तनमध्यमोपरिमात्रित्रिकाणि ग्रैवेयकाणि नवानुदिशानि पंचानुत्तराणि च कल्पातीतविमानानि तेषु स्थिताः अहमिन्द्राः भवन्ति ॥ ४५५ ॥

नवानुदिशविमानानां पंचानुत्तरविमानानां च नामानि गाथाद्वयेनाह;—

अच्चीय अच्चिमालिणि वइरे वइरोयणा अणुद्दिसगा।
सोमो य सोमरूवे अंके फलिके य आइच्चे ॥ ४५६ ॥

अर्चिः अर्चिमालिनी वैरो वैरोचनानि अनुदिशकानि ।
सोमश्च सोमरूपः अंकः स्फटिकः च आदित्यं ॥ ४५६ ॥

अच्चीय । आर्चिरार्चिमालिनी वैरा वैरोचनाख्यानि चत्वारि श्रेणीबद्धानि दिग्गतानि । सोमसोमरूपांकस्फटिकाख्यानि चत्वारि विदिग्गतानि प्रकीर्णकानि । आदित्यं मध्येंद्रकं एतानि नवानुदिशाख्यानि ॥ ४५६ ॥

विजयो दु वैजयंतो जयंत अवराजिदो य पुव्वाई।
सव्वट्ठसिद्धिणामा मज्झम्मि अणुत्तरा पंच ॥ ४५७ ॥

विजयस्तु वैजयंतः जयंतः अपराजितश्च पूर्वादयः ।
सर्वार्थसिद्धिनामा मध्ये अनुत्तराः पंच ॥ ४५७ ॥

विजयो दु । विजयो वैजंयतो जयन्त अपराजितश्च पूर्वादिदिग्गतविमानाख्याः मध्ये सर्वार्थसिद्धिनामेन्द्रकं । एते पंच अनुत्तरविमानाः ॥ ४५७ ॥

अथोक्तकल्पकल्पातीतविमानानामवस्थानमाह;—

मेरुतलादु दिवड्ढं दिवड्ढदलछक्कएक्करज्जुह्मि ।
कप्पाणमट्ठजुगला गेवेज्जादी य होंति कमे ॥ ४५८ ॥

मेरुतलात् द्व्यर्धं द्व्यर्धदलषट्कैकरज्जौ ।
कल्पानां अष्टयुगलानि ग्रैवेयादयश्च भवंति क्रमेण ॥ ४५८ ॥

मेरुतला । मेरुतलाद् द्वितीयार्द्धरज्जौ द्वितीयार्द्धरज्जौ दलषट्करज्जौ च

कल्पानामष्टयुगलानि क्रमेण भवंति । एकस्यां रज्जौ नवग्रैवेयकादीनि क्रमेण भवंति ॥ ४५८ ॥

साम्प्रतं सौधर्मादिषु विमानसंख्यां गाथात्रयेण कथयति;—

बत्तीसट्ठावीसं बारस अट्ठेव होंति लक्खाणि ।
सोहम्मादिचउक्के लक्खचउक्कं तु बह्मदुगे ॥ ४५९ ॥

द्वात्रिंशदष्टाविंशतिः द्वादश अष्टैव भवंति लक्षाणि ।
सौधर्मादिचतुष्के लक्षचतुष्कं तु ब्रह्मद्विके ॥ ४५९ ॥

बत्तीसट्ठा । द्वात्रिंशल्लक्षाष्टाविंशतिलक्षद्वादशलक्षाष्टलक्षाण्येव यथासंख्यं सौधर्मादिचतुष्के विमानानि भवन्ति । ब्रह्मब्रह्मोत्तरे मिलित्वा लक्षचतुष्कप्रमितानि विमानानि भवन्ति ॥ ४५९ ॥

तत्तो जुम्माण तिए पण्णासं ताल छस्सहस्साणं ।
सत्तसयाणि य आणदकप्पचउक्केसु पिंडेण ॥ ४६० ॥

ततो युग्मानां त्रये पंचाशत् चत्वारिंशत् षट्सहस्राणां ।
सप्तशतानि च आनतकल्पचतुष्केषु पिंडेन ॥ ४६० ॥

तत्तो जुम्मा । ततो लांतवादियुग्मत्रये यथासंख्यं पंचाशत्सहस्राणि चत्वारिंशत्सहस्राणि षट्सहस्राणि विमानानि आनतादिकल्पचतुष्के पिण्डेन सप्तशतानि भवन्ति ॥ ४६० ॥

एक्कारसत्तसमहियसयमेक्काणउदी णव य पंचेव ।
गेवेज्जाणं तित्तिसु अणुदिस्साणुत्तरे होंति ॥ ४६१ ॥

एकादशसप्तसमधिकशतं एकनवतिः नव च पंचैव ।
ग्रैवेयाणां त्रिस्त्रिषु अनुदिशानुत्तरे भवंति ॥ ४६१ ॥

एक्कारसत्त । एकादशमधिकशतं सप्तसमधिकशतं एकनवतिः नव च पंचैव यथासंख्यं अधस्तनादिग्रैवेयकाणां त्रिस्त्रिषु अनुदिशायामनुत्तरे च विमानानि भवन्ति ॥ ४६१ ॥

इदानीं प्रथमादिस्वर्गेषु प्रतरसंख्याप्रतिपादनार्थमिन्द्रकाणां प्रमाणं निरूपयति;—

इगितीससत्त चत्तारि दोण्णि एक्केक्क छक्क चदुकप्पे ।
तित्तिय एक्केक्किंदियणामा उडुआदितेवट्ठी ॥ ४६२ ॥

एकत्रिंशत्सप्त चत्वारि द्वे एकमेकं षट्कं चतुःकल्पे ।
त्रीणि त्रीणि एकमेकं इंद्रकनामानि ऋत्वादित्रिषष्ठिः ॥ ४६२ ॥

इगितीस । सौधर्मयुग्मे एकत्रिंशादिन्द्रकाणि सनत्कुमारयुग्मे सप्तेन्द्रकाणि ब्रह्मयुग्मे चत्वारीन्द्रकाणि लांतवयुग्मे द्वीन्द्रके शुक्रयुग्मे एकमिन्द्रकं शतारयुग्मे एकमिंद्रकं आनतादिचतुर्षु कल्पेषु षडिन्द्रकाणि । अधस्तनादिषु ग्रैवेयकेषु प्रत्येकं त्रीणि त्रीणीन्द्रकाणि नवानुदिशायामेकमिन्द्रकं पंचानुत्तरे वैकमिन्द्रकं । एतेषां तु विमानादीन्द्रकाणां नामानि च त्रिषष्टिर्भवन्ति ॥ ४६२ ॥

एतेषामिन्द्रकाणामूर्द्धान्तरं तन्नामावतारं चाह;—

एक्केक्कइंदयस्स य विच्चालमसंखजोयणपमाणं ।
एदाणं णामाणं वोच्छामो आणुपुव्वीओ ॥ ४६३ ॥

एकैकमिंद्रकस्य च विचालं असंख्यातयोजनप्रमाणं ।
एतेषां नामानि वक्ष्यामः आनुपूर्व्या ॥ ४६३ ॥

एक्केक्क । एकैकमिन्द्रकस्यान्तरालमसंख्यातयोजनं स्यात् । एतेषामिन्द्रकाणां नामानि चानुपूर्व्या वक्ष्यामः ॥ ४६३ ॥

उक्तेन्द्रकाणां नामानि गाथाष्टकेनाह;—

उडुविमलचंदवग्गू वीररुणं णंदणं च णलिणं च।
कंचण रोहिद चंचं मरुदं रिद्धिसय वेलुरियं॥ ४६४॥

ऋतुविमलचंद्रवल्गुवीरारुणनंदनं च नलिनं च।
कांचनं रोहितं चंचत् मरुत् ऋद्धीशं वैडूर्यं॥ ४६४॥

उडुविमल। ऋतु विमलं चन्द्रं वल्गु वीरं अरुणं नंदनं च नलिनं च कांचनं रोहितं चंचत् मरुत् ऋद्धीशं वैडूर्य्यं॥ ४६४॥

रुचग रुचिरंक फलिहं तवणीयं मेघमब्भ हारिद्दं।
पउमं लोहिद वज्जं णंदावत्तं पहंकरयं॥ ४६५॥

रुचकं रुचिरं अंकं स्फटिकं तपनीयं मेघं अभ्रं हारिद्रं।
पद्मं लोहितं वज्रं नंद्यावर्तं प्रभंकरं॥ ४६५॥

रुचग। रुचकं रुचिरं अंकं स्फटिकं तपनीयं मेघं अभ्रं हारिद्रं पद्मं लोहितं वज्रं नंदावर्तं प्रभंकरं॥ ४६५॥

पिट्ठक गजमित्तपहा अंजण वणमाल णाग गरुडं च।
लंगल बलभद्दं च य चक्कं चरिमं च अडतीसो॥४६६॥

पृष्टकं गजं मित्रं प्रभं अंजनं वनमालं नागं गरुडं च।
लांगलं बलभद्रं च चक्रं चरमं च अष्टात्रिंशत्॥ ४६६॥

पिट्ठक। पृष्टकं गजं मित्रं प्रभं अजनं वनमालं नागं गरुडं च लाङ्गलं बलभद्रं च चरमेन्द्रकं चक्रं इति सौधर्मादिचतुष्के पिण्डेनाष्टात्रिंशदिन्द्रकनामानि॥ ४६६॥

रिट्ठसुरसमिदिबह्मं बह्मुत्तरबह्महिदयलांतवयं।
सुक्कं खलु सुक्कदुगे सदरविमाणं तु सदरदुगे॥ ४६७॥

अरिष्टसुरसमिति ब्रह्म ब्रह्मोत्तरब्रह्महृदयलांतवकं ।
शुक्रं खलु शुक्रद्विके शतारविमानं तु शतारयुगे ॥ ४६७ ॥

रिट्ठसुरस । अरिष्टसुरसामिति ब्रह्मब्रह्मोत्तनामानीन्द्रकाणि ब्रह्मयुगे ब्रह्महृदयं लान्तवकमिति द्वयं लान्तवयुगे शुक्रयुगे खलु शुक्रेन्द्रकं शतारद्विके शतारविमानेन्द्रकम् ॥ ४६७ ॥

आणद पाणदपुप्फय सातक तह आरणच्चुदवसाणे ।
तो गेवेज्ज सुदरिसण अमोह तह सुप्पबुद्धं च ॥४६८॥

आनतप्राणतपुष्पकं शातकं तथा आरणाच्युतावसाने ।
ततः ग्रैवेयके सुदर्शनं अमोघं तथा सुप्रबुद्धं च ॥ ४६८ ॥

आणद । आनतं प्राणतपुष्पकं शातकं तथा आरणाच्युतमितीन्द्रकनामानि आनताद्यच्युतावसाने स्युः । ततो ग्रैवेयकेषु सुदर्शनं अमोघं तथा सुप्रबुद्धं च ॥ ४६८ ॥

जसहर सुभद्दणामा सुविसालं सुमणसं च सोमणसं ।
पीदिंकरमाइच्चं चरिमे सव्वदसिद्धी दु ॥ ४६९ ॥

यशोधरं सुभद्रनाम सुविशालं सुमनसं च सौमनसं ।
प्रीतिंकरं आदित्यं चरमे सर्वार्थसिद्धिस्तु ॥ ४६९ ॥

जसहर । यशोधरं सुभद्रनाम सुविशालं सुमनसं च सौमनसं प्रीतिंकरं नवानुदिशायामादित्येन्द्रकं चरमे सर्वार्थसिद्धीन्द्रकं ॥ ४६९ ॥

मेरुतलादु दिवड्ढमित्यादिगाथोक्तार्थे सर्वत्र विमानानि तिष्ठन्ति किमिति प्रश्ने परिहारमाह;—

णाभिगिरिचूलिगुवरिं वालग्गंतर ट्ठियो हु उडु इंदो ।
सिद्धीदो धो बारह जोयणमाणाह्मि सव्वट्ठं ॥ ४७० ॥

नाभिगिरिचूलिकोपरि बालाग्रांतरे स्थितः हि ऋत्विंद्रकः।
सिद्धितः अधः द्वादशयोजनमाने सर्वार्थः॥ ४७०॥

णाभिगिरि । नाभिगिरिचूलिकोपरि बालाग्रान्तरे स्थितः खलु ऋत्विन्द्रकः सिद्धक्षेत्रादधो द्वादशयोजनप्रमाणेन सर्वार्थसिद्धिस्तिष्ठति॥ ४७०॥

कल्पानामितरेषां च विक्रियादीनां सीमानमाह;—

सगसगचरिमिंदयधयदंडं कप्पावणीणमंतं खु।
कप्पादीदवणिस्स य अंतं लोयंतयं होदि॥ ४७१॥

स्वकस्वकचरमेंद्रकध्वजदंडः कल्पावनीनां अंतः खलु।
कल्पातीतावनेश्च अंतः लोकांतकः भवति॥ ४७१॥

सगसग । स्वकीयस्वकीयचरमेन्द्रकध्वजदंडः कल्पावनीनामन्तः खलु स्यात्। कल्पातीतावनेरन्तो लोकस्यान्तो भवति॥ ४७१॥

अथेन्द्रकानां विस्तारमाह;—

माणुसखित्तपमाणं उडु सव्वट्टं तु जंबुदीवसमं।
उभयविसेसे रूऊणिंदयभजिदे दु हाणिचयं॥४७२॥

मानुषक्षेत्रप्रमाणं ऋतु सर्वार्थं तु जंबुद्वीपसमं।
उभयविशेषे रूपोनेंद्रकभक्ते तु हानिचयम्॥ ४७२॥

माणुसखित्त । मानुषक्षेत्रप्रमाणं ४५००००० ऋत्विन्द्रकं सर्वार्थसिद्धीन्द्रकं तु जम्बुद्वीपसमं १ लक्ष उभयोर्विशेषे शोधिते ४४ लक्षरूपन्यूनेन्द्रकै ६२ भक्ते ७०९६७ शे $\frac{२३}{३१}$ इदमिन्द्रकं प्रति हानिचयं स्यात् अस्य विवरणा पंचोत्तरचत्वारिंशल्लक्षेभ्यः अस्मिन् ७०९६७ शे $\frac{२३}{३१}$ अपनीते ४४२९०३२। $\frac{८}{३१}$ द्वितीयेन्द्रकप्रमाणं स्यात्। एवं यावदेकलक्षमवतिष्ठते तावदपनीते तत्तदुत्तरोत्तरेन्द्रकप्रमाणं स्यात्॥ ४७२॥

इतः श्रेणीबद्धानामवास्थितस्वरूपं निरूपयति;-

बासट्ठी सेढिगया पढमिंदे चउदिसासु पत्तेयं।
पडिदिसमेक्केक्कोणं अणुद्दिसाणुत्तरेक्कोत्ति ॥ ४७३ ॥

द्वाषष्टिः श्रेणिगतानि प्रथमेन्द्रे चतुर्दिशासु प्रत्येकं।
प्रतिदिशमेकैकोनं अनुदिशानुत्तरे एकमिति ॥ ४७३ ॥

बासट्ठी। प्रथमेन्द्रके चतुर्दिक्षु प्रत्येकं श्रेणीबद्धविमानानि द्वाषष्टिर्भवन्ति। इत उपरि द्वितीयपटलादौ प्रतिदिशमेकैकोनं चेत उपर्युपरीष्टश्रेणीबद्धप्रमाणानि। यावदनुदिशायामनुत्तरे चैकमेवावशिष्यते। अत्र दक्षिणोत्तरेन्द्रविभागेन सङ्कलितधनानयनविधानमुच्यते। सौधर्मस्यैकदिक्छ्रेणीबद्धानि ६२ दिक्त्रये त्रिभिर्गुणितानि १८६ अयमादिः उत्तरं ३ गच्छ ३१ अत्र हीनसङ्कलितमाश्रित्य धनमानीयते। पद ३१ मेगेण विहीणं। ३० दुभाजिदं १५ उत्तरेण ३ संगुणिदं ४५ इदं ऋणं पभवजुदं १८६ अस्मिन् प्रभवे ऋणं ४५ अपनयेत् १४१ पद ३१ गुणिदं ४३७१ इदं सौधर्मश्रेणीबद्धप्रमाणं स्यात्। अत्रेन्द्रक ३१ प्रक्षेपे कृते एवं ४४०२। एवमीशाने आदि ६२ उत्तर १ गच्छं ३१ ज्ञात्वा सङ्कलितधनमानेतव्यम् १४५७ ईशाने त्विन्द्रकप्रक्षेपो न कर्त्तव्यः उत्तरेन्द्राणामिन्द्रकाभावात्। सौधर्मस्यैकदिक्श्रेणीबद्धेषु ६२ स्वगच्छे ३१ अपनीते शेषं ३१ सनत्कुमारमाहेन्द्रयोरेकदिक्श्रेणीबद्धप्रमाणं स्यात्। अत्रैव ३१ स्वस्वगच्छे ७ अपनीते शेषमुपरितनैकदिक्श्रेणीबद्धप्रमाणं स्यात् सौ ई ६२ समा ३१। ब्र-ब्र। २४ लां-का २० शुक्र। महा। १८ श। स १७। आ ४। १६ अधोग्रैवेयक १०। म-ग्रै ७। उपग्रै ४। नव १। एतस्मिन्नेव श्रेणीबद्धप्रमाणे दक्षिणेन्द्रापेक्षया त्रिभिर्गुणिते आदिः उत्तरेन्द्रापेक्षया एकेन गुणित आदिः। स आदिः ९३ मा ३१। ब्र-ब्र ९६। लां-का ८०। शु-म ७२। श-स ६८। आ ४=६४। अधोग्रै ४०। म=ग्रै २८। उपग्रै १६। नवानुदिशायां ४ उत्तराः स

३। मा १। उपरि सर्वत्र चतस्रः ४ उत्तराः। गच्छस्तु स्वस्वपटलप्रमाणं स्यात् सनत्कुमारादौ ७।४।२।१।१।६।३।३।३।१ इत्थमाद्युत्तरगच्छं ज्ञात्वा तत्तद्धनं उपर्युपरि दक्षिणोत्तरेन्द्राणामेवमानेतव्यं ॥ ४७३ ॥

अथ तत्र प्रथमेन्द्रकस्य श्रेणीबद्धानामवस्थितोद्देशकमुपदिशति;—

उडुसेढीबद्धदलं सयंभुरमणुदहिपणिधिभागह्मि।
आइल्लतिण्णि दीवे तिण्णि समुद्दे य सेसा हु ॥ ४७४ ॥

ऋतुश्रेणीबद्धदलं स्वयंभुरमणोदधिप्रणिधिभागे।
आदिमत्रिषु द्वीपेषु त्रिषु समुद्रेषु च शेषं हि ॥ ४७४ ॥

उडुसेढी। ऋत्विन्द्रकश्रेणीबद्धार्द्धं ३१ स्वंयभूरमणोदधिप्रणिधिभागे तिष्ठति। शेषार्द्धं तु ३१ स्वयम्भूरमणसमुद्रादर्वाचीनेषु स्वयम्भूरमणादिषु त्रिषु द्वीपेषु त्रिषु समुद्रेषु च १५।८।४।२।१।१ तिष्ठति ॥ ४७४ ॥

अथ प्रकीर्णकानां स्वरूपं प्रमाणं चाह;—

सेढीणं विच्चाले पुप्फपइण्णग इव ट्ठियविमाणा।
होंति पइण्णइणामा सेढींदयहीणरासिसमा ॥४७५॥

श्रेणीनां विचाले पुष्पप्रकीर्णकानि इव स्थितविमानानि।
भवंति प्रकीर्णकनामानि श्रेणींद्रकहीनराशिसमानि ॥ ४७५ ॥

सेढीणं। श्रेणीबद्धानां विच्चाले अन्तराले पुष्पाणि प्रकीर्णकानि इव स्थितानि विमानानि प्रकीर्णकनामानि भवन्ति। तानि श्रेणीन्द्रकहीनराशिसमानानि। तत्कथं? बत्तीसट्ठावीसमित्याद्युक्तसौधर्मादिराशिभ्यः श्रेणीन्द्रकेष्वपनीतेषु यो राशिरवशिष्यते तत्समानानि ॥ ४७५ ॥

अथ दक्षिणोत्तरेन्द्रयोरिन्द्रकश्रेणीबद्धप्रकीर्णकविभागं प्रदर्शयति;—

उत्तरसेढीबद्धा वायव्वीसाणकोणगपइण्णा।
उत्तरइंदणिबद्धा सेसा दक्खिणदिसिंदपडिबद्धा ४७६

उत्तरश्रेणिबद्धा वायव्येशानकोणगप्रकीर्णानि ।
उत्तरेन्द्रनिबद्धानि शेषाणि दक्षिणदिगींद्रप्रतिबद्धानि॥४७६॥

उत्तरसेढी । उत्तरश्रेणीबद्धा वायव्येशानकोणगतप्रकीर्णकानि च उत्तरेन्द्रनिबद्धानि। शेषाणि सर्वविमानानि दक्षिणदिगीन्द्रप्रतिबद्धानि ४७६

इदानीमिन्द्रकादीनां व्यासं निरूपयति;—

इंदयसेढीबद्धप्पइण्णयाणं कमेण वित्थारा ।
संखेज्जमसंखेज्जं उभयं चय जोयणाणं तु ॥ ४७७ ॥

इंद्रकश्रेणीबद्धप्रकीर्णकानां क्रमेण विस्ताराः ।
संख्येयं असंख्येयं उभयं च योजनानां तु ॥ ४७७ ॥

इंदयसे । इन्द्रकश्रेणीबद्धप्रकीर्णकानां क्रमेण विस्ताराः संख्येययोजनानि असंख्येययोजनानि संख्येयासंख्येययोजनानि भवेयुः ॥ ४७७ ॥

अथ सौधर्मादिषु संख्यातासंख्यातविस्ताराविमानसंख्यां गाथाद्वयेनाह;—

कप्पेसु रासिपंचमभागं संखेज्जवित्थडा होंति ।
तत्तो तिण्णट्ठारस सत्तरसेक्केकयं कमसो ॥ ४७८ ॥

कल्पेषु राशिपंचमभागं संख्येयविस्तारा भवंति ।
ततः त्रीण्यष्टादश सप्तदशैकमेकं क्रमशः ॥ ४७८ ॥

कप्पेसु । कल्पेषु बत्तीसट्ठावीसमित्यादि उक्तराशीनां ३२ ल. पंचमभागप्रमाणं ६४०००० संख्यातयोजनविस्तारविमानानि भवंति । ततः कल्पेभ्यः परतो नवग्रैवेयकादिषु त्रीणि अष्टादश सप्तदशैकमेकं च क्रमशः संख्यातयोजनविस्तृतानि भवन्ति ॥ ४७८ ॥

सगसगसंखेज्जूणा सगसगरासी असंखवासगया ।
अहवा पंचमभागं चउगुणिदे होंति कप्पेसु ॥ ४७९ ॥

स्वकस्वकसंख्येयोनाः स्वकस्वकराशयः असंख्यव्यासगताः ।
अथवा पंचमभागं चतुर्गुणिते भवंति कल्पेषु ॥ ४७९ ॥

सगसग । स्वकीयस्वकीयसंख्यातयोजनविमानसंख्यो ६४०००० नाः स्वकीयस्वकीयबत्तीसादिराशयः २५६०००० । असंख्यातयोजनव्यासविमानानि । अथवा राशेः ३२ लक्ष=पंचमभागसंख्या ६४००००श्चतुर्भिर्गुणिताः २५६०००० कल्पेष्वसंख्यातयोजनव्यासविमानसंख्या भवन्ति ॥ ४७९ ॥

अथ तेषां विमानानां बाहुल्यमाह;—

छज्जुगल सेसकप्पे तित्तिसु सेसे विमाणतलबहलं ।
इगिवीसेयारसयं णवणउदिरिणक्कमा हांति ॥ ४८० ॥

षड्युगलेषु शेषकल्पेषु त्रिस्त्रिषु शेषे विमानतलबहलं ।
एकविंशत्येकादशशतं नवनवतिऋणक्रमा भवंति ॥ ४८० ॥

छज्जुगल । सौधर्मादिषु षट्सु युगलेषु आनतादिषु कल्पेषु अधोग्रैवेयकादिषु त्रिस्त्रिष्वनुत्तरयोश्च मिलित्वैकादशसु स्थानेषु विमानतलबाहुल्यं यथासंख्यं आदावेकविंशत्यधिकैकादशशतं ११२१ उपरि सर्वत्र नवनवतिऋणक्रमा भवन्ति ॥ ४८० ॥

अथ तेषां विमानानां वर्णक्रमं व्यावर्णयति;—

दोद्दो चउचउकप्पे पंचयवण्णा हु किण्णवज्जा हु ।
णीलूणा रत्तूणा विमाणवण्णा तदो सुक्का ॥ ४८१ ॥

द्वयोः द्वयोः चतुश्चतुःकल्पेषु पंचकवर्णा हि कृष्णवर्जाः हि ।
नीलोनाः रक्तोनाः विमानवर्णा ततः शुक्लाः ॥ ४८१ ॥

दोद्दो । सौधर्मादिषु द्वयोर्द्वयोः कल्पयोः ब्रह्मादिषु चतुर्षु चतुर्षु कल्पेषु मिलित्वा चतुर्षु स्थानेषु यथासंख्यं पंचवर्णाः खलु कृष्णवर्जचतुर्वर्णाः नीलोनत्रिवर्णाः रक्तोनद्विवर्णाः तत आनतादिषु सर्वेषु शुक्लैकवर्णाविमानानि स्युः ॥ ४८१ ॥

इदानीं विमानाधारस्थानं निरूपयति;—

दुसु दुसु अट्ठसु कप्पे जलवादुभये पइट्ठियविमाणा ।
सेसविमाणा सव्वे आगासपइट्ठया होंति ॥ ४८२ ॥

द्वयोः द्वयोः अष्टसु कल्पेषु जलवातोभये प्रतिष्ठितविमानाः ।
शेषविमानाः सर्वे आकाशप्रतिष्ठिता भवंति ॥ ४८२ ॥

दुसु दुसु । द्वयोर्द्वयोः कल्पयोर्ब्रम्हादिष्वष्टसु कल्पेषु मिलित्वा त्रिस्थानेषु यथासंख्यं जलप्रतिष्ठितविमानाः वातप्रतिष्ठितविमानाः उभयप्रतिष्ठितविमानाः शेषविमानाः सर्वे आकाशप्रतिष्ठिता भवन्ति ॥ ४८२ ॥

अधुनेन्द्रस्थितं विमानं कथयति;—

छज्जुगलसेसकप्पे अट्ठारसमह्मि सेढिबद्धह्मि ।
दोहीणकमं दक्खिणउत्तरभागह्मि देविंदा ॥ ४८३ ॥

षड्युगलशेषकल्पेषु अष्टादशमे श्रेणीबद्धे ।
द्विहीनक्रमं दक्षिणोत्तरभागे देवेंद्राः ॥ ४८३ ॥

छज्जुगल । षट्सु युगलेषु शेषकल्पे च यथासंख्यं प्रथमयुगले स्वचरमेन्द्रकसम्बन्धे अष्टादशमे श्रेणीबद्धे द्वितीयादौ च द्विहीनक्रमेण श्रेणीबद्धे १८।१६।१४।१२।१०।८।६ दक्षिणभागे दक्षिणेन्द्राः उत्तरभागे उत्तरेन्द्रास्तिष्ठन्ति ॥ ४८३ ॥

अथ तेषां विमाननामानि गाथाद्वये कथयति;—

इंदट्ठियं विमाणं सगसगकप्पं तु तस्स चउपासे ।
वेलुरियरजतसोकं मिसक्कसारं तु पुव्वादी ॥ ४८४ ॥

इंद्रस्थितं विमानं स्वकस्वककल्पं तु तस्य चतुःपार्श्वे ।
वैडूर्यरजताशोकं मृषत्कसारं तु पूर्वादिषु ॥ ४८४ ॥

इंदट्ठियं । इन्द्रस्थितं विमानं स्वकीयस्वकीयकल्पाख्यकं तु पुनः तस्य चतुःपार्श्वेः वैडूर्यरजताशोकमृषत्कसाराख्यविमानानि पूर्वादिदिक्षु तिष्ठन्ति । अयं विधिः सर्वेषां दक्षिणेन्द्राणां ॥ ४८४ ॥

रुचकं मंदरसोकं सत्तच्छदणामयं विमाणं तु ।
सव्वुत्तरइंदाणं विमाणपासेसु होंति कमे ॥ ४८५ ॥

रुचकं मंदराशोकं सप्तच्छदनामकं विमानं तु ।
सर्वोत्तरेन्द्राणां विमानपार्श्वेषु भवंति क्रमेण ॥ ४८५ ॥

रुचकं । रुचकमन्दराशोकसप्तच्छदनामानि विमानानि सर्वोत्तरेन्द्राणां स्वस्वविमानचतुःपार्श्वे क्रमेण भवन्ति ॥ ४८५ ॥

अथ सौधर्मादिदेवानां मुकुटचिह्नानि गाथाद्वयेनाह;—

सोहम्मादीबारस साणदआरणगजुगवि कमा ।
देवाण मउलचिह्नं वराहमयमहिसमच्छावि ॥ ४८६ ॥

सौधर्मादिद्वादशसु आनतारणकयुगेपि क्रमात् ।
देवानां मौलिचिन्हं वराहमृगमहिषमत्स्या अपि ॥ ४८६ ॥

सौधम्मादी । सौधर्मादिषु द्वादशकल्पेषु आनतयुगले आरणयुगले च क्रमात् देवानां मौलिचिह्नानि वराहमृगमहिषमत्स्या अपि ॥ ४८६ ॥

कुम्मो दद्दुरतुरया तो कुंजर चंद सप्प खग्गी य ।
छगलो बसहोतत्तो चोद्दसमो होदि कप्पतरू ॥ ४८७ ॥

कूर्मो दर्दुरस्तुरगस्ततः कुंजरः चंद्रः सर्पः खड्गी च ।
छगलो वृषभः ततः चतुर्दशमो भवति कल्पतरुः ॥ ४८७ ॥

कुम्मो । छायामात्रमेवार्थः ॥ ४८७ ॥

साम्प्रतमिन्द्राणां नगरस्थानं विस्तारं च गाथाद्वयेनाह;—

सोहम्मादिचउक्के जुम्मचउक्के य सेसकप्पे य ।
सगदेविजुदिंदाणं णयराणि हवंति णवयपदे ॥ ४८८ ॥

सौधर्मादिचतुष्के युग्मचतुष्के च शेषकल्पे च ।
स्वकदेवीयुतेंद्राणां नगराणि भवंति नवकपदे ॥ ४८८ ॥

सोहम्मादि । सौधर्मादिचतुष्के ब्रह्मादियुग्मचतुष्के आनतादीनां नगरेषु प्रत्येकं विंशतिसहस्रयोजनव्याससाधारणात्कल्पचतुष्टयमेकं स्थलं कृतं इति नवसु स्थानेषु स्वस्वदेवीयुतेन्द्राणां नगराणि भवन्ति ॥ ४८८ ॥

चुलसीदीय असीदी बिहत्तरी सत्तरीय जोयणगा ।
जावय वीससहस्सं समचउरस्साणि रम्माणि ॥ ४८९ ॥

चतुरशीतिः अशीतिः द्वासप्ततिः सप्ततिश्च योजनानि ।
यावद्विंशसहस्रं समचतुरस्राणि रम्याणि ॥ ४८९ ॥

चुलसी । चतुरशीतिसहस्राणि अशीतिसहस्राणि द्वासप्ततिसहस्राणि सप्ततिसहस्राणि योजनानि यावद्विंशतिसहस्रं तावद्दशसहस्रोनं कर्त्तव्यं एतद्व्यासयुक्तानि नगराणि समचतुरस्राणि रम्याणि ॥ ४८९ ॥

अथ उक्तनगरप्राकारोत्सेधस्वरूपमाह;—

छज्जुगलसेसकप्पे तप्पायारुदय जोयणं तिसदं ।
पण्णासूणं पंचम तीसूणं उवरि वीसूणं ॥ ४९० ॥

षट्युगलशेषकल्पे तत्प्राकारोदयः योजनं त्रिशतं ।
पंचाशदूनं पंचमे त्रिंशदूनं उपरि विंशोनम् ॥ ४९० ॥

छज्जुगल। षट्युगले शेषकल्पे चेति सप्तस्थाने तन्नगरप्राकारोदयः आदौ योजनानां त्रिशतं उपरि पंचाशदूनं पंचमस्थाने त्रिंशदूनं तत उपरि विंशत्यूनं ज्ञातव्यं ॥ ४९० ॥

अथ तत्प्राकारगाधविस्तारावाह;—

गाढो वित्थारो विय पण्णासं दलकमं तु पंचमगे ।
चत्तारि तियं छट्ठे चरिमे दुगमद्धसंजुत्तं ॥ ४९१ ॥

गाधो विस्तारः अपि पंचाशत् दलक्रमस्तु पंचमके ।
चत्वारि त्रीणि षष्टे चरमे द्विकमर्धसंयुक्तम् ॥ ४९१ ॥

गाढोवि। तत्प्राकारगाधो भूगतोदय इत्यर्थः। तद्विस्तारोपि चादौ पंचाशद्योजनानि उपर्युपरि अर्द्धार्द्धक्रमः। तु पुनः पंचमस्थाने चत्वारि योजनानि षष्ठस्थाने त्रीणियोजनानि चरमस्थाने अर्द्धयोजनसंयुतं योजनद्वयं ज्ञातव्यं ॥ ४९१ ॥

अथ तत्प्राकाराणां गोपुरस्वरूपं गाथाद्वयेनाह;—

पडिदिस गोउरसंखा तेसिं उदओवि चउतिदोण्णिसया।
तत्तो दुगुणासीदी बीसविहीणं तदो होदि ॥ ४९२ ॥

प्रतिदिशं गोपुरसंख्या तेषां उदयोपि चतुस्त्रिद्विशतानि ।
ततः द्विगुणाशीतिः विंशतिविहीनः ततः भवति ॥ ४९२ ॥

पडिदिस गो। प्रतिदिशं तत्प्राकाराणां गोपुरसंख्या तेषामुदयोऽपि पूर्ववत्सप्तसु स्थानेषु यथासंख्यं चतुःशतयोजनानि त्रिंशद्योजनानि ततःपरं द्विगुणाशीतियोजनानि ततःपरं विंशत्या हीनक्रमो भवति ॥ ४९२ ॥

गोउरवासो कमसो सयजोयणगाणि तिसु य दसहीणं।
बीसूणं पंचमगे तत्तो सव्वत्थ दसहीणं ॥ ४९३ ॥

गोपुरव्यासः क्रमशः शतयोजनानि त्रिषु च दशहीनं।
विंशोनं पंचमके ततः सर्वत्र दशहीनम् ॥ ४९३ ॥

गोउर। गोपुरव्यासः क्रमशः शतयोजनानि ततः उपरि त्रिषु स्थानेषु दशहीनं योजनानि पंचमस्थाने विंशत्यूनयोजनानि। ततः परं सर्वत्र दशहीनयोजनानि ॥ ४९३ ॥

अथ प्रागुक्तनवस्थानाश्रयेण सामानिकतनुरक्षानीकदेवानां प्रमाणं गाथाद्वयेनाह;—

णयरपदे तस्संखा समाणिया चउगुणा य तणुरक्खा।
वसहतुरंगरथेभपदातीगंधव्वणच्चणी चेदि ॥ ४९४ ॥

नगरपदे तत्संख्या सामानिका चतुर्गुणाश्च तनुरक्षाः।
वृषभतुरंगरथेभपदातिगंधर्वनर्तकी चेति ॥ ४९४ ॥

णयरपदे। सोहम्मादिचउक्के इति गाथोक्तेषु नगराणां नवसु स्थानेषु चुलसीदियेति गाथोक्ततत्तन्नगरविस्तारसंख्येव सामानिकसंख्येति ज्ञातव्यं सैव चतुर्गुणिता तनुरक्षकसंख्या वृषभतुरंगरथेभपदातिगंधर्वनर्त्तकी चेति ॥ ४९४ ॥

सत्तेव य आणीया पत्तेयं सत्तसत्तकक्खजुदा।
पढमं ससमाणसमं तद्दुगुणं चरिमकक्खोत्ति ॥ ४९५ ॥

सप्तैव च आनीकानि प्रत्येकं सप्तसप्तकक्षयुतानि।
प्रथमः स्वसमानसमः तद्द्विगुणं चरमकक्षांतम् ॥ ४९५ ॥

सत्तेव य। सप्तैवानीकानि तानि प्रत्येकं सप्तसप्तकक्षयुतानि। तत्र

प्रथमकक्षः स्वस्य स्वस्य सामानिकसमः तत उपरि तस्माद् द्विगुणं चरमकक्षपर्यन्तम् ॥ ४९५ ॥

अथ दक्षिणोत्तरेन्द्राणामानीकनायकान् गाथाद्वयेनाह;—

दामेट्ठी हरिदामा मादलि अइरावदा महत्तरया।
वाउअरिट्ठजसा णीलंजणया दक्खिणिंदाणं ॥ ४९६ ॥

दामयष्टिः हरिदामा मातलिः ऐरावतो महत्तरः।
वायुः अरिष्टयशाः नीलांजना दक्षिणेन्द्राणाम् ॥ ४९६ ॥

दामेट्ठी। दामयष्टिर्हरिदामा मातलिरैरावतो महत्तरश्च वायुररिष्टयशा इत्येते पुरुषाः नीलांजनेति स्त्री एते दक्षिणेन्द्राणां सेनामुख्याः ॥ ४९६ ॥

महदामेट्ठि मिदगदी रहमंथण पुप्फयंत इदि कमसो।
सलघु परक्कमगीदरदि महासुसेणा य उत्तरिंदाणं॥४९७॥

महदामयष्टिः अमितगतिः रथमंथनः पुष्पदंत इति क्रमशः।
सलघौ पराक्रमो गीतरतिः महासुसेना चोत्तरेंद्राणाम् ॥४९७॥

महदामे। महदामयष्टिरमितगतिः रथमंथनः पुष्पदन्त इति क्रमशः सलघौ पराक्रमो गीतरातिरित्येते पुरुषाः महासेनेति स्त्री एते उत्तरेन्द्राणां सेनामुख्याः ॥ ४९७ ॥

अथ परिषत्त्रयसंख्यामाह;—

बारस चोद्दस सोलस सहस्स अब्भंतरादिपारिसाओ।
तत्थ सहस्सदुउण्णा दुसहस्सादो हु अद्धद्धं ॥ ४९८ ॥

द्वादश चतुर्दशषोडशसहस्राणि अभ्यंतरादिपारिषदाः।
तत्र सहस्रन्यूना द्विसहस्रात् हि अर्धार्धम् ॥ ४९८ ॥

बारस । प्रागुक्तनवसु स्थानेषु आदौ अभ्यन्तरादिपारिषदानां संख्या यथासंख्यं द्वादशसहस्राणि चतुर्दशसहस्राणि षोडशसहस्राणि तत उपरि तत्र पृथक् पृथक् सहस्रद्विकोनसंख्या स्यात् । द्विसहस्रादुपरि अर्द्धार्द्धक्रमो ज्ञातव्यः ॥ ४९८ ॥

साम्प्रतमितरप्राकारसंख्यां तदतरं प्रमाणं चाह;—

णयराणं बिदियादीपायारा पंचमोत्ति तेरसयं ।
तेसट्ठि अडकदी चुलसीदी लक्खाणि गंतूणं ॥ ४९९ ॥

नगराणां द्वितीयादिप्राकारा पंचमातं त्रयोदश ।
त्रिषष्ठिः अष्टकृतिः चतुरशीतिः लक्षाणि गत्वा ॥ ४९९॥

णयराणं । नगराणां द्वितीयादिप्राकाराः पंचमपर्यन्तं यथासंख्यं त्रयोदशलक्षाणि त्रिषष्ठिलक्षाणि अष्टकृतिलक्षाणि चतुरशीतिलक्षाणि योजनानि गत्वा गत्वा तिष्ठन्ति ॥ ४९९ ॥

अथ तत्तदन्तरालस्थदेवान् गाथाद्वयेनाह;—

सेण्णावदितणुरक्खा पढमे बिदियंतरे दु परिसतयं ।
सामाणियदेवा पुण तदिए णिवसंति तुरिए दु ॥ ५०० ॥

सेनापतितनुरक्षाः प्रथमे द्वितीयांतरे तु पारिषदत्रयम् ।
सामानिकदेवाः पुनः तृतीये निवसंति तुरीये तु ॥ ५०० ॥

सेण्णा । सेनापतयस्तनुरक्षाश्च प्रथमेऽन्तराले तिष्ठन्ति । द्वितीयान्तरे तु पारिषदत्रयमस्ति । तृतीयान्तरे तु पुनः सामानिकदेवा वसन्ति । तुर्य्येऽन्तरे तु ॥ ५०० ॥

आरोहियाभियोग्गगकिब्भिसियादी य जोग्गपासादे ।
गमिय तदो लक्खदलं णंदणमिदि ताव्विसेसणामाणि ॥

आरोहिकाभियोग्यककिल्विषिकादयश्च योग्यप्रासादे ।
गत्वा ततः लक्षदलं नंदनमिति तद्विशेषनामानि ॥ ५०१ ॥

आरोहिया । आरोहिकाभियोग्यकिल्विषिकादयश्च स्वस्वयोग्यप्रासादे तिष्ठन्ति। ततः परं लक्षदलयोजनानि गत्वा नंदनवनमस्तीति हेतोस्तद्विशेषनामानि वक्ष्यति ॥ ५०१ ॥

कथमिति चेत्;—

सुरपुरबहिं असोयं सत्तच्छदचंपचूदवणखण्डा ।
पउमद्दहसममाणा पत्तेयं चेत्तरुक्खजुदा ॥ ५०२ ॥

सुरपुरबहिः अशोकं सप्तच्छदचंपचूतवनखंडाः ।
पद्महृदसममानाः प्रत्येकं चैत्यवृक्षयुताः ॥ ५०२ ॥

सुरपुर । सुरपुराद्बहिः पूर्वादिदिक्षु अशोकवनखण्डाः सप्तच्छदवनखण्डाः चंपकवनखण्डाश्चूतवनखण्डाः पद्महृदसमप्रमाणाः सहस्रयोजनायामास्तदर्द्धव्यासा इत्यर्थः । प्रत्येकमेकैकचैत्यवृक्षयुताः ॥ ५०२ ॥

अथ तद्वनमध्यस्थचैत्यवृक्षस्वरूपं निरूपयन् तच्चैत्यनमस्कारमाह;—

चउचेत्तदुमा जंबूमाणा कप्पेसु ताण चउपासे ।
पल्लंकगजिणपडिमा पत्तेयं ताणि वंदामि ॥ ५०३ ॥

चतुश्चैत्यद्रुमाः जंबूमानाः कल्पेषु तेषां चतुःपार्श्वेषु ।
पल्यंकगजिनप्रतिमाः प्रत्येकं तानि वंदामि ॥ ५०३ ॥

चउचेत्त । चत्वारश्चैत्यद्रुमा जम्बूवृक्षप्रमाणाः सौधर्मादिषु कल्पेषु तेषां चतुर्षु पार्श्वेषु पल्यंकजिनप्रतिमाः प्रत्येकं तानि वन्दामि ॥ ५०३ ॥

इदानीं लोकपालानां नगरस्वरूपमाह;—

तत्तो बहुजोयणयं गंतूण दिसासु लोगवालाणं ।
णयराणि अजुदसंगुणपणघणवित्थारजुत्ताणि ॥ ५०४ ॥

ततो बहुयोजनकं गत्वा दिशासु लोकपालानाम् ।
नगराणि अयुतसंगुणपंचघनाविस्तारयुक्तानि ॥ ५०४ ॥

तत्तो बहु । ततो बहुयोजनानि गत्वा दिशासु लोकपालानां नगराणि अयुत १०००० संगुणितपंचघनविस्तारयुक्तानि ॥ ५०४ ॥

तत्रैव गणिकामहत्तरीणां पुराण्याह;—

गणिकामहत्तरीणं पुराणि तत्थेव अग्गिपहुदीसु ।
विदिसासु लक्खजोयणवित्थारायामसहियाणि ॥५०५॥

गणिकामहत्तरीणां पुराणि तत्रैव अग्निप्रभृतिषु ।
विदिशासु लक्षयोजनविस्तारायमसहितानि ॥ ५०५ ॥

गणिका । गणिकामहत्तरीणां पुराणि तत्रैव स्थाने अग्निप्रभृतिषु विदिक्षु लक्षयोजनानि विस्तारायामसहितानि सन्ति ॥ ५०५ ॥

तासां नामान्याह;—

ताओ चउरो सग्गे कामा कामिणि य पउमगंधा य ।
तो होदि अलंबूसा सव्विंदपुराणमेस कमो ॥ ५०६ ॥

ताः चतस्रः स्वर्गे कामा कामिनी च पद्मगंधा च ।
ततो भवति अलंबूषा सर्वेंद्रपुराणामेष क्रमः ॥ ५०६ ॥

ताओ चउ । सौधर्मादिस्वर्गे कामा कामिनी च पद्मगन्धा ततोऽलम्बूषेति ताश्चतस्रो भवन्ति सर्वेन्द्रपुराणामेष एव क्रमो ज्ञातव्यः ॥ ५०६ ॥

अथ सौधर्मादिषु गृहोत्सेधं प्रतिपादयति;—

छज्जुगलसेसकप्पे तित्तिसु य अणुद्दिसे अणुत्तरगे ।
गेहुदओ छप्पणसय पण्णास रिणं दलं चरिमे ॥ ५०७ ॥

षट्युगलशेषकल्पेषु त्रिस्त्रिषु च अनुदिशि अनुत्तरके ।
गेहोदयः षट्पंचशतं पंचाशद्दणं दलं चरमे ॥ ५०७ ॥

छज्जुगल । षट्सु युगलेषु शेषकल्पे च त्रिस्त्रिषु ग्रैवेयकेषु अनुदिशायां अनुत्तरे चेति द्वादशस्थानेषु गेहो यः षट्छतयोजनानि पंचशतयोजनानि तत उपरि पंचाशद्दणं कर्त्तव्यं । चरमे स्थाने उपांत्यार्द्धं ज्ञातव्यम् ॥ ५०७ ॥

अथ देवीनां गेहोत्सेधेन सर्वगृहाणां विस्तारायामौ कथयति;—

सत्तपदे देवीणं गेहोदयं पणसयं तु पण्णरिणं ।
सव्वगिहदिग्घवासं उदयस्स य पंचमं दसमं ॥ ५०८ ॥

सप्तपदे देवीनां गेहोदयः पंचशतं तु पंचाशद्दणं ।
सर्वगृहदैर्घ्यव्यासौ उदयस्य च पंचमो दशमः ॥ ५०८ ॥

सत्तपदे । छज्जुगलेत्याद्युक्ते सप्तपदे देवीनां गृहोदयः आदौ पंचशतयोजनानि उत्तरत्रयं पंचाशत्पंचाशद्दणं कर्तव्यं । सर्वेषां देवानां देवीनां ग्रहदैर्घ्यव्यासौ यथासंख्यं उदयस्य पंचमभागो दशमभागश्च ॥ ५०८ ॥

कल्पेष्वग्रदेवीनां तत्परिवारदेवीनां च प्रमाणमाह;—

सत्तपदे अट्ठट्ठमहादेवीयो पुधादि मेक्किस्से ।
ससमं सोलसहस्सा देवीओ उवरि अद्धद्धो ॥ ५०९ ॥

सप्तपदेषु अष्टाष्टमहादेव्यः पृथक् आदिमे एकस्य ।
स्वसमं षोडशसहस्रा देव्यः उपरि अर्धार्धाः ॥ ५०९ ॥

सत्तपदे । सप्तसु पदेष्वष्टाष्टमहादेव्यः । पृथक् प्रत्येकमादिमे प्रथमयुगले एकैकस्या देव्याः स्वेन समं षोडशसहस्रपरिवारदेव्यः, उपर्यर्द्धार्द्धप्रमिताः ८ ॥ ५०९ ॥

अथ तासामग्रदेवीनां नामानि गाथाद्वयेनाह;—

सचिपउम सिवसियामा कालिंदीसुलसअज्जुकाणामा
भाणुत्ति जेट्ठदेवी सव्वेसिं दक्खिणिंदाणं ॥ ५१० ॥

शचिः पद्मा शिवा श्यामा कालिंदी सुलसा अज्जुकानामा ।
भानुरिति ज्येष्ठादेव्यः सर्वेषां दक्षिणेंद्राणाम् ॥ ५१० ॥

सचिपउम । शचिः पद्मा शिवा श्यामा कालिंदी सुलसा अज्जुकानामा भानुरित्येता ज्येष्ठदेव्यः सर्वेषां दक्षिणेन्द्राणां ॥ ५१० ॥

सिरिमति रामसुसीमा पभावदि जयसेण णामय सुसेणा
वसुमित्त वसुंधर वरदेवीओ उत्तरिंदाणं ॥ ५११ ॥

श्रीमती रामा सुसीमा प्रभावती जयसेना नामा सुषेणा ।
वसुमित्रा वसुंधरा वरदेव्यः उत्तरेंद्राणाम् ॥ ५११ ॥

सिरिमति । श्रीमती रामा सुसीमा प्रभावती जयसेनाख्या सुषेणा । वसुमित्रा वसुंधरेति वरदेव्यः उत्तरेन्द्राणाम् ॥ ५११ ॥

अथ तत्राग्रमहादेवीनां विक्रियाप्रमाणं निरूपयति;—

अट्ठह्नं देवीणं पुधपुध सोलससहस्सविक्किरिया ।
मूलसरीरेण समं सेसे दुगुणा मुणेदव्वा ॥ ५१२ ॥

अष्टानां देवीनां पृथक् पृथक् षोडशसहस्रविक्रियाः ।
मूलशरीरेण समं शेषे द्विगुणा मंतव्याः ॥ ५१२ ॥

अट्ठह्नं । सप्तसु स्थानेषु आदावष्टानां देवीनां पृथक्पृथक् मूलशरीरेण समं षोडशसहस्राविक्रिया देव्यः । शेषे द्विगुणद्विगुणा देव्यो ज्ञातव्याः ॥ ५१२ ॥

तत्रैव परिवारदेवीषु वल्लभिकाप्रमाणं निरूपयति;—

सत्तपदे वल्लभिया बत्तीसट्ठेव दो सहस्साइं।
पंचसयं अद्धद्धं तेस्सट्ठी होंति सत्तमगे ॥ ५१३ ॥

सप्तपदेषु वल्लभिका द्वात्रिंषदष्टैव द्वौ सहस्राणि।
पंचशतानि अर्धार्धं त्रिषष्ठिः भवंति सप्तमके ॥ ५१३ ॥

सत्तपदे। सप्तसु पदेषु बल्लभिका द्वात्रिंशत्सहस्राणि अष्टसहस्राणि द्विसहस्राणि पंचशतानि उपर्यर्द्धार्द्धं सप्तमे स्थाने त्रिषष्ठिवल्लभिका भवन्ति ॥ ५१३ ॥

तासां वल्लभिकानां प्रासादोत्सेधं तत्प्रासादावस्थानदिशं चाह;—

देवीपासादुदया वल्लभियाणं तु बीसअहियं खु।
इंदत्थंभगिहादो वल्लभियावासया पुव्वे ॥ ५१४ ॥

देवीप्रासादोदयात् वल्लभिकानां तु विंशाधिकः खलु।
इंद्रस्तंभगृहात् वल्लभिकावासकाः पूर्वस्याम् ॥ ५१४ ॥

देवीपासा। देवीनां प्रासादोदयाद्वल्लभिकानां प्रासादोदयस्तु विंशतियोजनाधिकः खलु। इन्द्रप्रासादात्पूर्वस्यां दिशि वल्लभिकाप्रासादास्तिष्ठन्ति ५१४

इन्द्रस्यास्थानमण्डपस्वरूपमाह;—

अमरावदिपुरमज्झे थंभगिहीसाणदो सुधम्मक्खं।
अत्थाणमण्डवं सयतद्दलदीहदु तदुभयदल उदयं ॥५१५॥

अमरावतीपुरमध्ये स्तंभगृहैशानतः सुधर्माख्यम्।
आस्थानमंडपं शततद्दलदीर्घद्विः तदुभयदलः उदयः ॥५१५॥

अमरावदि। अमरावतीपुरमध्ये इन्द्रस्यावासगृहस्येशानतः सुधर्माख्य-

मास्थानमण्डपं अस्ति । तस्य दीर्घव्यासौ शतयोजनतद्दलौ तयोर्मिलितोभय-योर्दल उत्सेधः स्यात् ॥ ५१५ ॥

अथ आस्थानमण्डपद्वारं तदन्तस्थपदार्थान् गाथात्रयेणाह;—

पुव्वुत्तरदक्खिणदिस तद्दारा अट्ठवास सोलुदया ।
मज्झे हरिसिंहासणमडदेवीणासणं पुरदो ॥ ५१६ ॥

पूर्वोत्तरदक्षिणदिशि तद्द्वाराणि अष्टव्यासः षोडशोदयाः ।
मध्ये हरिसिंहासनं अष्टदेवीनामासनानि पुरतः ॥ ५१६ ॥

पुव्वत्तर । तस्यास्थानमण्डपस्य पूर्वोत्तरदक्षिणादिशि द्वाराणि सन्ति । तस्य व्यासः अष्टयोजनानि उत्सेधस्तु षोडशयोजनानि तन्मध्ये स्थाने हरि-सिंहासनं । तत्सिंहासनात्पुरतः अष्टपट्टदेवीनामासनानि स्युः ॥ ५१६ ॥

तव्बाहिं पुव्वादिसु सलोयवालाण परिसतिदयस्स ।
अग्गिजमणेरिदीए तेत्तीसाणं तु णेरिदिए ॥ ५१७ ॥

तद्बहिः पूर्वादिषु स्वलोकपालानां परिषत्रितयस्य ।
अग्नियमनैर्ऋत्यां त्रयस्त्रिंशतां तु नैर्ऋत्याम् ॥ ५१७ ॥

तव्बाहिं । तासां देवीनामासनाद्बहिः पूर्वादिषु दिक्षु लोकपालानां सोमयमवरुणकुबेराणां आसनानि सन्ति परिषत्रयस्यासनानि १२०००।१४००० १६००० इन्द्रासनस्य आग्नेययमनैर्ऋत्यां दिशि सन्ति त्रायस्त्रिंशद्देवानामासनानि अपि ३३ नैर्ऋत्यां दिश्येव सन्ति ॥ ५१७ ॥

सेणावईणमवरे समाणियाणं तु पवणईसाणे ।
तणुरक्खाणं भद्दासणाणि चउदिसगयाण बहिं॥५१८॥

सेनापतीनामपरस्यां सामानिकानां तु पवनैशाने ।
तनुरक्षाणां भद्रासनानि चतुर्दिशागतानि बहिः ॥ ५१८ ॥

सेणावईण । सेनापतीना ७ मासनान्यपरस्यां दिशि सन्ति । सामानिकानामासनानि वायव्यां दिशि ४२००० ऐश्यानां दिशि ४२००० एतस्माद्बहिः तनुरक्षाणां भद्रासनानि चतुर्दिग्गतानि सन्ति ८४०००।८४००० ८४०००।८४००० ॥ ५१८ ॥

तन्मण्डपाग्रस्थमानस्तम्भस्वरूपमाह;—

तस्सागा इगिवासो बत्तीसुदओ सवीढ वज्जमओ ।
माणत्थंभो गोरुढवित्थारय बारकोडिजुदो ॥ ५१९ ॥

तस्याग्रे एकव्यासः द्वात्रिंशदुदयः सपीठः वज्रमयः ।
मानस्तंभः क्रोशविस्तारः द्वादशकोटियुतः ॥ ५१९ ॥

तस्सागा । तन्मण्डपस्याग्रे एकयोजनव्यासः षट्त्रिंशद्योजनोदयः पीठसहितो वज्रमयः क्रोशविस्तारो द्वादशधारायुक्तो मानस्तम्भोऽस्ति ॥ ५१९ ॥

अथ तन्मानस्तम्भकरण्डकस्वरूपं गाथात्रयेणाह;—

चिट्ठंति तत्थ गोरुदचउत्थवित्थार कोसदीहजुदा ।
तित्थयराभरणचिदा करण्डया रयणसिक्कधिया ॥५२०॥

तिष्ठंति तत्र क्रोशचतुर्थविस्ताराः क्रोशदैर्घ्ययुताः ।
तीर्थकराभरणचिताः करंडका रत्नशिक्यधृताः ॥ ५२० ॥

चिट्ठंति । तत्र मानस्तम्भे क्रोशचतुर्थांशविस्ताराः क्रोशदैर्घ्ययुताः तीर्थकराभरणचिता रत्नाशिक्यधृताः करण्डकास्तिष्ठन्ति ॥ ५२० ॥

तुरियजुदविजुदछज्जोयणाणि उवरिं अधोवि ण करण्डा ।
सोहम्मदुगे भरहेरावदतित्थयरपडिबद्धा ॥ ५२१ ॥

तुरीययुतवियुतषड्योजनानां उपरि अधोपि न करंडाः ।
सौधर्मद्विके भरतैरावततीर्थकरप्रतिबद्धौ ॥ ५२१ ॥

तुरिय । तन्मानस्तम्भस्योपरि योजनचतुर्थांशयुक्त $\frac{1}{4}$ षड्योजनेषु $\frac{25}{4}$ तस्याधश्च योजनचतुर्थांश $\frac{1}{4}$ वियुक्तषड्योजनेषु $\frac{23}{4}$ करण्डा न सन्ति। सौधर्मद्विके तौ मानस्तम्भौ भरतैरावततीर्थंकरप्रतिबद्धौ स्याताम् ॥ ५२१ ॥

साणक्कुमारजुगले पुव्ववरविदेहतित्थयरभूसा ।
ठविदच्चिदा सुरेहिं कोडीपरिणाह बारंसो ॥ ५२२ ॥

सानत्कुमारयुगले पूर्वापरविदेहतीर्थकरभूषाः ।
स्थापयित्वार्चिताः सुरैः कोटिपरिणाहः द्वादशांशः ॥ ५२२ ॥

साणक्कुमार । सनत्कुमारयुगले मानस्तम्भयोः पूर्वापरविदेहतीर्थकरभूषाः स्थापयित्वा सुरैरर्चिता तन्मानस्तम्भधारान्तरं परिधिद्वादशांशो भवति ॥ ५२२ ॥

अथ इन्द्रोत्पत्तिगृहस्वरूपमाह;—

पासे उववादगिहं हरिस्स अडवास दीहरुदयजुदं ।
दुगरयणसयण मज्झं वरजिणगेहं बहुकूडं ॥ ५२३ ॥

पार्श्वे उपपादगृहं हरेः अष्टव्यासदैर्घ्योदययुतम् ।
द्विकरत्नशयनं मध्यं वरजिनगेहं बहुकूटम् ॥ ५२३ ॥

पासे । तन्मानस्तम्भस्य पार्श्वे अष्टयोजनव्यासदैर्घ्योदययुतं मध्ये द्विरत्नशयनयुतं हरेरुपपादगृहमास्ति। एतस्य पार्श्वे बहुकूटं वराजिनगेहमस्ति॥५२३॥

साम्प्रतं कल्पस्त्रीणामुत्पत्तिस्थानं गाथाद्वयेनाह;—

दक्खिणउत्तरदेवी सोहम्मीसाण एव जायंते ।
तहिं सुद्धदेविसहिया छच्चउलक्खं विमाणाणं ॥५२४॥

दक्षिणोत्तरदेव्यः सौधर्मैशान एव जायंते ।
तत्र शुद्धदेवीसहिता षट्चतुर्लक्षं विमानानाम् ॥ ५२४ ॥

दक्खिण—दक्षिणोत्तरकल्पस्थदेवानां देव्यः सौधर्मैशान एव जायन्ते। तत्र सौधर्मद्वये शुद्धदेवीसहिताः षट्लक्षचतुर्लक्षविमानाः सान्ति॥ ५२४॥

तद्देवीओ पच्छा उवरिमदेवा णयंति सगठाणं।
सेसविमाणा छच्चदुवीसलक्ख देवदेविसम्मिस्सा॥५२५॥

तद्देवीः पश्चादुपरिमदेवाः नयंति स्वकस्थानं।
शेषविमानाः षट्चतुर्विंशलक्षाः देवदेविसंमिश्राः॥ ५२५॥

तद्देवीओ। ताश्च देवीः पश्चादुपरिमदेवाः नयंति स्वकीयस्वकीयस्थानं शेषविमानाः षड्विंशतिलक्षाः चतुर्विंशतिलक्षाः देवदेवीसन्मिश्रा भवंति ५२५।

इदानीं कल्पवासिनां प्रविचारं विचारयति;—

दुसु दुसु तिचउक्केसु य काये फासे य रूव सद्दे य।
चित्तेवि य पडिचारा अप्पडिचारा हु अहमिंदा ५२६

द्वयोर्द्वयोः त्रिचतुष्केषु च काये स्पर्शे च रूपे शब्दे च।
चित्तेपि च प्रवीचारा अप्रविचारा हि अहमिंद्राः॥ ५२६॥

दुसु दुसु। सौधर्मादिद्वयो २ र्द्वयो २ स्त्रिचतुष्केषु च १२ देवदेवीनां यथासंख्यं काये स्पर्शे रूपे शब्दे चित्तेऽपि च प्रवीचाराः। तत उपरि अहमिन्द्रा अप्रवीचारा एव॥ ५२६॥

अनन्तरं वैमानिकदेवानां विक्रियाशक्तिज्ञानविषयं च गाथाद्वयेनाह;—

दुसु दुसु तिचउक्केसु य णवचोद्दसगे विगुणव्वणा सत्ती।
पढमखिदीदो सत्तमखिदिपेरंतो त्ति अवही य॥ ५२७॥

द्वयोर्द्वयोः त्रिचतुष्केषु च नवचतुर्दशसु विकुर्वणा शक्तिः।
प्रथमक्षितितः सप्तमक्षितिपर्यंतं इति अवधिश्च॥ ५२७॥

दुसु दुसु । द्वयो २ र्द्वयो २ स्त्रिचतुष्केषु च १२ ग्रैवेयकादिषु नवसु अनुदिशादिषु चतुर्दशविमानेषु सप्तस्थानेषु विकुर्वणाशक्तिर्यथासंख्यं प्रथमपृथिवीतः आरभ्य सप्तमक्षितिपर्यन्तं ज्ञातव्या। अवधिज्ञानं च तथा ज्ञातव्यम् । उपरि तद्ज्ञानं कथमिति चेत् । देवाः स्वकीयस्वकीयकल्पविमानध्वजदण्डादुपरि न पश्यन्ति । नवानुत्तरविमानवासिदेवा आत्मीयात्मीयविमानशिखरादधो यावद्बाह्यं वातवलयं तावत्किंचिन्न्यूनचतुर्दशरज्ज्वायतामेकरज्जुविस्तारां सर्वलोकनालिं पश्यन्ति ॥ ५२७ ॥

सव्वं च लोयणालिं पस्संति अणुत्तरेसु जे देवा ।
सगखेत्ते य सकम्मे रूवगदमणंतभागो य ॥ ५२८ ॥

सर्वां च लोकनालिं पश्यंति अनुत्तरेषु ये देवाः ।
स्वकक्षेत्रे च स्वकर्मे रूपगतमनंतभागं च ॥ ५२८ ॥

सव्वं च । पंचानुत्तरेषु ये देवास्ते सर्वां च लोकनालिं पश्यन्ति । अवधेर्ज्ञप्तिप्रकार उच्यते । स्वक्षेत्रे एकप्रदेशोऽपनेतव्यः । स्वकर्माणि एको ध्रुवभागहारो दातव्यः यावत्प्रदेशसमाप्तिः । अनेनावधिविषयद्रव्यभेदः सूचितः । एतदर्थं विशदं करोति । कल्पसुराणां स्वस्वावाधिक्षेत्रं विगतविस्रसोपचयमवधिज्ञानावरणद्रव्यं च संस्थाप्य $\frac{३}{३\frac{२}{४}३}$ स $\frac{७·१२}{७·४·१}$ एकप्रदेशमपनीय एकेन ध्रुवहारेण भजेत् यत्स्वस्वावाधिविज्ञानविषयद्रव्यप्रमाणं भवति ॥ ५२८ ॥

अथ वैमानिकदेवानां जननमरणान्तरं निरूपयति;—

दुसुदुसु तिचउक्केसु य सेसे जणणंतरं तु चवणे य ।
सत्तदिण पक्ख मासं दुगचदुछम्मासगं होदि ॥ ५२९ ॥

द्वयोर्द्वयोः त्रिचतुष्केषु च शेषे जननांतरं तु च्यवने च ।
सप्तदिनानि पक्षं मासं द्विकचतुःषण्मासकं भवति ॥ ५२९ ॥

दुसु दुसु। द्वयोर्द्वयोस्त्रिचतुष्केषु शेषे चेति षट्सु स्थानेषु जननरहितान्तरकालो मरणरहितान्तरकालश्च यथासंख्यं सप्तदिनानि पक्षं मासं द्विमासं चतुर्मासं षण्मासं च भवति ॥ ५२९ ॥

अथेन्द्रादीनामुत्कृष्टान्तरमाह;—

वरविरहं छम्मासं इंदमहादेविलोयपालाणं ।
चउ तेत्तीससुराणं तणुरक्खसमाणपरिसाणं ॥५३०॥

वरविरहं षण्मासं इंद्रमहादेविलोकपालानाम् ।
चतुः त्रयस्त्रिंशत्सुराणां तनुरक्षसमानपारिषदानाम् ॥ ५३० ॥

वरविरहं। इन्द्राणां तन्महादेवीनां लोकपालानां चोत्कृष्टेन विरहकालं षण्मासं जानीहि । त्रयस्त्रिंशत्सुराणां तनुरक्षाणां सामानिकानां पारिषदानां च चतुर्मासं विरहकालं जानीहि ॥ ५३० ॥

अथ देवविशेषाणां भवस्थानं प्रतिपादयति;—

ईसाणलांतवच्चुदकप्पोत्ति कमेण होंति कंदप्पा ।
किब्भिसिय आभिजोगा सगकप्पजहण्णठिदिसहिया ।

ईशानलांतवाच्युतकल्पांतं क्रमेण भवंति कंदर्पाः ।
किल्बिषिका आभियोग्याः स्वककल्पजघन्यस्थितिसहिताः ५३१

ईसाण। अत्र विटलक्षणकांदर्पपरिणामयुक्ताः स्वयोग्यशुभकर्मवशात् ईशानकल्पपर्यन्तं कंदर्पदेवा भूत्वा उत्पद्यन्ते न तत उपरि । अत्र गीतोपजीवलक्षणकैल्बिषिकपरिणामयुक्ताःस्वयोग्यशुभकर्मवशात् लांतवकल्पपर्यन्तं तत्रापि किल्बिषिका एवोत्पद्यन्ते न तत उपरि । अत्र सावद्यक्रियासु स्वहस्तव्यापारलक्षणाभियोग्यभावनायुक्ताः स्वयोग्यशुभकर्मवशात् अच्युतकल्पपर्यन्तं तत्राप्याभियोग्यदेवा भूत्वा उत्पद्यन्ते न तत उपरि । एते सर्वे स्वकीयकल्पजघन्यस्थितिसहिताः सन्तः ॥ ५३१ ॥

अथ प्रथमादिषु स्थितिविशेषमाह;—

सोहम्म वरं पल्लं वरमुवहिवि सत्त दस य चोद्दसयं।
बावीसोत्ति दुवड्ढी एक्केक्कं जाव तेत्तीसं॥ ५३२॥

सौधर्मे वरं पल्यं अवरं उदधिद्विकं सप्त दश च चतुर्दशकं।
द्वाविंशतिरिति द्विवृद्धिः एकैकं यावत्त्रयस्त्रिंशत्॥ ५३२॥

सोहम्म। सौधर्मयुगले जघन्यमायुः पल्यमुत्कृष्टं तु प्रत्येकं सागरोपमद्वयं। इत उपरि सर्वोत्कृष्टमेव कथयति—सनत्कुमारयुगले प्रत्येकं सप्त सागरोपमाणि ब्रह्मयुगले प्रत्येकं दशसागरोपमाणि लान्तवयुगले प्रत्येकं चतुर्दशसागरोपमाणि इत उपरि युगलयुगलं प्रति प्रत्येकं द्वाविंशतिसागरोपमपर्यन्तं द्विसागरोपमवृद्धिर्ज्ञातव्या। इत अच्युतादुपरि यावत्त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमं तावदेकैकवृद्धिर्ज्ञातव्या॥ ५३२॥

अथ घातायुष्कसम्यग्दृष्टेः पटलं प्रति चोत्कृष्टायुष्यमाह;—

सम्मे घादेऊणं सायरदलमहियमा सहस्सारा।
जलहिदलमुडुवराऊ पडलं पडि जाण हाणिचयं ५३३

समीचि घातायुषि सागरदलमधिकमा सहस्रारात्।
जलधिदलं ऋतुवरायुः पटलं प्रति जानीहि हानिचयम्॥५३३॥

सम्मे घा। सम्यग्दृष्टौ घातायुषि सति तस्य स्वकीयकल्पोत्कृष्टायुषः सकाशादन्तर्मुहूर्तोनं सागरदलमधिकं भवति। सा $\frac{१}{२}$ २। एवं सहस्रारपर्यन्तं ज्ञातव्यं तत उपरि घातायुष्कस्योत्पत्तिर्नास्ति। सौधर्मयुगलस्य प्रथमपटले ऋत्विन्द्रके अर्धसागरोपमं उत्कृष्टायुः इति प्रथमचरमपटलयोरायुर्धृत्वा पटलं प्रति हानिचयं जानीहि। तत्कथं। घातयुष्के तावत् सौधर्माद्यष्टयुगले आदौ

१।५।१५।२१।२९।३३।३७।२० अन्ते ५।१५।२१।२९।३३।३७।२०।२२
२।२। २।२।२।२।२।० ‍ ‍ ‍ ‍ ‍ ‍ ‍ ‍ २।२।२।२।२।२।०।०

सुद्धे $\frac{२।१०।३।४।२।२।३।२}{१।२।१।१।१।१।२।०}$ रूऊणद्धा ३० सनत्कुमारादियुगले प्राक्तनकल्पचरमपटलस्यैवादित्वात्तत्र तत्र रूपन्यूने सप्तादिरेव ७।४।२।१।१।३।३ हिदम्मि हाणिचयमिति कृते सौधर्मयुगले हानिचयमेतत् । $\frac{२}{३०}$ अर्द्धसागरोपमस्योपरि समानछेदेन मेलयेत् $\frac{१७}{३०}$ एतद्विमलेन्द्रस्योत्कृष्टायुः स्यात् । एवमुपरि सर्वत्र पटलं प्रत्यानेतव्यं । सनत्कुमारद्विके हानिचयं $\frac{१०}{१४}$ ब्रह्मयुग्मे $\frac{३}{४}$ लांतवद्युगे २ शुक्रयुगले २ शतारद्वन्द्वे २ आनतद्वये $\frac{१}{२}$ आरणद्वये $\frac{२}{३}$ । एवं हानिचयं ज्ञात्वा तत्तत्पटलं प्रति आयुरानेतव्यम् । अघातायुष्के तु आदि $\frac{१}{२}$ अन्त २ विसेसे $\frac{३}{२}$ रूऊणद्धा ३० हिदम्मि हाणिचयं $\frac{३}{६०}$ त्रिभिरपवर्तितं एवं $\frac{१}{२०}$ एतद्धानिचयं अर्द्धसागरोमस्योपरि स्वचरमपटलपर्यन्तं मेलयेत् एवं । सनत्कुमारादारभ्याच्युतपर्यन्तं तत्तत्पटलायुर्हानिचयं ज्ञातव्यम् ॥ ५३३ ॥

अथ लौकान्तिका नांमस्थानमाह;—

णिवसंति बह्मलोयस्संते लोयंतिया सुरा अट्ठ ।
ईसाणादिसु अट्ठसु वट्टेसु पइण्णएसु कमा ॥ ५३४ ॥

निवसंति ब्रह्मलोकस्यांते लौकांतिकाः सुरा अष्ट ।
ईशानादिषु अष्टसु वृत्तेषु प्रकीर्णकेषु क्रमात् ॥ ५३४ ॥

णिवसंति । ब्रह्मलोकस्यान्ते अष्टकुलाः लौकान्तिकाः सुरा ईशानादिष्वष्टदिक्षुवृत्तेषु प्रकीर्णकेषु यथाक्रमं निवसन्ति ॥ ५३४ ॥

अथ तदष्टकुलसंज्ञां संख्यां च गाथाद्वयेनाह;—

सारस्सद आइच्चा सत्तसया सगजुदा य वह्नरुणा ।
सगसगसहस्समुवरिं दुसु दुसु दोदुगसहस्सवाड्ढिकमा ॥

सारस्वता आदित्या सप्तशतानि सप्तयुतानि च वह्निरुणाः ।
सप्तसप्तसहस्रमुपरि द्वयोर्द्वयोः द्विद्विसहस्रवृद्धिक्रमः ॥ ५३५ ॥

सारस्सद आ । सारस्वता आदित्याश्च प्रत्येकं सप्तयुक्तसप्तशतानि ७०७।७०७ वह्नयः आरुणाश्च प्रत्येकं सप्ताधिकसप्त सहस्राणि। ७००७।७००७ तत उपरि द्वयोर्द्वयोः स्थानयोर्द्व्यधिकद्विकसहस्र २००२ वृद्धिक्रमो ज्ञातव्यः ॥ ५३५ ॥

तो गद्दतोयतुसिदा अव्वाबाहा अरिट्ठसण्णा य ।
सेढीबद्धे रिट्ठा विमाणणामं च तच्चेव ॥ ५३६ ॥

ततो गर्दतोयतुषिता अव्यावाधा अरिष्टसंज्ञाश्च ।
श्रेणीबद्धे अरिष्टा विमाननामं च तदेव ॥ ५३६ ॥

तो गद्दो । ततो गर्दतोयास्तुषिताश्च ९००९।९००९ ततो अव्याबाधारिष्टसंज्ञाश्च ११०११।११०११ । एतेषां मध्ये श्रेणिबद्धेऽरिष्टास्तिष्ठन्ति । शेषा वृत्तेषु प्रकीर्णकेष्वेव तेषां नामान्येव तद्विमाननामानि ॥ ५३६ ॥

अथ सारस्वतादीनां द्वयोर्द्वयोरन्तरालस्थकुलनामानि तद्देवसंख्यां गाथाद्वयेनाह;—

सारस्सदआइच्चप्पहुदीणं अंतरालए दोद्दो ।
जाणग्गिसूरचंदयसच्चाभा सेयखेमकरा ॥ ५३७ ॥

सारस्वतादित्यप्रभृतीनां अंतरालके द्वे द्वे ।
जानीहि अग्निसूर्यचंद्रकसत्याभाः श्रेयःक्षेमकराः ॥ ५३७ ॥

सारस्सद । सारस्वतादित्यप्रभृत्तीनामष्टस्वंतरालेषु द्वे द्वे कुले जानीहि । तत्कुलस्थाः के ? अग्न्याभाः सूर्याभाः चन्द्राभाः सत्याभाः श्रेयस्कराः क्षेमंकराः ॥ ५३७ ॥

वसहिट्ठकामधरणिम्माणरजा दिगंतअप्पसव्वादी ।
रक्खिदमरुवसुअस्सविसापढमरुणसम पुव्वचयमुवरिं ५३८

वृषभेष्टकामधरनिर्माणरजोदिगंतात्मसर्वादिः।
रक्षितमरुद्वस्वश्वविश्वाः प्रथमा अरुणसभाः पूर्वचयमुपरि ५३८

वसहिट्ठ। वृषभेष्टाः कामधरा निर्माणरजसः दिगन्तरक्षिताः आत्मरक्षिताः सर्वरक्षिताः मरुतः वसवः अश्वाविश्वाः एते स्वस्वकुलनामाङ्किताः। तत्र प्रथमाग्न्याभकुलस्था अरुणसमाः ७००७ अस्य प्रमाणस्योपरि पूर्वचये द्व्याधिकाद्विसहस्रे २००२ मिलिते सूर्याभादीनां संख्या भवति ॥ ५३८ ॥

अथ उक्तानां लौकांतिकानां विशेषस्वरूपं गाथाद्वयेनाह;—

ते हीणाहियरहिया विसयविरत्ता य देवरिसिणामा।
अणुपिक्खदत्तचित्ता सेससुराणच्चणिज्जा हु ॥ ५३९ ॥

ते हीनाधिकरहिता विषयविरक्ताश्च देवर्षिनामानः।
अनुप्रेक्षादत्तचित्ताः शेषसुराणामर्चनीया हि ॥ ५३९ ॥

ते हीणा। ते हीनाधिकराहिता विषयविरक्ताश्च देवऋषिनामानः अनुप्रेक्षादत्तचित्ताः शेषसुराणामर्चनीयाः खलु ॥ ५३९ ॥

चोद्दसपुव्वधरा पडिबोहपरा तित्थयरविणिक्कमणे।
एदेसिमट्ठजलहिट्ठिदी अरिट्ठस्स णव चेव ॥ ५४० ॥

चतुर्दशपूर्वधराः प्रतिबोधपराः तीर्थकरविनिःक्रमणे।
एतेषामष्टजलधिःस्थितिः अरिष्टस्य नव चैव ॥ ५४० ॥

चोद्दस। चतुर्दशपूर्वधरास्तीर्थिकराविनिःक्रमणे प्रतिबोधनपरा एतषांप्रत्येकमष्टसागरोपमाण्यायुः अरिष्टस्य तु नवसागरोपमाः ॥ ५४० ॥

अथ घातायुष्कसम्यक्दृष्टिमिथ्यादृष्ट्योरायुर्विशेषमाह;—

उवहिदलं पल्लद्धं भवणे विंतरदुगे कमेणहियं।
सम्मे मिच्छे घादे पल्लासंखं तु सव्वत्थ ॥ ५४१ ॥

उदधिदलं पल्यार्धं भवने व्यंतरद्विके क्रमेणाधिकं ।
समीचि मिथ्ये घाते पल्यासंख्यं तु सर्वत्र ॥ ५४१ ॥

उवहिद्दलं। घातायुष्के सम्यग्दृष्टौ भवने व्यन्तरज्योतिष्कयोश्च यथाक्रमं तत्र तत्रोक्तायुषः सकाशादर्द्धसागरोपमं पल्यार्द्धं चाधिकं ज्ञातव्यम्। घातायुष्के मिथ्यादृष्टौ तु पल्यासंख्यातभागं तथाधिकं ज्ञेयं। एवं सर्वत्र कल्पेष्वपि ॥ ५४१ ॥

अथ कल्पस्त्रीणां स्थितिप्रमाणं कथयति;—

साहियपल्लं अवरं कप्पदुगित्थीण पणग पढमवरं।
एक्कारसे चउक्के कप्पे दोसत्तपरिवड्ढी ॥ ५४२ ॥

साधिकपल्यं अवरं कल्पद्विके स्त्रीणां पंचकं प्रथमवरं ।
एकादशे चतुष्के कल्पे द्विसप्तपरिवृद्धिः ॥ ५४२ ॥

साहिय। सौधर्मकल्पद्विकस्त्रीणामवरमायुः साधिकपल्यं प्रथमे सौधर्मे वरमायुः पंचपल्यं। अथ ईशानाद्येकादशे कल्पे आनतादिचतुःकल्पे च यथासंख्यं सौधर्मोक्तपंचपल्यात् द्विवृद्धिः सप्तपरिवृद्धिश्च ज्ञातव्या ॥ ५४२ ॥

इदानीं देवानां शरीरोत्सेधमाह;—

दुसु दुसु चदु दुसु दुसु चउ तित्तिसु सेसेसु देहउस्सेहो।
रयणीण सत्त छप्पणचत्तारि दलेण हीणकमा ॥५४३॥

द्वयोर्द्वयोः चतुर्षु द्वयोर्द्वयोःचतुर्षु त्रिस्त्रिषु शेषेषु देहोत्सेधः।
रत्नीनां सप्त षट् पंचचत्वारः दलेन हीनक्रमः ॥ ५४३ ॥

दुसु दुसु। द्वयोर्द्वयोश्चतुर्षु द्वयोर्द्वयोश्चतुर्षु त्रिस्त्रिषु शेषेष्विति दशसु स्थानेषु देहोत्सेधो यथासंख्यं सप्त ७ षट् ६ पंच ५ चत्वारो ४ रत्नयः तत उपरि अर्द्धहस्तहीनक्रमो ज्ञातव्यः ॥ ५४३ ॥

अथ तेषामुच्छ्वासाहारकालौ निरूपयति;—

पक्खं वाससहस्सं सगसगसायरसलाहि संगुणियं।
उस्सासाहाराणं कमेण माणं विमाणेसु ॥ ५४४ ॥

पक्षो वर्षसहस्रं स्वकस्वकसागरशलाभिः संगुणितं।
उच्छ्वासाहाराणां क्रमेण मानं विमानेषु ॥ ५४४ ॥

पक्खं वास। पक्षो १५ वर्षसहस्रं १००० सोहम्मवरं पल्लं वरमुवहि बिसत्तेत्याद्युक्तस्वकीयस्वकीयसागरशलाकाभिः संगुणितं दिन ३० वर्ष २००० उच्छ्वासाहाराणां प्रमाणं विमानेषु क्रमेण ज्ञातव्यम् ॥ ५४४ ॥

अथ गुणस्थानमाश्रित्य देवगतावुत्पद्यमानानां स्वरूपं गाथात्रयेणाह;—

णरतिरिय देसअयदा उक्कस्सेणच्चुदोत्ति णिग्गंथा।
णय अयद देसमिच्छा गेवेज्जंतोत्ति गच्छंति ॥ ५४५ ॥

नरतिर्यंचः देशायता उत्कृष्टेनाच्युतांतं निर्ग्रंथाः।
न च अयता देशमिथ्या ग्रैवेयांतं इति गच्छंति ॥ ५४५ ॥

णरतिरिय। असंयता देशसंयता वा नरास्तिर्यञ्चश्चोत्कृष्टेनाच्युतपर्यन्तं गच्छन्ति। द्रव्यनिर्ग्रन्था नरा भावेनासंयता भावेन देशसंयताः भावेन मिथ्यादृष्टयो वा उपरिमग्रैवेयकपर्यन्तं गच्छन्ति ॥ ५४५ ॥

सव्वट्ठोत्ति सुदिट्ठी महव्वई भोगभूमिजा सम्मा।
सोहम्मदुगं मिच्छा भवणतियं तावसा य वरं ॥ ५४६ ॥

सर्वार्थांतं सुदृष्टिः महाव्रती भोगभूमिजा सम्यंचः।
सौधर्मद्विकं मिथ्या भवनत्रयं तापसाः च वरं ॥ ५४६ ॥

सव्वट्ठो। सर्वार्थसिद्धिपर्यन्तं सद्दृष्टिर्द्रव्यभावरूपेण महाव्रती गच्छति। भोगभूमिजाः सम्यग्दृष्टयः सौधर्मद्विकं गच्छन्ति न ततः उपरि। भोगभू-

मिजा मिथ्यादृष्टयो भवनत्रयं यान्ति न तत उपरि । पंचाग्न्यादिसाधकास्तापसा उत्कृष्टेन भवनत्रयं यान्ति न तत उपरि ॥ ५४६ ॥

चरया य परिव्वाजा बह्मोत्तरपदोत्ति आजीवा ।
अणुदिसअणुत्तरादो चुदा ण केसवपदं जांति ॥ ५४७॥

चरकाश्च परिव्राजा ब्रह्मोत्तरपदांतं आजीवाः।
अनुदिशानुत्तरतः च्युता न केशवपदं यांति ॥ ५४७ ॥

चरणाय । नग्नांडलक्षणाश्चरका एकदण्डित्रिदंडिलक्षणाः परिव्राजका ब्रह्मकल्पपर्यन्तं यान्ति गच्छन्ति न तत उपरि। कंजिकादिभोजिनः आजीवा अच्युतकल्पपर्यन्तं यान्ति न तत उपरि । साम्प्रतं देवगतेश्च्युतानामुत्पत्तिस्वरूपमाह—अनुदिशानुत्तरविमानेभ्यश्च्युताः केशवपदं वासुदेवप्रतिवासुदेवपदं न यान्ति ॥ ५४७ ॥

अथातश्च्युत्वा निर्वाणं गच्छतां नामान्याह;—

सोहम्मो वरदेवी सलोगवाला य दक्खिणमरिंदा ।
लोयंतिय सव्वट्ठा तदो चुदा णिव्वुदिं जांति ॥ ५४८॥

सौधर्मो वरदेवी सलोकपालाश्च दक्षिणामरेंद्राः ।
लौकांतिकाः सर्वार्थाः ततश्च्युता निर्वृत्तिं यांति ॥ ५४८॥

सोहम्मो । सौधर्मेन्द्रस्तस्य पट्टदेवी शची तस्य सोमादिलोकपाला दक्षिणामरेन्द्राः सर्वे लौकान्तिकाः सर्वे सर्वार्थसिद्धिजाः सर्वे ततो देवगतेश्च्युता नियमेन निर्वृतिं यान्ति ॥ ५४८ ॥

अथ त्रिषष्टिशलाकापुरुषाणां पदवीमप्राप्नुवतां नामान्याह;—

णरतिरियगदीहिंतो भवणतियादो य णिग्गया जीवा।
ण लहंते ते पदविं तेवट्ठिसलागपुरिसाणं ॥ ५४९ ॥

नरतिर्यग्गतिभ्यां भवनत्रयाच्च निर्गता जीवाः।
न लभंते ते पदवीं त्रिषष्टिशलाकापुरुषाणाम् ॥ ५४९ ॥

णरतिरिय। नरतिर्यग्गतिभ्यां भवनत्रयाच्च निर्गता जीवास्ते त्रिषष्टिशलाकापुरुषाणां पदवीं न लभन्ते ॥ ५४९ ॥

अथ देवानामुत्पत्तिस्वरूपमाह;—

सुहसयणग्गे देवा जायंते दिणयरोव्व पुव्वणगे।
अंतोमुहुत्त पुण्णा सुगंधिसुहफाससुचिदेहा ॥ ५५० ॥

सुखशयनाग्रे देवा जायंते दिनकर इव पूर्वनगे।
अंतर्मुहूर्ते पूर्णाः सुगंधिसुखस्पर्शशुचिदेहाः ॥ ५५० ॥

सुहसयण। पूर्वाचले दिनकर इवान्तर्मुहूर्ते षट्पर्याप्त्या पूर्णाः सुगन्धिसुखस्पर्शशुचिदेहास्ते देवास्सुखशयनाग्रे जायन्ते ॥ ५५० ॥

अथ तत्रोत्पन्नानां तदनंतरं कृत्यविशेषं गाथात्रयेणाह;—

आणंदतूरजयथुदिरवेण जम्मं विबुज्झ सं पत्तं।
दट्ठूण सपरिवारं गयजम्मं ओहिणा णव्वा ॥ ५५१ ॥

आनंदतूर्यजयस्तुतिरवेण जन्म विबुध्य स्वं प्राप्तं।
दृष्ट्वा सपरिवारं गतजन्म अवधिना ज्ञात्वा ॥ ५५१ ॥

आनंद। आनन्दतूर्यरवेण जयस्तुतिरवेण चेदं देवजन्मेति विबुध्य स्वं प्राप्तं स्वपरिवारं च दृष्ट्वा अवधिज्ञानेन गतजन्म च ज्ञात्वा ॥ ५५१ ॥

धम्मं पससिदूण ण्हादूण दहे भिसेयलंकारं।
लद्धा जिणाभिसेयं पूजं कुव्वंति सद्दिट्ठी ॥ ५५२ ॥

धर्मं प्रशंस्य स्नात्वा ह्रदे अभिषेकालंकारं।
लब्ध्वा जिनाभिषेकं पूजां कुर्वंति सद्दृष्टयः ॥ ५५२ ॥

धम्मं पसंसि। धर्मं प्रशस्य ह्रदे स्नात्वा पट्टाभिषेकमलंकारं च लब्ध्वा सद्दृष्टयः स्वयमेव जिनाभिषेकं पूजां च कुर्वंति ॥ ५५२ ॥

सुरबोहियावि मिच्छा पच्छा जिणपूजणं पकुव्वंति ।
सुहसायरमज्झगया देवा ण विदंति गयकालं ॥ ५५३ ॥

सुरबोधिता अपि मिथ्या पश्चाज्जिनं नपूजनं प्रकुर्वंति ।
सुखसागरमध्यगता देवा न विदंति गतकालं ॥ ५५३ ॥

सुरबोहिया। मिथ्यादृष्टयः सुरप्रबोधिता अपि पश्चाज्जिनपूजां प्रकुर्वन्ति ते सर्वे देवाः सुखसागरमध्यगताः सन्तो गतकालं न विदन्ति॥५५३॥

अथ तेषां देवानां सत्कृत्यमाह;—

महपूजासु जिणाणं कल्लाणेसु य पजांति कप्पसुरा।
अहमिंदा तत्थ ठिया णमंति मणिमउलिघडिदकरा

महापूजासु जिनानां कल्याणेषु च प्रयांति कल्पसुराः ।
अहमिंद्राः तत्र स्थिता नमंति मणिमौलिघटितकराः॥ ५५४ ॥

मह। जिनानां महापूजासु तेषां पंचमहाकल्याणेषु च कल्पजाः सुराः प्रयांति। अहमिंद्रास्तु तत्र स्थिता एव मणिमौलिघटितकराः संतो नमंति ॥ ५५४ ॥

अथ सुरादिसंपत् केषां भवतीत्युक्ते आह;—

विविहतवरयणभूसा णाणसुची सीलवत्थसोम्मंगा।
जे तेसिमेव वस्सा सुरलच्छी सिद्धिलच्छी य ॥ ५५५॥

विविधतपोरत्नभूषाः ज्ञानशुचयः शीलवस्त्रसौम्यांगाः ।
ये तेषामेव वश्या सुरलक्ष्मीः सिद्धिलक्ष्मीश्च ॥ ५५५ ॥

विहित । ये विविधतपोरत्नभूषाः ज्ञानशुचयः शीलवस्त्रसौम्यांगाः तेषामेव सुरलक्ष्मीः सिद्धिलक्ष्मीश्च वश्या भवति ॥ ५५५ ॥

इदानीमष्टमभूमिस्वरूपमाह;—

तिहुवणमुड्ढारूढा ईसिपभारा धरट्ठमी रुंदा ।
दिग्घा इगिसगरज्जू अडजोयणपमिदबाहल्ला ॥ ५५६ ॥

त्रिभुवनमूर्धारूढा ईषत् प्राग्भारा धराष्टमी रुंद्रा ।
दीर्घा एकसप्तरज्जू अष्टयोजनप्रमितबाहल्या ॥ ५५६ ॥

तिहुवण । त्रिभुवनमूर्धारूढा ईषत्प्राग्भारसंज्ञा अष्टमी धरा तस्या रुंद्रं दैर्घ्यं च एकसप्तरज्जू भवतः । तस्या बाहल्यमष्टयोजनप्रमितम् ॥ ५५६ ॥

अथ तन्मध्यस्थासिद्धक्षेत्रस्वरूपं गाथाद्वयेनाह;—

तम्मज्झे रूप्पमयं छत्तायारं मणुस्समहिवासं ।
सिद्धक्खेत्तं मज्झडवेहं कमहीण वेहुलियं ॥ ५५७ ॥

तन्मध्ये रूप्यमयं छत्राकारं मनुष्यमहीव्यासं ।
सिद्धक्षेत्रं मध्येष्टवेधं क्रमहीनं बाहुल्यम् ॥ ५५७ ॥

तम्मज्झे । तन्मध्ये रूप्यमयं छत्राकारं मनुष्यक्षेत्रव्यासं सिद्धक्षेत्रमस्ति । तद्बाहल्यं मध्ये अष्टयोजनवेधं अन्यत्र सर्वत्र क्रमहीनं ज्ञातव्यम् ॥ ५५७ ॥

उत्ताणट्ठियमंते पत्तं व तणु तदुवरि तणुवादे ।
अट्ठगुणड्ढा सिद्धा चिट्ठंति अणंतसुहतित्ता ॥ ५५८ ॥

उत्तानस्थितमंते पात्रमिव तनु तदुपरि तनुवाते ।
अष्टगुणाढ्याः सिद्धाः तिष्ठंति अनंतसुखतृप्ताः ॥ ५५८ ॥

उत्ताण । अंते तनुरूपमुत्तानस्थितपात्रमिव चषकमिवेत्यर्थः तस्य सिद्धिक्षेत्रस्योपरिमतनुवाते अष्टगुणाढ्या अनंतसुखतृप्ताः सिद्धाः तिष्ठंति ॥ ५५८ ॥

अथ अनंतसुखतृप्तत्वे दृष्टांतांतरं गाथाद्वयेनाह;—

एयं सत्थं सव्वं सत्थं वा सम्ममेत्थ जाणंता ।
तिव्वं तुस्संति णरा किण्ण समत्थत्थतच्चण्हा ॥ ५५९ ॥

एकं शास्त्रं सर्वं शास्त्रं वा सम्यगत्र जानंतः ।
तीव्रं तुष्यंति नराः किं न समस्तार्थतत्त्वज्ञाः ॥ ५५९ ॥

एयं । एकं शास्त्रं सर्वं शास्त्रं वा सम्यगत्र जानंतो नरास्तीव्रं तुष्यंति समस्तार्थतत्त्वज्ञास्तु सिद्धाः किं न तुष्यंति? अपि तु तुष्यंत्येव ॥ ५५९ ॥

चक्किकुरुफणिसुरेंदेसहमिंदे जं सुहं तिकालभवं ।
तत्तो अणंतगुणिदं सिद्धाणं खणसुहं होदि ॥ ५६० ॥

चक्रिकुरुफणिसुरेंद्रेषु अहमिंद्रे यत् सुखं त्रिकालभवं ।
तत अनंतगुणितं सिद्धानां क्षणसुखं भवति ॥ ५६० ॥

चक्कि । चक्रिषु कुरुषु फणींद्रेषु सुरेंद्रेष्वहमिंद्रेषु च पूर्वपूर्वस्मादुत्तरोत्तरेषामनंतगुणितं यत्सुखं त्रिकालभवं ततः सर्वेभ्यः सिद्धानां क्षणोत्थं सुखमनंतगुणितं भवति ॥ ५६० ॥

इति श्रीनेमिचंद्राचार्यविरचिते त्रिलोकसारे वैमानिकलोकाधिकारः ॥ ५ ॥

अथ नरतिर्यग्लोकाधिकारः ॥ ६ ॥

इतः परं प्राप्तावसरं नरतिर्यग्लोकं निरूपयितुमनास्तावल्लोकद्वयस्थितजिनभवनस्तुतिपूर्वकं तत्संख्यामाह;—

णमह णरलोयजिणघर चत्तारि सयाणि दोविहीणाणि
बावण्णं चउ चउरो णंदीसर कुंडले रुचगे ॥ ५६१ ॥

नमत नरलोकजिनगृहाणि चत्वारि शतानि द्विविहीनानि ।
द्वापंचाशत् चत्वारि चत्वारि नंदीश्वरे कुंडले रुचके ॥ ५६१ ॥

णमह । नरलोके चतुःशतानि द्विविहीनानि ३९८ जिनगृहाणि नंदीश्वरद्वीपे कुंडलद्वीपे रुचकद्वीपे च तिर्यग्लोकसंबंधीनि यथासंख्यं द्वापंचाशज्जिनगृहाणि चत्वारि जिनगृहाणि चत्वारि जिनगृहाणि नमत ॥ ५६१ ॥

अथ नरलोकजिनग्रहाणि कुत्र कुत्र तिष्टंतीत्युक्ते आह;—

मंदरकुलवक्खारिसुमणुसुत्तररुप्पजंबुसामलिसु ।
सीदी तीसं तु सयं चउ चउ सत्तरिसयं दुपणं ॥ ५६२ ॥

मंदरकुलवक्षारेषुमानुषोत्तररूप्यजंबूशाल्मलिषु ।
अशीतिः त्रिंशत् तु शतं चत्वारि चत्वारि सप्ततिशतं द्विपंच ५६२

मंदर । मंदरेषु ५ कुलपर्वतेषु ३० वक्षारेषु १०० इष्वकारेषु ५ मानुषोत्तरे १ विजयार्धेषु १७० जंबूवृक्षेषु ५ शाल्मलीवृक्षेषु ५ यथासंख्यं जिनगृहाण्यशीति ८० त्रिंशत् ३० शतं १०० चत्वारि ४ चत्वारि ४ सप्तत्युत्तरशतं १७० द्विवारपंच ५ भवंति ॥ ५६२ ॥

अथ अग्रे वक्ष्यमाणानामर्थानां मंदराश्रयत्वात्तानेव प्रथमं प्रतिपादयति;—

जंबूदीवे एक्को इसुकयपुव्ववरचावदीवदुगे ।
दो द्दो मंदरसेला वहुमज्झगविजयबहुमज्झे ५६३

जंबूद्वीपे एकः इषुकृतपूर्वापरचापद्वीपद्विके ।
द्वौ द्वौ मंदरशैलौ बहुमध्यगविजयबहुमध्ये ॥ ५६३ ॥

जंबू । जंबूद्वीपे एको मंदरः इक्ष्वाकारपर्वतकृतपूर्वापरचापद्वीपद्विके द्वौ द्वौ मंदरशैलौ । तत्रापि ते मंदराः क्व तिष्ठंति ? भरतादिदेशानामतिशयेन मध्यस्थितो विजयः देश इत्यर्थः तस्यात्यंतमध्यप्रदेशे तिष्ठंति ॥ ५६३ ॥

अथ तेषां मंदराणामुभयपार्श्वस्थितक्षेत्राणां नामानि कथयति;—

दक्खिणदिसासु भरहो हेमवदो हरिविदेहरम्मो य ।
हइरण्णवदेरावदवस्सा कुलपव्वयंतरिया ॥ ५६४ ॥

दक्षिणदिशासु भरतो हैमवतः हरिविदेहरम्यश्च ।
हैरण्यवदैरावतवर्षाः कुलपर्वतांतरिताः ॥ ५६४ ॥

दक्खिण । तेषां मंदराणां दक्षिणदिशाया आरभ्य भरतः हैमवतः हरिः विदेहः रम्यकः हैरण्यवतः ऐरावत इत्येते वर्षा हिमवदादिकुलपर्वतांतरिताः ॥ ५६४ ॥

अथ तेषां पर्वतानां नामादिकं गाथाद्वयेनाह;—

हिमवं महादिहिमवं णिसहो णीलो य रुम्मि सिहरी य
मूलोवरि समवासा मणिपासा जलणिहिं पुट्ठा ॥५६५॥

हिमवान् महादिहिमवान् निषधः नीलश्च रुक्मी शिखरी च ।
मूलोपरि समव्यासा मणिपार्श्वा जलनिधिं स्पृष्टाः ॥ ५६५ ॥

हिमवं । हिमवान् महाहिमवान् निषधो नीलश्च रुक्मी शिखरी च, एते सर्वे मूलोपरि समानव्यासाः मणिमयपार्श्वा जलनिधिं स्पृष्टाः ॥ ५६५ ॥

हेमज्जुणतवणीया कमसो वेलुरियरजदहेममया ।
इगिदुगचउचउदुगइगिसयतुंगा होंति हु कमेण ॥५६६

हेमार्जुनतपनीयाः क्रमशः वैडूर्यरजतहेममयाः ।
एकद्विकचतुश्चतुर्द्विकैकशततुंगा भवंति हि क्रमेण ॥ ५६६ ॥

हेम । हिमवर्णः अर्जुनवर्णः श्वेत इत्यर्थः । तपनीयवर्णः कुक्कटचूडच्छविरित्यर्थः वैडूर्यवर्णः मयूरकंठच्छविरित्यर्थः, रजतवर्णः हेममयः एते क्रमशः तेषां पर्वतानां वर्णाः एकशतः द्विशतः चतुःशतः चतुःशतः द्विशतः एकशतः क्रमेण तेषामुत्सेधा भवंति ॥ ५६६ ॥

इदानीं हिमवदादिकुलपर्वतानामुपरि स्थितह्रदानां नामान्याह;—

पउममहापउमा तिगिंछा केसरि महादिपुण्डरिया ।
पुंडरिया य दहाओ उवरिं अणुपव्वदायामा ॥५६७॥

पद्मो महापद्मः तिगिंछः केसरिः महादिपुंडरीकः ।
पुंडरीकश्च ह्रदा उपरि अनुपर्वतायामाः ॥ ५६७ ॥

पउम । पद्मो महापद्मस्तिगिंछः केसरिः महापुंडरीकः पुंडरीक इत्येते ह्रदास्तेषामुपरि पर्वतानुवर्त्यायामास्तिष्ठंति ॥ ५६७ ॥

अथ तेषां ह्रदानां व्यासादिकं प्रतिपादयन् तत्रस्थांबुजानां स्वरूपं निरूपयति;—

वासायामोगाढं पणदसदसमहदपव्वदुदयं खु ।
कमलस्सुदओ वासो दोविय गाहस्स दसभागो ॥५६८॥

व्यासायामागाधाः पंचदशदशमहतपर्वतोदयाः खलु ।
कमलस्योदयः व्यासः द्वावपि गाधस्य दशभागौ ॥ ५६८ ॥

वासा । तेषां ह्रदानां व्यासायामागाधा यथासंख्यं पंचगुणितदशगुणितदशमभागहततत्तत्पर्वतोदयाः १००।२००।४००।४००।२००।१०० खलु । व्या ५००= आ १००० वे १० तत्रस्थकमलस्योदयव्यासौ तु द्वावपि तत्तद्ध्रदानां गाधदशमभागौ ज्ञातव्यौ ॥ ५६८ ॥

अथ तेषां कमलानां विशेषस्वरूपं गाथाद्वयेनाह,—

णियगंधवासियदिसं वेलुरियविणिम्मिउच्चणालजुदं ।
एक्कारसहस्सदलं णववियसियमत्थि दहमज्झे ॥ ५६९ ॥

निजगंधवासितदिशं वैडूर्यविनिर्मितोच्चनालयुतम् ।
एकादशसहस्रदलं नवविकासितमस्ति ह्रदमध्ये ॥ ५६९ ॥

णिय । निजगंधवासितदिशं वैडूर्यविनिर्मितोच्चनालयुतं एकादशोत्तरसहस्रदलं नवविकसितं पृथ्वीसाररूपं कमलं तेषां ह्रदानां मध्ये अस्ति ॥५६९

अथ एतदनुगुणं प्रक्षेपगाथामाह;—

दहमज्झे अरविंदयणालं बादालकोसमुव्विद्धं ।
इगिकोसं बाहल्लं तस्स मुणालं ति रजदमयं ॥ ५७० ॥

ह्रदमध्ये अरविन्दकनालं द्वाचत्वारिंशत्क्रोशोत्सेधम् ।
एकक्रोशं बाहल्यं तस्य मृणालं त्रिः रजतमयम् ॥ ५७० ॥

दह । ह्रदमध्येरविंदस्य नालं द्वाचत्वारिंशत्क्रोशोत्सेधं एकक्रोशबाहल्यं तस्य मृणालं तु त्रिक्रोशबाहल्यं रजतमयं स्यात् ॥ ५७० ॥

कमलदलजलविणिग्गयतुरियुदयं वास कण्णियं तत्थ ।
सिरिरयणगिहं दिग्घति कोसं तस्सद्धमुभयजोगदलं ॥

कमलदलजलविनिर्गततुर्योदयः व्यासः कर्णिकायाः तत्र ।
श्रीरत्नगृहं दैर्ध्यत्रिकं क्रोशः तस्यार्धमुभययोगदलं ॥५७१॥

कमल । कमलोत्सेधार्धमेव नालस्य जलविनिर्गतिः कमलचतुर्थांश एव उदयव्यासौ कर्णिकायाः । तत्र श्रीदेवताया रत्नमयं गृहमस्ति तस्य दैर्घ्यत्रिकं दैर्घ्यव्यासोदयाः यथासंख्यं क्रोशप्रमाणं तस्यार्धं तयोरुभययोर्योगार्धं च स्यात् ॥ ५७१ ॥

अथ तन्निवासिनीनां देवीनां नामानि तासां स्थितिपूर्वकं तत्परिवारं चाह;—

सिरिहिरिधिदिकित्तीवि य बुद्धीलच्छी य पल्लठिदिगाओ
लक्खं चत्तसहस्सं सयदहपण पउमपरिवारा ॥ ५७२ ॥

श्री ह्री धृतिः कीर्तिः अपि च बुद्धिः लक्ष्मीः च पल्यस्थितिकाः।
लक्षं चत्वारिंशत्सहस्रं शतदशपंच पद्मपरिवारः ॥ ५७२ ॥

सिरि। श्रीह्रीधृतिकीर्तिबुद्धिलक्ष्म्याख्या देव्यः पल्यास्थितिकाः एकं लक्षं चत्वारिंशत्सहस्राणि शतं दश पंचप्रमाणानि कमलस्य परिवारपद्मानि १४०११५ ॥ ५७२ ॥

अथ परिवारकमलस्थितं श्रीदेवीनां परिवारं गाथाचतुष्टयेनाह;—

आइच्चचंदजदुपहुदीओ तिप्परीसमग्गिजमणिरुदी।
बत्तीसताल अडदाल सहस्सा कमलममरसमं ॥ ५७३॥

आदित्यचंद्रजतुप्रभृतयः त्रिपारिषदाः अग्नियमनैर्ऋत्यां।
द्वात्रिंशत् चत्वारिंशत् अष्टचत्वारिंशत्सहस्राणि कमलानि अमरसमानि।

आइच्च। आदित्यचंद्रजतुप्रभृतयस्त्रयः परिषद्देवाः क्रमेणाग्नियमनैर्ऋत्यां दिशि तिष्ठंति तेषां संख्या द्वात्रिंशत्सहस्राणि चत्वारिंशत्सहस्राणि अष्टचत्वारिंशत्सहस्राणि भवंति कमलानि चामरसमानि ॥ ५७३ ॥

आणीयगेहकमला पच्छिमदिसि सग गयस्सरहवसहा ॥
गंधव्वणच्चपत्ती पत्तेयं दुगुणसत्तकक्खजुदा ॥ ५७४ ॥

आनीकगेहकमलानि पश्चिमदिशि सप्त गजाश्वरथवृषभाः।
गंधर्वनृत्यपत्तयः प्रत्येकं द्विगुणसप्तकक्षयुताः ॥ ५७४ ॥

आणीय। आनीकदेवानां गेहकमलानि सप्त पश्चिमायां दिशि संति ते

आनीकाः गजाश्वरथवृषभगंधर्वनृत्यपदातय इति सप्तापि प्रत्येकं वक्ष्यमाणस्व-सामानिकसम ४००० प्रथमानीकात् द्विगुणगुणसप्तकक्षयुताः ॥ ५७४ ॥

उत्तरदिसि कोणदुगे सामाणियकमल चदुसहस्समदो।
अब्भंतरे दिसं पडि पुह तेत्तियमंगरक्खपासादं ॥ ५७५

उत्तरदिशि कोणद्विके सामानिककमलानि चतुःसहस्रमतः।
अभ्यंतरे दिशं प्रति पृथक् तावन्मात्रांगरक्षप्रासादाः ॥५७५॥

उत्तर। उत्तरदिग्भागस्थितकोण द्वये सामानिकदेवानां कमलानि चतुः-सहस्राणि संति अतोऽभ्यंतरे प्रतिदिशं पृथक् पृथक् तावन्मात्रां ४००० गरक्षप्रासादाः स्यु ॥ ५७५ ॥

अब्भंतरदिसि विदिसे पडिहारमहत्तरट्ठसयकमलं।
मणिदलजलसमणालं परिवारं पउममाणद्धं ॥ ५७६ ॥

अभ्यंतरदिशि विदिशि प्रतिहारमहत्तराणामष्टशतकमलानि।
मणिदलजलसमनालं परिवारं पद्ममानार्धम् ॥ ५७६ ॥

अब्भंतर। तेभ्यः अभ्यंतरदिशि १४ विदिशि च १३ प्रत्येकमेवं सति प्रतिहारमहत्तराणामष्टोत्तरशतकमलानि मणिमयदलानि जलोत्सेधसमनालानि संति परिवारपद्मविशेषस्वरूपं सर्वं मुख्यपद्मप्रमाणार्धं स्यात् ॥ ५७६ ॥

सिरिगिहदलमिदरगिहं सोहम्मिंदस्स सिरिहिरिधिदीओ
कित्ती बुद्धी लच्छी ईसाणहिवस्स देवीओ ॥ ५७७ ॥

श्रीग्रहदलमितरगृहं सौधर्मेन्द्रस्य श्रीह्रीधृतयः।
कीर्तिबुद्धिलक्ष्म्यः ईशानाधिपस्य देव्यः ॥ ५७७ ॥

सिरि। श्रीगृहव्यासादिप्रमाणार्धं इतरगृहव्यासादिप्रमाणं स्यात्। श्रीह्रीधृतयः सौधर्मेंद्रस्य देव्यः कीर्तिबुद्धिलक्ष्म्यः ईशानाधिपस्य देव्यः स्युः ॥ ५७७ ॥

अथ तेषु सरोवरेषु समुत्पन्नमहानदीनां संज्ञा गाथाद्वयेनाह;—

सरजा गंगासिंधू रोहि तहा रोहिदास णाम णदी।
हरि हरिकंता सीदा सीदोदा णारि णरकंता ॥ ५७८॥

सरोजाः गंगासिधू रोहित्तथा रोहितास्या नाम नदी।
हरित् हरिकांता सीता सीतोदा नारी नरकाता ॥ ५७८ ॥

सरजा। सरसि जाताः गंगासिंधू रोहित्तथा रोहितास्या नामा नदी हरिद्धरिकांता सीता सीतोदा नारी नरकांता ॥ ५७८ ॥

सरिदा सुवण्णरूप्पयकूला रत्ता तहेव रत्तोदा।
पुव्वावरेण कमसो णाभिगिरिपदक्खणेण गया ॥५७९॥

सरितः सुवर्णरूप्यकूला रक्ता तथैव रक्तोदा।
पूर्वापरेण क्रमशो नाभिगिरिप्रदक्षिणेन गताः ॥ ५७९ ॥

सरिदा। सुवर्णकूला रूप्यकूला रक्ता तथैव रक्तोदा। एताः सरितः क्रमशः पूर्वोक्ताः पूर्वमुखेनापरोक्ताः अपरमुखेन नाभिगिरिप्रदक्षिणेन गताः॥ ५७९॥

अथ तासां नदीनां उभयतटस्वरूपं कथयति;—

पुण्णागणागपूगीकंकेल्लितमालकेलितंबूली।
लवलीलवंगमल्लीपहुदी सयलणदिदुतडेसु ॥ ५८० ॥

पुंनागनागपूगीकंकेल्लितमालकदलीतांबूली।
लवलीलवंगमल्लीप्रभृतयः सकलनदीद्वितटेषु ॥ ५८० ॥

पुण्णाग। पुंनागः नागकेसरः पूगी कंकेल्लिः तमालः कदली तांबूली लवली लवंगः मल्लीप्रभृतयो वृक्षाः सकलनदीद्वितटेषु संति ॥ ५८० ॥

अथ कस्मिन् कस्मिन् सरस्येता नद्यः उत्पन्ना इति कथयति;—

गंगादु रोहिदस्सा पउमे रत्तदु सुवण्णमंतदहे।
सेसे दो द्दो जोयणदलमंतरिदूण णाभिगिरिं ॥ ५८१ ॥

गंगाद्रे रोहितास्या पद्मे रक्ताद्रे सुवर्णा अंतह्रदे ।
शेषेषु द्वे द्वे योजनदलमंतरित्वा नाभिगिरिम् ॥ ५८१ ॥

गंगा । गंगा सिंधुः रोहितास्या च पद्मह्रदे उत्पन्नाः रक्ता रक्तोदा सुवर्णकूला चांतह्रदे पुण्डरीकाख्ये उत्पन्नाः । शेषेषु सरस्सु द्वे द्वे नद्यौ उत्पन्ने, तत्र गंगा सिंधू रक्ता रक्तोदेति चतुर्नदीः परित्यज्य शेषा नद्यो नाभिगिरिं योजनार्धमंतरित्वा गताः तत्र गंगासिंधुरक्तारक्तोदानां नाभिगिरेरभावादेवावर्जिताः ॥ ५८१ ॥

अथ तत्र गंगाया उत्पत्तिं तद्गमनप्रकारं च गाथात्रयेणाह;—

वज्जमुहदो जणित्ता गंगा पंचसयमेत्थ पुव्वमुहं ।
गत्ता गंगाकूडं अविपत्ता जोयणद्धेण ॥ ५८२ ॥

वज्रमुखतः जनित्वा गंगा पंचशतमत्र पूर्वमुखं ।
गत्वा गंगाकूटं अप्राप्य योजनार्धेन ॥ ५८२ ॥

वज्ज । पद्मसरोवरस्थवज्रद्वाराज्जनित्वा गंगा पंचशतयोजनान्यत्र हिमवति पूर्वमुखं गत्वा योजनार्द्धेन गंगाकूटमप्राप्य ॥ ५८२ ॥

दक्खिणमुहं वलित्ता जोयणतेवाससहियपंचसयं ।
साहियकोसद्धजुदं गत्ता जा विविहमणिरूवा ॥५८३॥

दक्षिणमुखं वलित्वा योजनत्रयोविंशतिसहितपंचशतम् ।
साधिकक्रोशार्धयुतं गत्वा या विविधमणिरूपा ॥ ५८३ ॥

दक्खिण । तस्माद्दक्षिणमुखं वलित्वा व्यावृत्य त्रयोविंशतिसहितपंचशतयोजनानि साधिकक्रोशार्धयुतानि गत्वा । अस्य वासना—भरतप्रमाणं यो ५२६$\frac{६}{१९}$ द्विगुणीकृत्य १०५२$\frac{१२}{१९}$ तत्र नदीव्यासं यो ६ क्रो १ अपनीय १०४६ अर्धयित्वा ५२३ शेषयोजनं $\frac{१२}{१९}$ चतुर्भिः क्रोशं कृत्वा $\frac{४८}{१९}$ भक्त्वा $\frac{१०}{१९}$ आगते लब्धे क्रो २ एकं क्रोशं नदीव्यासाय दद्यात् । अवशिष्टं

शेषं १०/१९ लब्धैकक्रोशं चार्धयेत् । २ ५/१९ । १/२ एवं सति योजणतेवीसेत्याद्युक्तमंकं व्यक्तं भवति । या जिह्विका प्रणालिका विविधमणिरूपा ॥ ५८३ ॥

कोसदुगदीहबहला वसहायारा य जिब्भियारुंदा ।
छज्जोयणं सकोसं तिस्से गंतूण पडिदा सा ॥ ५८४ ॥

क्रोशद्वयदीर्घबाहल्या वृषभाकारा च जिह्विकारुंद्रा ।
षड्योजनं सक्रोशं तस्यां गत्वा पतिता सा ॥ ५८४ ॥

कोस । क्रोशद्वयदीर्घबाहल्या वृषभाकारा कोशसहितषड्योजनरुंद्रा तस्यां प्रणालिकायां गत्वा सा गंगा नदी पतिता ॥ ५८४ ॥

अथ प्रणालिकायाः वृषभाकारत्वमन्वर्थयति;—

केसरिमुहसुदिजिब्भादिट्ठी भूसीसपहुदिणो सरिसा ।
तेणिह पणालिया सा वसहायारेत्ति णिद्दिट्ठा ॥ ५८५ ॥

केशरिमुखश्रुतिजिह्वादृष्टयः भूशीर्षप्रभृतयः गोसदृशाः ।
तेनेह प्रणालिका सा वृषभाकारा इति निर्दिष्टा ॥ ५८५ ॥

केसरि । मुखश्रुतिजिह्वादृष्टयः केसरिसदृक्षाः भूशीर्षप्रभृतयः गोसदृक्षास्तेन कारणेनेह सा प्रणालिका वृषभाकारेति निर्दिष्टा ॥ ५८५ ॥

अथ पतितायास्तस्याः पतनस्वरूपं गाथापंचकेनाह;—

भरहे पणकदिमचलं मुच्चा कहलोवमा दहव्वासा ।
गिरिमूले दहगाहं कुंडं वित्थारसट्ठिजुदं ॥ ५८६ ॥

भरते पंचकृतिमचलं मुक्त्वा काहलोपमा दशव्यासा ।
गिरिमूले दशगाधं कुंडं विस्तारषष्टियुतम् ॥ ५८६ ॥

भरहे । भरते पंचकृति २५ योजनमचलं मुक्त्वा काहलोपमा दशयो-

जनव्यासा सती गिरिमूले दशयोजनावगाधषष्टियोजनविस्तारयुतं कुंडमस्ति ॥ ५८६ ॥

मज्झे दीओ जलदो जोयणदलमुग्गओ दुघणवासो ।
तम्मज्झे वज्जमओ गिरी दसुस्सेहओ तस्स ॥ ५८७ ॥

मध्ये द्वीपः जलतः योजनदलमुद्गतः द्विघनव्यासः ।
तन्मध्ये वज्रमयः गिरिः दशोत्सेधः तस्य ॥ ५८७ ॥

मज्झे । तन्मध्ये जलादुपरि योजनार्धमुद्गतः द्विघन ८ व्यासः द्वीपोस्ति। तन्मध्ये वज्रमयो दशयोजनोत्सेधो गिरिरस्ति तस्य ॥ ५८७ ॥

भूमज्झग्गो वासो चदु दुगि सिरिगेहमुवरि तव्वासो ।
चावाणं तिदुगेक्कं सहस्समुदओ दु दुसहस्सं ॥ ५८८ ॥

भूमध्याग्रो व्यासः चतुः द्विकं एकं श्रीगेहमुपरि तद्व्यासः।
चापानां त्रिद्विकैकं सहस्रमुदयस्तु द्विसहस्रम् ॥ ५८८ ॥

भूम । भूव्यासो मध्यव्यासो अग्रव्यासश्च यथासंख्यं योजनानि चत्वारि द्वि एकं स्युः । तस्य गिरेरुपरि श्रीगृहमस्ति । तद्भूमध्याग्रव्यासश्चापानां त्रिसहस्रं द्विसहस्रमेकसहस्रं उदयस्तु द्विसहस्रं स्यात् ॥ ५८८ ॥

पणसयदलं तदंतो तद्दारं ताल वास दुगुणदयं ।
सव्वत्थ धणू णेयं दोण्णि कवाला य वज्जमया ॥५८९॥

पंचशतदलं तदंतरं तद्द्वारं चत्वारिंशत् व्यासं द्विगुणोदयं ।
सर्वत्र धनुः ज्ञेयं द्वौ कपाटौ च वज्रमयौ ॥ ५८९ ॥

पण । श्रीगृहाभ्यंतराविस्तारः पंचशततद्दलयोर्मिलितप्रमाणं स्यात् । तस्य श्रीगृहद्वारं चत्वारिंशद्व्यासं ४० तद्द्विगुणो ८० दयं स्यात् । सर्वत्र श्रीगृहमानं धनुः प्रमितं ज्ञेयं तस्य द्वौ कवाटौ वज्रमयौ ॥ ५८९ ॥

सिरिगिहसीसट्ठियंबुजकण्णियसिंहासणं जडामउलं ।
जिणमभिसेत्तुमणा वा ओदिण्णा मत्थए गंगा ॥ ५९० ॥

श्रीगृहशीर्षस्थितांबुजकर्णिकासिंहासनं जटामकुटं ।
जिनमभिषेक्तुमना वा अवतीर्णा मस्तके गंगा ॥ ५९० ॥

सिरि । श्रीगृहशीर्षास्थितांबुजकार्णिकासिंहासनं जटामकुटं जिनमभिषिक्तुमना इव जिनमस्तके गंगावतीर्णा ॥ ५९० ॥

अथ कुंडात् निर्गत्य गच्छंत्या गंगायाः स्वरूपं तत्स्थानस्वरूपं च गाथाषट्केनाह;—

कुंडादो दक्खिणदो गत्ता खंडप्पवादणामगुहं ।
अडजोयणवित्थिण्णा विणिग्गया कुदवहिट्ठादो ॥५९१॥

कुंडात् दाक्षिणतः गत्वा खंडप्रपातनामगुहाम् ।
अष्टयोजनविस्तीर्णा विनिर्गता कुतपाधस्तात् ॥ ५९१ ॥

कुंडादो । कुंडान्निर्गत्य दक्षिणाभिमुखं गत्वा विजयार्धस्य खंडप्रपातनामगुहां कुतपादधस्तात्प्रविश्याष्टयोजनविस्तीर्णा सती पुनः कुतपादधस्तादेव विनिर्गता ॥ ५९१ ॥

दारगुहुच्छयवासा अड बारस पव्वदं व दीहत्तं ।
वज्जछवासकवाडदु वेयड्ढगुहा दुगुभयंते ॥ ५९२ ॥

द्वारगुहोच्छ्रयव्यासौ अष्ट द्वादश पर्वत इव दीर्घत्वं ।
वज्रषट्व्यासकपाटद्वयं विजयार्धगुहा द्विकोभयांते ॥ ५९२ ॥

दार । द्वारगुहयोः प्रत्येकमुच्छ्रयव्यासावष्टौ ८ द्वादश १२ योजनौ पर्वतविस्तारवद्गुह ५० योर्दीर्घत्वं विजयार्धगुहाद्वयोभयांते वज्रमयषड्योजनव्यासकवाटद्वयमस्ति ॥ ५९२ ॥

उम्मग्गणिमग्गणदी गुहमज्झगकुंडजा दु पुव्ववरे ।
जोयणदुगदीहाओ पुसंति उभयंतदो गंगं ॥ ५९३ ॥

उन्मग्ननिमग्ननद्यौ गुहामध्यगकुंडजे तु पूर्वापरस्याम् ।
योजनद्वयदैर्ध्ये स्पृशतः उभयांततः गंगाम् ॥ ५९३ ॥

उम्मग्ग । उन्मग्ननिमग्ननद्यौ पूर्वापरदिशि गुहामध्यगतकुंडादुत्पद्योभयांततः योजनद्वयदैर्घ्यै सत्यौ गंगां स्पृशतः ॥ ५९३ ॥

णियजलपवाहपडिदं दव्वं गुरुगंपि णेदि उवरि तटं ।
जम्हा तम्हा भण्णदि उम्मग्गा वाहिणी एसा ॥ ५९४ ॥

निजजलप्रवाहपतितं द्रव्यं गुरुकमपि नयति उपरि तटम् ।
यस्मात् तस्मात् भण्यते उन्मग्ना वाहिनी एषा ॥ ५९४ ॥

णिय । निजजलप्रवाहपतितं गुरुकमपि द्रव्यं यस्मादुपरि तटं नयति तस्मादेषा उन्मग्नावाहिनीति भण्यते ॥ ५९४ ॥

णियजलभरउवरि गदं दव्वं लहुगंपि णेदि हिट्ठम्मि ।
जेण्णं तेण्णं भण्णदि एसा सरिया णिमग्गंति ॥ ५९५ ॥

निजजलभरोपरि गतं द्रव्यं लघुकमपि नयति अधस्तनं ।
येन तेन भण्यते एषा सरित् निमग्ना इति ॥ ५९५ ॥

णिय । निजजलभारोपरिगतं लघुकमपि द्रव्यमधस्तान्नयति येन तेनैषा सरिन्निमग्नेति भण्यते ॥ ५९५ ॥

तत्तो दक्खिणभरहस्सद्धं गंतूण पुव्वदिसवदणा ।
मागहदारंतरदो लवणसमुद्दं पविट्ठा सा ॥ ५९६ ॥

ततो दक्षिणभरतस्यार्धं गत्वा पूर्वादिशावदना ।
मागधद्वारांतरतः लवणसमुद्रं प्रविष्टा सा ॥ ५९६ ॥

तत्तो । ततो गुहाया निर्गत्य दक्षिणभरतस्यार्धं ११९ भा ३/३८ गत्वा । एतावत्कथं ? भरतप्रमाणे ५२६ ६/१९ विजयार्धव्यासं ५० त्यक्त्वा ४७६ ६/१९ अर्धिते २३८ ३/१९ एकभरतस्य प्रमाणं । एकस्मिन् पुनरर्धिते ११९ ३/३८ दक्षिणभरतार्धं स्यात् । पूर्वदिग्वदना मागधद्वारांतरतः सा गंगा लवणसमुद्रं प्रविष्टा ॥ ५९६ ॥

इदानीं सिंधुनदीस्वरूपं निरूपयति;—

गंगसमा सिंधुणदी अवरमुहा सिंधुकूडविणिवित्ता ।
तिमिसगुहादवरंबुहिमिया पभासक्खदारादो ॥ ५९७ ॥

गंगासमा सिंधुनदी अपरमुखा सिंधुकूटविनिवृत्ता ।
तिमिस्रागुहादपरांबुधिमिता प्रभासाख्यद्वारतः ॥ ५९७ ॥

गंग । गंगाया या वर्णनोक्ता तत्समा सिंधुनदी । अयं विशेषः । इयं त्वपरदिगभिमुखा सिंधुकूटाद्विनिवृत्य तमिस्रगुहां प्रविश्य ततोपि निर्गत्य प्रभासाख्यद्वारतः अपरांबुधिमिता । शेषं सर्वं गंगावदवगंतव्यम् ॥ ५९७ ॥

अथ शेषनदीनां स्वरूपमाह;—

सेसा रूप्पंता दहवित्थारूणचलरुंददलमुवरिं ।
गंतूण दक्खिणुत्तरमणुपुट्ठा पुव्ववरजलहिं ॥ ५९८ ॥

शेषा रूप्यंता ह्रदविस्तारोनाचलरुंद्रदलमुपरि ।
गत्वा दक्षिणोत्तरमनुस्पृष्टाः पूर्वापरजलधिम् ॥ ५९८ ॥

सेसा । शेषा रोहिदाद्या रूप्यकूलांता नद्यः स्वकीयस्वकीयह्रदविस्तारं ५००।२०००।२०००।१०००।५०० द्वि २ अष्ट ८ द्वात्रिंशत् ३२ द्वात्रिंशत् ३२ अष्ट ८ द्विकाभिः २ हिमवतादिशलाकाभिर्भरतक्षेत्रप्रमाणे ५२६ ६/१९ गुणिते सति हिमवदादिपर्वतानां विस्तारः स्यात् । हिम १०५२ १२/१९ महा ४२१० १०/१९ निष १६८४२ २/१९ नील १६८४२ २/१९ रुक्मि ४२१० १०/१९

शिख १०५२$\frac{१२}{१९}$ एतस्मिन्नचलरुंद्रे न्यूनयित्वा ५५२$\frac{१२}{१९}$।३२१०$\frac{१०}{१९}$ १४८४२$\frac{२}{१९}$।१४८४२$\frac{२}{१९}$।३२१०$\frac{१०}{१९}$।५५२$\frac{१२}{१९}$ अर्धीकृतप्रमाणं हिम २७६$\frac{६}{१९}$ महा १६०५$\frac{५}{१९}$ निष ७४२१$\frac{१}{१९}$ नील ७४२१$\frac{१}{१९}$ रुक्मि १६०५$\frac{५}{१९}$ शिखरि २७६$\frac{६}{१९}$ तत्तत्पर्वतस्योपरि दक्षिणोत्तराभिमुखं गत्वा अनु पश्चात्पूर्वापरजलधिं स्पृष्टाः ॥ ५९८ ॥

अथ रक्तारक्तोदादीनां प्रणालिकादिप्रमाणमाह;—

गंगादुगं व रत्तारत्तोदा जिब्भियादिया सव्वे ।
सेसाणं पि य णेया तेवि विदेहोत्ति दुगुणकमा ॥५९९॥

गंगाद्विकं व रक्तारक्तोदा जिह्विकादिका सर्वे ।
शेषाणामपि च ज्ञेयाः तेपि विदेहांतं द्विगुणक्रमाः ॥ ५९९ ॥

गंगा । गंगाद्विकमिव रक्तारक्तोदयोर्जिह्विकादिप्रमाणविशेषाः सर्वे शेषनदीनामपि वातप्रणालिकादयः सर्वेपि विदेहपर्यंतं द्विगुणक्रमा ज्ञेयाः ॥ ५९९ ॥

अथ तासां नदीनां विस्तारमाह;—

गंगदु रत्तदु वासा सपादछण्णिग्गमे विदेहोत्ति ।
दुगुणा दसगुणमंते गाहो वित्थार पण्णंसो ॥ ६०० ॥

गंगाद्वयोः रक्ताद्वयोः व्यासाः सपादषट् निर्गमे विदेहांतम् ।
द्विगुणा दशगुणा अंते गाधः विस्तारः पंचाशदंशः ॥ ६०० ॥

गंगदु । गंगाद्विकरक्ताद्विकयोर्ह्रदनिर्गमव्यासाः सपादषड्योजनानि ६$\frac{१}{४}$ अन्यासां नदीनां निर्गमव्यासाः विदेहपर्यंतं द्विगुणक्रमाः स्युः । सर्वासां नदीनामंते समुद्रप्रवेशे व्यासा दशगुणाः सर्वासां गाधस्तत्तद्विस्तारपंचाशदंशः स्यात् ॥ ६०० ॥

अथ तासां नदीनां तोरणस्वरूपं गाथाद्वयेनाह;—

णदिणिग्गमे पवेसे कुंडे अण्णत्थ चावि तोरणयं ।
विंबजुदं उवरिं तु दिक्कण्णावाससंजुत्तं ॥ ६०१ ॥

नदीनिर्गमे प्रवेशे कुंडे अन्यत्र चापि तोरणकम् ।
बिंबयुतं उपरि तु दिक्कन्यावाससंयुक्तम् ॥ ६०१ ॥

णदि । नदीनिर्गमे प्रवेशे कुंडे अन्यत्रापि च उपरि जिनबिंबयुतं दिक्कन्यावाससंयुक्तं तोरणमस्ति ॥ ६०१ ॥

तत्तोरणवित्थारो सगसगणदिवाससरिसगो उदओ ।
वासादु दिवड्ढगुणो सव्वत्थ दलं हवे गाहो ॥ ६०२॥

तत्तोरणविस्तारः स्वकस्वकनदीव्याससदृशकः उदयः ।
व्यासात् द्व्यर्धगुण्यः सर्वत्र दलं भवेत् गाधः ६०२ ॥

तत्तोरण । तत्तोरणानां विस्तारः स्वकीयस्वकीयनदीव्यास ६$\frac{1}{4}$ सदृशः, उदयस्तु व्यासात् द्वितीयार्धं $\frac{3}{2}$ गुण्यः ९ $\frac{3}{8}$ । सर्वत्र तोरणानां गाधः अर्ध-योजनप्रमितं भवेत् ॥ ६०२ ॥

अथ पूर्वोक्तवर्षवर्षधरपर्वतानां विस्तारानयने करणसूत्रमाह;—

विजयकुलद्दी दुगुणा उभयंतादो विदेहवस्सोत्ति ।
गुणपिंडदीवसगगुणगारो हु पमाणफलइच्छा ॥६०३॥

विजयकुलाद्रयः द्विगुणा उभयांततः विदेहवर्षान्तं ।
गुणपिंडद्वीपस्वकगुणकारो हि प्रमाणफलेच्छाः ॥ ६०३ ॥

विजय । विजया देशा इत्यर्थः कुलाद्रयश्च उभयांततः विदेहपर्यंतं द्विगुणाद्विगुणा भवंति, गुणकारपिंड १९० द्वीप १००००० स्वकीयस्वकीयगुणकाराः भर १ हिम २ हैम ४ यथासंख्यं प्रमाणफलइच्छाः खलु । अनेन त्रैराशिकेन तत्र क्षेत्रपर्वतानां विस्तारः आनेतव्यः ॥ ६०३ ॥

एवमुक्तत्रैराशिकानीतभरतक्षेत्रे व्यासमुच्चारयति;—

भरहस्स य विक्खंभो जंबूदीवस्स णउदिसदभागो ।
पंचसया छव्वीसा छच्च कला ऊणवीसस्स ॥ ६०४ ॥

भरतस्य च विष्कंभो जंबूद्वीपस्य नवतिशतभागः ।
पंचशतानि षड्विंशानि षट् च कला एकोनविंशतेः ॥६०४॥

भरह । भरतस्य विष्कंभो जंबूद्वीपस्य १ ल. नवतिशत भागः १९० स क इतिचेत्, पंचशतयोजनानि षड्विंशत्यधिकानि एकोनविंशतेः षट्कलाभ्यधिकानि भरतविष्कंभः स्यात् । ५२६ $\frac{६}{१९}$ ॥ ६०४ ॥

तथा त्रैराशिकेन सिद्धं विदेहविष्कंभांकं प्रतिपादयन् अत्रैवोपरि वक्ष्यमाणविदेहक्षेत्रादीनामानयनविधानमाह; —

चुलसीदि छतेत्तीसा चत्तारि कला विदेहविक्खंभो ।
णदिहीणदलं विजया वक्खारविभंगवणदीहा ॥६०५॥

चतुरशीति षट्त्रयस्त्रिंशत् चतस्रः कला विदेहविष्कंभः ।
नदीहीनदलं विजयवक्षारविभंगवनदीर्घं ॥ ६०५ ॥

चुल । चतुरशीतिषट् त्रयस्त्रिंशद्योजनानि एकान्नविंशतेश्चतस्रः कलाश्च ३३६८४ $\frac{४}{१९}$ विदेहविष्कंभः स्यात् । अत्र नदीप्रमाणं निर्गमे ५० समुद्रप्रवेशे ५०० मध्ये यथासंभवं हीनयित्वा ३३१८४ $\frac{४}{१९}$ अर्धीकृते १६५९२ $\frac{२}{१९}$ तद्देशवक्षारपर्वतविभंगनदीवनानां दैर्घ्यप्रमाणं स्यात् ॥ ६०५ ॥

सांप्रतं विदेहमध्यस्थितमंदरगिरेः स्वरूपमाचष्टे;—

मेरू विदेहमज्झे णवणउदिदहेक्कजोयणसहस्सा ।
उदयं भूमुहवासं उवरुवरिगवणचउक्कजुदा ॥ ६०६ ॥

मेरुः विदेहमध्ये नवनवतिदशैकयोजनसहस्राणि ।
उदयः भूमुखव्यासः उपर्युपरिगवनचतुष्कयुतः ॥ ६०६ ॥

मेरू । विदेहस्य मध्यप्रदेशे मेरुरस्ति, तस्योदयभूमुखव्यासा यथासंख्यं नवनवतिसहस्र ९९००० दशसहस्र १०००० एकसहस्र १००० योजनानि स्युः । स च पुनरुपर्युपरि कणयगतवनचतुष्कयुतः ॥ ६०६ ॥

इदानीं वनचतुष्कस्य संज्ञाः तदंतरालं च प्रतिपादयति;—

भू भद्दसाल साणुग णंदणसोमणसपांडुकं च वणं ।
इगिपणघणबावत्तरिहदपंचसयाणि गंतूणं ॥ ६०७ ॥

भुवि भद्रशालं सानुगं नंदनसौमनसपांडुकं च वनम् ।
एक पंचघनद्वासप्ततिहतपंचशतानि गत्वा ॥ ६०७ ॥

भूभद्द । भूगतं वनं भद्रशालाख्यं सानुत्रयगतानि यथासंख्यं नंदनसौमनसपांडुकाख्यवनानि, तानि एक १ पंचघन १२५ द्वासप्तति ७२ हत पंचशतयोजनानि ५००।६२५००।३६०००। गत्वा गत्वा तिष्ठंति ॥ ६०७ ॥

अथ तद्वनस्थवृक्षानाह;—

मंदारचूदचंपयचंदणघणसारमोचचोचेहिं ।
तंबूलिपूगजादीपहुदीसुरतरुहि कयसोहं ॥ ६०८ ॥

मंदारचूतचंपकचंदनघनसारमोचचोचैः ।
तांबूलीपूगजातिप्रभृतिसुरतरुभिः कृतशोभानि ॥ ६०८ ॥

मंदार । मंदारचूतचंपकचंदनघनसारमोचचोचैः तांबूलीपूगजातिप्रभृतिभिः सुरतरुभिश्च कृतशोभानि तानि वनानि ॥ ६०८ ॥

सांप्रतमितरमंदराणां व्यवधाननिरूपणव्याजेनोत्सेधं कथयति;—

पणसय पणसयसहियं पणवण्णसहस्सयं सहस्साणं ।
अट्ठावीसिदराणं सहस्सगाढं तु मेरूणं ॥ ६०९ ॥

पंचशतं पंचशतसहितं पंचपंचाशतसहस्रकं सहस्राणां ।
अष्टाविंशतिरितरेषां सहस्रगाधस्तु मेरूणाम् ॥ ६०९ ॥

पणसय । पंचशतयोजनानि ५०० पंचशतसहितं पंचपंचाशत्सहस्रयोजनानि ५५५०० अष्टाविंशतिसहस्रयोजनानि २८००० इतरेषां मेरूणां वनाद्वनांतराणि पंचानां मेरूणां सहस्रयोजनावगाधो १०००ज्ञातव्यः।६०९।

अथ तेषां वनानां विस्तारं निरूपयति;—

बावीसं च सहस्सा पणपणछक्कोणपणसयं वासं ।
पढमवणं वज्जित्ता सव्वणगाणं वणाणि सरिसाणि ६१०

द्वाविंशतिः च सहस्रं पंचपंचषट्कोनपंचशतं व्यासं ।
प्रथमवनं वर्जयित्वा सर्वनगानां वनानि सदृशानि ॥ ६१० ॥

बावीसं । सुदर्शनमेरोर्भद्रशालवनं पूर्वापरेण द्वाविंशतिसहस्रयोजनव्यासं, नंदनं पंचशतयोजनव्यासं, सौमनसं पंचशतयोजनव्यासं, पांडुकं षडूनपंचशतयोजनव्यासं ४९४ । सुदर्शनस्य प्रथमवनं वर्जयित्वा सर्वमेरूणां नंदनानि सदृशप्रमाणानि ॥ ६१० ॥

अथ तद्वनचतुष्टयस्थितचैत्यालयसंख्यामाह;—

एक्केक्कवणे पडिदिसमेक्केक्कजिणालया सुसोहंति ।
पडिमेरुमुवरि तेसिं वण्णणमणुवण्णइस्सामि ॥६११॥

एकैकवने प्रतिदिशमेकैकजिनालयाः सुशोभंते ।
प्रतिमेरुमुपरि तेषां वर्णनमनुवर्णयिष्यामि ॥ ६११ ॥

एक्के । प्रतिमेरुं एकैकस्मिन् वने प्रतिदिशमेकैकजिनालयाः सुशोभंते । उपरि तेषां चैत्यालयानां वर्णनमनु पश्चान्नंदीश्वरद्वीपवर्णनावसरे वर्णयिष्यामि ॥ ६११ ॥

सुदर्शनस्य दक्षिणोत्तरभद्रशालवनप्रमाणमाह;—

पढमवणडसीदंसो दक्खिणउत्तरगभद्दसालवणं।
बिसदं पण्णासहियं खुल्लयमंदरणगेवि तहा ॥ ६१२॥

प्रथमवनाष्टाशीत्यंशः दक्षिणोत्तरगभद्रशालवनम्।
द्विशतं पंचाशदधिकं क्षुल्लकमंदरनगेपि तथा ॥ ६१२ ॥

पढम। सुदर्शनमेरोः पूर्वापरभद्रशालवनस्य २२००० अष्टाशीति ८८ भागो दक्षिणोत्तरगतभद्रशालवनप्रमाणं स्यात्। पंचाशत्सहितं द्विशतं २५० तल्लब्धं स्यात्। क्षुल्लकमंदरनगेष्वपि तथा वक्ष्यमाणपूर्वापरभद्रशालस्याष्टाशीत्यंश एव तथा दक्षिणोत्तरभद्रशालवनप्रमाणं स्यात् ॥ ६१२॥

अथ वनोभयपार्श्वगतवेदीस्वरूपमाह;—

वेदी वणुभयपासे इगिदलचरणुदयवित्थरोगाढो।
हेमी सघंटघंटाजालसुतोरणग बहुदारा ॥ ६१३ ॥

वेदी वनोभयपार्श्वे एकदलचरणोदयविस्तारावगाधाः।
हैमी सघंटघंटाजालसुतोरणका बहुद्वारा ॥ ६१३ ॥

वेदी। भद्रशालादिवनोभयपार्श्वे हेममया महाघंटा क्षुल्लकघंटाजालालंकृतसुतोरणयुतबहुद्वारा वेद्यस्ति। तस्या उदयविस्तारावगाधा यथासंख्यं एकयोजनार्धयोजनयोजनचतुर्थांशाः स्युः ॥ ६१३ ॥

अथ मेरोश्चित्रातलव्यासानयने नंदनसौमनससमरुंद्रादिक्षेत्रव्यासोदयानयने च हानिचयानयनार्थं गाथाद्वयमाह। तद्यथा। मेरोर्मुखं १००० तद्भूमौ १०००० विशेषयित्वा ९००० एतावतो मेरूदयस्य ९९००० एतावति हानिचये ९००० एकयोजनस्य कियद्धानिचयमिति संपात्य नवभिरपवर्तिते एवं $\frac{1}{11}$ एतद्धानिचयं धृत्वा अपरत्रैराशिकविधानमुच्यते। तत्र प्रथममिदं त्रैराशिके ज्ञेयम्;—

इदि जोयण एगारहभागो जदि वड्ढदे पहायदि वा ।
तलणंदणसोमणसे किमिदि चयं हाणिमाणिज्जो ॥६१४॥

इति योजनस्य एकादशभागः यदि वर्धते प्रहीयते वा ।
तलनंदनसौमनसे किमिति चयं हानिरानेतव्यम् ॥ ६१४ ॥

इदि । एकयोजनोदयस्य १ एकयोजनैकादशभागो $\frac{१}{११}$ यदि वर्धते प्रहीयते वा तदा मेरुतलनंदनसौमनसानामुदयस्य १०००।५००।५१५०० कियद्वर्धते प्रहीयते चेति संपात्य हानिचयमानेतव्यं । तलव्यासे वृद्धिः ९०$\frac{१०}{११}$ नंदने हानिः ४५$\frac{५}{११}$ सौमनसे हानिः ४६८१$\frac{९}{११}$ ॥ ६१४ ॥

सगसगहाणिविहीणे भूवासे चयजुदे मुहव्वासे ।
गिरिवणबहिरब्भंतरतलविस्थारप्पमा होदि ॥ ६१५ ॥

स्वकस्वकहानिविहीने भूव्यासे चययुते मुखव्यासे ।
गिरिवनबाह्याभ्यंतरतलविस्तारप्रमा भवति ॥ ६१५ ॥

सग । मेरोस्तत्तत्कणयगतभूव्यासे स्वकीयस्वकीयहानौ विहीनायां सत्यां तत्तन्मुखव्यासे च तत्तच्चये युते सति गिरेस्तलविस्तारप्रमाणं भवति, वनस्य बाह्याभ्यंतराविस्तारप्रमाणं च भवति । प्रागानीतमेरुतलहानिचये ९०$\frac{१०}{११}$ मेरोर्भूव्यासे १०००० मिलिते सति १००९०$\frac{१०}{११}$ चित्रातले व्यासो भवति । तत्र तस्यां हाना ९०$\frac{१०}{११}$ वपनीतायां १०००० मेरोर्भूव्यासः । एतावत्यपसरणे $\frac{१}{११}$ एकयोजनोदयश्चेत्येतावति ९०$\frac{१०}{११}$ अपसरणे कियानुदय इति संपात्य समच्छेदेन $\frac{९९०}{११}$ अंशं $\frac{१०}{११}$ आंशिनि ९० मेलयित्वा $\frac{१०००}{११}$ ११ अपवर्तिते १००० मेरोर्भूव्यासपर्यंतमुत्सेधः स्यात् । नंदनस्य हानिचय ४५$\frac{५}{११}$ भूव्यासे १०००० अपनीते ९९५४$\frac{६}{११}$ नंदनबाह्यव्यासः स्यात् । तद्धानिचयांश $\frac{५}{११}$ आंशिनोः ४५ समच्छेदेन संमेल्य $\frac{५००}{११}$ एतावदपसरणे $\frac{१}{११}$ एकयोजनोदयश्चेदेतावदपसरणे $\frac{५००}{११}$ किमिति संपात्यापवर्तिते ५०० भद्रसालान्नंदनपर्यंतमुत्सेधः स्यात् । नंदनबाह्यव्यासे

९९५४ $\frac{६}{११}$ नंदनव्यासं ५०० उभयपार्श्वार्थं द्विगुणीकृत्य १००० अपनीते ८९५४ $\frac{६}{११}$ समरुंद्ररूपनंदनाभ्यंतरव्यासः स्यात् ॥ ६१५ ॥

अथ समरुंद्रोत्सेधानयनप्रकारनाह;—

एयारंसोसरणे एगुदओ दससएसु किं लद्धं ।
णंदणसोमणसुवरिं सुदंसणे सरिसरुंदुदओ ॥ ६१६ ॥

एकादशांशापसरणे एकोदयः दशशतेषु किं लब्धं ।
नंदनसौमनसोपरि सुदर्शने सदृशरुद्रोदयः ॥ ६१६ ॥

एयारं । एकादशांशा $\frac{१}{११}$ पसरणे एकयोजनोदयश्चेद्दशशता १००० पसरणे किं लब्धमिति संपातिते ११००० सुदर्शनोपरिमनंदनसौमनसयोः समरुंद्रोदयः स्यात् । सौमनसहानिचये ४६८१ $\frac{९}{११}$ नंदनाभ्यंतरव्यासे ८९५४ $\frac{६}{११}$ अपनीते ४२७२ $\frac{८}{११}$ सौमनसे बाह्यव्यासः स्यात् । सौमनसहानिचयांशांशिनोः ४६८१ $\frac{९}{११}$ मेलनं कृत्वा $\frac{५१५००}{११}$ एयारंसेत्यादिविधिना संपात्यापवर्तिते ५१५०० सौमनसपर्यंतमुत्सेधः स्यात् । सौमनसबाह्यव्यासे ४२७२ $\frac{८}{११}$ सौमनसव्यासं ५०० पार्श्वद्वयार्थं द्विगुणीकृत्य १००० अपनीते ३२७२ $\frac{८}{११}$ सौमनसाभ्यंतरव्यासः स्यात् । अत्रोत्सेधः प्रागानीतसमरुंद्रोदय एव स्यात् । एतावदुदयस्य १ एतावद्धानौ सत्यां $\frac{१}{११}$ एतावदुदयस्य २५००० किमिति संपातिते २२७२ $\frac{८}{११}$ पांडुके हानिस्यात् । एतां २२७२ $\frac{८}{११}$ सौमनसाभ्यंतरव्यासे ३२७२ $\frac{८}{११}$ अपनयेच्चेत् १००० पांडुकबाह्यव्यासः स्यात् । पांडुकहानिचयां २२७२ $\frac{८}{११}$ शांशिनौ मेलयित्वा $\frac{२५०००}{११}$ प्राग्वदेयारंसेत्यादिविधिना संपात्यापवर्तिते २५००० पांडुकपर्यंतोत्सेधः स्यात् ॥ ६१६ ॥

अथ क्षुल्लकमंदिरस्य हानिचयानयनसूत्रमाह;—

भूमीदो दसभागो हायदि खुल्लेसु णंदणादुवरिं ।
सयवग्गं समरुंदो सोमणसुवरिंपि एमेव ॥ ६१७ ॥

भूमितः दशमभागः हीयते क्षुल्लकेषु नंदनादुवरि ।
शतवर्गः समरुंद्रःसौमनसोपरि अपि एवमेव ॥ ६१७ ॥

भूमिदो । भूमितो दशमांश $\frac{१}{१०}$ हानौ यद्येकं योजनं स्यात्तदा सहस्रयोजनहानौ कियानुदय इति संपातिते शतवर्गरूपो लब्धोदयः १०००० क्षुल्लकमंदिरेषु ४ नंदनवनादुपरितमनसमरुंद्रोदयः स्यात् । सौमनसोपरिमसमरुंद्रोप्येवमेव स्यात् । मुखं १००० भूमौ ९४०० विशेषिते हानिः ८४०० क्षुल्लकमंदरोदयस्य ८४०० एतावद्धानौ ८००० एकयोजनोदयस्य किमिति संपात्या चतुरशीत्यापवर्तिते $\frac{१}{१०}$ एकयोजनहानिचयः स्यात् । एतद्धृत्वा एकयोजनोदयस्य एतावच्चये $\frac{१}{१०}$ सहस्रयोजनोदयस्य किमिति संपात्यापवर्तिते चयः स्यात् १०० । एतत्क्षुल्लकमेरोरग्रे वक्ष्यमाणभूव्यासे ९४०० मेलयेच्चेत् चित्रातलव्यासः स्यात् । ९५०० एतस्मिन् तद्धानौ १०० अपनीतायां सत्यां ९४०० भूव्यासः स्यात् । एतावद्धानौ $\frac{१}{१०}$ एकयोजनेदये एतावद्धानौ १०० किमिति संपातिते १००० तत्रस्थोदयः स्यात् । एतावदुदयस्य १ एतावद्धानौ $\frac{१}{१०}$ एतावदुदयस्य ५०० किमिति संपात्यापवर्त्य ५० तं भूव्यासे ९४०० अपनयेच्चेत् तदुपरितनव्यासः स्यात् ९३५० । एतावद्धानौ $\frac{१}{१०}$ एकोदये १ एतावद्धानौ ५० किमितिसंपातिते ५०० तत्रस्थोदयः स्यात् । एतावदुदयस्य १ एतावद्धानौ $\frac{१}{१०}$ एतावदुदयस्य १०००० किमिति संपात्यापवर्तितं लब्धं १००० अधस्तनव्यासे ९३५०अपनयेत् । ८३५० एतन्नंदनसमरुंद्रव्यासः स्यात् । समरुंद्रयोर्द्वयोरुत्सेधोनंतर एवानीतः स एतावदुदयस्य १ एतावद्धानौ $\frac{१}{१०}$ एतावदुदयस्य ४५५०० किमिति संपात्यापवर्तितं ४५५० अधस्तनसमरुंद्रव्यासे ८३५० अपनयेत् ३८०० समरुंद्रोपारिमक्षेत्रव्यासः स्यात् । एतावद्धानौ $\frac{१}{१०}$ एकोदये १ एतवाद्धानौ ४५५० किमिति संपातिते ४५५०० तत्रस्थोदयः स्यात् । एतावदुदयस्य १ एतावद्धानौ $\frac{१}{१०}$ एतावदुदयस्य १०००० किमिति संपात्यापवर्तिते १००० अधस्तनव्यासे

३८०० अपनयेत् २८०० एतत्सौमनसरुंद्रव्यासः स्यात् । उदयः प्रागानीतः । एतावदुदयस्य १ एतावद्धानौ १/१० एतावदुदयस्य १८००० किमिति संपत्यापवर्तितं १८०० अथस्तनव्यासे २८०० अपनयेत् १००० एतन्मेरोर्मुखव्यासः स्यात् । एतावद्धानौ १/१० एकोदये १ एतावद्धानौ १८०० किमिति संपातिते १८००० तत्रस्थोदयः स्यात् । चूलिकोदयभूमुखव्यासाः सर्वे मेरूणामग्रे वक्ष्यंते ॥ ६१७ ॥

अथ मेरूणां वर्णविशेषं निरूपयति;—

णाणारयणविचित्तो इगिसट्ठिसहस्सगेसु पढमादो ।
तत्तो उवरिं मेरू सुवण्णवण्णण्णिदो होदि ६१८ ॥

नानारत्नविचित्रः एकषष्टिसहस्रकेषु प्रथमतः ।
तत उपरि मेरुः सुवर्णवर्णान्वितः भवति ॥ ६१८ ॥

णाणा । मेरोः प्रथमत आरभ्य एकषष्टिसहस्रयोजन ६१००० पर्यंतं नानारत्नविचित्रः ततः उपरि मेरुः सुवर्णवर्णान्वितो भवति ॥ ६१८ ॥

अथ नंदनादिषु स्थितभवननामादिकं गाथाद्वयेनाह;—

माणीचारणगंधव्वचित्तणामाणि वट्टभवणाणि ।
णंदणचउदिसमुदओ पण्णासं तीस वित्थारो ॥ ६१९ ॥

मानीचारणगंधर्वचित्रनामानि वृत्तभवनानि ।
नंदनचतुर्दिक्षु उदयः पंचाशत् त्रिंशत् विस्तारः ॥ ६१९ ॥

माणी । मानीचारणगंधर्वचित्रनामानि वृत्तभवनानि नंदने चतुर्दिक्षु संति । तेषामुदयः पंचाशद्योजनानि, विस्तारस्तु त्रिंशद्योजनानि ॥ ६१९ ॥

सोमणसदुगे वज्जं वज्जादिप्पह सुवण्ण तप्पहयं ।
लोहिदअंजणहारिद्दपांडुरा दलिददलमाणा ॥ ६२० ॥

सौमनसद्विके वज्रं वज्रादिप्रभं सुवर्णं तत्प्रभं ।
लोहितांजनहारिद्रपांडुरा दलितदलमानाः ॥ ६२० ॥

सोमण । सौमनसपांडुकयोर्यथासंख्यं चत्वारि चत्वारि वृत्तभवननामानि । तानि कानि ? वज्रवज्रप्रभसुवर्णसुवर्णप्रभनामानि लोहितांजनहारिद्रपांडुरनामानि । नंदनोक्तोदयव्यासादर्धतदर्धप्रमाणानि ॥ ६२० ॥

अथ तद्भवनाधिपान् तद्वनितांश्चाह;—

तब्भवणवदा सोमो यमवरुणकुवेरलोयवालक्खा ।
पुव्वादी तेसिं पुह गिरिकण्णा सड्ढकोडितियं ॥६२१॥

तद्भवनपतयः सोमः यमवरुणकुवेराः लोकपालाख्याः ।
पूर्वादिषु तेषां पृथक् गिरिकन्यकाः सार्धकोटित्रयम् ॥ ६२१ ॥

तब्भवण । तद्भवनाधिपतयः सोमयमवरुणकुवेराख्याः सौधर्मस्य लोकपालाः पूर्वादिदिक्षु तिष्ठति । तेषां पृथक् पृथक् सार्धकोटित्रयगिरिकन्यका भवंति ॥ ६२१ ॥

अथ तेषामायुष्यादिकमाह;—

सोमदु वरुणदुगाऊ सदलदु पल्लत्तयं च देसूणं ।
ते रत्तकिण्हकंचणसिदणेवत्थंकिया कमसो ॥ ६२२ ॥

सोमद्वयोः वरुणाद्विकायुः सदलद्वि पल्यत्रयं च देशोनम् ।
ते रक्तकृष्णकांचनसितनेपथ्यांकिताः क्रमशः ॥ ६२२ ॥

सोम । सोमयमयोर्वरुणकुवेरयोश्चायुर्यथासंख्यं अर्धसहिताद्विपल्यं देशोनपल्यत्रयं च स्यात् । सोमादयो रक्तकृष्णकांचनसितवर्णालंकारांकिताः क्रमशः ॥ ६२२ ॥

अथ तेषां कल्पविमानसंबंधित्वमाह;—

ते य सयंपहरिट्ठजलप्पहवग्गुप्पहा विमाणीसा ।
कप्पे सु लोयवाला पहुणो बहुसयविमाणाणं ॥ ६२३ ॥

ते च स्वयंप्रभारिष्टजलप्रभवल्गुप्रभा विमानेशाः ।
कल्पेषु लोकपाला प्रभवः बहुशतविमानानाम् ॥ ६२३ ॥

ते य । ते च सौधर्मस्य लोकपालाः कल्पे स्वयंप्रभारिष्टजलप्रभवल्गुप्रभा विमानेशाः । पुनस्ते बहुशत ६६६६६६ विमानानामधिपतयः ॥ ६२३ ॥

अथ नंदनवनस्थव्यंतरं सपरिकरमाह;—

बलभद्दणामकूडे णंदणगे मेरुपव्वदीसाणे ।
उदयमहियसयदलगो तण्णामो वेंतरो वसई ॥ ६२४ ॥

बलभद्रनामकूटे नंदनगे मेरुपर्वतैशान्याम् ।
उदयमहीकशतदलकः तन्नामा व्यंतरो वसति ॥ ६२४ ॥

बलभद्द । मेरुपर्वतैशान्यां दिशि नंदनस्थे शतोदयशतभूव्यासे तद्द-लाग्रबलभद्रनामकूटे बलभद्रनामा व्यंतरो वसति ॥ ६२४ ॥

अथ नंदनवनस्थवसतीनामुभयपार्श्वस्थकूटादीन् गाथात्रयेणाह;—

णंदण मंदर णिसहा हिमवं रजदो य रुजयसायरया ।
वज्जो कूडा कमसो णंदणवसईण पासदुगे ॥ ६२५ ॥

नंदनो मंदरः निषधः हिमवान् रजतश्च रुचकसागरकौ ।
वज्रः कूटाः क्रमशः नंदनवसतीनां पार्श्वद्विके ॥ ६२५ ॥

णंदण । नंदनो मंदरो निषधो हिमवान् रजतश्च रुचकः सागरो वज्राख्याः एते कूटाः क्रमशो नंदनस्थवसतीनामुभयपार्श्वे तिष्ठंति ॥ ६२५ ॥

हेममया तुंगधरा पंचसयं तद्दलं मुहस्स पमा ।
सिहिरगिहे दिक्कण्णा वसंति तासिं च णामामिणं॥६२६॥

हेममयाः तुंगधराः पंचशतं तद्दलं मुखस्य प्रमा ।
शिखरगृहे दिक्कन्याः वसंति तासां च नामानीमानि ॥ ६२६ ॥

हेममया । ते कूटा हेममयाः तेषामुदयभूव्यासौ प्रत्येकं पंचशतयोजनानि तद्दलं २५० मुखव्यासप्रमाणं तेषां शिखरगृहेषु दिक्कन्या वसंति । तासां चेमानि नामान्यग्रे वक्ष्यमाणानि ॥ ६२६ ॥

मेहंकरमेहवदी सुमेहमेहादिमालिणी तत्तो ।
तोयंधरा विचित्ता पुप्फादिममालिणिंदिदया ॥ ६२७॥

मेघंकरा मेघवती सुमेघा मेघादिमालिनी ततः ।
तोयंधरा विचित्रा पुष्पादिममाला अनिंदितका ॥ ६२७ ॥

मेहंकर । मेघंकरा मेघवती सुमेघा मेघमालिनी ततस्तोयंधरा विचित्रा पुष्पमाला अनिंदिताख्याः स्युः ॥ ६२७ ॥

अथ नंदनवापीस्वरूपं गाथात्रयेणाह;—

अग्गिदिसादोचउचउउप्पलगुम्मायणलिणिउप्पलिया
वावीओ उप्पलुज्जल भिंगा छट्ठी दु भिंगणिभा ॥६२८॥

अग्निदिशः चतस्रः चतस्रः उत्पलगुल्मा च नलिनी उत्पलिका ।
वाप्यः उत्पलोज्जला भृंगा षष्ठी तु भृंगनिभा ॥ ६२८ ॥

अग्गि । अग्निदिशः आरभ्य चतस्रश्चतस्रो वाप्यः संति । तासां नामानि उत्पलगुल्मा नलिनी उत्पला उत्पलोज्ज्वला भृंगा षष्ठी तु भृंगनिभा ॥ ६२८॥

कज्जल कज्जलपह सिरिभूदा सिरिकंदासिरिजुदा महिदा ।
सिरिणिलयणलिणि णलिणादिमगुम्मिय कुमुदकुमुदपहा

कज्जला कज्जलप्रभा-श्रीभूता श्रीकांता श्रीयुता महिता ।
श्रीनिलया नलिनी नलिनादिमगुल्मी कुमुदा कुमुदप्रभा ॥६२९ ॥

कज्जल । कज्जला कज्जलप्रभा श्रीभूता श्रीकांता श्रीमहिता श्रीनिलया नलिनी नलिनगुल्मी कुमुदा कुमुदप्रभेति नामानि ॥ ६२९ ॥

मणितोरणरयणुब्भवसोवाणा हंसमोरजंतजुदा।
पण्णदलदीहवासो दसगाहो सोलवावीओ॥ ६३०॥

मणितोरणरत्नोद्भवसोपानाः हंसमयूरयंत्रयुताः।
पंचाशद्दलदीर्घव्यासाः दशगाधाः षोडशवाप्यः॥ ६३०॥

मणि। ताः षोडशवाप्यो मणितोरणरत्नोद्भवसोपानाः हंसमयूरयंत्रयुताः पंचाशतद्दलदीर्घव्यासाः दशयोजनावगाधाः स्युः॥ ६३०॥

अथ तन्मध्यप्रासादस्वरूपं गाथाद्वयेनाह;—

दक्खिणउत्तरवावीमज्झे सोहम्मजुगलपासादा।
पणघणदलचरणुच्छयवासा दलगाढचउरस्सा॥ ६३१॥

दक्षिणोत्तरवापीमध्ये सौधर्मयुगलप्रासादाः।
पंचघनदलचरणोच्छ्र्यव्यासाः दलगाढचतुरस्राः॥ ६३१॥

दक्खिण। मेरोरपेक्षया दक्षिणोत्तरवापीमध्ये सौधर्मैशानयोः प्रासादाः पंचघन १२५ दल ६२ $\frac{1}{2}$ पंचघनचतुर्थांशो ३१ $\frac{1}{4}$ च्छ्र्यव्यासाः अर्धयोजनगाधाः चतुरस्राः संति॥ ६३१॥

सोचिदठाणासिदपरिवारेणिंदो ठिदो सपासादे।
सव्वमिणं कहियव्वं सोमणसवणेवि सविसेसं॥ ६३२॥

स्वोचितस्थानासितपरिवारेण इंद्रः स्थितः स्वप्रासादे।
सर्वमिदं कथितव्यं सौमनसवनेपि सविशेषं॥ ६३२॥

सोचिद। सुधर्मसभायामिव स्वोचितस्थानासितपरिवारेण सह स्वप्रासादे इंद्रस्तिष्ठति। सौमनसवनेपि सर्वमिदं सविशेषं कथितव्यम्॥ ६३२॥

अनंतरं मेरुशिखरस्थितानां शिलातलानां नामस्थापने वर्णयति;—

पांडुकपांडुकंबलरत्ता तह रत्तकंबलक्ख सिला।
ईसाणादो कंचणरुप्पयतवणीयरुहिरणिहा॥ ६३३॥

पांडुकपाडुकंबलरक्ता तथा रक्तकंबलाख्याः शिलाः ।
ईशानात् कांचनरूप्यतपनीयरुधिरनिभाः ॥ ६३३ ॥

पांडुक । ईशानादारभ्य यथासंख्यं कांचनरूप्यतपनीयरुधिरनिभाः पांडुकाख्यपांडुकंबलाख्यरक्ताख्यरक्तकंबलाख्याः शिलाः पांडुकवने संति ॥ ६३३ ॥

अथ ताः शिलाः केषां संबंधिन्यः कथं तासां विन्यास इत्युक्ते आह;—

भरहवरविदेहेराबदपुव्वविदेहजिणणिबद्धाओ ।
पुव्ववरदक्खिणुत्तरदीहा अथिरथिरभूमिमुहा ॥ ६३४॥

भरतापरविदेहैरावतपूर्वविदेहजिननिबद्धाः ।
पूर्वापरदक्षिणोत्तरदीर्घा अस्थिरस्थिरभूमिमुखाः ॥ ६३४ ॥

भरह । ताः शिला यथासंख्यं भरतापरविदेहैरावतपूर्वविदेहजिनानिबद्धाः स्युः । पूर्वापरदाक्षिणोत्तरदीर्घा अस्थिरस्थिरभूमिमुखाः ॥ ६३४ ॥

अथ दृष्टांतेन तेषां शिलातलानामाकृतिं प्रतिपादयन् दैर्घ्यमाचष्टे;—

अद्धिंदुणिहा सव्वे सयपण्णासट्ठदीहवासुदया ।
आसणतियं तदुवरिं जिणसोहम्मदुगपडिबद्धं ॥ ६३५॥

अर्धेंदुनिभाः सर्वाः शतपंचाशष्टदीर्घव्यासोदयाः ।
आसनत्रयं तदुपरि जिनसौधर्मद्वयप्रतिबद्धं ॥ ६३५ ॥

अद्धिं । ताः सर्वाः अर्धेंदुनिभाः शतयोजनदीर्घाः पंचाशद्योजनव्यासा अष्टयोजनोदयाः स्युः । तेषामुपरि जिनसौधर्मद्वयप्रतिबद्धमासनत्रयमस्ति ॥ ६३५ ॥

अथ तदुपरिमासनत्रयस्वाम्यादिकमाह;—

मज्झे सिंहासणयं जिणस्स दक्खिणगयं तु सोहम्मे ।
उत्तरमीसाणिंदे भद्दासणमिह तयं वट्टं ॥ ६३६ ॥

मध्ये सिंहासनं जिनस्य दक्षिणगतं तु सौधर्मे ।
उत्तरमीशानेंद्रे भद्रासनमिह त्रयं वृत्तम् ॥ ६३६ ॥

मज्झे । तत्र मध्ये जिनेंद्रस्य सिंहासनं सौधर्मस्य दक्षिणगतं भद्रासनं ईशानस्योत्तरगतं भद्रासनं इहैतदासनत्रयं वृत्तम् ॥ ६३६ ॥

अथ तदासनानामुदयादिकं मेरोश्चूलिकास्वरूपं चाह;—

उदयं भूमुहवासं धणु पणपणसयतदद्धपुव्वमुहा ।
वेलुरिय चूलियस्स य जोयण चत्तं तु बारचउ ॥६३७॥

उदयं भूमुखव्यासं धनुः पंचपंचशतं तदर्धपूर्वमुखाः ।
वैडूर्यचूलिकायाश्च योजनं चत्वारिंशत् तु द्वादश चत्वारि॥६३७॥

उदयं । तदासनानामुदयभूमुखव्यासाः यथासंख्यं पंचशत ५०० पंचशत ५०० तदर्ध २५० धनुःप्रमिताः पूर्वमुखाश्च वैडूर्यमय्या मेरोश्चूलिकायाश्चोदयभूमुखव्यासा यथासंख्यं चत्वारिंशत् ४० द्वादश १२ चत्वारि ४ योजनानि स्युः ॥ ६३७ ॥

अथ उक्तानां सर्वेषां कंचिद्विशेषमाह;—

पव्वदवावीकूडा सव्वाओ पंडुगादिय सिलाओ ।
वणवेदितोरणेहिं णाणामणिणिम्मिएहिं जुदा ॥६३८॥

पर्वतवापीकूटाः सर्वे पांडुकादिकाः शिलाः ।
वनवेदीतोरणैः नानामणिनिर्मितैः युताः ॥ ६३८ ॥

पव्वद । पर्वताः वाप्यः कूटाः पांडुकादिकाः शिलाश्च सर्वे नानामणिनिर्मितैर्वनैर्वेदीभिस्तोरणैश्च युताः स्युः ॥ ६३८ ॥

अथ जंबूवृक्षस्थानादिकं सपरिकरं गाथैकादशकेनाह;—

णीलसमीवे सीदापुव्वतडे मंदराचलीसाणे ।
उत्तरकुरुम्हि जंबूथली सपंचसयतलवासा ॥ ६३९ ॥

नीलसमीपे सीतापूर्वतटे मंदराचलैशान्यां ।

उत्तरकुरौ जंबूस्थली सपंचशततलव्यासा ॥ ६३९ ॥

णील । नीलगिरेः समीपे सीतानद्याः पूर्वतटे मंदराचलस्यैशान्यां दिशि उत्तरकुरौ पंचशतयोजनव्यासा जंबूवृक्षस्थल्यास्ति ॥ ६३९ ॥

अंते दलबाहल्ला मज्झे अट्ठुदय वट्ट हेममया ।

मज्झे थलिस्स पीठीमुदयतियं अट्ठबारचऊ ॥ ६४० ॥

अंते दलवाहल्या मध्ये अष्टोदया वृत्ता हेममया ।

मध्ये स्थल्याः पीठमुदयत्रयं अष्टद्वादशचतुः ॥ ६४० ॥

अंते । सा च पुनरंते दल $\frac{1}{2}$ योजनबाहल्या मध्येऽष्टयोजनोदया वृत्ताकारा हेममयी स्यात् । तत्स्थलीमध्येऽष्टयोजनोदयं द्वादशयोजनभूव्यासं चतुर्योजनमुखव्यासं पीठमस्ति ॥ ६४० ॥

तत्थलिउवरिमभागे बाहिं बाहिं पवेढिऊण ठिया ।

कंचणवलयसमाणा बारंबुजवेदिया णेया ॥ ६४१ ॥

तत्स्थल्युपरिमभागे बहिर्बाहिः प्रवेष्ट्य स्थिताः ।

कांचनवलयसमानाः द्वादशांबुजवेदिकाः ज्ञेयाः ॥ ६४१ ॥

तत्थलि । तत्स्थल्युपरिमभागे बहिर्बहिः प्रवेष्ट्य कांचनवलयसमानाः अर्धयोजनोत्सेधाः उत्सेधाष्टमव्यासाः नानारत्नसंकीर्णाः अंबुजवेदिका द्वादश ज्ञेयाः ॥ ६४१ ॥

चउगोउरवं वेदीबाहिरदो पढमबिदियगे सुण्णं ।

तदिए सुरुत्तमाणं अट्ठदिसे अट्ठसयरुक्खा ॥ ६४२ ॥

चतुर्गोपुरका वेदीबाह्यतः प्रथमद्वितीयके शून्यं ।

तृतीये सुरोत्तमानां अष्टदिशासु अष्टशतवृक्षाः ॥ ६४२ ॥

चउ। ता १२ वेद्यश्चतुश्चतुर्गोपुरयुक्ताः बाह्यवेद्या आरभ्य प्रथमद्वितीयांतराले शून्ये तृतीयेंतराले सुरोत्तमानामष्टशतवृक्षाः १०८ अष्टसु दिशासु मिलित्वा भवंति ॥ ६४२ ॥

तुरिए पुव्वदिसाए देवीणं चारि पंचमे दु वणं।
वावी वट्टचउरस्सादी छट्ठे हवे गयणं ॥ ६४३ ॥

तुर्ये पूर्वदिशि देवीनां चत्वारः पंचमे तु वनं।
वाप्यः वृत्तचतुरस्रादयः षष्ठे भवेत् गगनं ॥ ६४३ ॥

तुरिए। चतुर्थांतराले पूर्वादिशि देवीनां चत्वारो वृक्षाः, पंचमे त्वंतराले वनं तत्र वृत्तचतुरस्राद्या वाप्यश्च संति। षष्ठेऽन्तराले शून्यं भवेत् ॥ ६४३ ॥

चउदिससोलसहस्सं तणुरक्खे सत्तमम्हि अट्ठमगे।
ईसाणुत्तरवादे चदुस्सहस्सं समाणाणं ॥ ६४४ ॥

चतुर्दिक्षु षोडशसहस्रं तनुरक्षाणां सप्तमे अष्टमके।
ऐशान्युत्तरवातासु चतुःसहस्रं समानानाम् ॥ ६४४ ॥

चउ। सप्तमांतराले चतुर्दिक्षु मिलित्वा षोडशसहस्राणि अंगरक्षकाणां वृक्षाः अष्टमेंतराले ऐशान्यामुत्तरस्यां वायव्यां दिशि चतुःसहस्राणि सामानिकानां वृक्षाः ॥ ६४४ ॥

णवमतिए जलणजमे णेरिदिअब्भंतरत्तिपरिसाणं।
बत्तीस ताल अडदालसहस्सा पायवा कमसो ॥ ६४५॥

नवमत्रये ज्वलनयाम्ययोः नैर्ऋत्यां अभ्यंतरत्रिपरिषदां।
द्वात्रिंशत् चत्वारिंशत् अष्टचत्वारिंशत् सहस्राणि पादपाः क्रमशः ६४५

णवम। नवमे दशमे एकादशे चांतराले यथासंख्यं आग्नेय्यां याम्यायनैर्ऋत्यां च दिशि अभ्यंतरादिपरिषत्रयाणां द्वात्रिंशत्सहस्राणि चत्वारिंशत्सहस्राणि अष्टचत्वारिंशत्सहस्राणि पादपाः क्रमशो भवंति ॥ ६४५ ॥

सेणामहत्तराणं बारसमे पच्छिमम्हि सत्तेव ।
मुक्खजुदा परिवारा पउमादो पंचयज्झहिया ॥ ६४६ ॥

सेनामहत्तराणां द्वादशे पश्चिमायां सप्तैव ।
मुख्ययुताः परिवाराः पद्मेभ्यः पंचाभ्यधिकाः ॥ ६४६ ॥

सेणा । द्वादशेंतराले पश्चिमायां दिशि सेनामहत्तराणां सप्तैव वृक्षाः मुख्यवृक्षयुताः सर्वे परिवारवृक्षाः पद्मसरसि स्थितपद्मेभ्यः पंचाभ्यधिकाः स्युः । चतुर्थांतरालस्थाः चत्वारो देवीवृक्षाः मुख्य एकवृक्षः इत्येतैरभ्यधिकत्वात् १४०१२० ॥ ६४६ ॥

दलगाढवासमरगय जोयणदुगतुंग सुत्थिरक्खंधो ।
पीठिय उवरिं जंबू वज्जदलडवासदीह चउसाहा॥६४७॥

दलगाढव्यासमरकतः योजनद्विकतुंगः सुस्थिरस्कंधः ।
पीठादुपरि जंबू वज्रदलाष्टव्यासदीर्घाः चतुःशाखाः ॥ ६४७ ॥

दल । अर्धयोजनगाधस्तद्व्यासो मरकतमयः पीठादुपरि योजनद्वयोत्तुंगाः सुस्थिरस्कंधो जंबूवृक्षोस्ति । स्कंधादुपरि वज्रमय्योर्धयोजनव्यासा अष्टयोजनदीर्घाश्चतस्रः शाखाः संति ॥ ६४७ ॥

णाणारयणुवसाहा पवालसुमणा मिदिंगसरिसफला ।
पुढविमया दसतुंगा मज्झेग्गे छच्चदुव्वासा ॥ ६४८ ॥

नानारत्नोपशाखः प्रवालसुमनाः मृदंगसदृशफलः ।
पृथ्वीमयः दशतुंगः मध्येग्रे षट्चतुर्व्यासः ॥ ६४८ ॥

णाणा । स च वृक्षो नानारत्नमयोपशाखः प्रवालवर्णसुमनाः मृदंगसदृशफलः पृथ्वीमयः दशयोजनतुंगो मध्येग्रे यथासंख्यं षट् ६ चतु ४ योजनव्यासः स्यात् ॥ ६४८ ॥

उत्तरकुलगिरिसाहे जिणगेहो सेससाहतिदयम्हि।
आदरअणादराणं जक्खकुलुत्थाणमावासा ॥ ६४९ ॥

उत्तरकुरुगिरिशाखायां जिनगेहः शेषशारात्रितये।
आदरानादरयोः यक्षकुलोत्थयोरावासाः ॥ ६४९ ॥

उत्तर। तस्य जंबूवृक्षस्योत्तरकुलगिरिदिग्भागस्थशाखायां जिनगेहोस्ति। शेषे शाखात्रये यक्षकुलोद्भवयोः आदरानादरयोरावासाः संति ॥ ६४९ ॥

अथ परिवारवृक्षाणां प्रमाणं तेषां सस्वामिकत्वं चाह;—

जंबूतरुदलमाणा जंबूरुक्खस्स कहिदपरिवारा।
आदरअणादराणं परिवारावासभूदा ते ॥ ६५० ॥

जंबूतरुदलमाना जंबूवृक्षस्य कथितपरिवाराः।
आदरानादरयोः परिवारावासभूतास्ते ॥ ६५० ॥

जंबू। जंबूवृक्षपरिवारा जंबूवृक्षप्रमाणार्धप्रमाणाः ते आदरानादराणां परिवारावासभूताः ॥ ६५० ॥

अथ शाल्मलीवृक्षस्वरूपं गाथाद्वयेनाह;—

सीतोदावरतीरे णिसहसमीवे सुरद्दिणेरिदिए।
देवकुरुम्हि मणोहररुप्पथले सामली सपरिवारो ॥ ६५१ ॥

सीतोदापरतीरे निषधसमीपे सुराद्रिनैर्ऋत्यां।
देवकुरौ मनोहररूप्यस्थले शाल्मली सपरिवारः ॥ ६५१ ॥

सीतोदा। सीतोदापरतीरे निषधसमीपे सुराद्रेः नैर्ऋत्यां दिशि देवकुरुक्षेत्रे मनोहररूप्यस्थले सपरिवारः शाल्मलीवृक्षोस्ति। १४०१२० ॥ ६५१ ॥

जंबुसमवण्णणो सो दक्खिणसाहम्हि जिणगिहं सेसे।
दिससाहतिए गरुडवइवेणूवेणादिधारिगिहं ॥ ६५२ ॥

जंबूसमवर्णनः स दक्षिणशाखायां जिनगृहं शेषे ।
दिशाशाखात्रये गरुडपतिवेणुवेण्वादिधारिगृहम् ॥ ६५२ ॥

जंबू । असौ जंबूसमवर्णनः, तस्य दक्षिणशाखायां जिनगृहमस्ति । शेषे दिग्गतशाखात्रये गरुडपत्योर्वेणुवेणुधारिणोः गृहाः संति ॥ ६५२ ॥

अथ भोगभूमिकर्मभूम्योर्विभागमाह;—

कुरुओ हरिरम्मगभू हेमवदेरण्णवदखिदी कमसो ।
भोगधरा वरमज्झिमवराय कम्मावणी सेसा ॥ ६५३ ॥

कुरू हरिरम्यकभुवौ हैमवतैरण्यवतक्षिती क्रमशः ।
भोगधराः वरमध्यमावराः कर्मावनयः शेषाः ॥ ६५३ ॥

कुरुओ । देवकुरूत्तरकुरुक्षेत्रे द्वे उत्तमभोगभूमी हरिरम्यकक्षेत्रे द्वे मध्यमभोगभूमी हैमवतहैरण्यवतक्षेत्रे द्वे जघन्यभोगभूमी स्यातां । शेषाः सर्वाः कर्मभूमयः ॥ ६५३ ॥

अथ यमकगिरेः स्वरूपं गाथाद्वयेनाह;—

णीलणिसहादु गत्ता सहस्समुभए तडे वरणईणं ।
दुगदुगसेला पुव्वो चित्तो अवरो विचित्तक्खो ॥ ६५४ ॥

नीलनिषधतो गत्वा सहस्रमुभये तटे वरनद्योः ।
द्विकद्विकशैलौ पूर्वः चित्रः अपरः विचित्राख्यः ॥ ६५४ ॥

णील । नीलनिषधाभ्यां पुरस्तात् सहस्रयोजनं गत्वा वरनद्योः सीतासीतोदयोरुभयतटे द्वौ द्वौ शैलौ भवतः । तयोर्मध्ये पूर्वतटगतश्चित्रोऽपरतटगतो विचित्राख्यः ॥ ६५४ ॥

जमगो मेघो वट्टा पंचसयंतरठिया तदुदयधरा।
वदणं सहस्समद्धं गिरिणामसुरा वसंति गिरिकूडे ६५५

यमकः मेघः वृत्ताः पंचशतांतरास्थिताः तदुदयधरा।
वदनं सहस्रमर्धं गिरिनामसुरा वसंति गिरिकूटे ॥ ६५५ ॥

जमगो। यमको मेघश्च तथा ते चत्वारो वृत्ताः। तत्र चित्रविचित्रयोर्यमकमेघयोश्चांतरं पंचशतयोजनानि, तेषां चतुर्णामुदयभूमुखव्यासा यथासंख्यं सहस्रं १००० सहस्रं १००० तदर्धं ५०० योजनानि। तेषु गिरिकूटेषु तद्गिरिनामसुरा वसंति ॥ ६५५ ॥

अथ मेरोः पूर्वापरदाक्षिणोत्तरदिक्षु स्थितानां ऱ्हदानां प्रमाणमेकैकस्य ऱ्हदस्य तीरद्वयास्थितानां कांचनशैलानां संख्यां च तदुत्सेधेन सह गाथाचतुष्टयेनाह;—

गमिय तदो पंचसयं पंचसरा पंचसयमिदंतरिया।
कुरुभद्दसालमज्झे अणुणदिदीहा हु पउमदहसरिसा ६५६

गत्वा तत पंचशतं पंच सरांसि पंचशतमितांतरिताः।
कुरुभद्रशालमध्ये अनुनदिदीर्घाणि हि पद्मऱ्हदसदृशानि ॥ ६५६ ॥

गमिय। यमकगिरिभ्यां पंचशतयोजनानि ५०० गत्वा कुरुक्षेत्रयोः पूर्वापरभद्रसालयोश्च मध्ये पंचशतयोजनांतराणि पंच पंच सरांसि। अनुनदिस्वयोग्यदीर्घाणि आयामकमलादिना पद्मऱ्हदसदृशानि संति ॥ ६५६ ॥

णीलुत्तरकुरुचंदा एरावदमल्लवंतणिसहा य।
देवकुरुसूरसुलसाविज्जू सीददुगदहणामा ॥ ६५७ ॥

नीलोत्तरकुरुचंद्रा ऐरावतमाल्यवंतौ निषधश्च।
देवकुरुसूरसुलसविद्युतः सीताद्विकऱ्हदनामानि ॥ ६५७ ॥

णीलु । णीलोत्तरकुरुचंद्रैरावतमाल्यवंत इत्येताः पंच निषधदेवकुरु-सूरसुलसविद्युतः इत्येताः पंच सीतासीतोद्योः ह्रदनामानि ॥ ६५७ ॥

णइणिग्गम्मदारजुदा ते तप्परिवारवण्णणं चेसिं ।
पउमव्व कमलगेहे णागकुमारीउ णिवसंति ॥ ६५८ ॥

नदीनिर्गमद्वारयुतानि तानि तत्परिवारवर्णनं चैषां ।
पद्ममिव कमलगेहेषु नागकुमार्यो निवसंति ॥ ६५८ ॥

णइ । तानि सरांसि नदीप्रवेशनिर्गमद्वारयुतानि । एतेषां तत्परिवार-वर्णनं च पद्मसर इव तत्रस्थकमलोपरिमगृहेषु सपरिवाराः नागकुमार्यो निवसंति ॥ ६५८ ॥

दुतडे पण पण कंचणसेला सयसयतदद्धमुदयतियं ।
ते दहमुहा णगक्खा सुरा वसंतीह सुगवण्णा ॥ ६५९ ॥

द्वितटे पंच पंच कांचनशैलाः शतशततदर्धमुदयत्रयम् ।
ते ह्रदमुखा नगाख्याः सुरा वसंति इह शुकवर्णाः ॥ ६५९ ॥

दुतडे । तेषां सरसां द्वितटे पंच पंच कांचनशैलाः तेषामुदयभूमुख-व्यासा यथासंख्यं शत १०० शत १०० पंचाश ५० योजनानि च शैला ह्रदसंमुखाः । कथमेतत् । तदुपरिस्थनगरद्वाराणां ह्रदाभिमुखत्वात् । शुकवर्णास्तत्तन्नगाख्याः सुरास्तेषामुपरि वसंति ॥ ६५९ ॥

अथ तत उपरि नदीगमनस्वरूपमाह;—

दहदो गंतूणग्गे सहस्सदुगणउदिदोणि बे च कला ।
णदिदारजुदा वेदी दक्खिणउत्तरगभद्दसालस्स ॥ ६६० ॥

ह्रदतः गत्वाग्रे सहस्रद्विकनवतिद्वि द्वे च कले ।
नदीद्वारयुता वेदी दक्षिणोत्तरगभद्रशालस्य ॥ ६६० ॥

वृहदो । ह्रदेभ्यः अग्रे सहस्रद्विकनवतिद्वियोजनानि २०९२ योजनैकोनविंशतिभागद्विकलाधिकानि च २/१९ नदीद्वारयुता दक्षिणोत्तरभद्रशालस्य वेदी तिष्ठति । प्राक्तनांकवासना । दक्षिणो २५० त्तरभद्रशाल २५० सहितमंदर १०००० व्यासं १०५०० विदेहव्यासे ३३६८४ ४/१९ स्फेटयित्वा २३१८४ ४/१९ अर्धीकृत्य ११५९२ २/१९ । एतस्मिन् चित्रगिरिकुलगिर्योरंतरं १००० चित्रनगव्यासं १००० चित्रनगह्रदांतरं ५०० पंचह्रदायामं ५००० तेषामंतरं च २००० एतत्सर्वमेकीकृत्य ९५०० अपनीते चरमह्रदभद्रशालवेदिकयोरंतर २०९२ २/१९ मायाति ॥ ६६० ॥

अथ दिग्गजपर्वतानां स्वरूपं गाथाद्वयेनाह;—

कुरुभद्दसालमज्झे महाणदीणं च दोसु पासेसु ।
दो द्दो दिसागइंदा सयतत्तियतद्दलुदयतिया ॥ ६६१ ॥

कुरुभद्रशालमध्ये महानद्योश्च द्वयोः पार्श्वयोः ।
द्वौ द्वौ दिशागजेंद्रौ शततावत्तद्दलमुदयत्रयाणि ॥ ६६१ ॥

कुरु । कुरुक्षेत्रभद्रशालयोः पूर्वापरभद्रशालयोश्च मध्ये महानद्योरुभयपार्श्वयोर्द्वौ द्वौ दिग्गजेंद्रपर्वतौ तिष्ठतः तेषामष्टदिग्गजपर्वतानामुदयभूमुखव्यासा यथासंख्यं शत १०० शत १०० पंचाश ५० योजनानि स्युः ॥ ६६१ ॥

तण्णामा पुव्वादी पउमुत्तरणीलसोत्थियंजणया ।
कुमुदपलासवतंसयरोचणमिह दिग्गजिंदसुरा ॥ ६६२ ॥

तन्नामानि पूर्वादेः पद्मोत्तरनीलस्वस्तिकांजनकाः ।
कुमुदपलाशावतंसरोचनामिहदिग्गजेंद्रसुराः ॥ ६६२ ॥

तण्णामा । पूर्वादिदिशः आरभ्य पद्मोत्तरनीलस्वस्तिकांजनकुमुदपलाशावतंसरोचनमिति तेषां नामानि । इह दिग्गजेंद्रसुरास्तिष्ठंति ॥ ६६२ ॥

अथ गजदंतपर्वतानां नामादिकं गाथाद्वयेनाह;—

मल्लव महसोमणसो विज्जुप्पह गंधमादणिभदंता ।
ईसाणादो वेलुरियरुप्पतवणीयहेममया ॥ ६६३ ॥

माल्यवान् महासौमनसः विद्युत्प्रभः गंधमादन इभदंताः ।
ईशानतः वैडूर्यरूप्यतपनीयहेममयाः ॥ ६६३ ॥

मल्लव । माल्यवान् महासौमनसो विद्युत्प्रभो गंधमादन इतीभदंता वैडूर्यरूप्यतपनीयहेममयाः मेरोरीशानदिशः आरभ्य तिष्ठंति ॥ ६६३ ॥

णीलणिसहे सुरद्दिं पुट्ठा मल्लवगुहादु सीता सा ।
विज्जुप्पहगिरिगुहदो सीतोदाणिस्सरित्तु गया ॥ ६६४॥

नीलनिषधौ सुराद्रिं स्पृष्टाः माल्यवद्गुहायाः सीता सा ।
विद्युत्प्रभगिरिगुहातः सीतोदा निसृत्य गता ॥ ६६४ ॥

णील । ते च नीलनिषधौ सुराद्रिं च स्पृष्टाः । तत्र माल्यवतो गुहायाः निसृत्य सा सीता गता विद्युत्प्रभगिरिगुहायाश्च निर्गत्य सीतोदा गता॥६६४॥

इदानीं विदेहदेशानां विभागं निवेदयति;—

उभयंतगवणवेदियमज्झगवेभंगणदितियाणं च ।
मज्झगवक्खारचऊ पुव्ववरबिदेहविजयद्धा ॥ ६६५ ॥

उभयांतगवनवेदिकामध्यगविभंगनदीत्रयाणां च ।
मध्यगवक्षारचतुर्भिः पूर्वापरविदेहविजयार्धाः ॥ ६६५ ॥

उभयंत । उभयप्रांतगतवनवेदिकामध्यगतविभंगनदीत्रयाणां मध्यस्थितवक्षारपर्वतैश्चतुर्भिः पूर्वापरविदेहदेशाः अर्धीकृताः ॥ ६६५ ॥

अथ वक्षाराणां विभंगनदीनां च नामादिकं गाथाषट्केनाह;—

तण्णामा सीदुत्तरतीरादो पढमदो पदक्खिणदो ।
चेत्तादिकूडपउमादिमकूडा णलिण एगसेलगगो ६६६

तन्नामानि सीतोत्तरतीरात् प्रथमतः प्रदक्षिणतः।

चित्रादिकूटपद्मादिमकूटौ नलिनः एकशैलकगः॥ ६६६॥

तण्णामा। सीतानद्युत्तरतीरं प्रथमं कृत्वा प्रदक्षिणतस्तेषां वक्षाराणां विभंगनदीनां च नामान्याह। अथ चित्रकूटपद्मकूटनलिनैकशैलाख्याश्चत्वारो वक्षारपर्वताः॥ ६६६॥

गाहदहपंकवदिणदी तिकूडवेसवणअंजणप्पादि।
अंजणगो तत्तजला मत्तजलुम्मत्तजल सिंधू॥ ६६७॥

गाधद्रहपंकवतीनद्यः त्रिकूटवैश्रवणाञ्जनात्मादिः।

अंजनकाः तप्तजला मत्तजला उन्मत्तजला सिंधुः॥ ६६७॥

गाह। गाधवती ह्रदवती पंकवत्याख्यास्तिस्रो विभंगनद्यः। त्रिकूटवैश्रवणांजनात्मांजनाख्याश्चत्वारः सीतादक्षिणदिक्स्थवक्षारपर्वताः। तप्तजलामत्तजलोन्मत्तजलेति तिस्रः तत्रस्थनद्यः॥ ६६७॥

सद्धावं विजडावं आसीविस सुहवहा य वक्खारा।
खारोदा सीतोदा सोदोवाहिणि णदी मज्झे॥ ६६८॥

श्रद्धावान् विजटावान् आशीविषः सुखावहश्च वक्षाराः।

क्षारोदा सीतोदा श्रोतोवाहिनी नद्यः मध्ये॥ ६६८॥

सद्धावं। श्रद्धावान् विजटावान् आशीविषः सुखावहश्चेति चत्वारोऽपरविदेहसीतोदादक्षिणदिक्स्थवक्षाराः क्षारोदासीतोदास्रोतोवाहिनी चेति तिस्रो नद्यो वक्षाराणां मध्ये संति॥ ६६८॥

तो चंदसूरणागादिममाला देवमाल वक्खारा।
गंभीरमालिणी फेणमालिणी उम्मिमालिणी सरिदा

ततः चंद्रसूर्यनागादिममालदेवमालाः वक्षाराः।

गंभीरमालिनी फेनमालिनी ऊर्मिमालिनी सरितः॥ ६६९॥

तो । ततश्चंद्रमालः सूर्यमालो नागमालो देवमाल इति चत्वारोऽपरविदेहसीतोदोत्तरदिक्स्थवक्षाराः । गंभीरमालिनी फेनमालिनी ऊर्मिमालिनीति तिस्रस्तत्रस्थसरितः ॥ ६६९ ॥

हेममया वक्खारा वेभंगा रोहिसरिसवण्णणगा।
तासिं पवेसतोरणगेहे णिवसंति दिक्कण्णा ॥ ६७० ॥

हेममया वक्षाराः विभंगा रोहितसदृशवर्णनकाः ।
तासां प्रवेशतोरणगेहे निवसंति दिक्कन्याः ॥ ६७० ॥

हेम । ते वक्षाराः हेममया, विभंगनद्यो रोहितसदृशवर्णनकाः । यथा रोहिन्निर्गमादौ व्यासादयस्तथात्रापि नदीनिर्गम $\frac{२५}{२}$ प्रवेशव्यासौ १२५ । परिवारनद्यः २८००० निर्गमे प्रवेशे च तोरणोत्सेधः १८ $\frac{३}{४}$।१८७$\frac{१}{२}$ ज्ञातव्यः । तासां निर्गमप्रवेशतोरणोपरिमगेहे दिक्कन्या निवसंति ॥६७० ॥

अथ तद्वक्षाराणामुपरिस्थदेवानाह;—

वीसदिवक्खाराणं सिहरे तत्तव्विसेसणामसुरा ।
चिट्ठंति तण्णगाणं पुह कंचणवेदियावणेहिं जुदा॥६७१॥

विंशतिवक्षाराणां शिखरे तत्तद्विशेषनामसुराः ।
तिष्ठंति तन्नगानां पृथक् कांचनवेदिकावनैः युताः ॥ ६७१ ॥

वीस । गजदंतसहितविंशतिवक्षाराणां शिखरे तत्तद्वक्षारपर्वतनामानः सुरास्तिष्ठंति । ते च नगाः पृथक् पृथक् कांचनवेदिकाभिर्वनैश्च युक्ताः ६७१

इदानीं देवारण्यानां स्थानमाह;—

पव्ववरविदेहंते सीतदु दुतडेसु देवरण्णाणि ।
चारि लवणुवहिपासे तव्वेदी भद्दसालसमा ॥ ६७२ ॥

पूर्वापरविदेहांते सीताद्वयोः द्वितटेषु देवारण्यानि ।
चत्वारि लवणोदधिपार्श्वे तद्वेदी भद्रसालसमा ॥ ६७२ ॥

पुव्व। पूर्वापरविदेहांते सीतासीतोदयोर्द्वितटेषु देवारण्यानि चत्वारि संति। यथा पूर्वापरभद्रशालवेदिका निषधनीलौ स्पृष्ट्वा तिष्ठंति तथा लवणोदधिपार्श्वे देवारण्यवेदिकापि ॥ ६७२ ॥

सांप्रतं तदरण्यवृक्षादिकमाह;—

जंबीरजंबुकेलीकंकिल्लीमल्लिवल्लिपहुदीहिं।
बहुदेवसरोवावीपासादगिहेहिं जुत्ताणि ॥ ६७३ ॥

जंबीरजंबूकदलीकंकेल्लिमल्लिवल्लिप्रभृतिभिः।
बहुदेवसरोवापीप्रासादगृहैः युक्तानि ॥ ६७३ ॥

जंबीर। तान्यरण्यानि जंबीरजंबूकदलीकंकेल्लीमाल्लिवल्लिप्रभृतिवृक्षैः बहुभिर्देवसरोभिर्वापीभिः प्रासादगृहैश्च युक्तानि ॥ ६७३ ॥

अथ विदेहदेशानां ग्रामादिलक्षणं गाथात्रयेणाह;—

देसे पुह पुह गामा छण्णउदीकोडि णयरखेडा य।
सव्वड मडंव पट्टण दोणा संवाह दुग्गडवी ॥ ६७४ ॥

देशे पृथक् पृथक् ग्रामाः षण्णवतिकोट्यः नगरखेटाः च।
सर्वडा मडंवाः पट्टनानि द्रोणाः संबाहा दुर्गाटव्यः ॥ ६७४ ॥

देसे। विदेहस्थेषु द्वात्रिंशद्देशेषु पृथक् पृथक् ग्रामाः षण्णवतिकोट्यः ९६०००००० नगराणि खेटाः सर्वडाः मडंवाः पत्तनानि द्रोणाः संबाहाः दुर्गाटव्यः ॥ ६७४ ॥

छव्वीसमदो सोलं चउवीसचउक्कमव अडदालं।
णवणउदीचोद्दस अडवीसं कमसो सहस्सगुणा ॥६७५॥

षड्विंशमतः षोडशः चतुर्विंशं चतुष्कमेव अष्टचत्वारिंशत्।
नवनवतिः चतुर्दश अष्टाविंशं क्रमशः सहस्रगुणानि ॥ ६७५ ॥

छव्वीस । नगरादीनां संख्या यथाक्रमं षड्विंशतिसहस्राणि २६००० षोडशसहस्राणि १६००० चतुर्विंशतिसहस्राणि २४००० चत्वारिसहस्राणि ४००० अष्टचत्वारिंशत्सहस्राणि ४८००० नवनवतिसहस्राणि ९९००० चतुर्दशसहस्राणि १४००० अष्टाविंशतिसहस्राणि २८००० भवंति ॥ ६७५ ॥

वइ चउगोउरसालं णदिगिरिणगवेढि सपणसयगामं ।
रयणपदसिंधुवेलावलइय णगुवरिट्ठियं कमसो ॥६७६॥

वृतः चतुर्गोपुरशालः नदीगिरिनगवेष्टचं सपंचशतग्रामं ।
रत्नपदसिंधुवेलावलयितः नगोपरि स्थितं क्रमशः ॥ ६७६ ॥

वइ । वृत्या वृतो ग्रामः चतुर्गोपुरशालयुतं नगरं नद्यद्रिवेष्टचं खेटं नगवेष्टितं खर्वडं पंचशतग्रामयुतं मडंबं रत्नानां स्थानं पत्तनं नदीवेष्टितो द्रोणः जलधिवेलावलयितः संवाहः नगोपरि स्थिता दुर्गाटवी क्रमशः ॥ ६७६ ॥

अथ विदेहदेशस्थोपसमुद्राभ्यंतरद्वीपस्वरूपमाह;—

छप्पण्णंतरदीवा छव्वीससहस्स रयणआयरया ।
रयणाण कुक्खिवासा सत्तसयं उवसमुद्दम्हि ॥ ६७७ ॥

षट्पंचाशदंतरद्वीपाः षड्विंशसहस्रं रत्नाकराः ।
रत्नानां कुक्षिवासाः सप्तशतानि उपसमुद्रे ॥ ६७७ ॥

छप्पण्णं । विदेहदेशस्थोपसमुद्रषट्पंचाश ५६ दंतरद्वीपाः षड्विंशतिसहस्र २६००० रत्नाकराः रत्नानां क्रयविक्रयस्थानभूतकुक्षिवासाः सप्तशतानि ७०० भवंति ॥ ६७७ ॥

अथ मागधादित्रयाणां स्थानमाह;—

सीतासीतोदाणदितीरसमीवे जलम्हि दीवातियं ।
पुव्वादी मागहवरतणुप्पभासामराण हवे ॥ ६७८ ॥

सीतासीतोदानदीतीरसमीपे जले द्वीपत्रयं ।
पूर्वादिना मागधवरतनुप्रभासामराणां भवेत् ॥ ६७८ ॥

सीता । सीतासीतोदानदीतीरसमीपे जले पूर्वापरेण मागधवरतनुप्रभासाख्यव्यंतराणां द्वीपत्रयं भवेत् ॥ ६७८ ॥

अथ विदेहक्षेत्रगतवर्षादिस्वरूपं गाथाद्वयेनाह;—

वरसंति कालमेहा सत्तविहा सत्त सत्त दिवसवही ।
वरिसाकाले धवला बारस दोणाभिहाणब्भा ॥ ६७९ ॥

वर्षंति कालमेघाः सप्तविधाः सप्त सप्त दिवसावधीन् ।
वर्षाकाले धवला द्वादश द्रोणाभिधाना अभ्राः ॥ ६७९ ॥

वरसंति । सप्तविधाः कालमेघाः सप्तसप्तदिवसावधीन् वर्षाकाले वर्षंति । धवलवर्णा द्रोणाभिधाना द्वादशाभ्राः तथा वर्षंति ॥ ६७९ ॥

देसा दुब्भिक्खीदीमारिकुदेववण्णलिंगिमदहीणा ।
भरिदा सदावि केवलिसलागपुरिसिड्ढिसाहूहिं ॥ ६८० ॥

देशा दुर्भिक्षेतिमारिकुदेववर्णलिंगिमतहीनाः ।
भृताः सदापि केवलिशलाकापुरुषर्धिसाधुभिः ॥ ६८० ॥

देसा । विदेहस्था देशा दुर्भिक्षेणातिवृष्ट्यनावृष्टिमूषकशलभशुकस्वचक्रपरचक्रलक्षणसप्तविधेतिभिः गोमार्यादिमारिभिः कुदेवताभिरन्यलिंगिमतैश्च हीनाः सदापि केवलिभिः शलाकापुरुषैः ऋद्धिसंपन्नसाधुभिर्भृता वर्तंते।६८०।

अथ तीर्थकृत्सकलचक्रार्धचक्रिणां पंचमंदरापेक्षया जघन्योत्कृष्टसंख्यया वर्तनमाह;—

तित्थद्धसलयचक्की सट्ठिसयं पुह वरेण अवरेण ।
वीसं वीसं सयले खेत्ते सत्तरिसयं वरदो ॥ ६८१ ॥

तीर्थार्धसकलचक्रिणः षष्ठिशतं पृथक् वरेण अवरेण ।
विंशं विंशं सकले क्षेत्रे सप्ततिशतं वरतः ॥ ६८१ ॥

तित्थद्ध । तीर्थकृतः अर्धचक्रिणः सकलचक्रिणश्च पृथक् पृथगुत्कृष्टेन षष्ठ्युत्तरं शतं १६० जघन्येन ते सीतासीतोदयोर्दक्षिणोत्तरतटे एकैका इत्येका इत्येकमंदरापेक्षया चत्वार इति मिलित्वा पंचमंदरविदेहापेक्षयैव विंशतिविंशतिर्भवंति २० । ते च वरत उत्कृष्टतः पंचभरतपंचैरावतसमन्विते सकले क्षेत्रे सप्तत्युत्तरशतं १७० भवंति ॥ ६८१ ॥

इदानीं चक्रिणः संपत्स्वरूपमाह;—

चुलसीदिलक्ख भद्दिभ रहा हया बिगुणणवयकोडीओ ।
णवणिहि चोद्दसरयणं चक्कित्थीओसहस्सछण्णउदी ६८२

चतुरशीतिलक्षभद्रेभाः रथा हया द्विगुणनवकोट्यः ।
नवनिधयः चतुर्दशरत्नानि चक्रिस्त्रियः सहस्रं षण्णवतिः ॥ ६८२ ॥

चुलसी । चतुरशीतिलक्षभद्रेभाः ८४०००० रथाश्च तावंतः ८४०००० हया द्विगुणनवकोट्यः १८०००००० ऋतुयोग्यवस्तुदायी कालः, भाजनप्रदो महाकालः, धान्यप्रदः पांडुः, आयुधप्रदो माणवकः, तूर्यप्रदः शंखः, हर्म्यप्रदो नैसर्पः, वस्त्रप्रदः पद्मः, आभरणप्रदः पिंगलः, विविधरत्ननिकरप्रदो नानारत्नः इत्येते नवनिधयः । चक्रासिछत्रदंडमणि-चर्मकाकिणीगृहपतिसेनापतीभाश्वतक्षयोषित्पुरोहिता इति चतुर्दशरत्नानि षण्णवतिसहस्रास्त्रियश्च ९६००० चक्रिणो भवंति ॥ ६८२ ॥

सांप्रतं राजाधिराजादीनां लक्षणं गाथात्रयेणाह;—

अण्णे सगपदविठिया सेणागणवणिजदंडवइमंती ।
महयरतलयरवण्णा चउरंगपुरोहमच्चमहमच्चा ॥ ६८३ ॥

अन्ये स्वकपदवीं स्थिताः सेनागणवणिग्दंडपतिः मंत्री ।
महत्तरः तलवरः वर्णः चतुरंगपुरोहितामात्यमहामात्यः ॥ ६८३ ॥

अण्णे । अन्ये राजादयः स्वकीयस्वकीयपदवीं स्थिताः । तत्र सेनापति-र्गणिकपतिर्वणिक्पतिर्दंडपतिस्समस्तसेनानायक इत्यर्थः । मंत्री पंचांगमंत्र-कुशल इत्यर्थः महत्तरः कुलवृद्ध इत्यर्थः तलवरः क्षत्रियादिचतुर्वर्णः चतु-रंगसेनापुरोहितः अमात्यः देशाधिकारीत्यर्थः महामात्यः स सर्वाधि-कारीत्यर्थः ॥ ६८३ ॥

इदि अट्ठारससेढीणहिओ राजो हवेज्ज मउडधरो ।
पंचसयरायसामी अहिराजो तो महाराजो ॥ ६८४ ॥

इति अष्टादशश्रेणीनामधिपो राजा भवेत् मकुटधरः ।
पंचशतराजस्वामी अधिराजः ततः महाराजः ॥ ६८४ ॥

इदि । इत्यष्टादशश्रेणीनामधिपो राजा स एव मकुटधरो भवेत्, पंच-शतराजस्वामी अधिराजः सहस्रराजस्वामी महाराजः ॥ ६८४ ॥

तह अद्धमंडलीओ मंडलिओ तो महादिमंडलिओ ।
तियछक्खंडाणहिवा पहुणो राजाण दुगुणदुगुणाणं ॥

तथा अर्धमंडलिकः मंडलिकः ततो महादिमंडलिकः ।
त्रिकषट्खंडानामधिपाः प्रभवः राज्ञां द्विगुणद्विगुणानाम् ॥ ६८५ ॥

तह । तथा द्विसहस्रराजस्वामी अर्धमंडलिकः, चतुःसहस्रराजस्वामी मंडलिकः, ततोष्टसहस्रराजस्वामी महामंडलिकः, षोडशसहस्रराजस्वामी त्रिखंडाधिपतिः, द्वात्रिंशत्सहस्रराजस्वामी षट्खंडाधिपतिः, इत्यधिराजादयः सर्वे राज्ञः सकाशात् द्विगुणद्विगुणा ज्ञातव्याः ॥ ६८५ ॥

इदानीं तीर्थकृतो विशेषस्वरूपमाह;—

सयलभुवणेक्कणाहो तित्थयरो कोमुदीव कुंदं वा।
धवलेहिं चामरेहिं चउसट्ठिहि विज्जमाणो सो ॥६८६॥

सकलभुवनैकनाथः तीर्थकरः कौमुदीव कुंदं वा।
धवलैः चामरैः चतुःषष्ठिभिः वीज्यमानः सः ॥ ६८६ ॥

सयल। यः सकलभुवनैकनाथः कौमुदीव कुंदमिव चतुष्षष्ठिसंख्यैर्धवलैश्चामरैर्वीज्यमानः स तीर्थकरो ज्ञातव्यः ॥ ६८६ ॥

अथ विदेहविजयानां नामानि गाथाचतुष्टयेनाह;—

कच्छा सुकच्छा महाकच्छा चउत्थी कच्छकावदी।
आवत्ता लांगलावत्ता पोक्खला पोक्खलावदी ॥६८७॥

कच्छा सुकच्छा महाकच्छा चतुर्थी कच्छकावती।
आवर्ता लांगलावर्ता पुष्कला पुष्कलावती ॥ ६८७ ॥

कच्छा। छायामात्रमेवार्थः ॥ ६८७ ॥

वच्छा सुवच्छा महावच्छा चउत्थी वच्छकावदी।
रम्मा सुरम्मगा चेव रमणेज्जा मंगलावदी ॥ ६८८ ॥

वत्सा सुवत्सा महावत्सा चतुर्थी वत्सकावती।
रम्या सुरम्यका चैव रमणीया मंगलावती ॥ ६८८ ॥

वच्छा। छायामात्रमेवार्थः ॥ ६८८ ॥

पम्मा सुपम्मा महापम्मा चउत्थी पम्मकावदी।
संखा च णलिणी चेव कुमुदा सरिदा तहा ॥ ६८९ ॥

पद्मा सुपद्मा महापद्मा चतुर्थी पद्मकावती।
शंखा च नलिनी चैव कुमुदा सरित्तथा ॥ ६८९ ॥

पम्मा। छायामात्रमेवार्थः ॥ ६८९ ॥

वप्पा सुवप्पा महावप्पा चउत्थी वप्पकावदी।
गंधा खलु सुगंधा च गंधिला गंधमालिणी ॥ ६९० ॥

वप्रा सुवप्रा महावप्रा चतुर्थी वप्रकावती।
गंधा खलु सुगंधा च गंधिला गंधमालिणी ॥ ६९० ॥

वप्पा। छायामात्रमेवार्थः ॥ ६९० ॥

अथ एतेषु देशेषु खंडानि कथं जानीयादित्युक्ते प्राह;—

विजयं पडिवेयड्ढो गंगासिंधुसमदोण्णिदोण्णि णई।
तेहिं कया छक्खंडा विदेह बत्तीस विजयाणं ॥ ६९१ ॥

विजयं प्रति विजयार्धः गंधासिंधुसमे द्वे द्वे नद्यौ।
तैः कृतानि षट्खंडानि विदेहे द्वात्रिंशत् विजयानाम् ॥ ६९१ ॥

विजयं। देशं प्रति देशं प्रति एकैको विजयार्धोऽस्ति विजयोदेशो अर्धीकृतोऽस्मादिति विजयार्ध इत्यार्थिकत्वात्। तत्रैव गंगासिंधुसमाने द्वे द्वे नद्यौ स्तः। तैर्नदीविजयार्द्धैः विदेहस्थद्वात्रिंशद्देशानां प्रत्येकं षट् खंडानि कृतानि ॥ ६९१ ॥

अथ तत्रस्थविजयार्धानां नदीनां च निन्यासादिकं गाथात्रयेणाह;—

ते पुव्वावरदीहा जणवयमज्झे गुहादु पुव्वं वा।
गंगादु णीलमूलगकुंडा रत्तदुग णिसहणिस्सरिदा ६९२

ते पूर्वापरदीर्घा जनपदमध्ये गुहाद्वयं पूर्वं वा।
गंगाद्वयं नीलमूलगकुंडा रक्ताद्विकं निषधनिःसृताः ॥ ६९२ ॥

ते। ते विजयार्धाः पूर्वापरदीर्घा जनपदमध्ये संति। तत्रस्थगुहाद्वयं तु भरतविजयार्द्धोक्तवद् ज्ञातव्यं। गंगासिंधू द्वे नीलपर्वतमूलस्थितकुंडान्नि-

र्गत्य सीतासीतोदयोः प्रविष्टे । रक्तारक्तोदे द्वे निषधपर्वतमूलस्थितकुंडान्नि-सृत्य सीतासीतोदयोः प्रविष्टे ॥ ६९२ ॥

दसदसपणोत्ति पण्णं तीसं दसयं च रुप्पगिरिवासा ।
खयराभिजोग सेढी सिहरे सिद्धादिकूडं तु ॥ ६९३ ॥

दश दश पंचांतं पंचाशत् त्रिंशत् दशकं च रूप्यगिरिव्यासा ।
खचराभियोग्या श्रेणी शिखरे सिद्धादिकूटं तु ॥ ६९३ ॥

दस । तस्य विजयार्धस्य दश योजनोत्सेधा प्रथमा श्रेणी पंचाशद्यो-जनसमव्यासा । तत उपरि दशयोजनोत्सेधा द्वितीया श्रेणिस्त्रिंशयोजन-समव्यासा, तत उपरि पंचयोजनोत्सेध उपरिमशिखरो दशयोजनव्यासः । तत्र प्रथमोभयतटगतश्रेण्यां खचरा निवसंति, द्वितीयायामाभियोग्याः शिखरे तु सिद्धादिनवकूटानि संति ॥ ६९३ ॥

अथ तत्रैव द्वितीयादिश्रेणौ विशेषमाह;—

सोहम्मआभिजोग्गगमणिचित्तपुराणि बिदियसेढिम्हि ।
वेयड्ढकुमारवई सिहरतले पुण्णभद्दक्खे ॥ ६९४ ॥

सौधर्माभियोग्यगमणिचित्रपुराणि द्वितीयश्रेण्याम् ।
विजयार्धकुमारपतिः शिखरतले पूर्णभद्राख्ये ॥ ६९४ ॥

सोहम्म । तत्रैव द्वितीयायां श्रेण्यां सौधर्मसंबंध्याभियोग्यानां मणि-मयानि विचित्रपुराणि संति । तस्य शिखरतले पूर्णभद्राख्ये कूटे विज-यार्धकुमारपतिरस्ति ॥ ६९४ ॥

अथ तत्र प्रथमश्रेण्योः स्थितविद्याधरनगराणां संख्यां तन्नामानि च पंच-दशभिर्गाथाभिराह;—

पणवण्णं पणवण्णं विदेहवेयड्ढपढमभूमिम्हि ।
णयराणि पण्ण सट्ठी जंबूउभयंतवेयड्ढे ॥ ६९५ ॥

पंचपंचाशत् पंचपंचाशत् विदेहविजयार्धप्रथमभूमौ।
नगराणि पंचाशत् षष्टिः जंबूभयांतविजयार्धे ॥ ६९५ ॥

पण। विदेहविजयार्धप्रथमोभयश्रेण्योर्थथासंख्यं पंचाधिकपंचाशत् ५५ पंचाधिकपंचाशत् ५५ नगराणि संति। जंबूद्वीपोभयांतभरतैरावतस्थविजयार्धे प्रथमोभयश्रेणौ च पंचाशत् ५० षष्टि ६० नगराणि संति ॥ ६९५ ॥

सेलायामे दक्खिणसेढीए पण्णमुत्तरे सट्ठी।
तण्णामा पुव्वादी किंणामिद किंणरंगीदं ॥ ६९६ ॥

शैलायामे दक्षिणश्रेण्यां पंचाशदुत्तरस्यां षष्टिः।
तन्नामानि पूर्वादितः किंनामितं किन्नरगीतं ॥ ६९६ ॥

सेला। भरतैरावतविजयार्धशैलायामे दक्षिणश्रेण्यां पंचाश ५० नगराणि, उत्तरश्रेणौ तु षष्टि ६० नगराणि। तेषां नगराणां नामानि पूर्वदिशः आरभ्य कथ्यंते—किंनामितं किन्नरगीतं ॥ ६९६ ॥

णरगीदं बहुकेदू पुंडरियं सीहसेदगरुडधजं।
सिरिपहधरलोहग्गलमरिंजयं वज्जअग्गलड्ढपुरं ॥६९७॥

नरगीतः बहुकेतुः पुंडरीकं सिंहश्वेतगरुडध्वजं।
श्रीप्रभधरं लोहार्गलमरिंजयं वज्रार्गलाढ्यपुरं ॥ ६९७ ॥

णरणीदं। नरगीतः बहुकेतुः पुंडरीकं सिंहध्वजं श्वेतध्वजं गरुडध्वजं श्रीप्रभं श्रीधरं लोहार्गलमरिंजयं वज्रार्गलं वज्राढ्यंपुरं ॥ ६९७ ॥

होइ विमोइ पुरंजय सयडचदुव्वहुमुही य अरजक्खा।
विरजक्खा रहणूपुर मेहलअग्गपुर खेमचरी ॥ ६९८ ॥

भवति विमोचि पुरंजयं शकटचतुर्बहुमुखी च अरजस्का।
विरजस्का रथनूपुरं मेखलाग्रपुरं क्षेमचरी ॥ ६९८ ॥

होइ । भवति विमोचि पुरंजयं शकटमुखी चतुर्मुखी बहुमुखी अरजस्का विरजस्कार थनूपुरं मेखलाग्रपुरं क्षेमचरी १० ॥ ६९८ ॥

अवराजिद् कामादीपुप्फं गगणचरि विणयचरि सुक्कं- ।
तो संजयंतिणगरं जयंति विजया वइजयंती य ॥ ६९९ ॥

अपराजितं कामादिपुष्पं गगनचरी विनयचरी सुकांता ।
संजयंतिनगरं जयंती विजया वैजयंती च ॥ ६९९ ॥

अवराजिद । अपराजितं कामपुष्पं गगनचरी विनयचरी सुकांता संजयंतिनगरं जयंती विजया वैजयंती ॥ ६९९ ॥

खेमंकर चंदाहं सूराहं चित्तकूड महकूडं ।
हेमतिमेहविचित्तयकूडं वेसवणकूडमदो ॥ ७०० ॥

क्षेमंकरं चंद्राभं सूर्याभं चित्रकूटं महाकूटं ।
हेमत्रिमेघविचित्रकूटं वैश्रवणकूटमतः ॥ ७०० ॥

खेमंकर । क्षेमंकरं चंद्राभं सूर्याभं चित्रकूटं महाकूटं हेमकूटं त्रिकूटं मेघकूटं विचित्रकूटं वैश्रवणकूटमतः ॥ ७०० ॥

सूरपुर चंदपुरणिच्चुज्जोदिणि विमुहिणिच्चवाहिणियो ।
सुमुही चरिमा पच्छिमभागादो अज्जुणी अरुणी॥७०१॥

सूर्यपुरं चंद्रपुरं नित्योद्योतिनी विमुखी नित्यवाहिनी ।
सुमुखी चरमा पश्चिमभागात् अर्जुनी अरुणी ॥ ७०१ ॥

सूर । सूर्यपुरं चंद्रपुरं नित्योद्योतिनी विमुखी नित्यवाहिनी सुमुखी चरमा ५० उत्तरश्रेण्यां । पश्चिमभागादारभ्य कथ्यंते–अर्जुनी अरुणी॥७०१॥

केलास वारुणीपुरि विज्जुप्पह किलिकिलं च चूडादि ।
मणि ससिपह वंसालं पुप्फादी चूलमिह दसमं ॥७०२॥

कैलाशं वारुणी पुरी विद्युत्प्रभं किलिकिलं च चूडादिः।
मणिः शशिप्रभं वंशालं पुष्पादिः चूलमिह दशमं ॥ ७०२ ॥

केलास। कैलाशं वारुणीपुरी विद्युत्प्रभं किलिकिलं चूडामणिः शशिप्रभं वंशाल पुष्पचूलमिह दशमम् ॥ ७०२ ॥

तत्तोवि हंसगब्भं बलाहगं तेरसं सिवंकरयं।
सिरिसोध चमरसिवमंदिर वसुमक्का वसुमदी य ॥७०३॥

ततोपि हंसगर्भं बलाहकं त्रयोदशं शिवंकरं।
श्रीसौधं चमरं शिवमंदिरं वस्तुमक्का वसुमती च ॥ ७०३ ॥

तत्तोवि। छायामात्रमेवार्थः ॥ ७०३ ॥

सिद्धत्थं सत्तुञ्जय धयमालसुरिंदकंत गयणादि।
णंदणमवि वीदादिमसोगो अलगा तदो तिलगा ॥७०४॥

सिद्धार्थं शत्रुंजयं ध्वजमालं सुरेंद्रकांतं गगनादिः।
नंदनमपि वीतादिमशोकः अलका ततस्तिलका ॥ ७०४ ॥

सिद्धत्थं। सिद्धार्थं शत्रुंजयं ध्वजमालं सुरेंद्रकांतं गगननंदनं अशोको विशोको वीतशोको अलका ततस्तिलका ॥ ७०४ ॥

अंबरतिलगं मंदर कुमुदं कुंदं च गयणवल्लभयं।
तो दिव्वातिलय भूमीतिलयं गंधव्वणयरमदो ॥ ७०५ ॥

अंबरतिलकं मंदरं कुमुदं कुंदं च गगनवल्लभं।
ततो दिव्यतिलकं भूमीतिलकं गंधर्वनगरमतः ॥ ७०५ ॥

अंबर। छायामात्रमेवार्थः ॥ ७०५ ॥

मुत्ताहारं णेमिसमग्गिमहज्जालसिरिणिकेदवुरं।
जयवह सिरिवासं मणिवज्जं भद्दस्सपुरं धणंजययं।७०६।

मुक्ताहारं नैमिषमग्निमहाज्वालं श्रीनिकेतपुरं ।
जयावहं श्रीवासं मणिवज्रं भद्रा स्वपुरं धनंजयं ॥ ७०६ ॥

मुत्ता । मुक्ताहारं नैमिषं अग्निज्वालं महाज्वालं श्रीनिकेतपुरं जयावहं श्रीवासं मणिवज्राख्यं भद्रास्वपुरं धनंजयं ॥ ७०६ ॥

गोखीरफेणमक्खोभं गिरिसिहरं च धरणि धारिणियं ।
दुग्गं दुद्धरणयरं सुदंसणं तो महिंदविजयपुरं ॥ ७०७ ॥

गोक्षीरफेनमक्षोभं गिरिशिखरं च धरणि धारिणिकं ।
दुर्गं दुर्धरनगरं सुदर्शनं ततो महेंद्रविजयपुरं ॥ ७०७ ॥

गोखीर । गोक्षीरफेनं अक्षोभं गिरिशिखरं धरणिपुरं धारिणीपुरं दुर्गं दुर्धरनगरं सुदर्शनं ततो महेंद्रपुरं विजयपुरं ॥ ७०७ ॥

णगरी सुगंधिणी वज्जद्धतरं रयणपुव्वआयरयं ।
रयणपुरं चरिमंते रयणमया राजधाणीओ ॥ ७०८ ॥

नगरीं सुगंधिनी वज्रार्धतरं रत्नपूर्वमाकरं ।
रत्नपुरं चरमं ताः रत्नमया राजधान्यः ॥ ७०८ ॥

णगरी । सुगंधिनी नगरी वज्रार्धतरं रत्नाकरं रत्नपुरं चरमं ६० ताः रत्नमया राजधान्यः स्युः ॥ ७०८ ॥

पायारगोउरट्टालचरियासरवण विराजिया तत्थ ।
विज्जाहरा तिविज्जा वसंति छक्कम्मसंजुत्ता ॥ ७०९ ॥

प्राकारगोपुराट्टालचर्यासरोवनैः विराजिता तत्र ।
विद्याधरा त्रिविद्या वसंति षट्कर्मसंयुक्ता ॥ ७०९ ॥

पायार । ताश्च पुनः प्राकारगोपुराट्टालकचर्यासरोवनैर्विराजिताः । तत्र साधितकुलजातिविद्याभिः त्रिविद्याः षट्कर्मसंयुक्ताः इज्या असिमष्यादि-

जीवनोपायव्यापारा वार्ता दत्तिश्च स्वाध्यायः संयमस्तपः इत्येतानि षट्कर्माणि एतैर्युक्ता विद्याधरा वसंति ॥ ७०९ ॥

अथ विजयार्धकृतषट्खंडस्थम्लेच्छखंडमध्यस्थितवृषभाद्रीणां स्वरूपं निरूपयति;—

सत्तरिसयवसहगिरी मज्झगयमिलेच्छखंडबहुमज्झे।
कणयमणिकंचणुदयति भरिया गयचक्किणामेहिं ॥७१०॥

सप्ततिशतं वृषभगिरयः मध्यगतम्लेच्छखंडबहुमध्ये।
कनकमणिकांचनोदयत्रिकं भृता गतचक्रिनामभिः ॥ ७१० ॥

सत्तरि। कनकवर्णा मणिमयाः कांचनपर्वतोदय १०० भू १०० मुख ५० व्यासाः गतचक्रिणां नामभिर्भृताः सप्तत्युत्तरं शतं १७० वृषभगिरयः मध्यगतम्लेच्छखंडबहुमध्ये तिष्ठंति ॥ ७१० ॥

अथ तथार्यखंडमध्यस्थितराजधान्या व्यासायामौ कथयति;—

सत्तरिसयणयराणि य उवजलधिगअज्जखंडमज्झह्मि।
चक्कीण णवय बारस वासायामेण होंति कमे ॥ ७११ ॥

सप्त तिशतनगराणि च उपजलधिगार्यखंडमध्ये।
चक्रिणां नव द्वादश व्यासायामाभ्यां भवंति क्रमेण ॥ ७११ ॥

सत्तरि। उपजलधिगतार्यखंडमध्ये व्यासायामाभ्यां क्रमेण नव ९ द्वादश १२ योजनानि सप्तत्युत्तरशतं चक्रिणां नगराणि भवंति ॥ ७११ ॥

अथ तेषां नामानि गाथाचतुष्टयेनाह;—

खेमा खेमपुरी चेवरिट्ठारिट्ठपुरी तहा।
खग्गा य मंजुसा चेव ओसही पुंडरीकिणी ॥ ७१२ ॥

क्षेमा क्षेमपुरी चैव अरिष्टा अरिष्टपुरी तथा।
खड्गा च मंजूषा चैव औषधी पुंडरीकिणी ॥ ७१२ ॥

खेमा । छायामात्रमेवार्थः ॥ ७१२ ॥

सुसीमा कुंडला चेव पराजिद् पहंकरा ।
अंका पउमावदी चेव सुभा रयणसंचया ॥ ७१३ ॥

सुसीमा कुंडला चैव अपराजिता प्रभंकरा ।
अंका पद्मावती चैव शुभा रत्नसंचया ॥ ७१३ ॥

सुसीमा । छायामात्रमेवार्थः ॥ ७१३ ॥

अस्सपुरी सींहपुरी महापुरी तह य होदि विजयपुरी ।
अरया विरया चेव असोगया वीदसोगा य ॥ ७१४ ॥

अश्वपुरी सिंहपुरी महापुरी तथा च भवति विजयपुरी ।
अरजा विरजा चैव अशोका वीतशोका च ॥ ७१४ ॥

अस्सपुरी । छायामात्रमेवार्थः ॥ ७१४ ॥

विजया च वइजयंती जयंत अवराजिदा य बोद्धव्वा ।
चक्कपुरी खग्गपुरी होदि अयोज्झा अवज्झा य ॥७१५॥

विजया च वैजयंती जयंता अपराजिता च बोद्धव्या ।
चक्रपुरी खड्गपुरी भवति अयोध्या अवध्या च ॥ ७१५ ॥

विजया । छायामात्रमेवार्थः ॥ ७१५ ॥ भरतैरावतगतचक्रिनगरयोस्तु नाम्नोरनियतत्वात् एषां नाम्नां मध्ये अन्यतमं भवतीति पृथग् न गृहीते ॥

अथ तेषां नगराणां विशेषस्वरूपं गाथाद्वयेनाह;—

रयणकवाडवरावर सहस्सदलदार हेमपायारा ।
बारसहस्सा वीही तत्थ चउप्पह सहस्सेक्कं ॥ ७१६ ॥

रत्नकपाटवरावरा सहस्रदलद्वारा हेमप्राकाराः ।
द्वादशसहस्राणि वीथ्यः तत्र चतुष्पथानि सहस्रैकम् ॥ ७१६ ॥

रयण । तेषां नगराणां रत्नमयकवाटाः उत्कृष्टसहस्रद्वाराः जघन्यतश्च ५०० द्वाराः हेममयप्राकारा भवंति । तदभ्यन्तरे द्वादशसहस्राणि वीथ्यः, तत्रैकसहस्रं चतुष्पथानि स्युः ॥ ७१६ ॥

णयराण बहिं परिदो वणाणि तिसदंससट्ठि पुरमज्झे ।
जिणभवणा णरवइजणगेहा सोहंति रयणमया ॥७१७॥

नगराणां बहिः परितः वनानि त्रिशतं सषष्ठिः पुरमध्ये ।
जिनभवनानि नरपतिजनगेहानि शोभंते रत्नमयानि ॥ ७१७ ॥

णयराण । नगराणां बहिः परितः षष्ठिसमन्वितत्रिशतं ३६० वनानि संति । पुरमध्ये जिनभवनानि नरपतिगृहाणि जनगृहाणि रत्नमयानि शोभंते ॥ ७१७ ॥

इदानीं नाभिगिरीणामवस्थितस्थानं तदुत्सेधादिकं च गाथात्रयेणाह;—

थिरभोगावणिमज्झे णाभिगिरीओ हवंति वीसाणि ।
वट्टा सहस्सतुंगा मूलुवरिं तत्तिया रुंदा ॥ ७१८ ॥

स्थिरभोगावनिमध्ये नाभिगिरयः भवंति विंशतिः ।
वृत्ताः सहस्रतुंगा मूलोपरि तावंतः रुंद्राः ॥ ७१८ ॥

थिर । स्थिरभोगावनिमध्ये वृत्ताः सहस्रोत्सेधाः मूलोपरि तावन्मात्र १००० रुंद्रा विंशतिनाभिगिरयः संति ॥ ७१८ ॥

सद्दावं विजडावं पउमगंधवण्णाम सुक्किला सिहरे ।
सक्कदुगणुचर सादीचारणपउमप्पहास वाणसुरा ।७१९।

श्रद्धावान् विजटावान् पद्मगंधवन्नामानि शुक्लाः शिखरे ।
शक्रद्विकानुचराः स्वातिचारणपद्मप्रभासाः वानसुराः ॥ ७१९ ॥

सद्दावं । श्रद्धावान् विजटावान् पद्मवान् गंधवान् इत्येतान्येव प्रत्येकं पंचमंदरसंबंधिनां चतुर्णां नाभिगिरीणां नामानि । ते च शुक्लवर्णाः, तेषां

शिखरेषु सौधर्मैशानयोरनुचराः स्वातिचारणपद्मप्रभासाख्यव्यंतरदेवा निवसंति ॥ ७१९ ॥

इदानीं हिमवदादिकुलगिरीणां विजयार्धाणां चोपरि स्थितकूटानां संख्यादिकमाचष्टे;—

एक्कारसट्ठणवणव अट्ठेक्कारस हिमादिकूलाणि ।
वेयड्ढाणं णवणव पुव्वगकूलम्हि जिणभवणं ॥ ७२० ॥

एकादशाष्ट नव नव अष्टैकादश हिमादिकूटानि ।
विजयार्धानां नव नव पूर्वगकूटे जिनभवनानि ॥ ७२० ॥

एक्का । एकादश ११ अष्ट ८ नव ९ नव ९ अष्ट ८ एकादश ११ प्रमितानि यथासंख्यं हिमवदादिकुलपर्वतोपरि स्थितकूटानि विजयार्धानां तूपरि नव ९ नव ९ कूटानि । तत्र पूर्वदिग्गतकूटे जिनभवनानि संति ॥ ७२० ॥

अथ उक्तकूटानां नामादिकं गाथादशकेन निगदति;—

कमसो सिद्धायदणं हिमवं भरहं इला य गंगा य ।
सिरिकूडरोहिदस्सा सिंधु सुरा हेमवदय वेसवणं ।७२१।

क्रमशः सिद्धायतनं हिमवान् भरतं इला च गंगा च ।
श्रीकूटं रोहितास्या सिंधुः सुरा हैमवतकं वैश्रवणं ॥ ७२१ ॥

कमसो । क्रमशस्तेषां नामानि सिद्धायतनं हिमवान् भरतं इला च गंगा च श्रीकूटं रोहितास्या सिंधुः सुरा हैमवतकं वैश्रवणं ॥ ७२१ ॥

पढमे जिणिंदगेहं देवीओ जुवदिणामकूडेसु ।
सेसेसु कूडणामा वेंतरदेवावि णिवसंति ॥ ७२२ ॥

प्रथमे जिनेंद्रगेहं देव्यो युवतिनामकूटेषु ।
शेषेषु कूटनामानः व्यंतरदेवा अपि निवसंति ॥ ७२२ ॥

पढमं । तत्र प्रथमकूटे जिनेंद्रगेहं स्त्रीलिंगाख्यकूटेषु व्यंतरदेव्यो निवसंति । शेषेषु तत्र कूटनाम व्यंतरदेवा निवसंति ॥ ७२२ ॥

वट्टा सव्वे कूडा रयणमया सगणगस्स तुरियुदया ।
तत्तियभूवित्थारा तदद्धवदणा हु सव्वत्थ ॥ ७२३ ॥

वृत्ताः सर्वे कूटा रत्नमयाः स्वकनगस्य तुर्योदयाः ।
तावद्भूविस्ताराः तदर्धवदना हि सर्वत्र ॥ ७२३ ॥

वट्टा । ते सर्वे कूटाः वृत्ताः रत्नमयाः स्वकीयनगस्य चतुर्थांशोदयाः तावन्मात्रभूविस्तारास्तदर्धवदनाः खलु भवंति ॥ ७२३ ॥

तो सिद्ध महाहिमवं हेमवदं रोहिदा हिरीकूडं ।
हरिकंता हरिवरिसं वेलुरियं पच्छिमं कूडं ॥ ७२४ ॥

ततः सिद्धं महाहिमवान् हैमवतं रोहिता ह्रीकूटं ।
हरिकांता हरिवर्षं वैडूर्यं पश्चिमं कूटं ॥ ७२४ ॥

तो । पश्चिमं चरमं इत्यर्थः । शेषं छायामात्रमेवार्थः ॥ ७२४ ॥

सिद्धं णिसहं च हरिवरिसं पुव्वविदेह हरिधिदीकूडं ।
सीतोदा णाममदो अवरविदेहं च रुजगंतं ॥ ७२५ ॥

सिद्धं निषधं च हरिवर्षं पूर्वविदेहं हरिधृतिकूटं ।
सीतोदा नाम अतः अपरविदेहं च रुचकांतम् ॥ ७२५ ॥

सिद्धं । सिद्धं निषधं च हरिवर्षं पूर्वविदेहं हरिकूटं धृतिकूटं सीतोदा नाम अतोऽपरविदेहं चांतं रुचकं ॥ ७२५ ॥

सिद्धं णीलं पुव्वविदेहं सीदा य कित्ति णरकंता ।
अवरविदेहं रम्मगमपदंसणमंतिमं णीले ॥ ७२६ ॥

सिद्धं नीलं पूर्वविदेहं सीता च कीर्तिः नरकांता ।
अपरविदेहं रम्यकं अपदर्शनं अंतिमं नीले ॥ ७२६ ॥

सिद्धं । छायामात्रमेवार्थः ॥ ७२६ ॥

सिद्धं रुम्मी रम्मग णारी बुद्धी य रुप्पकूलक्खा ।
हेरण्णं कूडमदो मणिकंचणमट्ठमं होदि ॥ ७२७ ॥

सिद्धं रुक्मी रम्यकं नारी बुद्धिश्च रूप्यकूलाख्या ।
हैरण्यं कूटमतो मणिकांचनमष्टमं भवति ॥ ७२७ ॥

सिद्धं । छायामात्रमेवार्थः ॥ ७२७ ॥

सिद्धं सिहरि य हेरण्णं रसदेवी तदो य रत्तक्खा ।
लच्छी सुवण्ण रत्तवदी गंधवदीय कूडमदो ॥ ७२८ ॥

सिद्धं शिखरी च हैरण्यं रसदेवी ततश्च रक्ताख्या ।
लक्ष्मीः सुवर्णं रक्तवती गंधवती कूटमतः ॥ ७२८ ॥

सिद्धं । छायामात्रमेवार्थः ॥ ७२८ ॥

एरावदमणिकंचणकूडं सिहरिम्हि सव्वसेलाणं ।
मूले सिहरेवि हवे दहेवि वणसंडमेदस्स ॥ ७२९ ॥

ऐरावतमणिकांचनकूटं शिखरे सर्वशैलानाम् ।
मूले शिखरेपि भवेत् ह्रदेपि वनखंडमेतस्य ॥ ७२९ ॥

एरावद । ऐरावतं मणिकांचनकूटं ११ शिखरे पर्वते सर्वेषां शैलानां मूले शिखरेपि ह्रदेपि वनखंडं भवेत् । एतस्य वनषंडस्य ॥ ७२९ ॥

गिरिदीहो जोयणदलवासो वेदी दुकोसतुंगजुदा ।
धणुपणसयवासा णगवणणदिदहपहुदिएसु समा ७३०

गिरिदैर्घ्यं योजनदलव्यासं वेदी द्विक्रोशतुंगयुता ।
धनुःपंचशतव्यासा नगवननदीह्रदप्रभृतिषु समाः ॥ ७३० ॥

गिरि । गिरिदैर्घ्यमेव दैर्घ्यं योजनार्धव्यासं तस्य वेदी तु धनुःपंच-शतव्यासा क्रोशद्वयोत्तुंगयुता स्यात् । सा वेदी नगवननदीन्हदप्रभृतिषु सर्वत्र समाना ॥ ७३० ॥

सांप्रतं पर्वतादिषु सर्वत्र वेदिकासंख्यामाह;—

तिसदेक्कारससेले णउदीकुंडे दहाण छव्वीसे ।
तावदिया मणिवेदी णदीसु सगमाणदो दुगुणा॥७३१॥

त्रिशतैकादशशैलेषु नवतिकुंडेषु ह्रदानां षड्विंशतौ ।
तावंत्यः मणिवेद्यः नदीषु स्वकमानतः द्विगुणाः ॥ ७३१ ॥

तिस । जंबूद्वीपस्य त्रिशतैकादश ३११ शैलेषु तावत्यो मणिमयवेद्यः नवतिकुंडेषु ९० तावत्यो मणिमयवेद्यः न्हदानां षड्विंशतौ २६ तावत्यो मणिमयवेद्यः नदीषु स्वकीयप्रमाणतो द्विगुणा मणिमयवेद्यः स्युः ॥ इत उक्तार्थं विवृणोति—तत्रैको मंदरः १ षट् कुलाचलाः ६ चत्वारो यमकगिरयः ४ द्विशतं कांचनपर्वता २०० अष्टौ दिग्गजपर्वताः ८ षोडश वक्षाराः १६ चत्वारो गजदंताः ४ चतुस्त्रिंशद्विजयार्धाः ३४ चतुस्त्रिंशद् वृषभाचलाः ३४ चत्वारो नाभिनगाः ४ एतेषु मिलितेषु त्रिशतैकादश ३११ शैलसंख्या भवति । गंगादिमहानदीपतनकुंडानि चतुर्दश १४ विभंगनद्युत्पत्तिकुंडानि द्वादश १२ गंगासिंधुसमाननद्युत्पत्तिकुंडानि चतुःषष्ठिः ६४ एतेषु मिलितेषु नवतिकुंडानि ९० भवंति । कुलगिरिह्रदाः षट् ६ सीताह्रदा दश १० सीतोदा ह्रदा दश १० एतेषु मिलितेषु षड्विंशति

ह्रदा २६ भवंति । गंगासिंधुरक्तारक्तोदानां ४ प्रत्येकं परिवारनदी १४००० स्वगुणकारेण ४ गुणयित्वा ५६००० रोहिद्रोहितास्यासुवर्ण-रूप्यकूलानां ४ प्रत्येकं परिवारनदीः २८००० स्वगुणकारेण ४ गुण-यित्वा ११२००० हरिद्धरिकांतानारीनरकांतानां ४ प्रत्येकं परिवारनदीः ५६००० स्वगुणकारेण ४ गुणयित्वा २२४००० देवोत्तरकुरुस्थयोः सीतासीतोदयोः २ प्रत्येकं परिवारनदीः ८४००० तथा २ गुणयित्वा १६८००० विभंगनदीनां १२ प्रत्येकं परिवारनदीः २८००० तथा १२ गुणयित्वा ३३६००० गंगासिंधुरक्तारक्तोदानां विदेहस्थनदीनां ६४ प्रत्येकं परिवारनदीः १४००० तथा ६४ गुणयित्वा ८९६००० एतानि सर्वाण्ये-कानि मेलयित्वा १७९२००० । अत्र गुणकारमुख्यनदीः ९० मेलने १७९२०९० जंबूद्वीपसर्वनदीसंख्या । अत्र स्वप्रमाणतो १७९२०९० द्विगुणा ३५८४१८० मणिमयवेद्यो ज्ञातव्याः ॥ ७३१ ॥

अथ भरतैरावतस्थविजयार्धकूटान् तत्रस्थदेवांश्च गाथाचतुष्टयेनाह;—

सिद्धं दक्खिणअद्धादिमभरहं खंडयप्पवादमदो ।
तो पुण्णभद्द वेयड्ढकुमारं माणिभद्दक्खं ॥ ७३२ ॥

सिद्धं दक्षिणार्धादिमभरतं खंडप्रपातमतः ।
ततः पूर्णभद्रं विजयार्धकुमारं माणिभद्राख्यं ॥ ७३२ ॥

सिद्धं । सिद्धकूटं दक्षिणार्धभरतं खंडप्रपातं, ततःपूर्णभद्रं विजयार्ध-कुमारं माणिभद्राख्यं ॥ ७३२ ॥

तामिस्सगुहगमुत्तरभारहकूडं च वेसवण चरिमं ।
सिद्धुत्तरद्धतामिस्सादिमगुहगं च माणिभद्दमदो॥७३३॥

तामिश्रगुहमुत्तरभरतकूटं च वैश्रवणं चरमं ।
सिद्धोत्तरार्धतामिश्रादिमगुहं च माणिभद्रमतः ॥ ७३३ ॥

तामिस्स । तामिश्रगुहं उत्तरभरतकूटं चरमं वैश्रवणं । इत उपर्यैरावत-विजयार्धकूटानिसिद्धकूटं उत्तरार्धैरावतं तमिश्रगुहं मणिभद्रमतः ॥ ७३३ ॥

तो वेयड्ढकुमारं पुण्णादीभद्द खंडयपवादं ।
दक्खिणरेवतअद्धं वेसवणं पुव्वदो दुवेयड्ढे ॥ ७३४ ॥

ततो विजयार्धकुमारं पूर्णादिभद्रं खंडप्रपातं ।
दक्षिणैरावतार्धे वैश्रवणं पूर्वतः द्विविजयार्धे ॥ ७३४ ॥

तो । ततो विजयार्धकुमारं पूर्णभद्रं खंडप्रपातं दक्षिणैरावतार्धे वैश्रवणं ९ एतानि कूटानि १८ भरतैरावतस्थयोर्विजयार्धयोः भवंति ॥ ७३४ ॥

कंचणमयाणि खंडप्पवादए णट्टमाल तामिस्से ।
कदमालो छकूडे वसंति सगणामवाणसुरा ॥ ७३५ ॥

कंचनमयानि खंडप्रपाते नृत्यमालः तामिश्रे ।
कृतमालः षट्कूटेषु वसंति स्वकनामवानसुराः ॥ ७३५ ॥

कंचण । तानि कूटानि कांचनमयानि, तत्र खंडप्रपातकूटे नृत्य-मालाख्यो व्यंतरदेवोस्ति । तामिश्रकूटे कृतमालाख्यः, इतरेषु षट्सु कूटेषु स्वकीयस्वकीयकूटनाम व्यंतरदेवा वसंति ॥ ७३५ ॥

अथ उक्तानां विजयार्धजिनालयानामुदयादित्रयमाह;—

कोसायामं तद्दलवित्थारं तुरियहीणकोसुदयं ।
जिणगेहं कूडुवरिं पुव्वमुहं संठियं रम्मं ॥ ७३६ ॥

क्रोशायामं तद्दलविस्तारं तुरीयहीनक्रोशोदयं ।
जिनगेहं कूटोपरि पूर्वमुखं संस्थितं रम्यं ॥ ७३६ ॥

कोसा । सिद्धकूटस्योपरि क्रोशायामं २००० तदर्धविस्तारं १०००। चतुर्थांश ५०० हीनक्रोशोदयं १५०० पूर्वमुखं रम्यं जिनेंद्रगेहं संस्थितं।७३६

अथ गजदंताख्यानां वक्षाराणामितरवक्षाराणां च कूटसंख्यातन्नामादिकं गाथाष्टकेनाह;—

णवसत्तय णवसत्तय ईसाणदिसा दुदंतसेलाणं ।
वक्खाराणं चउचउकूडं तण्णाममणुकमसो ॥ ७३७ ॥

नव सप्त च नव सप्त च ईशानादिशः द्विदंतशैलानां ।
वक्षाराणां चत्वारि चत्वारि कूटानि तन्नामानि अनुक्रमशः ॥७३७॥

णव । ईशानदिशः आरभ्य गजदंतशैलानां क्रमेण कूटसंख्या नव ९ सप्त ७ नव सप्त च स्युः । इतरवक्षाराणां चत्वारि ४ चत्वारि ४ कूटानि तेषां नामान्यनुक्रमशः कथयति ॥ ७३७ ॥

सिद्धं मल्लवमुत्तरकउरव कच्छं च सागरं रजदं ।
पुण्णादिभद्द सीदा हरिसहकूडं हवे णवमं ॥ ७३८ ॥

सिद्धं माल्यवान् उत्तरकौरवं कच्छं च सागरं रजतं ।
पूर्णादिभद्रं सीता हरिसहकूटं भवेत् नवमं ॥ ७३८ ॥

सिद्धं । सिद्धकूटं माल्यवान् उत्तरकौरवं कच्छं च सागरं रजतं पूर्णभद्रं सीता हरिसहकूटं नवमं भवेत् ॥ ७३८ ॥

तो सिद्धं सोमणसं कूडं देवकुरु मंगलं विमलं ।
कंचण वसिद्धमंते सिद्धं विज्जुप्पहं तत्तो ॥ ७३९ ॥

ततः सिद्धं सौमनसं कूटं देवकुरु मंगलं विमलं ।
कांचनं अवशिष्टमंते सिद्धं विद्युत्प्रभं ततः ॥ ७३९ ॥

तो । ततः सिद्धकूटं सौमनसकूटं देवकुरुकूटं मंगलं विमलं कांचनं अंते अवशिष्टं ७ ततः सिद्धकूटं विद्युत्प्रभं ॥ ७३९ ॥

देवकुरु पउम तवणं सोत्थियकूडं सदज्जलं तत्तो ।
सीतोदा हरि चरिमंतो सिद्धं गंधमादणयं ॥ ७४० ॥

देवकुरुः पद्मं तपनं स्वस्तिककूटं शतज्वालं ततः ।
सीतोदा हरि चरमं ततः सिद्धं गंधमादनकं ॥ ७४० ॥

देव । देवकुरुः पद्मं तपनं स्वस्तिककूटं शतज्वालं ततः सीतोदा चरिमं हरिकूटं ९ ततः सिद्धकूटं गंधमादनं ॥ ७४० ॥

उत्तरकुरु गंधादीमालिणि तो लोहिदक्खफलिहंते ।
आणंदं सायरदुग तिया सुभोगा य भोगमालिणिया ७४१

उत्तरकुरुः गंधादिमालिनी ततो लोहिताक्षं स्फटिकमंते ।
आनंदं सागरद्विके स्त्रियौ सुभोगा च भोगमालिनी ॥ ७४१ ॥

उत्तर । उत्तरकुरुः गंधमालिनी ततो लोहिताक्षं स्फटिकं अंते आनंदं ७ तेषां मध्ये सागररजतकूटयोः सुभोगाभोगमालिन्यौ व्यंतरदेव्यौ स्थिते॥७४१॥

विमलदुगे वच्छादीमित्त सुमित्ता य वारिसेण बला ।
तवणदुगे भोगंकर भोगवदी फलिहलोहिदे देवी ७४२

विमलद्विके वत्सादिमित्रा सुमित्रा च वारिषेणा बला ।
तपनद्विके भोगंकरी भोगवती स्फटिकलोहितयोः देव्यौ ॥ ७४२ ॥

विमल । विमलकांचनकूटयोः वत्समित्रासुमित्राख्ये व्यंतरदेव्यौ तिष्ठतः, तपनस्वस्तिककूटयोर्वारिषेणबलाख्ये व्यंतरदेव्यौ स्तः, स्फटिकलोहितकूटयोर्भोगंकरीभोगवत्याख्ये व्यंतरदेव्यौ स्तः ॥ ७४२ ॥

सिद्धं वक्खारक्खं हेट्ठुवरिमदेसणामकूडदुगं ।
दुगणव पण सोलं दुगकला य वक्खारदीहत्तं ॥ ७४३॥

सिद्धं वक्षाराख्यं अधस्तनोपरिमदेशनामकूटद्वयं ।
द्विनव पंच षोडश द्विककला च वक्षारदीर्घत्वम् ॥ ७४३ ॥

सिद्धं । इत उपरि वक्षारकूटानि, सिद्धकूटं वक्षाराख्यं सर्ववक्षाराणा-

मधस्तनोपरिमदेशनाम कच्छासुकच्छादिकूटद्वयमित्येतान्येत्र चत्वारि सर्ववक्षाराणां कूटनामानि भवंति। वक्षाराणां दैर्घ्यं तु द्विनव पंच षोडशयोजनानि एकोनविंशतिद्विकलाधिकानि भवंति । कथमेतत्? चुलसीदिछत्तेत्तीसा चत्त।रिकलेति गाथोक्तविदेहविष्कंभे ३३६८४ $\frac{४}{१९}$ सीतासीतोदयोः विवक्षितनदीव्यास ५०० मपनीय ३३१८४ $\frac{४}{१९}$ अर्धीकृते १६५९२ $\frac{२}{१९}$ वक्षारदैर्घ्यमायाति ॥ ७४३ ॥

कुलगिरिसमीवकूडे दिक्कण्णाओ वसंति सेसेसु ।
वाणा कूडपमाहिद णगदीहो कूडअंतरयं ॥ ७४४ ॥

कुलगिरिसमीपकूटे दिक्कन्याः वसंति शेषेषु ।
वानाः कूटप्रमाहितं नगदैर्घ्यं कूटांतरं ॥ ७४४ ॥

कुल । कुलगिरिसमीपस्थवक्षारो २० परिमकूटे दिक्कन्या वसंति, शेषेषु कूटेषु ७।५।२ व्यंतरदेवास्तिष्ठंति स्वस्वकूटप्रमाणैः ९।७।४ तत्तन्नगदैर्घ्ये गजदंतदैर्घ्ये ३०२०९ $\frac{६}{१९}$ इतरवक्षारदैर्घ्ये च १६५९२ $\frac{२}{१९}$ हृते स्वस्वकूटांतरं स्यात् । नवकूटांतराणामेतावति गजदंतक्षेत्रे ३०२०९ $\frac{६}{१९}$ एककूटांतरस्य कियत्क्षेत्रमिति संपात्यांशिनि ३०२०९ अंशे च $\frac{६}{१९}$ भक्ते ३३५६ उभयांशे $\frac{५}{१}$।$\frac{६}{१९}$।९ समच्छेदेन $\frac{९५}{१७१}$।$\frac{६}{१७१}$ मेलने $\frac{१०१}{१७१}$ एककूटांतरक्षेत्रं स्यात् । एतदेव नवकूटांतरं । एवं सप्तकूटांतरस्य त्रैराशिकविधिर्द्रष्टव्यः प्र ७ फ ३०२०९ $\frac{६}{१९}$ इ १ लब्धं सप्तकूटांतरं ४३१५ $\frac{८२}{१३३}$ चतुःकूटांतराणामेतावति वक्षारक्षेत्रे १६५९२ $\frac{२}{१९}$ एककूटांतरस्य किमिति संपात्यांशिनांशे च भक्ते तन्मेलने एककूटांतरं स्यात् ४१४८ $\frac{१}{३८}$ एतदेव चतुःकूटांतरं स्यात् ॥ ७४४ ॥

अथ वक्षाराणामुन्नतिं तत्रस्थाकृत्रिमचैत्यालयस्थाननिर्देशं च करोति;—

वक्खारसयाणुदओ कुलगिरिपासम्हि चउसयं णुह्वा ।
णइमेरुस्स य पासे पंचसया तत्थ जिणगेहा ॥ ७४५ ॥

वक्षारशतानामुदयः कुलगिरिपार्श्वे चतुःशतं वृद्ध्या ।
नदीमेरोश्च पार्श्वे पंचशतानि तत्र जिनगेहाः ॥ ७४५ ॥

वक्खार । शतवक्षारपर्वतानामुदयः कुलगिरिपार्श्वे चतुःशत ४०० योजनानि, ततः परमनुक्रमेण वृद्ध्या विदेहगतानां नदीपार्श्वे गजदंतानां मेरुपार्श्वे पंचशत ५०० योजनान्युत्सेधः तत्र पंचशतयोजनोत्सेधस्थकूटे जिनगेहाः संति ॥ ७४५ ॥

अथ नवादिकूटानामुत्सेधानयने करणसूत्रमाह;—

गिरितुरियं पढमंतिमकूडुदओ उभयसेसमवहरिदं ।
वेगपदेण चयो सो इट्ठगुणो मुहजुदो इट्ठं ॥ ७४६ ॥

गिरितुरीयं प्रथमांतिमकूटोदयः उभयशेषमपहृतं ।
व्येकपदेन चयः स इष्टगुणः मुखयुतः इष्टः ॥ ७४६ ॥

गिरि । वक्षारगिरीणामुत्सेधः ४००।५०० चतुर्थांश एव तदुपरिमप्रथमांतिमकूटोदयः १००।१२५ एतदुभयं विशेषयित्वा २५ प्रथमस्य हानिवृद्ध्योरभावात् विगतैकपदेन ८।६।३ अपहृते सति ३ भा $\frac{१}{८}$ । ४ भा $\frac{१}{६}$ ८$\frac{१}{३}$ हानिचयो भवति । स एव रूपोनेष्टगच्छगुणितः ३। $\frac{१}{८}$ ।६। $\frac{१}{४}$ । ९। $\frac{३}{८}$ ।१२। $\frac{१}{२}$ ।१५। $\frac{५}{८}$ ।१८। $\frac{३}{४}$ ।२१। $\frac{७}{८}$ ।२५ मुख १०० युतश्चेत् १०३ $\frac{१}{८}$ । $\frac{१}{४}$ ।१०९। $\frac{३}{८}$ ।११२। $\frac{१}{२}$ । $\frac{५}{८}$ ।११८। $\frac{३}{४}$ ।१२१। $\frac{७}{८}$ ।१२५ द्वितीयादीष्टकूटस्योत्सेधो ज्ञातव्यः । एवं सप्तकूटचतुःकूटानामानेतव्यम् ॥ ७४६ ॥

इदानीं भरतादिक्षेत्राश्रयेण परिवारनदीप्रमाणं गाथाचतुष्केणाह;—

भरहइरावदसरिदा विदेहजुगले च चोद्दससहस्सा ।
णइपरिवारा तत्तो दुगुणा हरिरम्मगखिदित्ति ॥ ७४७ ॥

भरतैरावतसरितः विदेहयुगले च चतुर्दशसहस्राणि ।
नदीपरिवाराः ततः द्विगुणा हरिरम्यकक्षेत्रांतं ॥ ७४७ ॥

भरह । भरतैरावतयोः सरितां ४ पूर्वापरविदेहयोर्गंगादिसरितां च ६४ प्रत्येकं चतुर्दशसहस्राणि १४००० परिवारनद्यः, ततः परं भरताद्धरिवर्षपर्यंतं ऐरावताद्रम्यकक्षेत्रपर्यंतं द्विगुणद्विगुणक्रमो ज्ञातव्यः ॥ ७४७ ॥

बादालसहस्सं पुह कुरुदुणदी दुगदुपासजादणदी ।
चोद्दसलक्खडसदरी विदेहदुगसव्वणइसंखा ॥ ७४८ ॥

द्वाचत्वारिंशत्सहस्राणि पृथक् कुरुद्वयनद्यः द्विकद्विपार्श्वजातनद्यः ।
चतुर्दशलक्षाष्टसप्ततिः विदेहद्विकसर्वनदीसंख्या ॥ ७४८ ॥

बादाल । देवोत्तरकुर्वोः नदीद्वयोभयपार्श्वजाता नद्यः पृथक् पृथक् द्वाचत्वारिंशत्सहस्राणि देवकुरुजा नद्यः ८४००० उत्तरकुरुजा नद्यः ८४००० विदेहद्वयगतसर्वनदीसंख्या अष्टसप्तत्युत्तरचतुर्दशलक्षाणि १४०००७८ । तत्कथं ? विदेहगतगंगासिंधुसमनदीनां ६४ प्रत्येकं परिवारनद्यः १४००० विभंगनदीनां १२ प्रत्येकं परिवारनद्यः २८००० देवोत्तरकुर्वोः सीतासीतोदयोः २ प्रत्येकं परिवारनद्यः ८४ ००० एतासु स्वस्वगुणकारेण गुणयित्वा तत्र मुख्यनदी ७८ सहितं सर्वासु मिलितासु विदेहद्वयगतसर्वनदीसंख्या ॥ ७४८ ॥

लक्खतियं बाणउदीसहस्स बारं च सव्वणइसंखा ।
भरहेरावदपहुदी हरिरम्मगखेत्तओत्ति णादव्वा ॥७४९॥

लक्षत्रयं द्वानवतिसहस्रं द्वादश च सर्वनदीसंख्या ।
भरतैरावतप्रभृति हरिरम्यकक्षेत्रांतं ज्ञातव्या ॥ ७४९ ॥

लक्ख । लक्षत्रयं द्वानवतिसहस्राणि द्वादश च ३९२०१२ भरतैरावतप्रभृतिहरिरम्यकक्षेत्रपर्यंतं सर्वनदीसंख्या ज्ञातव्या । तत्कथं ? भरते गंगासिंध्वोः २ प्रत्येकं परिवारनद्यः १४००० हैमवते रोहिद्रोहितास्ययोः २ प्रत्येकं परिवारनद्यः २८००० हरिक्षेत्रे हरिद्धरिकांतयोः २ प्रत्येकं परि-

वारनद्यः ५६००० एवमैरावते रक्तारक्तोदयोः १४००० हैरण्यवते सुवर्णरूप्यकूलयोः २८०० रम्यकक्षेत्रे नारीनरकांतयोः ५६००० स्वस्वगुणकारेण गुणयित्वा मिलिते आयांति ॥ ७४९ ॥

सत्तरसं बाणउदी णभणवसुण्णं णईण परिमाणं ।
गंगासिंधुमुहाणं जंबूदीवप्पभूदाणं ॥ ७५० ॥

सप्तदश द्वानवतिः नभोनवशून्यं नदीनां परिमाणं ।
गंगासिंधुमुखानां जंबूद्वीपप्रभूतानाम् ॥ ७५० ॥

सत्तरसं । सप्तदश द्वानवतिर्नभोनवं शून्यं १७९२०९० जंबूद्वीपोद्भूतानां गंगासिंधुप्रमुखानां सर्वनदीनां प्रमाणं स्यात् । एतच्चोक्तगाथयोरंकानां मेलने स्यात् ॥ ७५० ॥

अथ जंबूद्वीपस्थमंदरादीनां व्यासं निरूपयति;—

गिरिभद्दसालविजयावक्खारविभंगदेवरण्णाणं ।
पुव्वावरेण वासा एवं जंबूविदेहम्हि ॥ ७५१ ॥

गिरिभद्रशालविजयवक्षारविभंगदेवारण्यानाम् ।
पूर्वापरेण व्यासा एवं जंबूविदेहे ॥ ७५१ ॥

गिरि । मेरुगिरेः १ भद्रशालयोः २ देशानां १६ वक्षाराणां ८ विभंगनदीनां ६ देवारण्ययोः २ जंबूद्वीपस्थविदेहे पूर्वापरेण व्यासा, एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण कथ्यंते ॥ ७५१ ॥

अथ तेषां मेर्वादीनां व्यासानयनविधानमाह;—

गिरिपहुदीणं वासं इट्ठूणं सगगुणेहि गुणिय जुदं ।
अवणिय दीवे सेसं इट्ठगुणोवट्टिदे दु तव्वासं ॥ ७५२ ॥

गिरिप्रभृतीनां व्यासं इष्टोनं स्वकगुणैः गुणयित्वा युतं ।
अपनीय द्वीपे शेषं इष्टगुणापवर्तिते तु तद्व्यासं ॥ ७५२ ॥

गिरि । ज्ञातव्येष्टमंदराद्यन्यतमव्यासं परित्यज्य इतरेषां गिरिप्रभृतीनां वक्ष्यमाणव्यासं भद्र २२००० देश २२१२ $\frac{७}{८}$ वक्षार ५०० विभंग १२५ देवारण्य २९२२ स्वकीयस्वकीयगुणकारेण २।१६।८।६।२ गुणयित्वा ४४००० ३५४०६ ४००० ७५० ५८४४ इदं सर्वं मेलयित्वा ९०००० एतज्जंबूद्वीपव्यासे १००००० अपनीय शेषे १०००० इष्टगुणकारेणापहृते सति ज्ञातव्येष्टव्यास आयाति १०००० ॥ ७५२ ॥

एवमानीतव्यासप्रमाणसिद्धांकमुच्चारयति;—

दसबावीससहस्सा बारसबावीस सत्तअट्ठकला ।
कमसो पणसय पणघण बावीसुगुतीसमंककमो ॥७५३॥

दशद्वाविंशसहस्राणि द्वादशद्वाविंशतिः सप्ताष्टकला ।
क्रमशः पंचशतानि पंचघनः द्वाविंशैकोनत्रिंशदंकक्रमः ॥ ७५३ ॥

दस । दशसहस्राणि १०००० द्वाविंशतिसहस्राणि २२००० द्वादशोत्तरद्वाविंशतिसप्ताष्टकला २२१२$\frac{७}{८}$ क्रमशः पंचशतानि ५०० पंचघनः १२५ द्वाविंशत्युत्तरएकोनत्रिंशत् २९२२ इति मंदरादिव्यासांकक्रमो ज्ञातव्यः ॥ ७५३ ॥

इदानीं धातकीखंडपुष्करार्धस्थितमेरूणां तद्भद्रशालवनद्वयस्य च व्यासं निरूपयति;—

चउणउदिसयं णवसत्तडसत्तिगिलक्खमट्ठपणसत्तं ।
पण्णरसं बेलक्खा खुल्ले तं भद्दसालदुगे ॥ ७५४ ॥

चतुर्नवतिशतानि नवसप्ताष्टसप्तैकलक्षमष्टपंच सप्त ।
पंचदशे द्वे लक्षे क्षुल्लके ते भद्रशालद्वये ॥ ७५४ ॥

चउ । चतुर्नवतिशतानि ९४०० नवसप्ताष्टसप्तांकोत्तरैकलक्षं १०७८७९ अष्टपंच सप्तपंचदशांकोत्तरे द्वे लक्षे २१५७५८ यथासंख्यं

क्षुल्लकमंदारधातकीखंडपूर्वापरभद्रशालद्वये पुष्करार्धे पूर्वापरभद्रशालद्वये च व्यासांकक्रमो ज्ञातव्यः। धातकीखंडपूर्वापरभद्रशालांकं १०७८७९ पुष्करार्धपूर्वापरभद्रशालांकं २१५७५८ । 'पढमवणडसीदिंसो दक्खिण उत्तरगभद्दसालं' सेत्युक्तत्वादष्टाशीत्या ८८ भागे कृते तयोर्दक्षिणोत्तरभद्रशालवनव्यासो भवति १२२५$\frac{७९}{८८}$ । २४५१ भा $\frac{३५}{४४}$ ॥ ७५४ ॥

अथ द्वीपद्वयावस्थितविजयानां व्याससंख्यामाह;–

तियणभछण्णव तिण्णट्ठमं तु चउणउदिसत्तणउदेक्कं ।
जोयणचउत्थभागं दुदीपविजयाण विक्खंभो ॥७५५॥

त्रिनभःषण्णव त्र्यष्टमं तु चतुर्णवति सप्तनवत्येकं ।
योजनं चतुर्थभागं द्विद्वीपविजयानां विष्कंभः ॥ ७५५ ॥

तिय। त्रिनभः षण्णवयोजनानि त्र्यष्टमांशानि ९६०३ भा $\frac{३}{८}$ चतुर्णवतिसप्तनवत्येकयोजनानि योजनचतुर्थभागाधिकानि १९७९४ $\frac{१}{४}$ यथासंख्यं धातकीखंडपुष्करार्धद्वीपद्वयविजयानां विष्कंभः स्यात् ॥ ७५५ ॥

सांप्रतं द्वीपत्रयावस्थितगजदंतानामायामं गाथाद्वयेनाह;–

सरिसायदगजदंता णवणभदुगसुण्णतिण्णि छच्चकला ।
तिघणदुगछक्कपणतिय णवपणकदिणवयछप्पण्णं ७५६

सदृशायतगजदंता नवनभोद्विकशून्यत्रीणि षट्कलाः ।
त्रिघनद्विकषट्पंचत्रीणि नवपंचकृतिनवकषट्पंचाशत् ॥ ७५६ ॥

सरिसा । जंबूद्वीपस्थसदृशगजदंतानां४ नवनभोद्विकशून्योत्तरात्रियोजनानि षट्कलाधिकानि ३०२०९$\frac{६}{१९}$ आयामः स्यात् । धातकीखंडाल्पमहागजदंतानामायामो यथासंख्यं त्रिघनद्विकषट्पंचांकोत्तरात्रियोजनानि ३५६२२७ नव पंचकृतिनवषडंकोत्तरपंचयोजनानि स्युः ५६९२५९॥७५६॥

सोलेकाट्ठिबिसाट्ठिगि णवेक्कदुगदोण्णिदुकदिणभदोण्णि ।
देउत्तरकुरुचावं जीवा बाणं च जाणेज्जो ॥ ७५७ ॥

षोडशैकषष्टिद्विषष्ठ्येकं नवैकद्विकद्वयद्विकृतिनभो द्वे ।
देवोत्तरकुरुचापं जीवा बाणं च ज्ञातव्याः ॥ ७५७ ॥

सोले । पुष्करार्धाल्पमहागजदंतानामायामो यथासंख्यं षोडशैकषष्टिद्विषष्ट्यंकोत्तरैकयोजनानि १६२६११६ नवैकद्विकद्वयद्विकृतिशून्योत्तरद्वियोजनानि स्युः २०४२२१९ देवोत्तरकुर्वोश्चापं जीवा बाणं च वक्ष्यमाणप्रकारेण ज्ञातव्याः ॥ ७५७ ॥

अथ चापाद्यानयनप्रकारं गाथानवकेनाह;—

वक्खारवास विरहिय पढमे दुगुणिदे जुदे मेरुं ।
जीवा कुरुस्स चावं गजदंतायाममेलिदे होदि ॥७५८॥

वक्षारव्यासं विरहितं प्रथमे द्विगुणिते युते मेरौ ।
जीवा कुरोः चापो गजदंतायाममेलिते भवति ॥ ७५८ ॥

वक्खार । वक्षारव्यासं ५०० भद्रशालाख्यप्रथमवने २२००० विरहितं कृत्वा २१५० एतद्द्विगुणीकृत्य ४३००० तत्र मेरुव्यासे १०००० युते सति कुरुक्षेत्रस्य जीवा प्रमाणं स्यात् । ५३००० उभयगजदंतायामे ३०२०९$\frac{६}{१९}$।३०२०९$\frac{६}{१९}$ मिलिते सति कुरुक्षेत्रस्य चापो भवति ६०४१८$\frac{१२}{१९}$ ॥ ७५८ ॥

मेरुगिरिभूमिवासं अवणीय विदेहवस्सवासादो ।
दलिदे कुरुविक्खंभो सो चेव कुरुस्स बाणं च ॥७५९॥

मेरुगिरिभूमिव्यासं अपनीय विदेहवर्षव्यासतः ।
दलिते कुरुविष्कंभः स चैव कुरोः बाणः च ॥ ७५९ ॥

मेरु । एतावच्छलाकानां १९० एतावति क्षेत्रे १००००० एतावच्छलाकानां ६४ किमिति संपात्यापवर्तिते $\frac{६४००००}{१९}$ विदेहवर्षव्यासः स्यात् । अत्र मेरुगिरिभूमिव्यासं १०००० समच्छेदेना $\frac{१९००००}{१९}$ पनीय $\frac{४५००००}{१९}$ दलिते $\frac{२२५०००}{१९}$ कुरुविष्कंभः स्यात् । स चैव कुरुक्षेत्रस्य बाणः स्यात् । तद्धृत्वा जीवाकृतिं धनुःकृतिं चानयति ॥ ७५९ ॥

इसुहीणं विक्खंभं चउगुणिदिसुणा हदे दु जीवकदी ।
बाणकदिं छहिं गुणिदे तत्थ जुदे धणुकदी होदि ७६०

इषुहीनं विष्कंभं चतुर्गुणितेषुणा हते तु जीवाकृतिः ।
बाणकृतिं षड्भिः गुणिते तत्र युते धनुःकृतिः भवति ॥ ७६० ॥

इसु । अग्रे वक्ष्यमाणकुरुवृत्तविष्कंभे $\frac{१२१६५४९०}{१७१}$ इषुं $\frac{२२५०००}{१९}$ नवभिः समानछेदं कृत्वा $\frac{२०२५०००}{१७१}$ हीनं कृत्वा $\frac{१०१४०४}{१७१}$ चतुर्गुणितेषुस्थ $\frac{९०००००}{१९}$ पंचशून्यानि हीनराश्यग्रे $\frac{१०१४०४९०}{१७१}$ स्थापयित्वा $\frac{१०१४०४९००००००}{१७१}$ तद्राशिस्थहारं १७१ चतुर्गुणितेषुस्थनवांकेन समं नवभिरपवर्त्य १९ तदिषुस्थहारेण १९ अपवर्तितहारे १९ गुणिते ३६१ कुरुक्षेत्रे जीवायाः कृतिः स्यात् $\frac{१०१४०४९००००००}{३६१}$ तन्मूलं गृहीत्वा $\frac{१००७०००}{१९}$ स्वहारेण भक्ते कुरुक्षेत्रे जीवा स्यात् ५३००० बाण $\frac{२२५०००}{१९}$ कृतिं $\frac{५०६२५००००००}{६३०}$ षड्भि ६र्गुणयित्वा $\frac{३०३७५०००००००}{३६१}$ एतस्मिन् राशौ तत्र जीवाकृतौ $\frac{१०१४०४९००००००}{३६१}$ युते सति $\frac{१३१७७९९००००००}{३६१}$ धनुःकृतिः स्यात् । तां मूलं गृहीत्वा $\frac{११४७९५४}{१९}$ स्वहारेण भक्ते ६०४१८।$\frac{१२}{१९}$ कुरुक्षेत्रस्य चापं स्यात् । प्रागानीतबाणकृतिं $\frac{५०६२५००००००}{३६१}$ मूलं गृहीत्वा $\frac{२२५०००}{१९}$ हारेण भक्ते ११८४२$\frac{२}{१९}$ कुरुक्षेत्रस्य बाणं स्यात् ॥ ७६० ॥

अनंतरं कुर्वादीनां वृत्तविष्कंभानयनमाह;—

इसुवग्गं चउगुणिदं जीवावग्गम्हि पक्खिवित्ताणं ।
चउगुणिदिसुणा भजिदे णियमा वट्टस्स विक्खंभो ७६१

इषुवर्गे चतुर्गुणितं जीवावर्गे प्रक्षिप्य ।

चतुर्गुणितेषुणा भक्ते नियमात् वृत्तस्य विष्कंभः ॥ ७६१ ॥

इसु । कुरुक्षेत्रेषुं $\frac{२२५०००}{१९}$ वर्गयित्वा $\frac{५०६२५००००००}{३६१}$ इदं चतुर्भिर्गुणयित्वा $\frac{१०२५}{३६१}$ । $\frac{०}{८}$ एतज्जीवावर्गे $\frac{१०१४०४९}{३६१}$ । $\frac{०}{९}$ प्रक्षिप्य $\frac{१२१६५४९}{३६१}$ । $\frac{०}{९}$ चतुर्भिर्गुणितेषुणा $\frac{९०००००}{१९}$ भागीकरणे तदिषुस्थपंचशून्यानि भाज्यस्थपंचशून्यैः सहापवर्त्य $\frac{१२१६५४९०}{३६१}$ । $\frac{१}{१९}$ हारस्य हारो गुणकोंशराशेरित्यागतमेकोनविंशति १९ गुणकारं भाज्यस्थैकषष्ट्युत्तरत्रिशतेन सह ३६१ । एकोनविंशत्यापवर्त्य $\frac{१२१६५४९०}{१९९}$ शेषहारयोः १९।९ परस्परगुणने कृते $\frac{१२१६५४९०}{१७१}$ हारेण भक्ते च ७११४३$\frac{३७}{१७१}$ नियमात्कुरुक्षेत्रस्य वृत्तविष्कंभः स्यात् ॥ ७६१ ॥

अथ कुर्वादिक्षेत्राणां स्थूलसूक्ष्मक्षेत्रफलानयने करणसूत्रमाह;—

जीवाहदइसुपादं जीवाइसुजुददलं च पत्तेयं ।

दसकरणिबाणगुणिदे सुहुमिदरफलं च धणुखेत्ते ।७६२।

जीवाहतेषुपादं जीवाइषुयुतदलं च प्रत्येकं ।

दशाकरणिबाणगुणिते सूक्ष्मेतरफलं च धनुःक्षेत्रे ॥ ७६२ ॥

जीवा । कुरुक्षेत्रेषोः $\frac{२२५०००}{१९}$ चतुर्थांश $\frac{५६२५०}{१९}$ जीवया ५३००० हत्वा $\frac{२९८१२५००००}{१९}$ पृथक् संस्थाप्य जीवां ५३००० समच्छेदीकृत्य $\frac{१००७००००}{१९}$ इषौ $\frac{२२५०००}{१९}$ संयोज्य $\frac{१२३२०००}{१९}$ दलयित्वा $\frac{६१६०००}{१९}$ इदमपि पृथङ्निक्षिप्य स्थापितयोरनयोर्मध्ये प्रत्येकं प्राक् स्थापितं $\frac{२९८१२५०००}{१९}$ विक्खंभवग्गेत्यादिना करणिं कृत्वा $\frac{८८८७८५१५६२५}{३६१}$ । $\frac{०}{९}$ मूले गृहीते $\frac{९४२७५४०२७४}{१९}$ एतत् कुरु धनुःक्षेत्रस्य सूक्ष्मफलं भवति । पुरस्तात् स्थापितं तु $\frac{६१६०००}{१९}$ बाणेन $\frac{२२५०००}{१९}$ गुणिते कुरोर्धनुषः स्थूलफलं भवति $\frac{१३८६}{३६१}$ । $\frac{०}{८}$ ॥ ७६२ ॥

अथ प्रकारांतरेण वृत्तविष्कंभबाणयोरानयने करणसूत्रमाह;—

दुगुणिसु कदिजुद जीवावग्गं चउबाणभाजिए वट्टं ।
जीवा धणुकदिसेसो छब्भत्तो तप्पदं बाणं ॥ ७६३ ॥

द्विगुण्येषुं कृतियुतं जीवावर्गे चतुर्बाणभक्ते वृत्तं ।
जीवा धनुःकृतिशेषः षड्भक्तः तत्पदं बाणम् ॥ ७६३ ॥

दुगु । इषुं २२५०००/१९ द्विगुणीकृत्य ४५००००/१९ वर्गं गृहीत्वा २०२५/३६१ । अत्र जीवा ५३००० वर्ग २८०९ ०/६ समच्छेदीकृतं १०१४०४९/३६१ । ०/६ संयोज्य १२१६५४९/३६१ । ०/६ अस्मिंश्चतुर्गुणितबाणेन ९०००००/१९ प्राग्वदपवर्तनविधिना भक्ते कुरुक्षेत्रस्य वृत्तविष्कंभः स्यात् । १२१६५४९०/१७१ समच्छेदीकृते जीवा-वर्गे १०१४०४९/३६१ । ०/६ धनुःकृतौ १३१७७९९/३६१ । ०/६ अपनीय ३०३७५/३६१ । ०/६ षड्भिर्भक्त्वा ५०६२५/३६१ । ०/६ मूले गृहीते २२५०००/१९ कुरुक्षेत्रस्य बाणः स्यात् ॥ ७६३ ॥

अथ प्रकारांतरेण बाणानयने करणसूत्रमाह;—

जीवाविक्खंभाणं वग्गविसेसस्स होदि जम्मूलं ।
तं विक्खंभा सोहय सेसद्धमिसुं विजाणाहि ॥ ७६४ ॥

जीवाविष्कंभयोः वर्गविशेषस्य भवति यन्मूलं ।
तत् विष्कंभात् शोधय शेषार्धमिषुं विजानीहि ॥ ७६४ ॥

जीवा । जीवा ५३००० वर्ग २८०९ ०/६ विष्कंभ १२१६५४९०/१७१ वर्गेण समं १४७९९९९१४६ ९४०१००/२९२४१ समच्छेदं कृत्वा ८२१३७९६९/२९२४१ । ०/६ परस्परं शोधयित्वा ६५८६११७७९४०/२९२ १००/४१ मूलं संगृह्य ८११५४९०/१७१ तद्विष्कंभात् १२१६५४९०/१७१ शोधय ४०५००००/१७१ शेषमर्द्धं २०२५०००/१७१ विधाय अस्य हारं १७१ एकोनविंशतिर्नवेति द्विधाकृत्य १९।९ तत्रस्थन-

वांकेन ९ तस्मिन्नर्धे २०२५००० भक्ते सति कुरोर्बाणमायाति $\frac{२२५०००}{१९}$ ॥ ७६४ ॥

अथ प्रकारांतरेण वृत्तविष्कंभबाणयोरानयने करणसूत्रमाह;—

दुगुणिसुहिदधणुवग्गो बाणोणो अद्धिदो हवे वासो ।
वासकदिसहिदधणुकदिदलस्स मूलेवि वासमिसुसेसं ॥

द्विगुणेषुहितधनुवर्गो बाणोनः अर्धितो भवेत् व्यासः ।
व्यासकृतिसहितधनुष्कृतिदलस्य मूलेपि व्यासमिषुशेषं ७६५

दुगु । इषुं $\frac{२२५०००}{१९}$ द्विगुणीकृत्य $\frac{४५००००}{१९}$ अनेन धनुर्वर्गे $\frac{१३१७७९९}{३६१}$।$\frac{०}{६}$ प्राग्वदपवर्तनविधिना भक्त्वा १५४१२८ शेषे $\frac{४६०}{८५५}$ अथ उपरि पंचभिरपवर्तिते एवं $\frac{९२}{१७१}$ अत्र स्वांशं समच्छेदेन मेलयित्वा $\frac{२६३५५९८०}{१७१}$ अस्मिन् समच्छिन्नबाणं $\frac{२०२५०००}{१७१}$ ऊनयित्वा $\frac{२४३३०९८०}{१७१}$ अर्धीकृत्य $\frac{१२१६५४९०}{१७१}$ भक्ते सति $\frac{७११४३३७}{१७१}$ कुरोः वृत्तव्यासः स्यात् । समच्छेदेन स्वांश $\frac{३७}{१७१}$ युक्तं तं वृत्तव्यासं $\frac{१२१६५४९०}{१७१}$ वर्गं गृहीत्वा $\frac{१४७९९९१४६९४०१००}{२९२४१}$ अत्र धनुःकृते $\frac{१३१७७९९००००००}{३६१}$ रर्धं $\frac{६५८८९९५००००००}{३६१}$ एकाशीत्या ८१ समच्छेदं कृत्वा $\frac{५३३७०८५९५००००००}{२९२४१}$ संयोज्य $\frac{२०१३७०००६४४०१००}{२९२४१}$ मूलं गृहीत्वा $\frac{१४१९०४९०}{१७१}$ अत्र व्यासं $\frac{१२१६५४९०}{१७१}$ हीनं कृत्वा $\frac{२०२५०००}{१७१}$ अस्य हारमेकोनविंशतिर्नवेति द्विधा १९।९ अत्रस्थनवांकेन ९ भक्ते कुरुक्षेत्रस्य बाणः स्यात् $\frac{२२५०००}{१९}$ ॥ ७६५ ॥

अथ प्रकारांतरेण धनुःकृतिजीवाकृत्योरानयने करणसूत्रमाह;—

इसुदलजुदविक्खंभो चउगुणिदिसुणा हदे दु धणुकरणी ।
बाणकदिं छहिं गुणिदं तत्थूणे होदि जीवकदी । ७६६ ।

इषुदलयुतविष्कंभः चतुर्गुणितेषुणा हते तु धनुःकरणी ।
बाणकृतिं षड्भिः गुणितं तत्रोने भवति जीवकृतिः ॥ ७६६ ॥

इसुं । इषुं $\frac{२२५०००}{१९}$ दलयित्वा $\frac{११२५००}{१९}$ समानछेदेन $\frac{१०१२५००}{१७१}$ वृत्तविष्कंभे $\frac{१२१६५४९०}{१७१}$ योजयित्वा $\frac{१३१७७९९०}{१७१}$ एतच्चतुर्गुणितेषुणा $\frac{९०००००}{१९}$ गुणने गुण्यराशे $\frac{१३१७७९९०}{१७१}$ हारं एकोनविंशतिर्नवेति १९।९ द्विधाकृत्य गुणकारस्थपंचशून्यानि ९००००० गुण्यराशेरग्रे संस्थाप्य १३१७७९९०००००० गुणकारनवांकेन गुण्यहारनवांकमपवर्त्य शेषहारे १९।१९ परस्परगुणिते ३६१ कुरोर्धनुःकृतिः स्यात् । $\frac{१३१७९९००००००}{३६१}$ बाणकृतिं $\frac{५०६२५०००००००}{३६१}$ षड्भिर्गुणयित्वा $\frac{३०३७५००००००००}{३६१}$ एतस्मिन् धनुःकृतौ ऊनिते $\frac{१०१४०९००००००}{३६१}$ कुरुक्षेत्रस्य जीवाकृतिर्भवति । एवं इसुहीणं विक्खंभं इत्यादिसप्तगाथोक्तविधानं भरतादिक्षेत्रेषु हिमवदादिपर्वतेषु च कर्तव्यं ॥ ७६६ ॥

अथ दक्षिणभरतविजयार्धोत्तरभरतक्षेत्राणां बाणानयने करणसूत्रमाह;—

रूप्पगिरिहीणभरहव्वासदलं दक्खिणड्ढभरहइसू ।
णगजुद णगसरमुत्तरभरहजुदं भरहखिदिबाणो ॥७६७॥

रूप्यगिरिहीनभरतव्यासदलं दक्षिणार्धभरतेषुः ।
नगयुते नगशारः उत्तरभरतयुते भरतक्षेत्रबाणः ॥ ७६७ ॥

रूप्प । रूप्यगिरिव्यासं ५० भरतव्यासे ५२६$\frac{६}{१९}$ हीनयित्वा ४७६$\frac{६}{१९}$ अर्धीकृते २३८$\frac{३}{१९}$ दक्षिणार्धभरतेषुः स्यात् । अत्र विजयार्धव्यासे ५० युते सति विजयार्धबाणः स्यात् २८८$\frac{३}{१९}$ अत्रोत्तरभरतव्यासे २३८$\frac{३}{१९}$ युते ५२६$\frac{६}{१९}$ संपूर्णभरतक्षेत्रबाणः स्यात् । उक्तानां बाणत्रयाणां समानछेदेन स्वकीयस्वकीयांशं मेलयेत् $\frac{४५२५}{१९}$ । $\frac{५४७५}{१९}$ । $\frac{१००००}{१९}$ ॥ ७६७ ॥

अथ हिमवदादिपर्वतानां हैमवतादिक्षेत्राणां च बाणानयने करणसूत्रमाह;—

हिमणगपहुदीवासो दुगुणो भरहूणिदो य णिसहोत्ति ।
ससबाणा णिसहसरो सविदेहदलो विदेहस्स ॥ ७६८ ॥

हिमनगप्रभृतिव्यासः द्विगुणः भरतोनितश्च निषधांतम् ।
स्वस्वबाणा निषधशरः सविदेहदलः विदेहस्य ॥ ७६८ ॥

हिम । एतावतां शलाकानां १९० एतावति १००००० क्षेत्रे हिमवदादिशलाकानां २।४।८।१६।३२ किमिति संपात्यापवर्तिते हिमवन्नगप्रभृतीनां व्यासः स्यात् । हिमवतो व्यासः $\frac{२००००}{१९}$ हैमवतक्षेत्रे $\frac{४००००}{१९}$ महाहिमवद्गिरौ $\frac{८००००}{१९}$ हरिक्षेत्रे $\frac{१६००००}{१९}$ निषधगिरौ $\frac{३२००००}{१९}$ तद्द्विगुणं कृत्वा $\frac{४००००}{१९}$ । $\frac{८००००}{१९}$ । $\frac{१६००००}{१९}$ । $\frac{३२००००}{१९}$ । $\frac{६४००००}{१९}$ सर्वत्र भरतबाणप्रमाणे $\frac{१००००}{१९}$ अपनीते सति हिमवदादीनां निषधपर्यंतं स्वस्वबाणाःस्युः $\frac{३००००}{१९}$ । $\frac{७००००}{१९}$ । $\frac{१५००००}{१९}$ । $\frac{३१००००}{१९}$ । $\frac{६३००००}{१९}$ निषधबाण एव $\frac{६३०००}{१९}$ विदेहव्यासा $\frac{६४००००}{१९}$ र्धेन $\frac{३२००००}{१९}$ युक्तश्चेत् $\frac{९५००००}{१९}$ विदेहार्धस्य बाणो भवति । एतान् बाणान् धृत्वा तत्तत्क्षेत्रपर्वतानां जीवाकृतिः धनुः कृतिः इसुहीणं विक्खंभमित्यादिना आनेतव्या । तत्र दक्षिणभरते तावत् समच्छिन्नेषुं $\frac{४५२५}{१९}$ वृत्तविष्कंभे समच्छिन्ने $\frac{१९०००००}{१९}$ हीनयित्वा $\frac{१८९५४७५}{१९}$ एतस्मिंश्चतुर्गुणितेषुणा $\frac{१८१००}{१९}$ हते सति $\frac{३४३०८०९७५००}{३६१}$ जीवाकृतिः स्यात् । तस्या मूलं गृहीत्वा $\frac{१८५२२४}{१९}$ स्वहारेण भक्ते ९७४८ $\frac{१२}{१९}$ दक्षिणभरतस्य शुद्धजीवा स्यात् । बाण $\frac{४५२५}{१९}$ कृतिं $\frac{२०४७५६२५}{३६१}$ षड्भिर्गुणयित्वा $\frac{१२२८५३७५०}{३६१}$ एतस्मिंस्तत्र जीवाकृतौ योजिते $\frac{३४४३०९५१२५०}{३६१}$ दक्षिणभरतस्य धनुःकृतिःस्यात । एतन्मूलं गृहीत्वा $\frac{१८५५५५}{१९}$ स्वहारेण भक्ते दक्षिणभरतस्य धनुः स्यात् ९७६६ । $\frac{१}{१९}$ विजयार्धे तावत् समच्छिन्नेषुं $\frac{५४७५}{१५}$ समच्छिन्नविष्कंभे $\frac{१५०००००}{१५}$ हीनयित्वा $\frac{१८९४५२५}{१९}$ एतस्मिंश्चतुर्गुणितेषुणा $\frac{२१९००}{१९}$ हते सति $\frac{४१४९००९७५००}{३६१}$ विजयार्धजीवाकृतिः स्यात् । अस्या मूलं गृहीत्वा $\frac{२०३६९१}{१९}$ स्वहारेण भक्ते १०७२० $\frac{११}{१९}$ विजयार्धनगस्य जीवा स्यात् । बाण $\frac{५४७५}{१९}$ कृतिं $\frac{२९९७५६२५}{३६१}$ षड्भिर्गुणयित्वा $\frac{१७९८५३७५०}{३६१}$ तत्र जीवा

कृतौ योजिते $\frac{४१६६९९५१२५०}{३६१}$ धनुःकृतिः स्यात् तन्मूलं गृहीत्वा $\frac{२०४१३२}{१९}$ स्वहारेण भक्ते $\frac{१०७४३१५}{१९}$ विजयार्धनगस्य धनुः स्यात् । उत्तरभरते समच्छिन्नेषुं $\frac{१००००}{१९}$ विष्कंभे $\frac{१९०००००}{१९}$ हीनयित्वा $\frac{१८९००००}{१९}$ एतस्मिंश्चतुर्गुणितेषुणा $\frac{४०००}{१९}$ हते सति $\frac{७५६०००००००}{१९}$ जीवाकृतिः स्यात् । अस्या मूलं $\frac{२७४९५४}{१९}$ स्वहारेण भक्त लब्धः १४४७१ $\frac{५}{१९}$ उत्तरभरतजीवा स्यात् । बाण $\frac{१००००}{१९}$ कृतिं $\frac{१००००००००}{३६१}$ षड्भिर्गुणयित्वा $\frac{६००००००००}{३६१}$ एतस्मिं जीवाकृतौ योजिते सति $\frac{७६२००००००००}{३६१}$ धनुःकृतिःस्यात् । अस्या मूलं $\frac{२७६०४३}{१९}$ स्वहारेण भक्ते १४५२८ $\frac{११}{१९}$ उत्तरभरतस्य धनुः स्यात् । हिमवत्पर्वते इषुं $\frac{३००००}{१९}$ विष्कंभे $\frac{१९०००००}{१९}$ हीनयित्वा $\frac{१८७००००}{१९}$ एतस्मिंश्चतुर्गुणितेषुणा $\frac{१२००००}{१९}$ हते सति $\frac{२२४४०००००००००}{३६१}$ जीवाकृतिः । अस्या मूलं गृहीत्वा $\frac{४७३७०९}{१९}$ स्वहारेण भक्ते लब्धं ३४९३२ । $\frac{१}{१९}$ हिमवतो जीवा स्यात् । बाणकृतिं $\frac{९००००००००}{३६१}$ षड्भिर्गुणयित्वा $\frac{५४००००००००}{३६१}$ तत्र जीवाकृतौ युक्ते $\frac{२२९८००००००००}{३६१}$ धनुःकृतिः स्यात् । तस्या मूलं गृहीत्वा $\frac{४७९३७४}{१९}$ स्वहारेण भक्ते २५२३० $\frac{४}{१९}$ हिमवद्गिरेर्धनुः स्यात् । हैमवतक्षेत्रे इषुं $\frac{७००००}{१९}$ विष्कंभे $\frac{१९०००००}{१९}$ अपनीय $\frac{१८३००००}{१९}$ तस्मिंश्चतुर्गुणितेषुणा $\frac{२८००००}{१९}$ हते $\frac{५१२४००००००००}{३६१}$ जीवाकृतिःस्यात् । अस्या मूलं गृहीत्वा $\frac{७१५८२२}{१९}$ स्वहारेण भक्ते ६७६७४ $\frac{१६}{१९}$ हैमवतक्षेत्रस्य जीवा स्यात् । बाणकृतिं $\frac{४९००००००००}{३६१}$ षड्भिर्गुणयित्वा $\frac{२९४००००००००}{३६१}$ एतस्मिंस्तत्र जीवाकृतौ युते $\frac{५४१८०००००००००}{३६१}$ धनुःकृतिः स्यात् । अस्या मूलं गृहीत्वा $\frac{७३६०७०}{१९}$ स्वहारेण भक्ते ३८७४० $\frac{१०}{१९}$ हिमवतक्षेत्रस्य धनुः स्यात् । महाहिमवद्गिरेरिषुं $\frac{१५००००}{१९}$ विष्कंभे $\frac{१९०००००}{१९}$ हीनयित्वा $\frac{१७५००००}{१९}$ तस्मिंश्चतुर्गुणितेषुणा $\frac{६०००००}{१९}$ हते तु $\frac{१०५००००००००००}{३६१}$ जीवाकृतिः स्यात् । अस्या मूलं गृहीत्वा $\frac{१०२४६९५}{१९}$ स्वहारेण भक्ते ५३९३१ $\frac{६}{१९}$ महाहिमवतो जीवा स्यात् । बाणकृतिं $\frac{२२५००००००००}{३६१}$

षड्भिर्गुणयित्वा १३५०००००००००००/३६१ एतस्मिंस्तत्र जीवाकृतौ योजिते ११८५०/३६१९ धनुःकृतिः स्यात् । अस्या मूलं गृहीत्वा १०८८५७७/१९ स्वहारेण भक्ते ५७२९३ १०/१९ महाहिमवद्गिरेर्धनुः स्यात् । हरिवर्षक्षेत्रे इषुं ३१/१९ ।०/४ विष्कंभे १५००००००/१९ हीनयित्वा १५९०१००/१९ अस्मिंश्चतुर्गुणितेषुणा १२४/१९ ।०/४ हते तु १९७१६/३६१ ।०/८ जीवाकृतिःस्यात् । अस्या मूलं गृहीत्वा १४०४१३६/१९ स्वहारेण भक्ते ७३९०१ १७/१९ हरिवर्षक्षेत्रे जीवा स्यात् बाणकृतिं ९६१/३६१ ।०/८ षड्भिर्गुणयित्वा ५७६६/३६१ ।०/८ तस्मिन् तत्र जीवाकृतौ योजिते २५४८२/३६१ ।०/८ धनुःकृतिः स्यात् । अस्या मूलं गृहीत्वा १५९६३०८/१९ स्वहारेण भक्ते ८४०१६ ४/१९ हरिवर्षक्षेत्रस्य धनुः स्यात् ॥ निषधगिरौ इषुं ६३/१९ ।०/४ विष्कंभे १९/१९ ।०/५ हीनयित्वा १२७/१९ ।०/४ अस्मिंश्चतुर्गुणितेषुणा २५२/१९ ।०/४ हते तु ३२००४/३६१ ।०/८ जीवाकृतिः स्यात् । अस्या मूलं गृहीत्वा १७८८९६६/१९ स्वहारेण भक्ते ९४१५६ २/१९ निषधगिरिजीवा स्यात् । बाणकृतिं ३९६९/३६१ ।०/८ षड्भिर्गुणयित्वा २३८१४/३६१ ।०/८ तत्र जीवाकृतौ योजिते ५५८१८/३६१ ।०/८ धनुःकृतिः स्यात् । अस्या मूलं गृहीत्वा २३६२५८३/१९ स्वहारेण भक्तेलब्धं १२४३४६ ९/१९ निषधगिरौ धनुः स्यात् ॥ विदेहार्धे इषुं ९५/१९ ।०/४ विष्कंभे १९/१९ ।०/५ हीनयित्वा ९५/१९ ।०/४ अस्मिंश्चतुर्गुणितेषुणा ३८/१९ ।०/५ हते तु ३६१/३६१ ।०/१० जीवाकृतिः स्यात् । अस्या मूलं गृहीत्वा १९/१९ ।०/५ स्वहारेण भक्ते १ ।०/५ विदेहार्धजीवा स्यात् । बाणकृतिं ९०२५/३६१ ।०/८ षड्गुणयित्वा ५४१५/३६१ ।०/९ तत्र जीवाकृतौ योजिते ९०२५/३६१ ।०/९ धनुःकृतिः स्यात् । अस्या मूलं गृहीत्वा ३००४१६४/१९ स्वहारेण भक्ते ल १५८११४ विदेहार्धधनुः स्यात् ॥ ७६८ ॥

अथ दक्षिणभरतादिक्षेत्रपर्वतानां जीवाधनुषोः प्रागानीतांकं गाथानवकेनाह;—

दक्खिणभरहे जीवा अडचउसगणवय होंति बारकला।
चापं छछक्कसगसयणवयसहस्सं च एक्ककला ॥ ७६९ ॥

दक्षिणभरते जीवा अष्टचतुःसप्तनव भवंति द्वादशकलाः ।
चापं षट्षट्सप्तशतनवसहस्रं च एककला ॥ ७६९ ॥

दक्खिण । दक्षिणभरते जीवा अष्टचत्वारः सप्तनवयोजनानि द्वादशकलाश्च ९७४८$\frac{१२}{१९}$ भवंति । तच्चापं च षट्षडुत्तरसप्तसप्तसाहितनवसहस्राणि एककला च ९७६६$\frac{१}{१९}$ स्यात् ॥ ७६९ ॥

वेयड्ढंते जीवा णभदुगसगदहसहस्सेगारकला ।
तेदालसगणभेक्कं पण्णरसकला य तच्चावं ॥ ७७० ॥

विजयार्धांते जीवा नभोद्विकसप्तदशसहस्रैकादशकला ।
त्रिचत्वारिंशत् सप्त नभःएकं पंचदशकलाश्च तच्चापं ॥ ७७० ॥

वेय । विजयार्धांते जीवा नभोद्विकसप्तसहितदशसहस्राणि एकादशकला च स्यात् १०७२०$\frac{११}{१९}$ तच्चापं त्रिचत्वारिंशत् सप्तनभःएकं पंचदशकलाश्च स्यात् १०७४३$\frac{१५}{१९}$ ॥ ७७० ॥

भरहस्संते जीवा इगिसगचउचोद्दसं च पंचकला ।
चावं अडदुगपणचउरेक्कं एक्कारसकला य ॥ ७७१ ॥

भरतस्यांते जीवा एक सप्त चतुश्चतुर्दश च पंचकलाः ।
चापं अष्टद्विकपंचचतुरेकं एकादशकलाः च ॥ ७७१ ॥

भरह । भरतस्यांते जीवा एक सप्त चतुश्चतुर्दश पंचकलाश्च १४४७१$\frac{५}{१९}$ स्यात् । तच्चापं अष्टद्विकपंचचतुरेकं एकादशकलाश्च स्यात् । १४५२८$\frac{११}{१९}$ ॥ ७७१ ॥

हिमवण्णगंत जीवा दुगतिगणवचउदुगं कला चूणा ।
चावं णभतियदुगपणवीससहस्सं च चारिकला ॥७७२॥

हिमवन्नगांते जीवा द्विकत्रिकनवचतुर्द्वयं कला चोना ।
चापं नभस्त्रिद्विपंचविंशतिसहस्रं च चतुःकलाः ॥ ७७२ ॥

हिम । हिमवन्नगांते जीवा द्वित्रिनवचतुर्द्वयं किंचिन्न्यूनैककला च स्यात् २४९ ३२ $\frac{१}{१९}$ तच्चापं नभःत्रिद्विपंचाधिकाविंशतिसहस्राणि चतस्रः कलाश्च स्यात् २५२३० $\frac{४}{१९}$ ॥ ७७२ ॥

हेमवदंतिमजीवा चउसगछस्सगति ऊणसोलकला ।
धणुहं णभचउसगअडतिण्णि विसेसहियदसयकला ७७३

हेमवतांतिमजीवा चतुःसप्तषट्सप्तत्रयः ऊनषोडशकला ।
धनुः नभश्चतुःसप्ताष्टत्रीणि विशेषाधिकदशकला ॥ ७७३ ॥

हेम । हैमवतांतिमजीवा चतुःसप्तषट्सप्तत्रयः किंचिन्न्यूनषोडशकलाश्च स्यात् । ३७६७४ $\frac{१६}{१९}$ तद्धनुः नभश्चतुःसप्ताष्टत्रीणि साधिकदशकलाश्च स्यात् ३८७४० $\frac{१०}{१९}$ ॥ ७७३ ॥

महहिमवचरिमजीवा इगतिणवत्तिदयपंच छक्ककला ।
तच्चावं तियणवदुगसगवण्णसहस्स दसयकला ॥ ७७४ ॥

महाहिमवच्चरमजीवा एकत्रिनवत्रितयपंच षट्कलाः ।
तच्चापं त्रिनवद्विसप्तपंचाशत्सहस्रं दशकलाः ॥ ७७४ ॥

मह । महाहिमवतश्चरमजीवा एकत्रिनवत्रितयपंचयोजना षट्कलाश्च स्यात् ५३९३१ $\frac{६}{१९}$ तच्चापं त्रिनवद्विसहितसप्तपंचाशत्सहस्रयोजनानि दशकलाश्च स्यात् ५७२९३ $\frac{१०}{१९}$ ॥ ७७४ ॥

हरिजीवा इगिणभणवतियसत्तयमिह कलावि सत्तरसा ।
चावं सोलसणभचउसीदिसहस्सं च चारिकला ७७५

हरिजीवा एकनभोनवत्रिसप्तकं इह कला अपि सप्तदश ।
चापं षोडशनभश्चतुरशीतिसहस्रं च चतस्रः कलाः ॥ ७७५ ॥

हरि । हरिवर्षे जीवा एकनभोनवत्रिसप्तयोजनानि इह सप्तदशकलाश्च

स्यात् ७३९० १$\frac{१७}{१९}$ तच्चापं षोडशनभश्चतुरशीतिसहस्रयोजनानि चतस्रः कलाश्च स्यात् ॥ ८४०१६$\frac{४}{१९}$ ॥ ७७५ ॥

णिसहावसाणजीवा छप्पणइगिचारिणवयदोण्णिकला
धणुपुट्ठं छादालतिचउवीसेक्कं च णवयकला ॥ ७७६ ॥

निषधावसानजीवा षट्पंचैकचतुर्नवकं द्वे कले ।
धनुःपृष्ठं षट्चत्वारिंशत् त्रिचतुर्विंशत्येकं च नव कलाः ॥७७६॥

णिसहा। निषधावसानजीवा षट्पंचैकचतुर्नवयोजनानि द्विकलाश्च स्यात् ९४१५६$\frac{२}{१९}$ धनुःपृष्ठं च षट्चत्वारिंशत् त्रिचतुर्विंशत्येकयोजनानि नवकलाश्च स्यात् १२४३४६$\frac{९}{१९}$ ॥ ७७६ ॥

जीवदु विदेहमज्झे लक्खा।परिहिदलमेवमवरद्धे ।
माहवचंदुद्धरिया गुणधम्मपसिद्ध सव्वकला ॥ ७७७ ॥

जीवाद्वयं विदेहमध्ये लक्षं परिधिदलं एवमपरार्धे ।
माधवचंद्रोद्धृताः गुणधर्मप्रासिद्धाः सर्वकलाः ॥ ७७७ ॥

जीव। विदेहमध्ये जीवा धनुरित्येतद्द्वयं यथासंख्यं लक्षयोजनानि १ ल जंबूद्वीपपरिधे ३१६२२७ को इदं १२८ अं १३ भा $\frac{१}{२}$ रर्धप्रमाणं च स्यात् १५८११४ एवमेवैरावताद्यपरार्धेपि गुणो ज्या धर्मो धनुः तयोः प्रसिद्धाः पूर्वोक्ताःसर्वाः कला योजनांशा अंकसंज्ञया माधवचंद्रांकेन १९ उद्धृताभक्ताः पक्षे गुणेषु धर्मे च प्रसिद्धाः सर्वाः कला माधवचंद्रत्रैविद्येशिनोद्धृताः प्रकाशिताः ॥ ७७७ ॥

अथ जीवानां धनुषां च चूलिकां पार्श्वभुजं चाह;—

पुव्ववरजीवसेसे दलिदे इह चूलियात्ति णाम हवे ।
धणुदुगसेसे दलिदे पासभुजा दक्खिणुत्तरदो ॥ ७७८ ॥

पूर्वापरजीवाशेषे दलिते इह चूलिका इति नाम भवेत् ।
धनुर्द्विकशेषे दलिते पार्श्वभुजः दक्षिणोत्तरतः ॥ ७७८ ॥

पुव्व । दक्षिणे भरतादौ उत्तरस्मिन्नैरावतादौ च पूर्वापरजीवयोरधिके हीनं शेषयित्वा दलिते शेषस्य चूलिकेति नाम भवेत् । पूर्वापरधनुषोर्द्वयं प्राग्वच्छेषयित्वा अर्धिते पार्श्वभुजः स्यात् । एतदेव विवरयति—दक्षिणभरतजीवा ९७४८ $\frac{१२}{१९}$ विजयार्धजीवयो १०७२० $\frac{११}{१९}$ रधिके हीनं शेषयित्वा ९७२ तदंशे $\frac{११}{१९}$ इतरांशस्य $\frac{१२}{१९}$ शोधनाभावात् अंशिनि ९७२ एकं गृहीत्वा ९७१ समच्छेदं कृत्वा $\frac{१९}{१९}$ अत्रेतरांश $\frac{१२}{१९}$ मपनीय ७ स्वांशे $\frac{११}{१९}$ मेलयेत् $\frac{१८}{१९}$ राशे ९७१ र्विषमत्वादेकमपनीय ९७० अर्धयित्वा ४८५ अंशं $\frac{१८}{१९}$ चार्धयित्वा $\frac{९}{१९}$ अपनीतैकमर्धितराश्यंशत्वाद्दलयित्वा $\frac{१}{२}$ इदमर्धितांशं च $\frac{९}{१९}$ परस्परहारगुणणेन समच्छेदं कृत्वा $\frac{१९}{३८}$ । $\frac{१८}{३८}$ मेलयेत् $\frac{३७}{३८}$ एतावता विजयार्धचूलिका स्यात् दक्षिणभरतचाप ९७६६ $\frac{१}{१९}$ विजयार्धचापयो १०७४३ $\frac{१५}{१९}$ रन्योन्यं शेषयित्वा ९७७ $\frac{१४}{१९}$ प्राग्वदर्धीकृत्य ४८८ $\frac{७}{१९}$ अंशयोः $\frac{१}{२}$ । $\frac{७}{१९}$ प्राग्वन्मेलने $\frac{३३}{३८}$ विजयार्धस्य पार्श्वभुजः स्यात् । एवमितरत्र चूलिका पार्श्वभुजः चानेतव्याः ॥ ७७८ ॥

अथ भरतैरावतक्षेत्रेषु कालवर्तनक्रमं प्रतिपादयादि;—

भरहेसुरेवदेसु य ओसप्पुस्सप्पिणित्ति कालदुगा ।
उस्सेधाउबलाणं हाणीवड्ढी य होंतित्ति ॥ ७७९ ॥

भरतेषु ऐरावतेषु च अवसर्पिण्युत्सर्पिणीति कालद्वयं ।
उत्सेधायुर्बलानां हानिवृद्धी च भवत इति ॥ ७७९ ॥

भरहे । पंचभरतेषु पंचैरावतेषु चावसर्पिण्युत्सर्पिणीति कालद्रव्यं वर्तते । तत्रस्थजीवानामुत्सेधायुर्बलानां यथासंख्यं हानिवृद्धी भवत इति ज्ञातव्यं ॥ ७७९ ॥

अथ कालद्वयभेदानां संज्ञाः कथयति;—

सुसमसुसमं च सुसमं सुसमादी अंतदुस्समं कमसो।
दुस्समममतिदुस्समिदि पढमो बिदियो दु विवरीयो ७८०

सुषमसुषमः च सुषमः सुषमादिः अंतदुःषमः क्रमशः।
दुषमः अतिदुःषम इति प्रथमः द्वितीयस्तु विपरीतः ॥ ७८० ॥

सुसम। सुषमसुषमः सुषमः सुषमदुःषमः दुःषमसुषमः दुःषमः अतिदुःषमः ६ इति क्रमेण प्रथमोऽवसर्पिणीकालः षड्भेदः, द्वितीय उत्सार्पिणीकालः एतद्वैपरीत्येन षड्भेदः ॥ ७८० ॥

अथ प्रथमादिकालानां स्थितिप्रमाणमाह;—

चदुतिदुगकोडकोडी बादालसहस्सवासहीणेक्कं।
उदधीणं हीणदलं तत्तियमेत्तट्ठिदी ताणं ॥ ७८१ ॥

चतुस्त्रिद्विककोटीकोटिः द्वाचत्वारिंशत्सहस्रवर्षहीनैकम्।
उदधीनां हीनदलं तावन्मात्रा स्थितिः तेषां ॥ ७८१ ॥

चदु। तेषां षट्कालानां क्रमेण स्थितिः चतुःकोटीकोटिसागरोपमा त्रिकोटीकोटिसागरोपमा द्विकोटीकोटिसागरोपमा द्वाचत्वारिंशत्सहस्रवर्षहीनैककोटीकोटिसागरोपमा। हीनस्य ४२००० दलं उभयत्र प्रत्येकं २१००० तावन्मात्रा च ज्ञातव्या ॥ ७८१ ॥

अथ षट्कालजीवानामायुःप्रमाणं निरूपयति;—

तत्थादि अंत आऊ तिदुगेक्कं पल्लपुव्वकोडी य।
वीसहियसयं वीसं पण्णरसा होंति वासाणं ॥ ७८२ ॥

तत्रादौ अंते आयुः त्रिद्विकैकं पल्यं पूर्वकोटिः।
विंशाधिकशतं विंशं पंचदश भवंति वर्षाणां ॥७८२ ॥

तत्थादि । तेषु कालेषु प्रथमकालस्यादौ जीवानामायुस्त्रिपल्योपमं तस्यांते द्विपल्यं एतदेव द्वितीयकालस्यादौ तस्यांते एकपल्यं एतदेव तृतीयकालस्यादौ तस्यांते पूर्वकोटिः एतदेव चतुर्थकालस्यादौ तस्यांते विंशत्यधिकं शतं एतदेव पंचमकालस्यादौ तस्यांते विंशतिः एतदेव षष्ठकालस्यादौ तस्यांते पंचदश एताः सर्वाः संख्या वर्षाणां भवंति ॥ ७८२ ॥

तथा मनुष्योत्सेधमाह;——

तिदुगेक्ककोसमुदयं पणसयचावं तु सत्त रदणी य ।
दुगमेक्कं चय रदणी छक्कालादिम्हि अंतम्हि ॥ ७८३ ॥

त्रिद्विकैककोशमुदयः पंचशतचापं तु सप्तरत्नयः च ।
द्विकमेकं च रत्निः षट्कालादौ अंते ॥ ७८३ ॥

तिदु । प्रथमकालस्यादौ त्रिक्रोशमुदयः तस्यांते द्विक्रोशमुदयः स एव द्वितीयकालस्यादौ तस्यांते एकक्रोशमुदयः स एव तृतीयकालस्यादौ तस्यांते पंचशत ५०० चापोत्सेधः स एव चतुर्थकालस्यादौ तस्यांते सप्तरत्न्युत्सेधः स एव पंचमकालस्यादौ तस्यांते द्विरत्न्युदयः स एव षष्ठकालस्यादौ तस्यांते एकरत्न्युत्सेधः । एवं षट्कालानामादौ अंते च मर्त्यानामुत्सेधो ज्ञातव्यः ॥ ७८३ ॥

अथ षट्कालवर्तिनां मर्त्यानां वर्णक्रमं निरूपयति;—

उदयरवी पुण्णिंदू पियंगुसामा य पंचवण्णा य ।
लुक्खसरीरावण्णे धूमसियामा य छक्काले ॥ ७८४ ॥

उदयरवयः पूर्णेंदवः प्रियंगुश्यामाश्च पंचवर्णाश्च ।
रूक्षशरीरावर्णाः धूमश्यामाः च षट्काले ॥ ७८४ ॥

उदय । प्रथमकाले नराः उदयरविवर्णाः, द्वितीयकाले पूर्णेंदुवर्णाः, तृतीयकाले प्रियंगुवर्णहरितश्यामवर्णाः, चतुर्थकाले पंचवर्णाः, पंचमकाले

कांतिहीनामिश्रपंचवर्णाः षष्ठे काले धूमश्यामवर्णाश्च । एवं षट्काले वर्णक्रमो ज्ञातव्यः ॥ ७८४ ॥

अथ तेषामाहारक्रमं निरूपयति;--

अट्ठमछट्ठचउत्थेणाहारो पडिदिणेण पायेण ।
अतिपायेण य कमसो छक्कालणरा हवंतित्ति ॥ ७८५ ॥

अष्टमषष्ठचतुर्थेनाहारः प्रतिदिनेन प्राचुर्येण ।
अतिप्राचुर्येण च क्रमशः षट्कालनरा भवंतीति ॥ ७८५ ॥

अट्ठ । प्रथमकाले अष्टमवेलायां त्रिदिनान्यंतरित्वा इत्यर्थः, द्वितीयकाले षष्ठवेलायां दिनद्वयमंतरित्वेत्यर्थः, तृतीयकाले चतुर्थवेलायां एकदिनमंतरित्वेत्यर्थः, चतुर्थकाले प्रतिदिनमेकवारं, पंचमकाले बहुवारं, षष्ठकालेतिप्रचुरवृत्त्या । एवं षट्काले नराणामाहारक्रमो भवति ॥ ७८५ ॥

अथ भोगभूमिजानामाहारप्रमाणं निवेदयति;—

बदरक्खामलयप्पमकप्पदुमदिण्णदिव्वआहारा ।
वरपहुदितिभोगभुमा मंदकसाया विणीहारा ॥ ७८६ ॥

बदराक्षामलकप्रमकल्पद्रुमदत्तदिव्याहाराः ।
वरप्रभृतित्रिभोगभूमानः मंदकषाया विनीहाराः ॥ ७८६ ॥

वर । उत्कृष्टादित्रिविधभोगभूमिजाः क्रमेण बदराक्षामलप्रमाणकल्पद्रुमदत्तदिव्याहाराः मंदकषाया विनीहारा भवंति ॥ ७८६ ॥

अथ तत्कल्पतरूणां प्रमाणमाह;--

तूरंगपत्तभूसणपाणाहारंगपुप्फजोइतरू ।
गेहंगा वत्थंगा दीवंगेहिं दुमा दसहा ॥ ७८७ ॥

तूर्यांगपात्रभूषणपानाहारांगपुष्पज्योतितरवः ।
गेहांगा वस्त्रांगा दीपांगैः द्रुमा दशधा ॥ ७८७ ॥

तुरंग । तूर्यांगपात्रांगभूषणांगपानाहारांगपुष्पांगज्योतिरंगगृहांगवस्त्रांग-दीपांगैः कल्पद्रुमा दशधा भवंति ॥ ७८७ ॥

अथ भोगभूमेः स्वरूपमाह;—

दप्पणसम मणिभूमी चउरंगुलसुरसगंधमउगतणा ।
खीरुच्छुतोयमहुघदपरीदवावीदहाइण्णा ॥ ७८८ ॥

दर्पणसमा मणिभूमिः चतुरंगुलसुरसगंधमृदुतृणा ।
क्षीरेक्षुतोयमधुघृतपरीतवापीह्रदाकीर्णा ॥ ७८८ ॥

दप्पण । क्षीरेक्षुरसतोयमधुघृतपूरितवापीह्रदाकीर्णा चतुरंगुलसुरसगंध-मृदुकतृणा दर्पणसमा मणिमयभोगभूमिर्ज्ञातव्या ॥ ७८८ ॥

अथ भोगभूमिजानामुत्पत्त्यवसानांतविधानं गाथात्रयेणाह;—

जादजुगलेसु दिवसा सगसग अंगुट्ठलेहरंगिदए ।
अथिरथिरगदि कलागुणजोवणदंसणगहे जांति ॥७८९॥

जातयुगलेषु दिवसा सप्तसप्त अंगुष्ठलेहे रंगिते ।
अस्थिरस्थिरगत्योःकलागुणयौवनदर्शनग्रहे यांति ॥ ७८९ ॥

जाद । उत्पन्नयुगलेषु अंगुष्ठलेहे उत्तानपरिवर्तने अस्थिरगतौ स्थिरगतौ कलागुणग्रहणे यौवनग्रहणे दर्शनग्रहणे च प्रत्येकं सप्त सप्त दिवसा यांति ॥ ७८९ ॥

तद्दंपदीणमादिमसंहदिसंठाणमज्जणामजुदा ।
सुलहेसुवि णो तित्ती तेसिं पंचक्खविसएसु ॥ ७९० ॥

तद्दंपतीनामादिमसंहतिसंस्थानं आर्यनामयुताः ।
सुलभेषु अपि नो तृप्तिः तेषां पंचाक्षविषयेषु ॥ ७९० ॥

तद्दंप । तद्दंपतीनामादिमसंहननसंस्थाने स्यातां वज्रवृषभनाराचसंहनन-समचतुरस्रसंस्थाने इत्यर्थः । ते चार्यनामयुताः, तेषां सुलभेष्वपि पंचाक्ष-विषयेषु न तृप्तिः ॥ ७९० ॥

चरमे खुदजंभवसा णरणारि विलीय सरदमेघं वा।
भवणतिगामी मिच्छा सोहम्मदुजाइणो सम्मा॥७९१॥

चरमे क्षुतजृंभवशात् नरनार्यौ विलीय शरन्मेघं वा ।
भवनत्रिगामिनः मिथ्याः सौधर्मद्वियायिनः सम्यंचः ॥७९१॥

चरमे । आयुष्यावसाने क्षुतजृंभयोर्वशाद्यथासंख्यं नरनार्यः शरत्काल-मेघवद्विलीय तत्र मिथ्यादृष्टयो भवनत्रयगामिनः सम्यग्दृष्टयः सौधर्मद्वि-कयायिनः स्युः ॥ ७९१ ॥

अथ कर्मभूमिप्रवेशक्रमं तत्रस्थमनूनां च स्वरूपं गाथात्रयेण प्रति-पादयति;—

पल्लट्ठमं तु सिट्ठे तदिए कुलकरणरा पडिस्सुदिओ ।
सम्मदिखेमंकरधर सीमंकरधर विमलादिवाहणवो ७९२

पल्याष्टमे तु शिष्टे तृतीये कुलकरनराः प्रतिश्रुतिः ।
सम्मतिः क्षेमंकरधरः सीमंकरधरः विमलादिवाहनः ॥७९२॥

पल्ल। तृतीयकाले पल्याष्टमभागेऽवशिष्टे कुलकरा उत्पद्यंते। ते के । प्रति-श्रुतिः सन्मतिः क्षेमंकरः क्षेमंधरः सीमंकरः सीमंधरः विमलवाहनः॥ ७९२ ॥

चक्खुम्मजससी अहिचंदो चंदाहओ मरुद्देओ ।
होदि पसेणजिदंको णाभी तण्णंदणो वसहो ॥ ७९३ ॥

चक्षुष्मान् यशस्वी अभिचंद्रः चंद्राभः मरुद्देवः ।
भवति प्रसेनजितांकः नाभिस्तन्नंदनो वृषभः ॥ ७९३ ॥

चक्खु । चक्षुष्मान् यशस्वी अभिचंद्रश्चंद्राभः मरुद्देवः प्रसेनजित् नाभिः तन्नंदनो वृषभो भवति ॥ ७९३ ॥

वरदाणदो विदेहे बद्धणराऊय खइयसंदिट्ठि ।
इह खत्तियकुलजादा केइज्जाइब्भरा ओही ॥ ७९४ ॥

वरदानतो विदेहे बद्धनरायुषः क्षायिकसंदृष्टयः ।
इह क्षत्रियकुलजाताः केचिज्जातिस्मरा अवधयः ॥ ७९४ ॥

वर । सत्पात्रदानवशाद्विदेहे बद्धनरायुषः क्षायिकसम्यग्दृष्टयः भाविनि भूतवदुपचार इति न्यायेनेह क्षत्रियकुले जाताः केचिज्जातिस्मराः कोचिदवधिज्ञानिनः ॥ ७९४ ॥

अथ कुलकराणां शरीरोत्सेधमाह;—

अट्ठारस तेरस अडसदाणि पणुवीसहीणयाणि तदो ।
चावाणि कुलयराणं सरीरतुंगत्तणं कमसो ॥ ७९५ ॥

अष्टादश त्रयोदश अष्टशतानि पंचविंशतिहीनानि ततः ।
चापानि कुलकराणां शरीरतुंगत्वं क्रमशः ॥ ७९५ ॥

अट्ठारस । अष्टादशशतानि १८०० त्रयोदशशतानि १३०० अष्टशतानि ८०० ततः परं क्रमशः पंचविंशतिहीनानि ७७५।७५०।७२५। ७००।६७५।६५०।६२५।६००।५७५।५५०।५२५।५०० एतानि सर्वाणि चापानि कुलकराणां शरीरतुंगत्वमिति ज्ञातव्यम् ॥ ७९५ ॥

तेषामायुष्यं कथयति;—

आऊ पल्लदसंसो पढमे सेसेसु दसहि भजिदकमं ।
चरिमे दु पुव्वकोडी जोगे किंचूण तण्णवमं ॥ ७९६ ॥

आयुः पल्यदशांशः प्रथमे शेषेषु दशभिः भक्तक्रमः ।
चरमे तु पूर्वकोटिः योगे किंचिदूनं तन्नवमं ॥ ७९६ ॥

आऊ । प्रथमकुलकरे आयुः पल्यदशमांशः प $\frac{1}{10}$ शेषेषु दशभिर्भक्तक्रमः $\frac{1}{10}$ । प $\frac{1}{100}$ । प $\frac{1}{1000}$ । प $\frac{1}{10000}$ । $\frac{प\ 1}{ल\ 1}$ । $\frac{प\ 1}{10\ ल}$ ।

$\frac{प\ १}{१\ को}$ | $\frac{प\ १}{१०\ को}$ | $\frac{प\ १}{१००\ को}$ | $\frac{प\ १}{१०००\ को}$ | $\frac{प\ १}{१००००\ को}$ | $\frac{प\ १}{१\ ल.\ को}$ | $\frac{प\ १}{१०ल.\ को}$

चरमे तु पूर्वकोटिः । एतेषां पूर्वकोटिव्यतिरिक्तानां समानछेदेन मेलने पल्य १० । $\frac{11111111111111}{00000000000000}$ । १ पुनरपवर्तनार्थमत्रैवैतावद्धणं पल्य $\frac{१}{९।१३}$ समच्छेदेन $\frac{प९९९९९९९९९९९९९९}{९००००००००००००००}$ प्रक्षिप्य ।

$\frac{प1000000000000000}{९000000000000000}$ अपवर्त्य प $\frac{1}{९}$ प्राक् प्रक्षिप्तऋणे निष्कासिते $\frac{प\ 1}{९}\ \frac{प\ 1}{९\ 13}$ तत्किंचिन्न्यूनपल्यनवमांशः स्यात् । एतदेव करणसूत्रेण साधयति अंतधणं प $\frac{1}{10}$ गुण १० गुणियं प $\frac{10}{10}$ आदि प $\frac{1}{113}$ समच्छेदेन $\frac{प\ 1।13}{1।13}$ विहीणं $\frac{प\ ९९९९९९९९९९९९९९९}{1000000000000000}$ रुऊणुत्तर९ भजियं $\frac{प\ ९९९९९९९९९९९९९९९}{९000000000000000}$ अत्रैतावद्धणं $\frac{प\ 1}{९।13}$ प्रक्षेप्य $\frac{प\ 1}{९}\Big|\frac{13}{13}$ अपवर्त्य $\frac{प\ 1}{९}$ अत्र प्राक् प्रक्षिप्तं ऋणं न्यूनं कर्तव्यं । $\frac{प\ 1}{९}$ अस्य प्रकारमंकसंदृष्टौ दर्शयति—अस्मिन्राशौ $\frac{६०}{४}$ वेतावद्धण २० मपनीय $\frac{४०}{४}$ भक्ते यल्लब्धमुपलभ्यते १० तस्मिन्नेव राशौ $\frac{६०}{४}$ हार ४ मधिकं कृत्वा $\frac{६०}{६}$ भक्तेपि तावदेव लब्धं स्यात् १० । अधिकप्रमाणं कथं ज्ञायत इतिचेत्, ऋणे २० लब्धेन १० भक्ते सति २ हाराधिकप्रमाणमागच्छाति ' किं च, ऋणे अज्ञाते अधिकांकेन २ लब्धे गुणिते ऋणप्रमाण २० मागच्छाति ॥ ७९६ ॥

अथ तेषां मनूनामंतरकालमाह;—

पल्लासीदिममंतरमादिममवसेसमेत्थ दसभजिदा ।
जोगे बावत्तरिमं सयलजुदे अट्ठमं हीणं ॥ ७९७ ॥

पल्याशीतिममंतरमादिममवशेषमत्र दशभक्तं ।
योगे द्वासप्ततिः सकलयुते अष्टमो हीनः ॥ ७९७ ॥

पल्ला । पल्यस्याशीतिमभागे आदिममंतरं प १/८० शेषांतरं तु तदेव दशभक्तं चेद्भवतिः—

प १/८००	प १/८०००	प १/८००००	प १/८ ल	प १/८० ल	प १/८ को	प १/८० को
प १/८०० को	प १/८००० को	प १/८०००० को	प १/८ ल. को	प १/८० ल को		

एतेषां समच्छेदेन मेलनं कृत्वा प ११११११११११११११/८०००००००००००००० अत्र लघूकरणार्थमेतावदृणं प १ १/७२ ल. को नवभिः समच्छेदं कृत्वा प ९९९९९९९९९९९९९/७२०००००००००००००० प्रक्षिप्य प १/७२ । १३/१३ अपवर्त्य प १/७२ प्राक्तनऋणे अपनीते प १/७२ | प १/७२ ल.को पल्यस्य किंचिन्न्यूनद्वासप्तत्यंशः स्यात् प १/७२ एतदेव करणसूत्रेणानयति । अंतधणं प १/९० गुण १७ गुणियं प १०/८० आदि प १/७२ ल. को समच्छेदेन प १/८ | १३/१३ विहीणं प ९९९९९९९९९९९९९/८०००००००००००००० रूऊणुत्तरभाजियं प ९९९९९९९९९९९९९/७२०००००००००००००० अत्रैव तावदृणं प १/७२ | १३ संयोज्य प १/७२ | १३/१३ अपवर्त्य प १/७२ प्राक् प्रक्षिप्तऋणे न्यूनं कृते किंचिन्न्यून पल्यद्वासप्तत्यंश स्यात् प १/७२ सर्वेषामायुष्याणा प १/९ मंतराणां च प १/७२ अष्टभिः समच्छेदं कृत्वा प ८/७२ संयोज्य प ९/७२ नवभिरपवर्तिते किंचिन्न्यूनपल्याष्टमांशः स्यात् प १/८ ॥ ७९७ ॥

अथ मनुभिः क्रियमाणशिक्षां तेषामंगवर्णं चाह;—

हा हामा हामाधिक्कारा पणपंच पण सियामलया ।
चक्खुम्मदुग पसेणाचंदाहो धवल सेस कणयणिहा ७९८

हा हामा हामाधिक्कारा: पंच पंच पंच श्यामलौ ।
चक्षुष्मद्विकं प्रसेनचंद्राभौ धवलौ शेषाः कनकनिभाः ॥ ७९८ ॥

हा हा । प्रथमपंचमनवः अपराधिनो हाकारेण दंडयंति, ततः परं पंच मनवः हामाकारेण दंडयंति, तदुपरिमपंचमनवः हामाधिक्कारेण दंडयंति । चक्षुष्मान् यशस्वीति द्वौ श्यामलौ प्रसेनचंद्राभौ धवलौ, शेषाः सर्वे कनकनिभाः ॥ ७९८ ॥

अथ तत्तत्काले तैः क्रियमाणकृत्यं गाथाचतुष्टयेनाह;—

इणससितारासावदविभयं दंडादिसीमचिण्हकदिं ।
तुरगादिवाहणं सिसुमुहदंसणणिब्भयं वेंत्ति ॥ ७९९ ॥

इनशशिताराश्वापदविभयं दंडादिसीमाचिह्नकृतिं ।
तुरगादिवाहनं शिशुमुखदर्शननिर्भयं ब्रुवंति ॥ ७९९ ॥

इण । प्रथमो मनुः प्रजानामिनशशिदर्शनाज्जातभयं निवारयति, द्वितीयस्तारादर्शनभयं, तृतीयः क्रूरमृगाद्भयं तर्जनेन, चतुर्थस्तावद्भयं पुनर्दण्डादिना निवारति, पंचमोल्पफलदायिनि कल्पवृक्षे झकटं दृष्ट्वा सीमां करोति तथापि झकटे जाते षष्ठः सीमाचिह्नं करोति, सप्तमो गमने तुरगादिवाहनं करोति, अष्टमः शिशुमुखदर्शनान्निर्भयं ब्रवीति ॥ ७९९ ॥

आसीवादादिं ससिपहुदिहिं केलिं च कदिचिदिणओत्ति
पुत्तेहिं चिरंजीवण सेदुवहित्तादि तरणविहिं ॥८००॥

आशीर्वादादिं शशिप्रभृतिभिः केलिं च कतिचिद्दिनातम् ।
पुत्रैः चिरं जीवनं सेतुवहित्रादिभिः तरणाविधिं ॥ ८०० ॥

आसी । नवमः शिशूनामाशीर्वादादिकं शिक्षयति, दशमः कतिचिद्दिनपर्यंतं शशिप्रभृतिभिः केलिं च शिक्षयति, एकादशः पुत्रैश्चिरंजीवनभयं निवारयति, द्वादशः सेतुबहित्राभिस्तरणविधिं शिक्षयति ॥ ८०० ॥

सिक्खंति जराउछिदिं णाभिविणासिंदचावतडिदादिं ।
चरिमो फलअकदोसहिभुत्तिं कम्मावणी तत्तो ॥८०१॥

शिक्षयति जरायुछिदिं नाभिविनाशं इंद्रचापतडिदादि ।
चरमः फलाकृतौषधिभुक्तिं कर्मावनिस्ततः ॥ ८०१ ॥

सिक्खं । त्रयोदशो जरायुछिदिं शिक्षयति, चरमो नाभिछिदिं शिक्षयति इंद्रचापतडिदादिदर्शनभयं निवारयति फलाकृतौषधिभुक्तिं च शिक्षयति, ततः परं कर्मभूमिर्वर्तते ॥ ८०१ ॥

पुरगामवट्टणादी लोहियसत्थं च लोयववहारो ।
धम्मो वि दयामूलो विणिम्मियो आदिबम्हेण ॥८०२॥

पुरग्रामपट्टनादिः लौकिकशास्त्रं च लोकव्यवहारः ।
धर्मोपि दयामूलः विनिर्मितः आदिब्रह्मणा ॥ ८०२ ॥

पुर । पुरग्रामपत्तनादिर्लौकिकशास्त्रं च लोकव्यवहारो दयामूलो धर्मोपि आदिब्रह्मणा विनिर्मितः ॥ ८०२ ॥

अथ चतुर्थकालसमुत्पन्नशलाकापुरुषान्निरूपयति;—

चउवीसबारतिघणं तित्थयरा छत्तिखंडभरहवई ।
तुरिए काले होंति हु तेवट्ठिसलागपुरिसा ते ॥ ८०३ ॥

चतुर्विंशतिः द्वादश त्रिघनः तीर्थकराः षट्त्रिखंडभरतपतयः ।
तुर्ये काले भवंति हि त्रिषष्टिशलाकापुरुषास्ते ॥ ८०३ ॥

चउवीस । चतुर्विंशतितीर्थकराः द्वादश षट्खंडभरतपतयः सप्तविंशतिस्त्रिखंडभरतपतयः इत्येते त्रिषष्टि ६३ शलाकापुरुषाश्चतुर्थकाले भवंति ॥ ८०३ ॥

अथ तीर्थंकरशरीरोत्सेधमाह;—

धणु तणुतुंगो तित्थे पंचसयं पण्ण दसपणूणकमं।
अट्ठसु पंचसु अट्ठसु पासदुगे णवयसत्तकरा ॥ ८०४ ॥

धनूंषि तनुतुंगः तीर्थे पंचशतं पंचाशद्दशपंचोनक्रमः।
अष्टसु पंचसु अष्टसु पार्श्वद्विकयोः नव सप्तकराः ॥ ८०४ ॥

धणु। प्रथमतीर्थकरे तनुतुंगः पंचशत ५०० धनूंषि, तत उपर्यष्टसु तीर्थंकरेषु पंचाशत्पंचाशदून ४५०।४००।३५०।३००।२५०।२००।१५०। १०० धनूंषि। ततः पंचसु तीर्थंकरेषु दशदशोनधनूंषि ९०।८०।७०।६०। ५० ततोष्टसु तर्थिकरेषु पंचपंचोनधनूंषि तनुतुंगः स्यात् ४५।४०।३५।३०। २५।२०।१५।१० पार्श्वजिनो वर्द्धमानजिन इति द्वयोः तनूत्सेधो नव ९ सप्त ७ हस्तौ भवतः ॥ ८०४ ॥

अथ तीर्थंकरायुष्यं गाथाद्वयेनाह;—

तित्थाऊ चुलसीदीबिहत्तरीसट्ठि पणसु दसहीणं।
बिगि पुव्वलक्खमेत्तो चुलसीदि बिहत्तरी सट्ठी ॥८०५॥

तीर्थायुः चतुरशीतिद्वासप्ततिषष्ठिः पंचसु दशहीनं।
द्व्येकं पूर्वलक्षमात्रं चतुरशीतिः द्वासप्ततिः षष्ठिः ॥ ८०५ ॥

तित्था। तीर्थकराणां क्रमेणायुः चतुरशीतिलक्षपूर्वाणि ८४ द्वासप्तति-लक्षपूर्वाणि ७२ षष्ठिलक्षपूर्वाणि ६०। इत उपरि पंचसु तीर्थंकरेषु पूर्वस्माद्दश दश हीनलक्षपूर्वाणि ५० लपू। ४० लपू। ३० लपू। २० लपू १० लपू। ततो द्विलक्षपूर्व २ मेकलक्षपूर्व च स्यात्। इत उपरि चतुरशीति लक्षाणि ८४ द्वासप्ततिलक्षाणि ७२ षष्ठिलक्षाणि ६० ल ॥ ८०५ ॥

तीसदसएक्कलक्खा पणणवदीचदुरसीदिपणवण्णं।
तीसं दसिगिसहस्सं सय बावत्तरिसमा कमसो ॥८०६॥

त्रिंशद्दशैकलक्षाणि पंचनवतिचतुरशीतिपंचपंचाशत् ।
त्रिंशत् दशैकसहस्रं शतं द्वासप्ततिसमाः क्रमशः ॥ ८०६ ॥

तीस । त्रिंशल्लक्षाणि ३० दशलक्षाणि १० एकलक्षाणि । तत उपरि पंचनवतिसहस्राणि ९५००० चतुरशीतिसहस्राणि ८४००० पंचपंचाशत् सहस्राणि ५५००० त्रिंशत्सहस्राणि ३०००० दशसहस्राणि १०००० एकसहस्राणि १००० शतं १०० द्वासप्ततिः ७२ एतानि क्रमशो वर्षाणि स्युः ॥ ८०६ ॥

इदानीं तीर्थकराणामंतराणि गाथासप्तकेनाहः—

उवहीण पण्णकोडी सतिवासडमासपक्खया पढमं ।
अंतरमेत्तो तीसं दस णव कोडी य लक्खगुणा ॥८०७॥

उदधीनां पंचाशत्कोटिः सत्रिवर्षाष्टमासपक्षकः प्रथमं ।
अंतरमितः त्रिंशत् दश नव कोटिश्च लक्षगुणा ॥ ८०७ ॥

उव । प्रथममंतरं पंचाशत्कोटिलक्षसागरोपमाणि ५० को ल सा त्रिवर्षा ३ अष्ट मासौ ८ एकपक्ष १५ सहितानि, इत उपरि क्रमेण त्रिंशत्कोटिलक्षसागरोपमाणि ३० दशकोटिलक्षसागरोपमाणि १० नवकोटिलक्षसागरोपमाणि ९ को. ल. सा. ॥ ८०७ ॥

दसदसभजिदा पंचसु तो कोडी सायराण सदहीणा ।
छव्वीससहस्ससमा छावट्ठीलक्खएणावि ॥ ८०८ ॥

दश दश भक्तानि पंचसु ततः कोटिः सागराणां शतहीना ।
षट्विंशसहस्रसमा षट्षष्टिलक्षकेनापि ॥ ८०८ ॥

दश । तत उपरि पंचस्वंतरेषु प्रमाणानि प्राक्तननवकोटिलक्षसागरोपमाण्येव दश दश भक्तानि ९०००० को सा. ९००० को सा. ९०० को

सा. ९० को सा. ९ को सा. तत उपरि शत १०० सागरोपमैः षड्विंशतिसहस्रोत्तर षट्विंशतिसहस्रोत्तर षट्षष्टिलक्षवर्षैश्च हीनान्येककोटि सागरोपमाणि अंतरं ज्ञातव्यं ९९९९०० ॥ ८०८ ॥

चउवण्णतीसणवचउजलहितियं पल्लतिण्णिपादूणं ।
पल्लस्स दलं पादो सहस्सकोडीसमाहीणो ॥ ८०९ ॥

चतुःपंचाशत् त्रिंशन्नवचतुर्जलधित्रयं पल्यत्रयपादोनं ।
पल्यस्य दलं पादः सहस्रकोटिसमाहीनः ॥ ८०९ ॥

चउ । तत उपरि चतुःपंचाश ५४ त्सागरोपमाणि त्रिंशत्सागरोपमाणि नव ९ सागरोपमाणि चत्वारि ४ सागरोपमाणि पल्यात्रिपादोनानि त्रीणि सागरोपमाणि सा. ३–प$\frac{३}{४}$ पल्यस्यार्धं प$\frac{१}{२}$ सहस्रकोटीवर्षहीनः पल्यचतुर्थांशः $\frac{प}{४}$–१००० को. अंतरं स्यात् ॥ ८०९ ॥

वस्सा कोडिसहस्सा चउवण्णछपंचलक्खवस्साणि ।
तेसीदिसहस्समदो सगसयपण्णाससंजुत्तं ॥ ८१० ॥

वर्षाणि कोटिसहस्राणि चतुष्पंचाशत् षट् पंचलक्षवर्षाणि ।
त्र्यशीतिसहस्रमतः सप्तशतपंचाशत्संयुक्तं ॥ ८१० ॥

वस्सा । तत उपरि सहस्रकोटिवर्षाणि १००० को. चतुःपंचाशल्लक्षवर्षाणि ५४ ल षड्लक्षवर्षाणि ६ पंचलक्षवर्षाणि ५ सप्तशतपंचाशत्सहितानि त्र्यशीतिसहस्राण्यत उपरि अंतरं ज्ञातव्यं ॥ ८१० ॥

सदलबिसदं समातिय पक्खडमासूणमंतिमं तत्तु ।
मोक्खंतरं सगाउगहीणं तमिणं जिणंतरयं ॥ ८११ ॥

सदलद्विशतं समात्रयं पक्षाष्टमासोनमंतिमं तत्तु ।
मोक्षांतरं स्वकायुष्कहीनं तदिदं जिनांतरं ॥ ८११ ॥

सदल । अंतिमांतरं तु समा त्रयैकपक्षाष्टमासोनं दलसहितद्विशतं २५० व. ३ प १ मा ८ शेष २४६ मास ३ प १ पूर्वोक्तमंतरं सर्वं मोक्षमोक्षांतरं ज्ञातव्यं । एतदेव स्वकीयस्वकीयायुर्हीनं चेत् जिनांतरं स्यात् ॥८११॥

वीरजिणतित्थकालो इगिवीससहस्सवास दुस्समगो ।
इह सो तेत्तियमेत्तो अइदुस्समगोवि मिलिदव्वो॥८१२॥

वीरजिनतीर्थकालः एकविंशतिसहस्रवर्षाणि दुःषमः ।
इह सः तावन्मात्रः अतिदुःषमकोपि मेलयितव्यः ॥ ८१२ ॥

वीर । दुःषमाख्यः वीरजिनतीर्थकालः एकविंशतिसहस्रवर्षाणि २१००० इहातिदुःषमाख्यः । स प्रसिद्धोपि तावन्मात्र २१००० एव मेलयितव्यः ॥ ८१२ ॥

तदिए तुरिए काले तिवासअडमासपक्खपरिसेसे ।
वसहो वीरो सिद्धो पुव्वे तित्थेयराउस्सं ॥ ८१३ ॥

तृतीये तुर्ये काले त्रिवर्षअष्टमासपक्षपरिशेषे ।
वृषभो वीरः सिद्धः पूर्वे तीर्थकारायुष्यं ॥ ८१३ ॥

तदिए । तृतीये चतुर्थे काले त्रिवर्षाष्टमासैकपक्षावशेषे सति यथासंख्यं वृषभो वीरजिनश्च सिद्धिमगमत् । पूर्वपूर्वतीर्थांतरे उत्तरतीर्थकरायुष्यं तिष्ठतीति ज्ञातव्यं । वीरजिनमुक्तेरवशेषकालं व ३ मा ८ प१ पार्श्वभट्टारकांतरे २४६ मास ३ प १ मेलयित्वा २५० अस्माद्यथायोग्यं सर्वेष्वंतरेषु मिलितेष्वेकाकोटीकोटिसागरोपमं भवति ॥ ८१३ ॥

इदानीं जिनधर्मोच्छित्तिकालं दर्शयति;—

पल्लतुरियादि चय पल्लंतचउत्थूण पादपरकालं ।
ण हि सद्धम्मो सुविधीदु संतिअंते सगंतरए ॥ ८१४ ॥

पल्यतुर्यादिः चयः पल्यमंतं चतुर्थोनं पादपरकालं ।
न हि सद्धर्मः सुविधितः शांत्यंते सप्तांतरे ॥ ८१४ ॥

दल्ल । पल्यचतुर्थांश आदिः $\frac{प}{४}$ तावानेव चयः एकपल्यमंतं ततः परं पल्यचतुर्यांशोनं यावत्पल्यपादावसानकालं, प. $\frac{१}{४}|\frac{२}{४}|\frac{३}{४}|\frac{४}{४}|\frac{३}{४}|\frac{२}{४}|\frac{१}{४}|$ एतेषु सुविधितः पुष्पदंतादारभ्य शांतिनाथावसानेषु सप्तव्यंतरेषु वक्तृश्रोतृचारिष्णूनामभावात् सद्धर्मो नास्ति ॥ ८१४ ॥

अथ चाक्रिणां नामान्याह;—

चक्की भरहो सगरो मघव सणकुमार संतिकुंथुजिणा ।
अरजिण सुभोममहपउमा हरिसेणजयब्रह्मदत्तक्खा ॥

चक्रिणः भरतः सगरः मघवा सनत्कुमारः शांतिकुंथुजिनौ ।
अरजिनः सुभौममहापद्मौ हरिषेणजयब्रह्मदत्ताख्याः ॥ ८१५ ॥

चक्की । भरतः सगरो मघवान् सनत्कुमारः शांतिजिनः कुंथुजिनः अरजिनः सुभौमो महापद्मो हरिषेणो जयो ब्रह्मदत्ताख्यः । एते द्वादश १२ चक्रिणः ॥ ८१५ ॥

एतेषां वर्तनाकालं गाथाद्वयेनाह;—

भरहदु वसहदुकाले मघवदु धम्मदुगअंतरे जादा ।
तिजिणा सुभोमचक्की अरमल्लीणंतरे होदि ॥ ८१६ ॥

भरतद्वयं वृषभद्वयकाले मघवद्वौ धर्मद्वयांतरे जातौ ।
त्रिजिनाः सुभौमचक्री अरमल्ल्योरंतरे भवति ॥ ८१६ ॥

भरह । भरतसगरौ द्वौ वृषभाजितयोः काले जातौ, मघवसनत्कुमारौ द्वौ धर्मशांतिजिनयोरंतरे जातौ, ततः परं शांतिकुंथ्वरास्त्रयो जिनाः अत्र स्वयमेव जिनत्वाज्जिनांतराभावः, सुभौमचक्री अरमल्लिजिनयोरंतरे भवति ॥ ८१६ ॥

मल्लिदुमज्झे णवमो मुणिसुवव्यणमिजिणंतरे दसमो ।
णमिदुविहरे जयक्खो बम्हो णेमिदुगअंतरगो ॥८१७॥

मल्लिद्वयमध्ये नवमो मुनिसुव्रतनमिजिनांतरे दशमः ।
नमिद्विविरहे जयाख्यो ब्रह्मो नेमिद्वयांतरगः ॥ ८१७ ॥

मल्लि । मल्लिमुनिसुव्रतयोर्मध्ये नवमो महापद्मो जातः मुनिसुव्रतनमिजिनयोरंतरे दशमो हरिषेणो जातः, नमिनेमिजिनयोरंतरे जयाख्यो जातः, नेमिपार्श्वजिनयोरंतरे ब्रह्मदत्ताख्यो जातः ॥ ८१७ ॥

अथ चक्रधराणां शरीरस्य वर्णमुत्सेधं तदायुष्यं च गाथात्रयेणाह;—

सव्वे सुवण्णवण्णा तद्देहुदओ धणूण पंचसयं ।
पण्णासूणं सदलं बादालिगिदालयं तालं ॥ ८१८ ॥

सर्वे सुवर्णवर्णा तद्देहोदयो धनुषां पंचशतं ।
पंचाशदूनं सदलं द्वाचत्वारिंशदेकचत्वारिंशत् चत्वारिंशत् ॥८१८॥

सव्वे । सर्वे चक्रिणः सुवर्णवर्णाः तेषां देहोत्सेधः क्रमेण धनुषां पंचशतं ५०० पंचाशदूनं तदेव ४५० दल $\frac{१}{२}$ साहिता द्वाचत्वारिंशत् $\frac{८४}{२}$ दलसहितैचत्वारिंशत् $\frac{८३}{२}$ चत्वारिंशच्च ४० ॥ ८१८ ॥

पणतीस तीस अडदुखवीसं पण्णरसगाउ चुलसीदि ।
बावत्तरिपुव्वाणं पणतिगिवासाणमिह लक्खा ॥८१९॥

पंचत्रिंशत् त्रिंशदष्ट द्विःखविंशतिः पंचदशकमायुः चतुरशीतिः ।
द्वासप्ततिपूर्वाणां पंचत्रिकैकवर्षाणामिह लक्षाणि ॥ ८१९ ॥

पण । पंचत्रिंशत् ३५ त्रिंशत् ३० अष्टाविंशतिः २८ द्वाविंशतिः २२ विंशतिः २० पंचदश १५ सप्त धनूंषि भवंति । इतः परं तेषामायुर्यथासंख्यं चतुरशीतिपूर्वलक्षवर्षाणि ८४ पूल. द्वासप्तति पूर्वलक्षवर्षाणि ७२ पंचलक्षवर्षाणि ५ ल. त्रिलक्षवर्षाणि ३ इल. एकलक्षवर्षाणि १ ल.॥ ८१९॥

संवच्छरा सहस्सा पणणउदी चउरसीदि सट्ठी य ।
तीसं दसयं तिदयं सत्तसया बम्हदत्तस्स ॥ ८२० ॥

संवत्सराः सहस्राः पंचनवतिः चतुरशीतिः षष्टिश्च ।
त्रिंशत् दशकं त्रितयं सप्तशतानि ब्रह्मदत्तस्य ॥ ८२० ॥

संव । पंचनवतिसहस्रवर्षाणि ९५००० चतुरशीतिसहस्रवर्षाणि ८४००० षष्टिसहस्रवर्षाणि ६०००० त्रिंशत्सहस्रवर्षाणि ३०००० दशसहस्रवर्षाणि १०००० त्रिसहस्रवर्षाणि ब्रह्मदत्तस्य सप्तशतवर्षाणि ७००॥८२०॥

अथ तेषां नवनिधिसंज्ञामाह;—

कालमहकालमाणवपिंगलणेसप्पपउमपांडु तदो ।
संखो णाणारयणं णवणिहिओ देंति फलमेदं ॥ ८२१ ॥

कालमहाकालमाणवक पिंगल नैसर्पपद्मपांडुस्ततः ।
शंखः नानारत्नः नवनिधयः ददति फलमेतत् ॥ ८२१ ॥

काल । कालमहाकालौ माणवक पिंगलो नैसर्पः पद्मः पांडुस्ततः शंखो नानारत्नाख्य इति नवनिधयः एतदग्रे वक्ष्यमाणं फलं ददति ॥ ८२१ ॥

अथ नवनिधिभिर्दीयमानफलमाह;—

उडुजोग्गकुसुमदामप्पहुदिं भाजणयमाउहाभरणं ।
गेहं वत्थं धण्णं तूरं बहुरयणमणुकमसो ॥ ८२२ ॥

ऋतुयोग्यकुसुमदामप्रभृति भाजनायुधाभरणं ।
गेहं वस्त्रं धान्यं तूर्यं बहुरत्नमनुक्रमशः ॥ ८२२ ॥

उडु । ते निधयोनुक्रमेण ऋतुयोग्यकुसुमदामप्रभृतिभाजनमायुधमाभरणं गेहं वस्त्रं धान्यं तूर्यं बहुरत्नं च दधते ॥ ८२२ ॥

अथ चतुर्दशरत्नानां संज्ञापूर्वकमुत्पत्तिस्थानमाह;—

सेणिगिहथवदि पुरहो गयहयजुवई हवंति वेयड्ढे ।
सिरिगेहे कागिणिमणिचम्माउहगेसिदंडछत्तमरो ८२३

सेनागृहस्थपतिः पुरोधा गजो हयो युवतिः भवंति विजयार्धे ।
श्रीगेहे काकिणीमणिचर्मायुधके असिदंडछत्रमरः ॥ ८२३ ॥

सेणि । सेनापतिः गृहपतिः स्थपतिः पुरोधाः गजो हयो युवतिरित्येते विजयार्धे भवंति श्रीगेहे काकिणी चूडामणिश्चर्मरत्नमित्येतानि भवंति । आयुधगेहे असिर्दंडच्छत्रं चक्ररत्नमित्येतानि भवंति ॥ ८२३ ॥

अथ तेषां गतिविशेषमाह;—

मघवं सणक्कुमारो सणक्कुमारं सुभोम बम्हा य ।
सत्तमपुढविं पत्ता मोक्खं सेसट्ठचक्कहरा ॥ ८२४ ॥

मघवान् सनत्कुमारः सनत्कुमारं सुभौमो ब्रह्मश्च ।
सप्तमपृथिवीं प्राप्तौ मोक्षं शेषाष्टचक्रधराः ॥ ८२४ ॥

मघवं । मघवान् सनत्कुमारश्च सनत्कुमारं स्वर्गमापत्, सुभौमो ब्रह्मदत्तश्च सप्तमी पृथ्वीं प्रापत्, शेषा अष्टचक्रधरा मोक्षमापुः ॥ ८२४ ॥

सांप्रतमर्धचक्रिणां नामान्याह;—

तिविट्ठुदुविट्ठुसयंभू पुरिसुत्तमपुरिससिंहपुरिसादी ।
पुंडरियदत्त णारायण किण्हो अद्धचक्कहरा ॥ ८२५ ॥

त्रिपृष्ठद्विपृष्ठस्वयंभूः पुरुषोत्तमः पुरुषसिंहः पुरुषादिः ।
पुंडरीकदत्तः नारायणः कृष्णः अर्धचक्रधराः ॥ ८२५ ॥

तिविट्ठ । त्रिपृष्टो द्विपुष्टः स्वयंभूः पुरुषोत्तमः पुरुषसिंहः पुरुषपुंडरीकः पुरुषदत्तो नारायणः कृष्णश्चेति नवार्धचक्रधराः स्युः ॥ प्रसंगेन बलवासुदेव-

योर्यथासंख्यमायुधरत्नमाह—" असिः शंखो धनुश्चक्रं मणिः शक्तिर्गदा हरेः । रत्नमाला हलं भास्वद्रामस्य मुशलं गदा ॥ " ८२५ ॥

अथ तेषां बलदेववासुदेवप्रतिवासुदेवानां वर्तनाकालमाह;—

सेयादिपणसु हरिपण छट्ठरदुगविरह मल्लिदुगमज्झे ।
दत्तो अट्ठम सुव्वयदुगविरहे णेमिकालजो किण्हो ८२६

श्रेयोआदिपंचसु हरिपंच षष्ठः अरद्विकविरहे मल्लिद्विकमध्ये ।
दत्तः अष्टमः सुव्रतद्वयविरहे नेमिकालजः कृष्णः ॥ ८२६ ॥

सेया । श्रेयोजिनादिपंचतीर्थंकरकालेषु त्रिपृष्टादयः पंच भवंति । षष्ठः पुरुषपुंडरीकोऽरमल्लितीर्थंकरयोरंतरे भवति, पुरुषदत्तो मल्लिमुनिसुव्रतयोर्मध्ये भवति, अष्टमो नारायणो मुनिसुव्रतनेमिजिनयोर्विरहकाले स्यात्, कृष्णस्तु नेमीश्वरकाले उत्पन्नः ॥ ८२६ ॥

अथ बलदेवप्रतिवासुदेवानां नामानि गाथाद्वयेनाह;—

बलदेवा विजयाचलसुधम्मसुप्पहसुदंसणा णंदी ।
तो णंदिमित्त रामा पउमा उवरिं तु पडिसत्तू ॥ ८२७ ॥

बलदेवाः विजयाचलसुधर्मसुप्रभसुदर्शना नंदी ।
ततो नंदिमित्रः रामः पद्मः उपरि तु प्रतिशत्रवः ॥ ८२७ ॥

बल । विजयोऽचलः सुधर्मः सुप्रभः सुदर्शनो नंदी ततो नंदिमित्रो रामः पद्म इत्येते नव बलदेवाः स्युः। इत उपरि तेषां प्रतिशत्रवः कथ्यंते ॥ ८२७ ॥

अस्सग्गीओ तारय मेरयय णिसुंभ कइडहंत महू ।
बलि पहरण रावणया खचरा भूचर जरासंधो ॥ ८२८ ॥

अश्वग्रीवः तारकः मेरकश्च निशुंभः कैटभांतो मधुः ।
बलिः प्रहरणः रावणः खचराः भूचरो जरासंधः ॥ ८२८ ॥

अस्स । अश्वग्रीवस्तारको मेरकश्च निशुंभो मधुकैटभो बलिः प्रहरणो रावणश्चेति खचराः भूचरो जरासंधः । इत्येते नव प्रतिवासुदेवाः ॥८२८॥

अथ बलदेवादित्रयाणामुत्सेधमाह;—

देहुदओ चापाणं सीदी तिसु दसयहीण पणदालं ।
णवदुगवीसं सोलं दस बलकेसव ससत्तूणं ॥ ८२९ ॥

देहोदयः चापानां अशीतिः त्रिषु दशहीनं पंचचत्वारिंशत् ।
नवद्विकविंशतिः षोडश दश बलकेशवानां सशत्रूणां ॥८२९॥

देहु । सशत्रूणां बलकेशवानां शरीरोत्सेधो यथासंख्यं अशीति ८० चापानि, ततस्त्रिषु दशदशहीनानि ७०।६०।५० ततः पंचचत्वारिंशत ४५ नवविंशतिः २९ द्वाविंशतिः २२ षोडश १६ दश १० धनूंषि भवंति ॥ ८२९ ॥

अथ वासुदेवप्रतिवासुदेवानामायुष्यमाह;—

सम चुलसीदि बहत्तरि सट्ठी तीस दस लक्ख पणसट्ठी
बत्तीसं बारेक्कं सहस्समाउस्समद्धचक्कीणं ॥ ८३० ॥

समा चतुरशीतिः द्वासप्ततिः षष्ठिः त्रिंशत् दश लक्षाणि पंचषष्ठिः ।
द्वात्रिंशत् द्वादशकं सहस्रं आयुष्यमर्धचक्रिणाम् ॥ ८३० ॥

सम । अर्धचक्रिणां वासुदेवानायुष्यं चतुरशीतिलक्षवर्षाणि ८४ ल. द्वासप्ततिलक्षवर्षाणि ७२ षष्ठिलक्षवर्षाणि ६० त्रिंशल्लक्षवर्षाणि ३० दशलक्षवर्षाणि १० पंचषष्टिसहस्र ६५००० वर्षाणि द्वात्रिंशत्सहस्रवर्षाणि ३२००० द्वादशसहस्रवर्षाणि १२००० एकसहस्रवर्षाणि १००० भवंति ॥ ८३० ॥

इतो बलानामायुष्यमाह;—

सगसीदि दुसु दसूणं सगतीसं सत्तरससमा लक्खा ।
सगसट्ठीतीस सत्तर सहस्स बारसयमाउ बले ॥ ८३१ ॥

सप्ताशीतिः द्वयोः दशोनं सप्तत्रिंशत् सप्तदशसमा लक्षाणि ।
सप्तषष्टिः त्रिंशत् सप्तदश सहस्रं द्वादशमायुः बले ॥ ८३१ ॥

सग । बलदेवानामायुःप्रमाणं सप्ताशीतिलक्षवर्षाणि ८७ ततो द्वयोर्द्दशदशोनं ७७ ल । ६७ ल । ततः सप्तत्रिंशल्लक्षवर्षाणि ३७ ल. सप्तदशलक्षवर्षाणि १७ सप्तषष्टिसहस्रवर्षाणि ६७००० सप्तत्रिंशत्सहस्रवर्षाणि ३७००० सप्तदशसहस्रवर्षाणि १७००० द्वादशशतवर्षाणि १२०० भवंति ॥ ८३१ ॥

अथ वासुदेवादित्रयाणां प्राप्तगतिं गाथाद्वयेनाह;—

पढमो सत्तमिमण्णे पण छट्ठीं पंचमिं गदो दत्तो ।
णारायणो चउत्थीं कसिणो तदियं गुरुयपावा ॥८३२॥

प्रथमः सप्तमीमन्ये पंच षष्ठीं पंचमीं गतो दत्तः ।
नारायणः चतुर्थीं कृष्णः तृतीयां गुरूपापात् ॥ ८३२ ॥

पढम । प्रथमस्त्रिपुष्टस्सप्तमीं पृथिवीं आप, अन्ये पंच षष्ठीपृथ्वीमापुः पुरुषदत्तः पंचमीं पृथ्वीं गतः नारायणः चतुर्थीं भूमिमवाप, कृष्णस्तृतीयां भुवं आपत् । एते गुरुपापाः ॥ ८३२ ॥

णिरयं गया पडिरिवो बलदेवा मोक्खमट्ठ चरिमो दु ।
ब्रह्मं कप्पं किण्हे तित्थयरे सोवि सिज्झेहि ॥ ८३३ ॥

निरयं गताः प्रतिरिपवो बलदेवा मोक्षं अष्ट चरमस्तु ।
ब्रह्म कल्पं कृष्णे तीर्थंकरे सोपि सेत्स्यति ॥ ८३३ ॥

णिरयं । एतेषां प्रतिरिपवश्च तत्तन्नरकं गताः । अष्टौ बलदेवाः मोक्षं गताः, चरमस्तु पद्मो ब्रह्मकल्पंगतः सोपि कृष्णे तीर्थंकरे सति तस्मिन् काले सेत्स्यति सिद्धिं प्राप्स्यति ॥ ८३३ ॥

अथ नारदानां नामादिकं गाथाद्वयेनाह;—

भीम महभीम रुद्दा महरुद्दो कालओ महाकालो ।
तो दुम्मुह णिरयमुहा अहोमुहो णारदा एदे ॥ ८३४ ॥

भीमो महाभीमः रुद्रो महारुद्रो कालो महाकालः ।
ततो दुर्मुखो निरयमुखः अधोमुखो नारदा एते ॥ ८३४ ॥

भीम । भीमो महाभीमो रुद्रो महारुद्रः कालो महाकालस्ततो दुर्मुखो नरकमुखोऽधोमुख इत्येते नव नारदाः ॥ ८३४ ॥

कलहप्पिया कदाइं धम्मरदा वासुदेवसमकाला ।
भव्वा णिरयगदिं ते हिंसादोसेण गच्छंति ॥ ८३५ ॥

कलहप्रियाः कदाचिद्धर्मरताः वासुदेवसमकालाः ।
भव्याः नरकगतिं ते हिंसादोषेण गच्छंति ॥ ८३५ ॥

कलह । कलहप्रियाः कदाचिद्धर्मरताः वासुदेवसमकाला भव्यास्ते हिंसादोषेण नरकगतिं गच्छंति ॥ ८३५ ॥

इदानीं रुद्राणां संज्ञापूर्वकं संख्यामाह;—

भीमावलि जिदसत्तू रुद्द विसालणयण सुप्पदिट्ठचला ।
तो पुंडरीय अजिदंधर जिदणाभीय पीड सच्चइजो ८३६

भीमावलिः जितशत्रुः रुद्रः विशालनयनः सुप्रतिष्ठोऽचलः ।
ततः पुंडरीक अजितंधरो जितनाभिः पीठः सत्यकिजः ८३६

भीमा । भीमावलिर्जितशत्रुः रुद्रो विशालनयनः सुप्रतिष्ठोऽचलस्ततः पुंडरीकोऽजितंधरो जितनाभिः पीठः सत्यकात्मज इत्येते एकादश रुद्राः स्युः ॥ ८३६ ॥

अथ तैः प्रवर्तितकालमाह;—

उसहदुकाले पढमदु सत्तण्णे सत्त सुविहिपहुदीसु ।
पीडो संतिजिणिंदे वीरे सच्चइसुदो जादो ॥ ८३७ ॥

वृषभद्विकाले प्रथमद्वौ सप्तान्ये सप्त सुविधिप्रभृतिषु ।
पीठः शांतिजिनेंद्रे वीरे सत्यकिसुतो जातः ॥ ८३७ ॥

उसह । वृषभाजितयोः काले प्रथमद्वितीयौ भवतः ततः परमन्ये सप्त सप्त सुपुष्पदंतादिजिनकालेषु च भवंतीति । पीठः शांतिजिनेंद्रकाले स्यात् । सत्याकिसुतो वीरजिनेंद्रकाले जातः ॥ ८३७ ॥

अथ तेषां शरीरोत्सेधमाह;—

पणसय पण्णूणसयं पंचसु दसहीणमट्ठ चउवीसं ।
तक्कायधणुस्सेहो सच्चइतणयस्ससत्तकरा ॥ ८३८ ॥

पंचशतं पंचाशदूनशतं पंचसु दशाहीनं अष्ट चतुर्विंशतिः ।
तत्कायधनुरुत्सेधः सत्यकितनयस्य सप्तकरः ॥ ८३८ ॥

पण । तेषां शरीरोत्सेधः क्रमेण पंचशतचापानि ५०० तान्येव पंचाशदूनानि ४५० शतचापानि १०० ततः परं पंचसु दशहीनानि । ९०।८०।७०।६०।५०। अष्टाविंशतिचापानि २८ चतुर्विंशतिचापानि २४ सत्यकतनयस्य तु सप्त हस्ताः स्युः ॥ ८३८ ॥

अथ तेषामायुष्यमाह;—

तेसीदिगिसत्तरि बिगि लक्खा पुव्वाणि वास लक्खाओ
चुलसीदि सट्ठि दसु दसहीणदलिगि वस्सणवसट्ठी ॥

त्र्यशीतिरेकसप्ततिः द्व्येकं लक्षपूर्वाणि वर्षलक्षानि ।
चतुरशीतिः षष्ठिः द्वयोः दशहीनदलैकं वर्षनवषष्ठिः ८३९

तेसी । तेषामायुः क्रमेण त्र्यशीति ८३ लक्षपूर्वाणि, एकसप्तति ७१ लक्षपूर्वाणि, द्वि २ लक्षपूर्वाणि, एकलक्षपूर्वाणि । ततः परं चतुरशीति ८४ लक्षवर्षाणि, षष्ठि ६० लक्षवर्षाणि इतो द्वयोर्दश दशहीनानि ५०।४० ल. तद्दलप्रमितानि २० ल. एकलक्षवर्षाणि १ ल नवषष्ठिवर्षाणि ६९ स्युः ॥ ८३९ ॥

इतस्तैरापन्नगतिविशेषमाह;—

पढमदु माघविमण्णे पण मघवि अट्ठमो दु रिट्ठमहिं ।
दो अंजणं पवण्णा मेघं सच्चइतणू जादो ॥ ८४० ॥

प्रथमद्वौ माघवीमन्ये पंच मघवीमष्टमस्तु अरिष्टमहीं ।
द्वौ अंजनां प्रपन्नौ मेघां सत्यकितनुर्जातः ॥ ८४० ॥

पढम । तेषु प्रथमद्वितीयौ माघवीं ७ मापतुः, ततोन्ये पंच मघवीं ६ मापुः, अष्टमस्त्वरिष्टं ५ महीमाप, ततः परं द्वावंजनां ४ प्रपन्नौ, सत्यकतनूजातो मेघां ३ गतः ॥ ८४० ॥

अथ तेषां विशेषस्वरूपमाह;—

विज्जाणुवादपढणे दिट्ठफला णट्ठसंजमा भव्वा ।
कदिचि भवे सिज्झंति हु गहिदुज्झियसम्ममहिमादो ॥

विद्यानुवादपठने दृष्टफला नष्टसंयमा भव्याः ।
कतिचिद्भवेषु सिध्यंति हि गृहीतोज्झितसम्यमहिम्नः ॥८४१॥

विज्जा । विद्यानुवादपठने दृष्टफला नष्टसंयमा भव्यास्ते गृहीतोज्झितसम्यक्त्वमाहात्म्यात् कतिचिद्भवेषु सिध्यंति ॥ ८४१ ॥

अथ चक्र्यर्धचक्रिरुद्राणां वर्तनाकालं पुनरपि युगपदेव रचनाविशेषेण गाथापंचकेनाह;—

जिणसमकोट्ठविदा समकाले सुण्णहेट्ठिमे रचिदा ।
उहयजिणंतरजादा सण्णेया चक्कहररुद्दा ॥ ८४२ ॥

जिनसमकोष्ठस्थापिताः समकाले शून्याधस्तते रचिताः।
उभयजिनांतरजाता संज्ञेया चक्रधररुद्राः॥ ८४२॥

जिण। जिनेंद्राणां समकोष्ठे स्थापिताश्चक्र्यर्धचक्रिरुद्राः तेषां समकाले जाता इति ज्ञातव्याः शून्याधस्तनभागे रचितास्ते उभयजिनांतराले जाता इति ज्ञातव्याः॥ ८४२॥

तेषां कोष्ठानां विन्यासक्रमः कथमिति चेत्;—

पण्णर जिण खदु तिजिणा सुण्णदु
जिण गगणजुगल जिण खदुगं।
जिण खं जिण खं दुजिणा
इदि चोत्तीसालया णेया॥ ८४३॥

पंचदशजिना खद्वयं त्रिजिनाः शून्यद्वयं जिनः गगनयुगलं जिनः खद्वयं।
जिनः खं जिनः खं द्विजिनौ इति चतुस्त्रिंशदालया ज्ञेयाः॥ ८४३॥

पण्णर। पंचदशजिनास्तत्पुरस्ताच्छून्यद्वयं ततस्त्रयो जिनाः ततः शून्यद्वयं ततः पुनर्जिनः ततः शून्ययुगलं ततो जिनस्ततः शून्यद्वयं ततो जिनस्ततः शून्यं ततो जिनस्ततः शून्यं द्वौ जिनौ इति पंक्तिक्रमेण चतुस्त्रिंशत्कोष्ठा ज्ञातव्याः॥ ८४३॥

तदधस्तनपंक्तौ किमिति चेत्;—

चक्किदु तेरस सुण्णा छच्चक्की गयणतिदय चक्की खं।
चक्की णभदुग चक्की गयणं चक्कहर सुण्णदुगं॥ ८४४॥

चक्रिद्वौ त्रयोदशशून्यानि षट्चक्रिणः गगनत्रितयं चक्री खं।
चक्री नभोद्विकं चक्री गगनं चक्रधरः शून्यद्वयं॥ ८४४॥

चक्कि। चक्रिणौ द्वौ तत्पुरस्तात् त्रयोदशशून्यानि, ततः षट्चक्रिण-

स्ततो गगनत्रयं, ततश्चक्री ततः खं ततश्चक्री ततो नभोद्विकं ततश्चक्री ततो गगनं ततश्चक्रधरः ततः शून्यद्वयमित्येवं स्थापनीयं ॥ ८४४ ॥

दसगयणपंचकेसवछस्सुण्णा पउमणाभणभविण्हू ।
गयणति केसव सुण्णदु मुरारि सुण्णत्तियं कमसो ॥

दशगगनं पंचकेशवाः षट्शून्यानि पद्मनाभनभोविष्णुः ।
गगनत्रयं केशवः शून्यद्वयं मुरारिः शून्यत्रयं क्रमशः ॥ ८४५ ॥

दस । तृतीयपंक्तौ तु दशशून्यानि ततः पुरस्तात् पंचकेशवाः ततः षट्शून्यानि ततः केशवस्ततो नभस्ततो विष्णुस्ततो गगनत्रयं ततः केशवस्ततः शून्यद्वयं ततो मुरारिस्ततः शून्यत्रयं इत्येवं क्रमेण स्थापनीयं ॥८४५॥

रुद्दुगं छस्सुण्णा सत्त हरा गयणजुगलमीसाणो ।
पण्णर णभाणि तत्तो सच्चइतणओ महावीरे ॥ ८४६ ॥

रुद्रद्विकं षट्शून्यानि सप्तहराः गगनयुगलमीशानः ।
पंचदशनभांसि ततः सत्यकीतनयः महावीरे ॥ ८४६ ॥

रुद्द । चतुर्थपंक्तौ पुना रुद्रौ द्वौ ततः षट् शून्यानि ततः सप्तरुद्रास्ततो गगनयुगलं ततः ईशानस्ततः पंचदशनभांसि ततः सत्यकतनयः श्रीमहावीराजिनकाले स्यात् । इत्येवं क्रमेण संस्थापनीयं ॥ ८४६ ॥

अथ तीर्थकरशरीरवर्णादिकं तद्वंशं च गाथात्रयेणाह;—

पउमप्पहवसुपुज्जा रत्ता धवला हु चंदपहसुविही ।
णीला सुपासपासा णेमीमुणिसुव्वया किण्हा ॥ ८४७ ॥

पद्मप्रभवासुपूज्यौ रक्तौ धवलौ हि चंद्रप्रभसुविधी ।
नीलौ सुपार्श्वपार्श्वौ नेमिमुनिसुव्रतौ कृष्णौ ॥ ८४७ ॥

पउम । पद्मप्रभवासुपूज्यौ रक्तवर्णौ चंद्रप्रभपुष्पदंतौ धवलवर्णौ सुपार्श्वपार्श्वजिनौ नीलवर्णौ नेमिमुनिसुव्रतौ कृष्णवर्णौ ॥ ८४७ ॥

सेसा सोलस हेमा वसुपुज्जो मल्लिणेमिपासजिणा।
वीरो कुमारसवणा महवीरो णाहकुलतिलओ॥ ८४८॥

शेषा; षोडश हेमा वासुपूज्यो मल्लिनेमिपार्श्वजिनाः।
वीरः कुमारश्रमणा महावीरो नाथकुलतिलकः॥ ८४८॥

सेसा। शेषाः षोडशतीर्थंकरा हेमवर्णाः वासुपूज्यो मल्लिर्नेमिपार्श्वजिनौ वीराजिन इति पंच कुमारश्रमणाः महावीरो नाथकुलतिलकः॥ ८४८॥

पासो दु उग्गवंसो हरिवंसो सुव्वओ वि णेमीसो।
धम्मजिणो कुंथु अरा कुरुजा इक्खाउया सेसा॥८४९॥

पार्श्वस्तु उग्रवंशः हरिवंशः सुव्रतोपि नेमीशः।
धर्मजिनः कुंथुः अरः कुरुजाः इक्ष्वाकवः शेषाः॥ ८४९॥

पासो। पार्श्वजिनस्तूग्रवंशो मुनिसुव्रतो नेमीश्वरश्च हरिवंशः धर्मकुंथ्वरजिनाः कुरुवंशजाः शेषाः इक्ष्वाकुवंशजाः॥ ८४९॥

इदानीं शककल्किनोरुत्पत्तिमाह;—

पणछस्सयवस्सं पणमास जुदं गमिय वीरणिव्वुइदो।
सगराजो तो कक्की चदुणवतियमहियसगमासं॥८५०॥

पंचषट्शतवर्षं पंचमासयुतं गत्वा वीरनिर्वृतेः।
शकराजो ततः कल्की चतुर्णवत्रिकमधिकसप्तमासं॥ ८५०॥

पण। श्रीवीरनाथनिर्वृतेः सकाशात् पंचोत्तरषट्छतवर्षाणि ६०५ पंच ५ मासयुतानि गत्वा पश्चात् विक्रमांकशकराजो जायते। तत उपरि चतुर्णवत्युत्तरत्रिंशत् ३९४ वर्षाणि सप्तमासाधिकानि गत्वा पश्चात् कल्की जायते॥ ८५०॥

इदानीं कल्किनः कृत्यं गाथाषट्केनाह;—

सो उम्मग्गाहिमुहो चउम्मुहो सदरिवासपरमाऊ।
चालीस रज्जओ जिदभूमी पुच्छइ समंतिगणं॥८५१॥

स उन्मार्गाभिमुखः चतुर्मुखः सप्ततिवर्षपरमायुष्यः ।
चत्वारिंशत् राज्यः जितभूमिः पृच्छति स्वमंत्रिगणं ॥ ८५१॥

सो । स कल्की उन्मार्गाभिमुखश्चतुर्मुखाख्यः सप्ततिवर्षपरमायुष्यश्चत्वारिंशद्वर्ष ४० राज्यो जितभूमिः सन् स्वमंत्रिगणं पृच्छति ॥ ८५१ ॥

अम्हाणं के अवसा णिग्गंथा अत्थि केरिसायारा ।
णिद्धणवत्था भिक्खाभोजी जहसत्थमिदिवयणे ८५२

अस्माकं के अवशा निर्ग्रंथाः संति कीदृशाकाराः ।
निर्धनवस्त्रा भिक्षाभोजिनः यथाशास्त्रमिति वचने ॥ ८५२ ॥

अम्हा । अस्माकं के अवशा इति ? मंत्रिणः कथयंति–निर्ग्रंथाः संति इति । पुनः पृच्छति ते कीदृशाकारा इति ? निर्धनवस्त्रा यथाशास्त्रं भिक्षाभोजिनः । इति मंत्रिणः प्रतिवचनं श्रुत्वा ॥ ८५२ ॥

तप्पाणिउडे णिवडिद पढमं पिंडं तु सुक्कमिदि गेज्झं ।
इदि णियमे सचिवकदे चत्ताहारा गया मुणिणो ॥८५३

तत्पाणिपुटे निपतितं प्रथमं पिंडं तु शुल्कमिति ग्राह्यं ।
इति नियमे सचिवकृते त्यक्ताहारा गताः मुनयः ॥ ८५३ ॥

तप्पाणि । तेषां निर्ग्रंथानां पाणिपुटे निपतितं प्रथमपिंडं शुल्कमिति ग्राह्यमिति राज्ञो नियमे साचिवेन कृते सति त्यक्ताहाराः संतो मुनयो गताः ॥ ८५३ ॥

तं सोढुमक्खमो तं णिहणदि वज्जाउहेण असुरवई ।
सो भुंजदि रयणपहे दुक्खग्गाहेक्कजलरासिं ॥ ८५४ ॥

तं सोढुमक्षमः तं निहंति वज्रायुधेन असुरपतिः ।
स भुंक्ते रत्नप्रभायां दुःखग्राह्येकजलराशिं ॥ ८५४ ॥

तं। तमपराधं सोढुमक्षमोऽसुरपतिश्चमरेंद्रो वज्रायुधेन तं राजानं निहंति स मृत्वा रत्नप्रभाया दुःखग्राह्येकजलराशिं भुंक्ते ॥ ८५४ ॥

तब्भयदो तस्स सुतो अजिदंजयसण्णिदो सुरारिं तं।
सरणं गच्छइ चेलयसण्णाए सह समहिलाए ॥ ८५५ ॥

तद्भयतः तस्य सुतः अजितंजयसंज्ञितः सुरारिं तं।
शरणं गच्छति चेलकासंज्ञया सह स्वमहिलया ॥ ८५५ ॥

तब्भय। तस्मादसुरपतिभयात्तस्य राज्ञः सुतोऽजितंजयसंज्ञितः चेलकासंज्ञया स्वमहिलया सहितं सुरारिशरणं गच्छति ॥ ८५५ ॥

सम्मद्दंसणरयणं हिययाभरणं च कुणदि सो सिग्घं।
पच्चक्खं दट्ठूणिह सुरकयजिणधम्ममाहप्पं ॥ ८५६ ॥

सम्यग्दर्शनरत्नं हृदयाभरणं च करोति सः शीघ्रं।
प्रत्यक्षं दृष्ट्वा इह सुरकृतजिनधर्ममाहात्म्यं ॥ ८५६ ॥

सम्म। स पुनः सुरकृतजिनधर्ममाहात्म्यं प्रत्यक्षं दृष्ट्वा शीघ्रं सम्यग्दर्शनरत्नं हृदयाभरणं करोति ॥ ८५६ ॥

अथ चरमकल्कीस्वरूपं गाथापंचकेनाह;—

इदि पडिसहस्सवस्सं वीसे कक्कीणदिक्कमे चरिमो।
जलमंथणो भविस्सदि कक्की सम्मग्गमत्थणओ ॥ ८५७ ॥

इति प्रतिसहस्रवर्षं विंशतौ कल्कीनामतिक्रमे चरमः।
जलमंथनो भविष्यति कल्की सन्मार्गमंथनः ॥ ८५७ ॥

इदि। इत्येवं प्रतिसहस्रवर्षं विंशतिकाल्किनामातिक्रमे सति चरमो जलमंथनाख्यः सन्मार्गमंथनः कल्की भविष्यति ॥ ८५७ ॥

इह इंदरायसिस्सो वीरंगद साहु चरिम सव्वसिरी।
अज्जा अग्गिल सावय वरसाविय पंगुसेणावि ॥ ८५८ ॥

इह इंद्रराजशिष्यो वीरांगदः साधुश्चरमः सर्वश्रीः ।
आर्या अग्गिलः श्रावकः वरश्राविका पंगुसेनापि ॥ ८५८ ॥

इह । तस्मिन्काले इंद्रराजाचार्यशिष्यो वीरांगदश्चरमः साधुः आर्यका सर्वश्रीः श्रावकोऽग्गिलो वरश्राविका पंगुसेनापि ॥ ८५८ ॥

पंचमचरिमे पक्खडमासतिवासोवसेसए तेण ।
मुणिपढमपिंडगहणे सण्णसणं करिय दिवसतियं॥८५९

पंचमचरमे पक्षाष्टमासत्रिवर्षे अवशेषे तेन ।
मुनिप्रथमपिंडग्रहणे संन्यसनं कृत्वा दिवसत्रयं ॥ ८५९ ॥

पंचम । ते चत्वारः पंचमकालचरमे एकपक्षे अष्टमासे त्रिवर्षे अवशेषो सति तेन राज्ञा मुनिप्रथमापिंडग्रहणे कृते सति दिवसत्रयं संन्यसनं कृत्वा ॥ ८५९ ॥

सोहम्मे जायंते कत्तियअमवास सादि पुव्वण्हे ।
इगिजलहिठिदी मुणिणो सेसतिए साहियं पल्लं॥८६०॥

सौधर्मे जायंते कार्तिकामावस्यां स्वातौ पूर्वाह्णे ।
एकजलधिस्थितयो मुनयः शेषत्रयः साधिकं पल्यं ॥ ८६० ॥

सोहम्मे । तत्र मुनयः कार्तिकामावस्यां स्वातिनक्षत्रे पूर्वाह्णे एकसागरोपमायुषः सौधर्मे जायंते शेषास्त्रयस्तत्रैव साधिकपल्यायुषो जायंते ॥८६०॥

तव्वासरस्स आदीमज्झंते धम्मरायअग्गीणं ।
णासो तत्तो मणुसा णग्गा मच्छादिआहारा ॥ ८६१ ॥

तद्वासरस्य आदिमध्यांते धर्मराजाग्नीनां ।
नाशः ततो मनुष्या नग्ना मत्स्याद्याहाराः ॥ ८६१ ॥

तव्वासर । तद्वासरस्यादौ मध्ये अंते च यथाक्रमं धर्मस्य राज्ञोऽग्नेश्च नाशः । ततः परं मनुष्या नग्ना मत्स्याद्याहाराः ॥ ८६१ ॥

अथ धर्मादीनां विनाशकारणमाह;—

पोग्गलअइरुक्खादो जलणे धम्मे णिरासएण हदे।
असुरवइणा णरिंदे सयलो लोओ हवे अंधो ॥ ८६२ ॥

पुद्गलातिरौक्ष्यात् ज्वलने धर्मे निराश्रयेण हते।
असुरपतिना नरेंद्रे सकलो लोको भवेत् अंधः ॥ ८६२ ॥

पोग्गल। पुद्गलानामतिरौक्ष्यात् ज्वलने नष्टे निराश्रयेण धर्मे हते असुरपतिना नरेंद्रे च हते सति पश्चात् सकलो लोकोंधो भवेत् ॥ ८६२ ॥

अथ तत्रस्थजीवानां गत्यंतरगमनागमनस्वरूपमाह;—

एत्थ मुदा णिरयदुगं णिरयतिरक्खादु जणणमेत्थ हवे।
थोवजलदाइ मेहा भू णिस्सारा णरा तिव्वा ॥ ८६३ ॥

अत्र मृता निरयद्वयं नरकातिर्यग्भ्यां जननमत्र भवेत्।
स्तोकजलदायिनो मेघा भूः निस्सारा नरास्तीव्राः ॥ ८६३ ॥

एत्थ। अत्र मृता नरकद्वयं गच्छंति नान्यत्र, नरकात्तिर्यग्गतेश्चागतानामेवात्र जननं भवेत् नान्येषां। अत्र मेघाः स्तोकजलदायिनो भूः निःसारा नरास्तीव्राः ॥ ८६३ ॥

इदानीमतिदुःषमचरमवर्तनाक्रमं गाथाचतुष्टयेनाह;—

संवत्तयणामणिलो गिरितरुभूपहुदि चुण्णणं करिय।
भमदि दिसंतं जीवा मरंति मुच्छंति छट्ठंते ॥ ८६४ ॥

संवर्तकनामानिलः गिरितरुभूप्रभृतीनां चूर्णनं कृत्वा।
भ्रमति दिशांतं जीवा म्रियंते मूर्छंति षष्ठांते ॥ ८६४ ॥

संवत्तय। संवर्तकनामानिलः षष्ठकालांते गिरितरुभूप्रभृतीनां चूर्णनं कृत्वा दिशांतं भ्रमति। तत्रस्था जीवा मूर्छंति म्रियंते च ॥ ८६४ ॥

खगगिरिगंगदुवेदी खुद्दबिलादिं विसंति आसण्णा।
णेंति दया खचरसुरा मणुस्सजुगलादिबहुजीवे ॥८६५॥

खगगिरिगंगाद्वयवेदीं क्षुद्रविलादिं विशंति आसन्नाः।
नयंति दयाः खचरासुराः मनुष्ययुगलादिबहुजीवान् ॥ ८६५ ॥

खग। विजयार्धगंगासिंधूनां वेदीं तत्क्षुद्राबिलादिकं च तदासन्नाः प्राणिनो विशंति सदयाः खचराः सुराश्च मनुष्ययुगलादिबहुजीवान् नयंति च ॥ ८६५ ॥

छट्ठमचरिमे होंति मरुदादी सत्तसत्त दिवसवही।
अदिसीदखारविसपरुसग्गीरजधूमवरिसाओ ॥८६६॥

षष्ठचरमे भवंति मरुदादयः सप्तसप्त दिवसावधि।
अतिशीतक्षारविषपरुषाग्निरजोधूमवर्षाः ॥ ८६६ ॥

छट्ठम। षष्ठकालचरमे मरुदादयः सप्त सप्त दिवसावधि ४९ भवंति। ते के ? मरुदतिशीतक्षारविषपरुषाग्निरजोधूमवृष्टयः ॥ ८६६ ॥

तेहिंतो सेसजणा णस्संति विसग्गिवरिसदड्ढमही।
इगिजोयणमेत्तमधो चुण्णीकिज्जदि हु कालवसा॥८६७

तेभ्यः शेषजनाः नश्यंति विषाग्निवर्षादग्धमही।
एकयोजनमात्रमधः चूर्णीक्रियते हि कालवशात् ॥ ८६७ ॥

तेहिं। तेभ्यो वर्षेभ्योऽवशेषजनाः नश्यंति विषाग्निवर्षदग्धमही एकयोजनमात्रमधः कालवशात् चूर्णीभवति ॥ ८६७ ॥

इदानीमुत्सर्पिणीप्रवेशक्रमं गाथात्रयेणाह;—

उस्सप्पिणीयपढमे पुक्खरखीरघदमिदरसा मेघा।
सत्ताहं वरसंति य णग्गा मत्तादि आहारा ॥ ८६८ ॥

उत्सर्पिणीप्रथमे पुष्करक्षीरघृतामृतसान् मेघाः ।
सप्ताहं वर्षंति च नग्ना मृताद्याहाराः ॥ ८६८ ॥

उस्स । उत्सर्पिणीप्रथमकाले मेघाः उदकक्षीरघृतामृतरसान् सप्त सप्ताहं वर्षंति । तत्कालस्था जीवा नग्ना मृत्तिकाद्याहाराः ॥ ८६८ ॥

उण्हं छंडदि भूमी छविं सणिद्धत्तमोसहिं धरदि ।
वल्लिलदागुम्मुतरू वड्ढदि जलादिवरसेहिं ॥ ८६९ ॥

उष्णं त्यजति भूमिः छविं सस्निग्धत्वमौषधिं धरति ।
वल्लिलतागुल्मतरवो वर्धंते जलादिवर्षैः ॥ ८६९ ॥

उण्हं । जलादिवर्षैर्भूमिरुष्णं त्यजति छविं सस्निग्धत्वं धान्याद्योषधिं च धरति । वल्ल्याद्यो वर्धंते तत्र भूमौ पादं मुक्त्वा पसरंती वल्ली वृक्षाश्रयेण प्रसरंती लता कदाचिदपि स्थूलस्कंधतामप्राप्नुवंतो गुल्माः स्थूलस्कंधयोग्या वृक्षाः एते वर्धंते जलादिवर्षैः ॥ ८६९ ॥

णदितीरगुहादिठिया भूसीयलगंधगुणसमाहूया ।
णिग्गमिय तदो जीवा सव्वे भूमिं भरंति कमे ॥८७०॥

नदीतीरगुहादिस्थिता भूशीतलगंधगुणसमाहूताः ।
निर्गत्य ततो जीवाः सर्वे भूमिं भरंति क्रमेण ॥ ८७० ॥

णदि । नदीतीरगुहादिस्थिता जीवा भूशीतलगंधगुणसमाहूताः संतः सर्वे ततो निर्गत्य क्रमेण भूमिं भरंति ॥ ८७० ॥

इदानीमुत्सर्पिणीद्वितीयकालादिवर्तनक्रममाह;—

उस्सप्पिणीयबिदिए सहस्ससेसेसु कुलयरा कणयं ।
कणयप्पहरायद्धयपुंगव तह णलिण पउम महपउमा ॥

उत्सर्पिणीद्वितीये सहस्रशेषेषु कुलकराः कनकः ।

कनकप्रभराजध्वजपुंगवाः तथा नलिनाः पद्माः महापद्मः ॥ ८७१ ॥

उस्स । उत्सर्पिणीद्वितीयकाले सहस्रवर्षे अवशिष्टे सति कुलकरा भवंति । ते तु कनकः कनकप्रभः कनकराजः कनकध्वजः कनकपुंगवस्तथा नलिनो नलिनप्रभो नलिनराजो नलिनध्वजो नलिनपुंगवः पद्मः पद्मप्रभः पद्मराजः पद्मध्वजः पद्मपुंगवो महापद्म इति षोडश मनवः स्युः ॥ ८७१ ॥

अथ तेषां कृत्यं तृतीयकालस्थत्रिषष्टिशलाकापुरुषांश्च गाथाचतुष्टयेनाह;-

तस्सोलसमणुहिं कुलायाराणलपक्कपहुदिया होंति ।

तेवट्ठिणरा तदिए सेणियचर पढमतित्थयरो ॥ ८७२ ॥

तत्षोडशमनुभिः कुलाचारानलपक्वप्रभृतयो भवंति ।

त्रिषष्टिनरास्तृतीये श्रेणिकचरः प्रथमतीर्थकरः ॥ ८७२ ॥

तस्सोलस । तैः षोडशमनुभिः कुलाचारानलपक्वप्रभृतयो भवंति । तृतीये काले पुनस्त्रिषष्टिशलाकाः पुरुषा भवंति । तत्र श्रेणिकचरः प्रथमतीर्थकरः स्यात् ॥ ८७२ ॥

महपउमो सुरदेवो सुपासणामो सयंपहो तुरियो ।

सव्वप्पभूद देवादीपुत्तो होहि कुलपुत्तो ॥ ८७३ ॥

महापद्मः सुरदेवः सुपार्श्वनामा स्वयंप्रभः तुर्यः ।

सर्वात्मभूतो देवादिपुत्रो भवति कुलपुत्रः ॥ ८७३ ॥

महपउमो । महापद्मः सुरदेवः सुपार्श्वनामा स्वयंप्रभस्तुर्यः सर्वात्मभूतो देवपुत्रः कुलपुत्रो भवति ॥ ८७३ ॥

तित्थयरुदंक पोट्ठिल जयकित्ती मुणिपदादिसुव्वदओ ।

अरणिप्पावकसाया विउलो किण्हचरणिम्मलओ८७४

तीर्थंकर उदंकः प्रोष्ठिलः जयकीर्तिः मुनिपदादिसुव्रतः।
अरनिष्पापकषाया विपुलः कृष्णचरो निर्मलः॥ ८७४॥

तित्थये। उदंकतीर्थंकरः प्रोष्ठिलो जयकीर्तिर्मुनिसुव्रतोऽरो निष्पापो निष्कषायो विपुलः कृष्णचरो निर्मलः॥ ८७४॥

चित्तसमाहीगुत्तो सयंभु अणिवट्टओ य जय विमलो।
तो देवपाल सच्चइपुत्तचरोऽणंतविरियंतो॥ ८७५॥

चित्रसमाधिगुप्तः स्वयंभूरनिवर्तकश्च जयो विमलः।
ततो देवपालः सत्यकिपुत्रचरोऽनंतवीर्योन्तः॥ ८७५॥

चित्त। चित्रगुप्तः समाधिगुप्तः स्वयंभूरनिवर्तकश्च जयो विमलस्ततो देवपालस्सत्यकिपुत्रचरोनंतवीर्यश्चरमः। एते चतुर्विंशतितीर्थंकराः स्युः॥ ८७५॥

अथ तत्र प्रथमांतिमतीर्थंकरयोरायुरुत्सेधावाह;—

पढमजिणो सोलससयवस्साऊ सत्तहत्थदेहुदओ।
चरिमो दु पुव्वकोडीआऊ पंचसयधणुतुंगो॥ ८७६॥

प्रथमजिनः षोडशशतवर्षायुः सप्तहस्तदेहोदयः।
चरमः तु पूर्वकोट्यायुः पंचशतधनुस्तुंगः॥ ८७६॥

पढम। प्रथमजिनः षोडशोत्तरशतवर्षायुः ११६ सप्तहस्तदेहोदयः चरमो जिनः पूर्वकोट्यायुः पंचशतधनुस्तुंगः॥ ८७६॥

अथ चक्र्यर्धचक्रिबलदेवानां नामानि गाथाचतुष्केनाह;—

चक्की भरहो दीहादिमदंतो मुत्तगूढदंता य।
सिरिपुव्वसेणभूदी सिरिकंतो पउम महपउमा॥८७७॥

चक्रिणः भरतः दीर्घादिमदंतो मुक्तगूढदंतौ च।
श्रीपूर्वसेनभूती श्रीकांतः पद्मो महापद्मः॥ ८७७॥

चक्कि । आदौ चक्रिणः कथ्यंते—भरतो दीर्घदंतो मुक्तदंत गूढदंतश्च श्रीषेणः श्रीभूतिः श्रीकांतिः पद्मो महापद्मः ९ ॥ ८७७ ॥

तो चित्तविमलवाहण अरिट्ठसेणो बलो तदो चंदो ।
महचंद चंदहर हरिचंदा सीहादिचंद वरचंदा ॥ ८७८ ॥

ततः चित्रविमलवाहनौ अरिष्टसेनः बलाः ततः चंद्रः ।
महाचंद्रः चंद्रधरः हरिचंद्रः सिंहादिचंद्रो वरचंद्रः ॥ ८७८ ॥

तो । ततश्चित्रवाहनो विमलवाहनो अरिष्टसेनः इति द्वादश चक्रिणः । ततो बलदेवाः कथ्यंते—चंद्रो महाचंद्रश्चंद्रधरो हरिचंद्रः सिंहचंद्रो वरचंद्रः ॥ ८७८ ॥

तो पुण्णचंदसुहचंदा सिरिचंदो य केसवा णंदी ।
तं पुव्वमित्तसेणा णंदी भूदी यचलणामा ॥ ८७९ ॥

ततः पूर्णचंद्रः शुभचंद्रः श्रीचंद्रः च केशवाः नंदी ।
तत्पूर्वमित्रसेनौ नंदिभूतिश्चाचलनामा ॥ ८७९ ॥

तो पुण्ण । ततः पूर्णचंद्रः शुभचंद्रः श्रीचंद्रश्चेति नवबलदेवाः । इतः परं केशवाः कथ्यंते-नंदी नंदिमित्रो नंदिषेणो नंदिभूतिश्चाचलनामा ॥८७९॥

महअइबला तिविट्ठो दुविट्ठ पडिसत्तुणो य सिरिकंठो ।
हरिणीलअस्ससुसिहिकंठा अस्सहयमोरगीवा य ८८०

महातिबलौ त्रिपृष्ठः द्विपृष्टः प्रतिशत्रवः च श्रीकंठः ।
हरिनीलाश्वसुशिखिकंठाः अश्वहयमयूरग्रीवाश्च ॥ ८८० ॥

मह । महाबलोतिबलस्त्रिपृष्टो द्विपृष्ट ४ श्चेति नव वासुदेवाः । इतस्तत्प्रतिशत्रवः कथ्यंते—श्रीकंठो हरिकंठो नीलकंठोऽश्वकंठोः सुकंठः शिखिकंठोऽश्वग्रीवो हयग्रीवो मयूरग्रीवश्चेति नव प्रतिवासुदेवाः ॥ ८८० ॥

इदानीमुक्तार्थानां निगमनमाह;—

एसो सव्वो भेओ परूविदो विदियतदियकालेसु ।
पुव्वं व गहीदव्वो सेसो तुरियादिभोगमही ॥ ८८१ ॥

एषः सर्वो भेदः प्ररूपितः द्वितीयतृतीयकालयोः ।
पूर्वमिव गृहीतव्यः शेषः तुर्यादिभोगमही ॥ ८८१ ॥

एसो । एष सर्वोपि भेद उत्सर्पिणीद्वितीयतृतीयकालयोः प्ररूपितः, शेषः चतुर्थादिभोगमहीति पूर्वमिव ग्रहीतव्यः ॥ ८८१ ॥

एवं भरतैरावतक्षेत्रेषूक्तषट्कालान् क्षेत्रांतरे नियमेन योजयितुं गाथात्रयमाह;—

पढमादो तुरियोत्ति य पढमो कालो अवट्ठिदो कुरवे ।
हरिरम्मगे य हेमवदेरण्णवदे विदेहे य ॥ ८८२ ॥

प्रथमतः तुर्यांतं च प्रथमः कालः अवस्थितः कुर्वोः ।
हरिरम्यके च हैमवद्धैरण्यवतयोः विदेहे च ॥ ८८२ ॥

पढमा । प्रथमकालत आरभ्य चतुर्थकालपर्यंतं नियमः कथ्यते । कथं ? तत्र प्रथमः कालो देवोत्तरकुर्वोरवस्थित एव, द्वितीयः कालो हरिरम्यकक्षेत्रयोरवस्थित एव, तृतीयः कालो हैमवतहैरण्यवतक्षेत्रयोरवस्थित एव, चतुर्थकालो विदेहे चावस्थित एव ॥ ८८२ ॥

भरह इरावद पण पण मिलेच्छखंडेसु खयरसेढीसु ।
दुस्समसुसमादीदो अंतोत्ति य हाणिवड्ढी य ॥ ८८३ ॥

भरतःऐरावतः पंच पंच म्लेच्छखंडेषु खचरश्रेणिषु ।
दुःषमसुषमादितः अंत इति च हानिवृद्धी च ॥ ८८३ ॥

भरह । भरतैरावतः स्थितः पंचपंचम्लेच्छखंडेषु खचरश्रेणिषु च दुःषमसुषमस्यादितः आरभ्य तस्यैवांतपर्यंतं अवसर्पिण्यामायुरादेर्हानिः स्यात् ।

तत्र पंचमषष्ठकालौ न प्रवर्तेते । उत्सर्पिण्यां तु तृतीयकालस्यादित आरभ्य तस्यैवांतपर्यंतं वृद्धिरेव स्यात् । तत्र चतुर्थपंचमषष्ठकाला न प्रवर्तंते ॥८८३॥

पढमो देवे चरिमो णिरए तिरिए णरेवि छक्काला ।
तदियो कुणरे दुस्समसरिसो चरिमुवहिदीवद्धे ॥८८४॥

प्रथमः देवे चरमः निरये तिरश्चि नरेपि षट्कालाः ।
तृतीयः कुनरे दुःषमसदृशः चरमोदधिद्वीपार्धे ॥ ८८४ ॥

पढमो । देवगतौ प्रथमकालो वर्तते, नरके चरमकालो वर्तते, तिर्यग्गतौ मनुष्यगतौ च षट्काला वर्तंते, कुमनुष्यभोगभूमौ तृतीयकालो वर्तते, स्वयंभूरमणद्वीपार्धे तत्समुद्रे च दुःषमसदृशः कालो वर्तते ॥ ८८४ ॥

एवं जंबूद्वीपवर्णनं परिसमाप्य लवणार्णववर्णनमुपक्रममाणस्तयोर्मध्यस्थितप्राकारस्वरूपनिरूपणव्याजेन शेषद्वीपसमुद्रांतास्थितान् प्राकारान् गाथाद्वयेन निरूपयति;—

चउगोउरसंजुत्ता भूमिमुहे बार चारि अट्ठुदया ।
सयलरयणप्पया ते बेकोसवगाढया भूमिं ॥ ८८५ ॥

चतुर्गोपुरसंयुक्ता भूमिमुखे द्वादश चत्वारः अष्टोदयाः ।
सकलरत्नात्मकास्ते द्विकोशावगाढा भूमिं ॥ ८८५ ॥

चउ । चतुर्गोपुरसंयुक्ता भूमौ द्वादशयोजनव्यासा मुखे चतुर्योजनव्यासाः अष्टयोजनोदया सकलरत्नात्मकास्ते भूमिं द्विक्रोशोदयमवगाह्य स्थिताः ॥ ८८५ ॥

वज्जमयमूलभागा वेलुरियकयाइरम्मसिहरजुदा ।
दीवोवहीणमंते पायारा होंति सव्वत्थ ॥ ८८६ ॥

वज्रमयमूलभागा वैडूर्यकृतातिरम्यशिखरयुताः ।
द्वीपोदधीनामंते प्राकारा भवंति सर्वत्र ॥ ८८६ ॥

वज्ज। वज्रमयमूलभागाः वैडूर्यकृतातिरम्यशिखरयुताः प्राकाराः वेदिका इत्यर्थः। द्वीपानामुदधीनामंते सर्वत्र भवंति ॥ ८८६ ॥

अथ तेषां प्राकाराणामुपरि स्थितवेदिकां निरूपयति;—

पायाराणं उवरिं पुह मज्झे पउमवेदिया हेमी।
बेकोसपंचसयधणुतुंगा वित्थारया कमसो ॥ ८८७ ॥

प्राकाराणामुपरि पृथक् मध्ये पद्मवेदिका हैमी।
द्विक्रोशपंचशतधनुस्तुंगविस्तारा क्रमशः ॥ ८८७ ॥

पायाराणं। तेषां प्राकाराणामुपरि पृथक् पृथक् मध्ये द्विक्रोशोत्तुंगा पंचशतधनुर्व्यासा हेमी पद्मवेदिकास्ति ॥ ८८७ ॥

अथ वेदिकांतर्बहिःस्थितवनादिकं गाथाचतुष्केण निवेदयति;—

तिस्से अंतो बाहिं हेमसिलातलजुदं वणं रम्मं।
वावी पासादोवि य चित्ता अत्थंति तहिं वाणा ॥८८८॥

तस्याः अंतर्बहिः हेमशिलातलयुतं वनं रम्यं।
वाप्यः प्रासादा अपि च चित्रा आसते तत्र वानाः ॥ ८८८ ॥

तिस्से। तस्याः पद्मवेदिकाया अंतर्बहिर्हेमशिलातलयुतं रम्यं वनमस्ति तत्र चित्राः वाप्यः प्रासादाश्च संति। तत्र प्रासादेषु वानव्यंतरा आसते ८८८

वरमज्झजहण्णाणं वावीणं चाव विसद वित्थारा।
पण्णासूणं कमसो गाढा सगवासदसभागो ॥ ८८९ ॥

वरमध्यजघन्यानां वापीनां चापाः द्विशतं विस्ताराः।
पंचाशदूनं क्रमशो गाधः स्वकव्यासदशमभागः ॥ ८८९ ॥

वर । वरमध्यमजघन्यानां वापीनां विस्ताराः क्रमेण द्विशत २०० पंचाशत्पंचाशदूनचापाश्च १५०।१००। तासां गाधास्तु स्वकीयव्यासदशमभागः स्यात् । २०।१५।१०॥ ८८९ ॥

वासुदयादीहत्तं जहण्णपासादयस्स चावाणं ।
पण्णपणसदरिसयमिह दारे छव्वार चउगढो॥ ८९० ॥

व्यासोदयदीर्घत्वं जघन्यप्रासादस्य चापानां ।
पंचाशत्पंचसप्ततिशतं इह द्वारे षट् द्वादश चतुर्गाढः ॥ ८९० ॥

वासु । जघन्यप्रासादस्य व्यासोदयदीर्घत्वं यथासंख्यं पंचाशत् ५० पंचसप्तति ७५ शतचापाः १०० इह द्वारे व्यासोदयौ षट् ६ द्वादश १२ चापौ तद्गाधस्तु चतु ४ श्चापः ॥ ८९० ॥

मज्झिमउक्कस्साणं बिगुणा तिगुणा कमेण वासादी ।
दोद्दोदारा मणिमय णट्टणकीडादिगेहावि ॥ ८९१ ॥

मध्यमोत्कृष्टानां द्विगुणास्त्रिगुणाः क्रमेण व्यासादिः
द्विद्विद्वाराः मणिमया नर्तनक्रीडादिगेहा अपि ॥ ८९१ ॥

मज्झिम । मध्यमोत्कृष्टप्रासादानां व्यासादयः क्रमेण जघन्यव्यासादेर्द्विगुणास्त्रिगुणाश्च भवंति तद्द्वारेपि तथा ते जघन्यादयः प्रासादा द्विद्विद्वाराः तत्र माणिमया नर्तनक्रीडादिगेहा अपि च भवंति ॥ ८९१ ॥

इदानीं प्रकृतप्राकारद्वाराणां संख्यातद्व्यासादिकं चाह;—

विजयं च वैजयंतं जयंत अपराजियं च पुव्वादी ।
दारचउक्काणुदओ अडजोयणमद्धवित्थारा ॥ ८९२ ॥

विजयं च वैजयंतं जयंतमपराजितं च पूर्वादि ।
द्वारचतुष्काणामुदयः अष्टयोजनानि अर्धविस्ताराः ॥ ८९२ ॥

विजयं। विजयं च वैजयंतं जयंतमपराजितमिति प्राकाराणां पूर्वादि द्वाराणि। तेषां द्वारचतुष्काणामुदयोष्टयोजनानि विस्तारस्तदर्धयोजनानि ॥ ८९२ ॥

अथ तद्द्वारोपरिमस्वरूपादिकं गाथात्रयेणाह;—

तोरणजुददारुवरिं दुगवास चउक्कतुंग पासादो।
बारसहस्सायददलवासं विजयपुरमुवरि गयणतले॥८९३

तोरणयुतद्वारोपरि द्विव्यासः चतुष्कतुंगः प्रासादः।
द्वादशसहस्रायतदलव्यासं विजयपुरमुपरि गगनतले ॥ ८९३ ॥

तोरण। तेषां तोरणयुतचतुर्द्वाराणामुपरि द्वियोजनव्यासः चतुर्योजनोत्तुंगः प्रासादोस्ति, तस्योपरि गगनतले द्वादशसहस्र १२००० योजनायामं तद्दलव्यासं ६००० विजयाख्यं पुरमस्ति ॥ ८९३ ॥

एवं सेसतिठाणे विजयादिठिदी दु साहियं पल्लं।
जगदीमूले बारस दाराणि णदीण णिग्गम्मणे ॥८९४॥

एवं शेषत्रिस्थाने विजयादिस्थितिस्तु साधिकं पल्यं।
जगतीमूल्ये द्वादश द्वाराणि नदीनां निर्गमने ॥ ८९४ ॥

एवं। शेषे द्वारत्रयेप्येवं ज्ञातव्यम्। तत्पुरस्थितविजयादिव्यंतराणामायुष्यं साधिकपल्यं स्यात् पुनर्जगतीमूले सीतासीतोदावर्जितनदीनिर्गमने द्वादश द्वाराणि संति। सीतासीतोदयोः पुनः पूर्वापरद्वारेण निर्गमनत्वात् पृथग्द्वाराभावः ॥ ८९४ ॥

पायारंतब्भागे वेदिजुदं जोयणद्धवास वणं।
दारूणपरिहितुरियो विजयादीदारअंतरयं ॥ ८९५ ॥

प्राकारांतर्भागे वेदीयुतं योजनार्धव्यासं वनं।
द्वारोनपरिधितुर्यो विजयादिद्वारांतरं ॥ ८९५ ॥

पायारं। तत्प्राकारांतर्भागे वेदिकायुतं योजनार्धव्यासं वनमस्ति चतुर्द्वारव्यासं १६ जंबूद्वीपस्य सूक्ष्मपरिधौ ३१६२२८ न्यूनयित्वा ३१६२१२ चतुर्भिर्भक्ताश्चेत् ७९०५३ विजयादिद्वाराद् द्वारांतरं स्यात् ॥ द्वीपसमुद्रमध्यस्थितप्राकारवर्णनसहितं जंबूद्वीपवर्णनं समाप्तं ॥ ८९५ ॥

अथ लवणार्णवाभ्यंतरवर्तिनां पातालानामवस्थानं तत्संख्यां तत्परिमाणं चाह;—

लवणे दिसविदिसंतरदिसासु चउ चउ सहस्स पायाला
मज्झुदयं तलवदणं लक्खं दसमं तु दसमकमं ॥ ८९६ ॥

लवणे दिशाविदिशांतरादिशासु चत्वारि चत्वारि सहस्रं पातालानि ।
मध्योदयः तलवदनं लक्षं दशमं तु दशमक्रमं ॥ ८९६ ॥

लवणे । लवणसमुद्रे दिक्षु ४ विदिक्षु ४ अंतरदिक्षु च ८ यथासंख्यं चत्वारि चत्वारि सहस्रं पातालानि । तत्र दिग्गतपातालानां मध्यमेकलक्षव्यासं १ ल. उदयश्च तथा १ ल. तलव्यासो अस्य १ ल दशमांशः १०००० वदनव्यासश्च । तथा विदिग्गतपातालानां दिग्गतपातालदशमांशक्रमो ज्ञातव्यः अंतरदिग्गतपातालानां च विदिग्गतपातालदशमांशक्रमो ज्ञातव्यः ॥ ८९६ ॥

अथ दिग्गतपातालानां संज्ञादिकमाह;—

बडवामुहं कदंबगपायालं जूवकेसरं वट्टा ।
पुव्वादिवज्जकुड्डा पणसयबाहल्ल दसम कमा ॥ ८९७ ॥

बडवामुखं कदंबकं पातालं यूपकेशरं वृत्तानि ।
पूर्वादिवज्रकुड्यानि पंचशतबाहल्यं दशमं क्रमात् ॥ ८९७ ॥

बडवा । बडवामुखं कदंबकं पातालं यूपकेसरमिति पूर्वादिदिग्गतपातालनामानि । तानि वृत्तानि वज्रमयकुड्यानि, दिग्गतपातालानां कुड्यबाहल्यं

पंचशतयोजनानि ५०० तद्दशमांशो ५० विदिग्गतपातालकुड्यबाहल्यं तद्दशमांशो ५ अंतरदिग्गतपातालकुड्यबाहल्य स्यात् ॥ ८९७ ॥

तत्पातालोदरवर्तिनोर्जलानिलयोर्वर्तनक्रममाह;—

हेट्ठुवरिमतियभागे णियदं वादं जलं तु मज्झम्हि।
जलवादं जलवड्ढी किण्हे सुक्के य वादस्स ॥ ८९८ ॥

अधस्तनोपरिमत्रिभागे नियतः वातो जलं तु मध्ये।
जलवातः जलवृद्धिः कृष्णे शुक्ले च वातस्य ॥ ८९८ ॥

हेट्ठुव। तेषां पातालानामधस्तनतृतीयभागे दिशः $33333\frac{1}{3}$ विदिशः $3333\frac{1}{3}$ अंतरदिशः $333\frac{1}{3}$ वात एव नियतः, उपरिमतृतीयभागे च जलमेव नियतं। मध्यमतृतीयभागे तु जलवातामिश्रः। कृष्णपक्षे तन्मध्यमतृतीयभागस्थजलस्य वृद्धिः, शुक्लपक्षे पुनस्तत्र वातस्य वृद्धिः स्यात् ८९८

इदानीं तद्धानिवृद्धिप्रमाणमाह;—

तम्मज्झिमतियभागे लवणसिहा चरिमपणसहस्से य।
पण्णरदिणेहि भजिदे इगिदिण जलवादवड्ढि जलवड्ढी

तन्मध्यमत्रिभागे लवणशिखा चरमपंचसहस्रे च।
पंचदशदिनैः भक्ते एकदिने जलवातवृद्धिः जलवृद्धिः ॥ ८९९ ॥

तम्म। तेषां पातालानां मध्यमतृतीयभागे $33333\frac{1}{3}$ विदि $333\frac{1}{3}$ लवणसमुद्रशिखाचरमपंचसहस्रे च ५००० पंचदश १५ दिनैर्भक्ते साति दि $2222\frac{2}{9}$ विदि $222\frac{2}{9}$ अदि $22\frac{2}{9}$ इदं मध्यामतृतीयभागे एकैकदिनस्य जलवातहानिवृद्धिः स्यात् $333\frac{1}{3}$ इदं लवणसमुद्रशिखायां प्रतिदिनजलहानिवृद्धिप्रमाणं स्यात्। अमुमेवार्थं विवृणोति—पंचदशदिनाना १५ मेतावति $33333\frac{1}{3}$ हानिचये एकदिनस्य १ कियदिति संपात्य समच्छेदेनांशांशिनो $\frac{99999}{3}|\frac{1}{3}$ मेलनं कृत्वा $\frac{100000}{3}$ हारं ३ हारेण १५ गुण-

यित्वा ४५ तेन भंक्त्वा शेषे $\frac{१०}{४५}$ पंचभिरपवर्तिते सति २२२२ $\frac{२}{९}$ इदमेकैकदिनस्य जलवातहानिवृद्धिप्रमाणं स्यात्। एवं लवणसमुद्रशिखायामितरपातालद्वये च क्रमेण मध्यमशिखयोर्हानिवृद्धिक्रमो ज्ञातव्यः ॥ ८९९ ॥

एवं हानिवृद्धियुक्तस्य लवणसमुद्रस्य भूमुखव्यासावाह;—

पुण्णदिणे अमवासे सोलक्कारससहस्स जलउदओ।
वासं मुहभूमीए दसयसहस्सा य बेलक्खा ॥ ९०० ॥

पूर्णदिने अमावास्यांयां षोडशैकादशसहस्रं जलोदयः।
व्यासः मुखभूम्योः दशसहस्रं च द्विलक्ष्यं ॥ ९०० ॥

पुण्ण। पूर्णिमादिने अमावास्यायां च यथासंख्यं षोडशसहस्र १६००० मेकादशसहस्रं च ११००० लवणे जलोदयः स्यात् तस्य षोडशसहस्रोदये मुखव्यासो दशसहस्रं १०००० षोडशसहस्रोदयस्य १६००० एतावद्धानौ १९०००० पंचसहस्रोदयस्य ५००० किमिति संपात्यापवर्त्य गुणयित्वा $\frac{९५००००}{१६}$ स्वहारेण भक्त्वा ५९३७५ अस्मिन्मुखव्यासं १०००० युंज्यात् ६९३७५। इदमेकादशसहस्रो ११००० दये मुखव्यासः स्यात्। भूव्यासस्तु द्विलक्षयोजनं स्यात् ॥ ९०० ॥

इदानीं जंबूद्वीपस्थचंद्रादित्ययोर्लवणजलस्य तिर्यगंतरमाह;—

मुरवायारो जलही हाणिदलं सोदयेण संगुणियं।
विसमुद्दचारमंबुहिजंबूचंदरविअंतरयं॥ ९०१ ॥

मुरजाकरः जलधिः हानिदलं स्वोदयेन संगुण्य।
विसमुद्रचारमंबुधिजंबूचंद्ररव्यंतरं ॥ ९०१ ॥

मुरवा। मुरजाकारो जलधिः हानिदलं भूमेः सकाशाच्चंद्रा ८८० दित्ययो ८०० रुत्सेधेन संगुणियं तु विगतसमुद्रचारं यत् तदंबुधेर्जंबूद्वी-

पस्थचंद्रख्योस्तिर्यगंतरं स्यात् ॥ अमुमेवार्थं विवरयति—तत्कथं ? मुखं १०००० भूमौ २ ल. शोधयित्वा १९०००० अर्धीकृत्य ९५००० पश्चादेतावद्योजनोदयस्य १६००० एतावद्धानौ ९५००० एक योजनोदयस्य किमिति संपात्यापवर्तिते $\frac{९५}{१६}$ एकयोजनोदयहानिः स्यात् । एक १ योजनोदयस्य एतावद्धानिचये $\frac{९५}{१६}$ एतावतः ८०० किमिति संपात्य $\frac{९५}{१६}$ । ८८० षोडशाभिस्तिर्यगपवर्त्य $\frac{९५}{१}$ । ५५ गुणायित्वा ५२२५ अत्र समुद्रचारक्षेत्र ३३०$\frac{४८}{६१}$ मपनीय ४८९५ अत्रैकं गृहीत्वा रविबिंबेण $\frac{४८}{६१}$ समच्छेदं कृत्वा $\frac{६१}{६१}$ अत्र बिंबे अपनीते $\frac{१३}{६१}$ चंद्रांबुध्योस्तिर्यगंतरं स्यात् । तटात् एतावद्गतौ $\frac{९५}{१६}$ एकयोजनोदये एतावद्गतौ ३३०$\frac{४८}{६१}$ किमिति संपात्य चारक्षेत्रं ३३० रविबिंबेन समच्छेदीकृत्यान्योन्यं मेलयित्वा $\frac{२०१७८}{६१}$ एतद्धारस्य ९५ हारेण च १६ गुणायित्वा $\frac{३२२८४८}{५७९५}$ भक्ते लब्ध ५५ शेष $\frac{४१२३}{५७९५}$ चंद्रप्रणिधिजलधेः जलोदयः स्यात् । एतच्चंद्रोदये ८८० अपनीते ८२४ शेष $\frac{१६७२}{५७९५}$ चंद्रार्णवोर्ध्वांतरं स्यात् । सांप्रतं रवेस्तिर्यगंतरादिकमानीयते । एकयोजनोदयस्य १ तटादेतावद्गतिक्षेत्रे $\frac{९५}{१६}$ एतावतः ८०० किमिति संपात्य षोडशभिस्तिर्यगपवर्त्य $\frac{९५}{१}$ । ५० गुणायित्वा ४७५० अत्र समुद्रचारे ३३०$\frac{४८}{६१}$ अपनीते ४४१९$\frac{१३}{६१}$ साति सूर्यार्णवतिरश्चीनांतरं स्यात् । चंद्रार्णवोर्ध्वांतरे ८२४ शे $\frac{१६७२}{५७९५}$ अशीति ८० योजने अपनीते ७४४ । $\frac{१६७२}{५७९५}$ सूर्यार्णवोर्ध्वांतरं स्यात् । अथ प्रसंगेन लवणसमुद्रसंबंधिसूर्यप्रणिधौ जलोदयः साध्यते । रविबिंबस्य व्यासं $\frac{४८}{६१}$ द्विगुणीकृत्य $\frac{९६}{६१}$ तत्समच्छेदीकृते लवणव्यासे $\frac{१२२०००००}{६१}$ अपनयेत् । $\frac{१२१९९९०४}{६१}$ इदं सर्वांतरालक्षेत्रं स्यात् । द्वयोरंतरयोरेतावाति क्षेत्रे $\frac{१२१९९९०४}{६१}$ एकांतरस्य किमिति संपात्य द्वाभ्यामपवर्त्य $\frac{६०९९९५२}{६१}$ भक्ते ९९९९९ भा $\frac{१३}{६१}$ इदं लवणसमुद्रीयसूर्ययोरंतरं स्यात् । अस्मिन्नर्धिते ४९९९९ शे $\frac{३७}{६१}$ इदं लवणसमुद्रीयसूर्यवेदिकांतरं स्यात् । एतदेव समच्छेदीकृत्य स्वांशेन मेलयित्वा $\frac{३०४९९७६}{६१}$ पश्चादेतावदायामे $\frac{९५}{१६}$ एकयोजनोदयश्चेत् एतावदायामे

$\frac{३०४९९७६}{६१}$ किमिति संपात्य हारस्य हारेण संगुण्य $\frac{४८७९९६१६}{५७९५}$ भक्ते ८४२० शे $\frac{५७१६}{५७९५}$ सतीदं लवणसमुद्रीयसूर्यप्रणिधौ जलोदयः स्यात् ॥ ९०१ ॥

इदानीं पातालानामंतरालं निरूपयाति;—

मज्झिमपरिधिचउत्थं विवरमुहं तंवि मज्झमुहमद्धं ।
सयगुणपणघणहीणं तं सयछव्वीसभाजिदे विरहं॥९०२॥

मध्यमपरिधिचतुर्थं विवरमुखं तदपि मध्यमुखमर्धं ।
शतगुणपंचघनहीनं तत् शतषड्विंशभाजिते विरहं ॥ ९०२ ॥

मज्झिम । लवणसमुद्रस्य मध्यव्यासस्य ३ ल स्थूलपरिधौ ९ ल. चतुर्भिर्भक्ते सति दिग्गतपातालानां मुखान्मुखप्रांतक्षेत्रं स्यात् २२५००० इदं विगतमध्यं १ ल. चेत् दिग्गतपातालयोर्मध्यांतरं स्यात् १२५००० एतदेव विगतमुखं १०००० चेत् तयोः पातालयोर्मुखयोरंतरं स्यात् २१५००० एतदेव विदिग्गतपातालमुख १००० हीन २१४००० मार्धितं चेत् विदिग्गतपातालयोर्मुखयोरंतरालक्षेत्रं स्यात १७००० एतस्मिन् पुनः शतगुणितपंचघनं १२५०० हीनं कृत्वा ९४५०० एतस्मिन् षड्विंशत्युत्तरशतेन १२६ भागीकृते दिग्विदिग्गतपातालांतरं पातालमुखांतरं स्यात् ७५० ॥ ९०२ ॥

अनंतरं लवणोदकपरिपालकानां भुजगानां विमानसंख्यां स्थानत्रयाश्रयेणाह;—

वेलंधर भुजगविमाणाण सहस्साणि बाहिरे सिहरे ।
अंते बावत्तरि अडवीसं बादालयं लवणे ॥ ९०३ ॥

वेलंधरभुजगविमानानां सहस्राणि बाह्ये शिखरे
अंते द्वासप्ततिः अष्टविंशतिः द्वाचत्वारिंशत् लवणे ॥ ९०३ ॥

वेलं। जंबूद्वीपापेक्षया लवणसमुद्रस्य बाह्ये शिखरे अभ्यंतरे च यथासंख्यं वेलंधरभुजगानां विमानानि द्वासप्ततिसहस्राणि ७२००० अष्टाविंशतिसहस्राणि २८००० द्वाचत्वारिंशत्सहस्राणि ४२००० स्युः ॥ ९०३ ॥

अथ तद्विमानानामवस्थानविशेषं तद्व्यासं चाह;—

दुतडादो सत्तसयं दुकोसअहियं च होइ सिहरादो ।
णयराणिहुगयणतले जोयणदसगुणसहस्सवासाणि ९०४

द्वितटात् सप्तशतं द्विक्रोशाधिकं च भवति शिखरात् ।
नगराणि हि गगनतले योजनदशगुणसहस्रव्यासानि ॥ ९०४ ॥

दुतडा । लवणसमुद्रस्योभयतटात्सप्तशतयोजनानि ७०० तच्छिखराच्च द्विक्रोशाधिकानि सप्तशतयोजनानि ७०० क्रो २ त्यक्त्वा गगनतले दशसहस्रयोजनव्यासानि १०००० नगराणि संति ॥ ९०४ ॥

दिग्गतपातालपार्श्वस्थपर्वतान् तस्मिन्निवासिदेवादिकं च गाथाचतुष्टयेनाह;—

वडवामुहपहुदीणं पासदुगे पव्वदा हु एक्केक्का ।
पुव्वे कोत्थुभसेलो इय बिदियो कोत्थुभासो दु ॥९०५॥

वडवामुखप्रभृतीनां पार्श्वद्वये पर्वता हि एकैकाः ।
पूर्वस्यां कौस्तुभशैलः इह द्वितीयः कौस्तुभासस्तु ॥ ९०५ ॥

वडवा । वडवामुखप्रभृतीनां पातालानां पार्श्वद्वये एकैकाः पर्वताः संति । तत्र पूर्वदिक्स्थपातालस्य पूर्वदिशि कौस्तुभशैलः इह द्वितीयस्तु कौस्तुभासाख्यः ॥ ९०५ ॥

तहि तण्णामदुवाणा दक्खिणदो उदगउदगवासणगा ।
इहसिवासिवदेवसुरा संखमहासंखगिरिदु पच्छिमदो९०६

तत्र तन्नामद्विवानौ दक्षिणद्वये उदकउदकवासनगौ ।
इह शिवशिवदेवसुरौ शंखमहाशंखौ गिरिद्वयौ पश्चिमद्वये ॥९०६॥

तहिं । तयोरुपरि तन्नामानौ द्वौ व्यंतरौ स्तः, दक्षिणदिक्स्थपातालस्य पार्श्वद्वये उदकोदकवासाख्यौ नगौ स्तः, अनयोरुपरि शिवाशिवदेवाख्यौ सुरौ स्तः । पश्चिमपातालस्य पार्श्वद्वये शंखमहाशंखाख्यौ गिरी स्तः ॥ ९०६ ॥

तत्थुदयुदवासमरा दगदगवासद्दिजुगलमुत्तरदो ।
लोहिदलोहिदअंका तहिं वाणा विविहवण्णणया९०७

तत्रोदकोदवासामरौ दकदकवासाद्रियुगलमुत्तरद्वये ।
लोहितलोहितांकौ तत्र बाणा विविधवर्णनकाः ॥ ९०७ ॥

तत्थु । तयोः पर्वतयोरुपरि उदकोदकवासाख्यावमरौ स्तः । उत्तरपातालपार्श्वद्वये दकदकवासाख्याद्रियुगलमास्ति तयोरुपरि लोहितलोहितांकौ अमरौ स्तः । ते सर्वे व्यंतराः विविधवर्णनायुताः ॥ ९०७ ॥

धवला सहस्समुग्गय सव्वणगा अद्धघडसमायारा ।
उभयतडादो गत्ता बादालसहस्समत्थंति ॥ ९०८ ॥

धवलाः सहस्रमुद्गताः सर्वनगाः अर्धघटसमाकाराः ।
उभयतटात् गत्वा द्वाचत्वारिंशत्सहस्रमासते ॥ ९०८ ॥

धवला । ते सर्वे पर्वता धवलवर्णाः जलादुपरि सहस्रयोजनोत्तुंगाः अर्धघटसमाकाराः उभयतटात् द्वाचत्वारिंशत्सहस्रयोजनानि ४२००० गत्वा आसते ॥ ९०८ ॥

लवणसमुद्राभ्यंतरद्वीपान् तद्व्यासादिकं च गाथाचतुष्टयेनाह;-

तडदो गत्ता तेत्तियमेत्तियवासा हु विदिस अंतरगा ।
अडसोलस ते दीवा वट्टा सूरक्खचंदक्खा ॥ ९०९ ॥

तडतः गत्वा तावन्मात्रव्यासा हि विदिक्षु अंतरकाः ।
अष्टषोडश ते द्वीपा वृत्ताः सूर्याख्यचंद्राख्याः ॥ ९०९ ॥

तडदो । उभयतटात्तावन्मात्राणि योजनानि ४२००० गत्वा तावन्मात्रव्यासा ४२००० विदिक्ष्वंतरदिक्षु च यथासंख्यं अष्ट षोडशसंख्या सूर्याख्यचंद्राख्यास्ते द्वीपाः वृत्ताः स्युः ॥ ९०९ ॥

तडदो बारसहस्सं गंतूणिह तेत्तियुदयवित्थारो ।
गोदमदीओ चिट्ठदि वायव्वदिसम्हि वट्टुलओ ॥९१०॥

तटतो द्वादशसहस्रं गत्वेह तावदुदयाविस्तारः ।
गौतमद्वीपः तिष्ठति वायव्यदिशि वर्तुलः ॥ ९१० ॥

तड । इह लवणे अभ्यंतरतटात् द्वादशसहस्र १२००० योजनानि गत्वा तावन्मात्रोदयः १२००० तावन्मात्राविस्तारः १२००० वृत्ताकारो वायव्यां दिशि गोतमाख्यो द्वीपास्तिष्ठति ॥ ९१० ॥

बहुवण्णपासादा वणवेदीसहिय तेसु दीवेसु ।
तस्सामी वेलंधरणागा सगदीवणामा ते ॥ ९११ ॥

बहुवर्णनप्रासादाः वनवेदीसहितेषु तेषु द्वीपेषु ।
तत्स्वामिनो बेलंधरनागाः स्वकद्वीपनामानस्ते ॥ ९११ ॥

बहु । वनैर्वेदिकाभिः सहितेषु तेषु द्वीपेषु सर्वेषु बहुवर्णनोपेताः प्रासादाः संति । तद्द्वीपस्वामिनो ये बेलंधरनागास्ते स्वकीयस्वकीयद्वीपनामानः ॥९११॥

मागहतिदेवदीवत्तिदयं संखेज्जजोयणं गत्ता ।
तीरादो दक्खिणदो उत्तरभागेवि होदित्ति ॥ ९१२ ॥

मागधत्रिदेवद्वीपत्रितयं संख्यातयोजनं गत्वा ।
तीरात् दक्षिणतः उत्तरभागेपि भवतीति ॥ ९१२ ॥

मागह । भरतक्षेत्रे दक्षिणतस्तीरात् संख्यातयोजनानि गत्वा मागधवरतनुप्रभासाख्यामराणां त्रयाणां देवानां तत्तन्नामद्वीपत्रयमस्ति, ऐरावतोत्तरभागेपि तथा द्वीपत्रयमस्ति ॥ ९१२ ॥

सांप्रतं लवणकालोदकसमुद्रांतस्थितान् षण्णवतिकुमानुष्यद्वीपानाह;—

दिसिविदिसंतरगा हिमरजताचलसिहरिरजदपणिधिगया । लवणदुगे पल्लठिदी कुमणुसदीवा हु छण्णउदी ९१३

दिशाविदिशांतरकाः हिमरजताचलशिखरिरजतप्रणिधिगताः ।
लवणद्विके पल्यस्थितयः कुमनुष्यद्वीपा हि षण्णवतिः ॥ ९१३ ॥

दिसि । लवणसमुद्रस्य दिक्षु चत्वारो ४ विदिक्षु चत्वारो ४ अंतरदिक्ष्वष्टौ ८ हिमरजतशिखरिरजतपर्वतानामुभयप्रांतप्रणिधिगतौ प्रत्येकं द्वौ द्वौ इति मिलित्वाष्टौ ८ इति सर्वेपि मिलित्वा लवणसमुद्रस्याभ्यंतरतटे चतुर्विंशतिः २४ बाह्यतटेपि चतुर्विंशतिः २४ मिलित्वाष्टचत्वारिंशत् ४८। एवं कालोदकोभयतटेप्यष्टचत्वारिंशत् ४८ इति सर्वेपि मिलित्वा षण्णवतिसंख्याप्रमिताः ९६ कुमानुष्यद्वीपाः संति । तत्रस्था मनुष्याः पल्यस्थितिका भवंति ॥ ९१३ ॥

उभयतटात्तेषामंतरं तद्विस्तारं च क्रमेणाह;—

दसगुण पण्णं पण्णं पणवण्णं सट्ठिमुवहिमहिगम्म । सय पणवण्णं पण्णं पणुवीसं वित्थडा कमसो ॥९१४॥

दशगुणं पंचाशत् पंचाशत् पंचपंचाशत् षष्ठिरुदधिमधिगम्य ।
शतं पंचपंचाशत् पंचाशत् पंचविंशतिः विस्तारः क्रमशः॥९१४॥

दस । दिग्गतद्वीपा दशगुणपंचाश ५०० योजनानि गत्वा विदिग्गता दशगुणितपंचाश ५०० योजनानि गत्वा अंतरदिग्गता दशगुणितपंचपंचाश ५५० योजनानि गत्वा गिरिप्रणिधिगताश्च दशगुणितषष्ठि ६००

योजनानि गत्वा तिष्ठंति । तेषां विस्तारः क्रमेण शतयोजनानि १०० पंचपंचाश ५५ योजनानि पंचाशद्योजनानि ५० पंचविंशतियोजनानि २५ भवंति ॥ ९१४ ॥

तेषां पर्वतानां जलाद्युपर्यधश्चोदयमाह;--

इगिगमणे पणणउदिमतुंगो सोलगुणमुवरि किं पयदे ।
दुगजोगे दीउदओ सवेदिया जोयणुग्गया जलदो ९१५

एकगमने पंचनवतितुंगः षोडशगुणमुपरि किं प्रकृते ।
द्विकयोगे द्वीपोदयः सवेदिका योजनोद्गता जलतः ॥ ९१९ ॥

इगि । भूमौ २ ल. अधोमुखं १०००० शेषयित्वा १९०००० अर्धीकृत्य ९५००० पश्चादेतावद्धानौ ९५००० सहस्रोदये १००० एकयोजनहानौ १ कियानुदय इति संपात्यापवर्तिते एकयोजनगमने जलोदयः स्यात् $\frac{१}{९५}$ इदं धृत्वा एकयोजनगमने १ यद्येकयोजनपंचनवतिमभागः $\frac{१}{९५}$ तुंगः स्यात् तदा पंचशतादि योजनगमने ५०० । ५०० । ५५० ६०० कियान् तुंग इति संपात्य भक्त्वा शेषे सर्वत्र पंचभिरपवर्तिते सति। पंचशतादियोजनगते तत्र तत्राधोजलोदयः स्यात् ५ । शे $\frac{५}{१९}$ । ५ । शे $\frac{५}{१९}$ । ५ । शेष $\frac{५}{१९}$ । ६ शे $\frac{६}{१९}$ । इत उपरि जलोदय आनीयते--षोडशसहस्रोदये १६००० एतावद्धानौ ९५००० एकयोजनोदये किमिति संपात्यापवर्तिते एकयोजनोदयहानिः स्यात् $\frac{९५}{१६}$ इदं धृत्वा एतावत्क्षेत्रगतौ $\frac{९५}{१६}$ यद्येकयोजन जलोदयस्तदा एकयोजनगमने किमिति संपातिते लब्ध एकयोजनगमने उपरि जलोदयः स्यात् $\frac{१६}{९५}$ एकयोजनगतौ पंचनवत्येकभागः षोडशगुणितः $\frac{१६}{९५}$ उपरि जलोदयश्चेत् प्रकृतपंचशतादियोजनगमने ५०० । ५०० । ५५० । ६०० किमिति संपात्य सर्वत्र पंचाभिरपवर्त्य $\frac{१६००}{१९}$ । $\frac{१६००}{१९}$ । $\frac{१७६०}{१९}$ । $\frac{१९२०}{१९}$ भक्ते पंचशतादियोजनगमने तत्तदुपरिजलोदयः स्यात् ८४। शे $\frac{४}{१९}$ ८४। शे $\frac{४}{१९}$ ९२। शे $\frac{१२}{१९}$। १०१ शे $\frac{१}{१९}$ अध उप-

रिमजलोदययोर्योगे जलप्रमिततत्तद्वीपोदयः जलादुपरि ते द्वीपाः सवेदिका एकयोजनोदयाः तदेकयोजनमपि जलगतोदये मिलिते सर्वोदयः स्यात् । लब्धं ९० शे $\frac{९}{१९}$ । ९० शे $\frac{९}{१९}$ । ९९ शे $\frac{८}{१९}$ । १०८ शे $\frac{७}{१९}$ एवमुक्त-विधानं सर्वं कौस्तुभादिष्वपि द्रष्टव्यम् ॥ ९१५ ॥

इदानीं तेषु भोगभूमिषु उत्पन्नानां मनुष्याणामाकृतिं तत्स्थानं गाथापं-चकेनाह;—

एगुरुगा लंगलिगा वेसणगा भासगा य पुव्वादी ।
सक्कुलिकण्णा कण्णप्पावरणा लंबकण्ण ससकण्णा९१६

एकोरुकाः लांगलिकाः वैषाणिकाः अभाषकाः च पूर्वादिषु ।
शष्कुलिकर्णाः कर्णप्रावरणाः लंबकर्णाः शशकर्णाः ॥ ९१६ ॥

एगुरु । एकोरुकाः लांगलिकाः पुच्छवंतः इत्यर्थः वैषाणिकाः शृंगिण इत्यर्थः अभाषणाः एते यथासंख्यं पूर्वादिदिक्षु तिष्ठंति । शष्कुलिकर्णाः कर्णप्रावरणाः लंबकर्णाः शशकर्णाः एते विदिक्षु तिष्ठंति ॥ ९१६ ॥

सिंहस्ससाणमहिसवराहमुहा वग्घघूयकपिवदणा ।
झसकालमेसगोमुहमेघमुहा विज्जुदप्पणिभवदणा ९१७

सिंहाश्वश्वामहिषवराहमुखाः व्याघ्रघूककपिवदनाः ।
झषकालमेषगोमुखमेघमुखाः विद्युद्दर्पणेभवदनाः ॥ ९१७ ॥

सिंह । सिंहमुखाः अश्वमुखाः शुनकमुखाः महिषमुखाः व्याघ्रमुखाः घूकवदनाः कपिवदनाः इत्यष्टौ ८ झषमुखाः कालमुखाः मेषमुखाः गोमुखाः मेघमुखाः विद्युद्वदनाः दर्पणवदनाः इभवदनाः इत्यष्टौ ८ ॥ ९१७ ॥

अग्गिदिसादी सक्कुलिकण्णादी सिंहवदणणरपमुहा ।
एगूरुगसक्कुलिसुदिपहुदीणं अंतरे णेया ॥ ९१८ ॥

अग्निदिशादिषु शष्कुलिकर्णादयः सिंहवदननरप्रमुखाः ।
एकोरुशष्कुलिश्रुतिप्रभृतीनां अंतरे ज्ञेयाः ॥ ९१८ ॥

अग्गि । अग्निदिशादिषु विदिक्षु शष्कुलिकर्णादयश्चत्वारः संति । सिंहवदननरप्रमुखा अष्टौ एकोरुकशष्कुलिश्रुतिप्रभृतीनामंतरे तिष्ठंति इति ज्ञेयाः ॥ ९१८ ॥

गिरिमत्थयत्थदीवा पुव्वुत्ता सगणगस्स पुव्वदिसि ।
पच्छा भणिदा पच्छिमभागे अत्थंति ते कमसो॥९१९॥

गिरिमस्तकस्थद्वीपाः पूर्वोक्ताः स्वकनगस्य पूर्वदिशि ।
पश्चात् भणिताः पश्चिमभागे आसते ते क्रमशः ॥ ९१९ ॥

गिरि । हिमरजतशिखरिरजताचलाख्यगिरिमस्तकस्थद्वीपस्थानां झषमुखादियुगलानां मध्ये पूर्वोक्ताः क्रमेण स्वकीयस्वकीयनगस्य पूर्वदिक्षु तिष्ठंति । पश्चाद्भणितास्तत्तन्नगस्य पश्चिमभागे आसते ॥ ९१९ ॥

एगोरुगा गुहाए वसंति जेमंति मिट्ठतरमट्टिं ।
सेसा तरुतलवासा कप्पद्दुमदिण्णफलभोजी ॥ ९२० ॥

एकोरुका गुहायां वसंति जेमंति मृष्टतरमृत्तिकां ।
शेषाः तरुतलवासाः कल्पद्रुमदत्तफलभोजिनः ॥ ९२० ॥

एगोरुगा । तत्रापि एकोरुकाः गुहायां वसंति मृष्टतरां मृत्तिकां जेमंति च । शेषाः सर्वे तरुतलवासाः कल्पद्रुमदत्तफलभोजिनो भवंति ॥ ९२० ॥

तेषां षण्णवतिद्वीपानां संख्याया विशेषविवरणमाह;—

चउवीसं चउवीसं लवणदुतीरेसु कालदुतडेवि ।
दीवा तावदियंतरवासा कुणरा वि तण्णामा ॥९२१॥

चतुर्विंशं चतुर्विंशं लवणद्वितीरयोः कालद्वितटयोरपि ।
द्वीपाः तावदंतरव्यासाः कुनरा अपि तन्नामानः ॥ ९२१ ॥

चउवीसं । लवणसमुद्रस्य द्वयोस्तीरयोः चतुर्विंशतिः चतुर्विंशतिर्द्वीपाः कालोदकसमुद्रस्य द्वयोस्तटयोरपि द्वीपास्तटादंतराणि व्यासाश्च लवणसमुद्रं-वत्तावंतः । तत्रस्थाः कुनरा अपि तत्तद्द्वीपसमाननामानः स्युः ॥ ९२१

तेषु कुमानुष्यद्वीपेषु उत्पद्यमानान् गाथात्रयेणाह;—

जिणलिंगे मायावी जोइसमंतोवजीवि धणकंखा ।
अइगउरवसण्णजुदा करंति जे परविवाहंपि ॥ ९२२ ॥

जिनलिंगे मायाविनो ज्योतिर्मंत्रोपजीविनः धनकांक्षिणः ।
अतिगारवसंज्ञायुताः कुर्वंति ये परविवाहमपि ॥ ९२२ ॥

जिण । जिनलिंगे मायाविनो जिनलिंगे ज्योतिर्मंत्रवैद्याद्युपजीविनो जिनलिंगे धनकांक्षिणो जिनलिंगे ऋद्धियशःसातगारवयुक्ताः जिनलिंगे आहारभयमैथुनपरिग्रहसंज्ञायुक्ताः ये जिनलिंगे परविवाहं कुर्वंति ॥ ९२२ ॥

दंसणविराहया जे दोसं णालोचयंति दूसणगा ।
पंचग्गितवा मिच्छा मोणं परिहरिय भुंजंति ॥ ९२३ ॥

दर्शनविराधका ये दोषं नालोचयंति दूषणकाः ।
पंचाग्नितपसः मिथ्याः मौनं परिहृत्य भुंजंते ॥ ९२३ ॥

दंसणं । ये जिनलिंगे दर्शनविराधकाः ये च जिनलिंगे स्वदोषं नालो-चयंति, ये जिनलिंगे परदूषकाः ये मिथ्यादृष्टयः पंचाग्नितपसः ये मौनं परिहृत्य भुंजते ॥ ९२३ ॥

दुब्भावअसुचिसूदगपुप्फवईजाइसंकरादीहिं ।
कयदाणा वि कुवत्ते जीवा कुणरेसु जायंते ॥ ९२४ ॥

दुर्भावाशुचिसूतकपुष्पवतीजातिसंकरादिभिः।
कृतदाना अपि कुपात्रेषु जीवाः कुनरेषु जायंते ॥ ९२४ ॥

दुब्भाव। दुर्भावेनाशुच्या सूतकेन पुष्पवतीसंसर्गेण जातिसंकरादिभिश्च ये कृतदानाः ये कुपात्रेषु च कृतदानास्ते जीवाः कुनरेषु जायंते ॥ ९२४ ॥

सांप्रतं धातकीखंडपुष्करार्धयोरेकप्रकारत्वादग्रे वक्ष्यमाणक्षेत्रविभागहेतून् तयोरुभयपार्श्वस्थितामिष्वाकारपर्वतानाह;—

चउरिसुगारा हेमा चउकूड सहस्सवास णिसहुदया।
सगदीववासदीहा इगिइगिवसदी हु दक्खिणुत्तरदो९२५

चतुरिष्वाकारा हेमाः चतुःकूटाः सहस्रव्यासा निषधोदयाः।
स्वकद्वीपव्यासदीर्घा एकैकवसतयः हि दक्षिणोत्तरतः ॥ ९२५ ॥

चउ। धातकीखंडपुष्करार्धयोर्मिलित्वा हेममयाश्चतुःकूटाः सहस्रव्यासाः निषधोदया ४०० स्वकीयद्वीपव्यासदैर्घ्याः एकैकवसतयश्चत्वार इष्वाकारपर्वतास्तयोर्द्वीपयोर्दक्षिणोत्तरतास्तिष्ठंति ॥ ९२५ ॥

अथ तद्द्वीपद्वयावस्थितानां कुलगिरिप्रभृतीनां स्वरूपं निरूपयति;—

कुलगिरिवक्खारणदीदहवणकुंडाणि पुक्खरदलोत्ति।
ओवेहुस्सेहसमा दुगुणा दुगुणा दु वित्थिण्णा ॥९२६॥

कुलगिरिवक्षारनदीद्रहवनकुंडानि पुष्करदल इति।
अवगाधोत्सेधसमा द्विगुणा द्विगुणाः तु विस्तीर्णाः ॥ ९२६ ॥

कुल। धातकीखंडादारभ्य पुष्करार्धपर्यंतं तत्र तत्रस्थाः कुलगिरयः १२ वक्षाराः ४० नद्यः १८० ह्रदाः ५२ वनानि। कुंडानि १८०। एते सर्वे जंबूद्वीपस्थकुलगिरिप्रभृतीनामवगाधोत्सेधाभ्यां समानाः एतेषां विस्तारास्तु जंबूद्वीपस्थविस्तारेभ्यो द्विगुणाद्विगुणाः ॥ ९२६ ॥

अथ द्व्यर्धद्वीपस्थितवर्षवर्षधरपर्वतानामाकारं निरूपयति;—

सयलुद्धिणिभा वस्सा दिवड्ढदीवम्हि तत्थ सेलाओ ।
अंते अंकमुहाओ खुरप्पसंठाणया बाहिं ॥ १२७ ॥

शकटोद्धिनिभा वर्षाः द्व्यर्धद्वीपे तत्र शैलाः ।
अंतः अंकमुखाः क्षुरप्रसंस्थानका बहिः ॥१२७॥

सयलु । द्व्यर्धद्वीपे वर्षाः शकटोध्दिकानिभाः तत्र शैला अभ्यंतरे अंकमुखाः बाह्ये क्षुरप्रसंस्थानाः ॥ १२७ ॥

अथ धातकीखंडपुष्करार्धयोः पर्वतावरुद्धक्षेत्रमनुवदन् तयोःपरिधीनानयति;—

दुगचउरट्ठडसगइगि दुकला चउरडछपंचपणातिण्णि ।
चउकलमगरुद्धधरा जाणादिममज्झचरिमपरिहिंच १२८

द्विकचतुरष्टाष्टसप्तैकं द्विकले चतुरष्टषट्पंचपंचत्रीणि ।
चतुष्कलमगरुद्धधरा जानीहि आदिममध्यचरमपरिधीन् च॥१२८॥

दुग । द्विकचतुरष्टाष्टसप्तैकयोजनानि एकान्नविंशतिभक्तद्विकलाधिकानि १७८८४२$\frac{२}{१९}$ धातकीखंडस्य पर्वतावरुद्धक्षेत्रं स्यात् । चतुरष्टषष्ठपंचपंच त्रीणि योजनानि एकान्नविंशतेश्चतुःकलाधिकानि ३५५६८४ $\frac{४}{१९}$ पुष्करार्धस्य पर्वतावरुद्धधरा स्यात् । तयोर्भरतादिक्षेत्रव्यासज्ञानार्थमादिममध्यमबाह्यपरिधिं च जानीहि । पर्वतावरुद्धक्षेत्रानयनप्रकारं व्यक्तयति । सर्वपर्वतसमस्तक्षेत्रशलाकामिश्रणान्मिश्रशलाकेत्युच्यते। एतावन् मिश्रशलाकायाः१९० एतावति मिश्रक्षेत्रे१ ल. एता८४वच्छुद्धपर्वतशलाकयोः किमिति संपातिते जंबूद्वीपस्य पर्वतावरुद्धक्षेत्रंस्यात्$\frac{१ल ८४}{१ल१९०}$एतंधृत्वाएकशलाकाक्षेत्रस्यद्विगुणविस्तारेएतावत् शलाकाक्षेत्रस्य $\frac{१८४}{१९०}$ किमिति संपातिते धातकीखंडस्यैकभागे पर्वतावरुद्धक्षेत्रं $\frac{२ ल ८४}{१९०}$ एकास्मिन् भागे १ एतावति क्षेत्रे $\frac{२ ल ८४}{१९०}$ उभयोर्भागयोः किमिति

संपातिते धातकीखंडस्य सर्वपर्वतावरुद्धक्षेत्रं स्यात् $\frac{४ ल ८४}{१९०}$ एतावच्छुद्धशलाकायाः १६८ एतावत्तिष्ठते $\frac{४ ल ८४}{१९०}$ एतावान्मिश्रशलाकायाः ३८० किमिति संपात्य ४ ल । $\frac{८४}{१९८}$ । $\frac{३८०}{१६८}$ इच्छां ३८० द्वाभ्यां संभेद्य १९०।२ तेन द्वयेन चतुरशीतिं संगुण्या ४ । $\frac{१६८}{१९८}$ । $\frac{१९०}{१६८}$ पवर्तिते ४ ल. धातकीखंडस्य मिश्रपिंडः स्यात् । एतावन्मिश्रशलाकानां ३८० एतावति क्षेत्रे ४ ल. एतावच्छुद्धपर्वतशलाकानां १६८ किमिति संपात्य $\frac{४ ल}{३८०}$ । १६८ द्वाभ्यामपवर्त्य ४ ल । $\frac{८४}{१९८}$ इच्छया ८४ संगुण्य $\frac{३३६००००००}{१९०}$ भक्त्वा १७६८४२ $\frac{२}{१९१}$ अत्रेष्वाकारयोर्व्यासे २००० युते १७८८४२ $\frac{२}{१९१}$ धातकीखंडस्य पर्वतावरुद्धक्षेत्रं स्यात् । तदेव १७६८४२ $\frac{२}{१९१}$ द्विगुणीकृत्य ३५३६८४ $\frac{४}{१९१}$ अत्रेष्वाकारयोर्व्यासे २००० मिलिते ३५५६८४ $\frac{४}{१९१}$ पुष्करार्धस्य पर्वतावरुद्धक्षेत्रं स्यात् । इदानीं धातकीखंडस्य व्यासं ४ ल. त्रिस्थाने संस्थाप्य लवणादीनां वासमित्यादिना तस्यादि ५ ल. मध्यम ९ ल. बाह्यसूची १३ ल. मानीय 'विक्खंभवग्गदहगुण' इत्यादिना तत्र तत्र करणिं कृत्वा आ२५११ म ११ बा १६९।११ मूले गृहीते यथासंख्यं धातकीखंडस्याभ्यंतरपरिधिः १५८११३९ मध्यमपरिधिः २८४६०५० बाह्यपरिधिः ४११०९६१ स्यात् एषु त्रिषु परिधिषु प्रागानीतधातकीखंडस्य पर्वतावरुद्धक्षेत्रे १७८८४२ $\frac{२}{१९१}$ अपनीय यथासंख्यं अभ्यंतरपरिधौ पर्वतरहितक्षेत्रं १४०२२९७ मध्यमपरिधौ पर्वतक्षेत्ररहितं २६६७२०८ बाह्यपरिधौ पर्वतरहितक्षेत्रं ३९३२११९ स्यात् ॥ ९२८ ॥

इमानि त्रीणि पर्वतरहितक्षेत्राणि धृत्वा भरतादीनामभ्यंतरादिविष्कंभमाह;—

भरहइरावदवस्सा विदेहवस्सोत्ति चउविगुणा वस्सा ।
गिरिविरहियपरिहीणं हारो बिण्णिसयबारं च ॥९२९॥

भरतैरावतवर्षात् विदेहवर्षांतं चतुः द्विगुणा वर्षाः ।
गिरिविरहितपरिधीनां हारः द्विशतं द्वादश च ॥ ९२९ ॥

भरह । भरतवर्षादैरावतवर्षाच्चारभ्य विदेहपर्यंतं वर्षाश्चतुर्गुणिताः । भर १।४।१६।६४।१।४।१६। एषां मेलनं कृत्वा १०६ उभयभागार्थमस्मिन् द्विगुणीकृते द्विशतं द्वादशोत्तरं २१२ गिरिविरहितपरिधीनां हारः स्यात् । कथं ? एतावत्सर्वशलाकाया २१२ एतावत्यभ्यंतरपरिधौ पर्वतरहितक्षेत्रे १४०२२९७ भरतादीनामेकादिस्वस्वशलाकायाः १।४।१६।६४।१६।४।१ किमिति त्रैराशिकं कृत्वा तावद्भरतशलाकापेक्षया भक्ते भरतस्य प्रथमविष्कंभः ६६१४ १२९/२१२ स्यात् । एवं संपातेन तस्य मध्यमविष्कंभं १२५८१। ३६/२१२ बाह्यविष्कंभं १८५४७ १५५/२१२ चानयेत् । हैमवतादिष्वपि कर्तव्यं । अथवा भरताभ्यंतरविष्कंभादिषु अ ६६१४ १२९/२१२ मध्यं १२५८१ ३६/३१२ बा १८५४७ १५५/२१२ चतुर्भिर्गुणितेषु हैमवतस्य प्रथमादिविष्कंभः स्यात् अ=वि. २६४५८ १२/२१२ मवि=५०३२४ १७४/२१२ बा=७४१९० १९६/२१२ अस्मिन्नेव चतुर्भिर्गुणिते हरिवर्षस्य प्रथमादिविष्कंभःस्यात् । अ=वि १०५८३३ १५६/२१२ म=वि २०१२९८ १५२/२१२ बा. वि=२९६७६३ १४८/२१२ अस्मिन् पुनश्चतुर्भिर्गुणिते विदेहस्य प्रथमादिविष्कंभः स्यात् । अवि ४२३३३४ २००/२१२ मवि=८०५१९४ १८४/२१२ बा वि=११८७०५४ १६८/२१२ एवमैरावताद्वारभ्य विदेहपर्यंतं ज्ञातव्यं । पुष्करार्धस्याभ्यंतरादिपरिधौ अप ९१७०६०५ मप ११७००४२७ बाप १४२३०२४९ प्रत्येकं पर्वतावरुद्धक्षेत्रे ३५५६८४ अपनीते अभ्यंतरादिपरिधौ पर्वतरहितक्षेत्रं स्यात् । अ ८८१४९२१ म ११३४४७४३ बा १३८७४५६५ अस्मिंन् भरतशलाकया १ संगुण्य द्वादशोत्तरद्विशतेन भक्ते पुष्करार्धभरतस्याभ्यंतरादिविष्कंभः स्यात् । अवि ४१५७९ १७३/२१२ म ५३५१२। १९९/२१२ बा ६५४४६ १३/२१२ अस्मिंश्चतुर्भिर्गुणिते हैमवतस्याभ्यंतरादिविष्कंभः स्यात् ।अ १=१६६३१९ ५६/२१२ म=वि २१४०५१ १६०/२१२ बा=वि २६१७८४ ५२/२१२ अस्मिन् पुनश्चतुर्भिर्गुणिते हरिवर्षस्याभ्यंतरादिविष्कंभः स्यात् । अ=वि=६६५२७७ १२/२१२ म=वि=८५६२०७ ४/२१२ बा=वि=१०४७१३६ २०८/२१२ अस्मिन्नपि चतुर्भिर्गुणिते

विदेहस्याभ्यंतरादिविष्कंभः स्यात् । वि=२६६११०८ $\frac{४८}{२१२}$ म=वि=३४२४८२८ $\frac{१६}{२१२}$ बा=वि=४१८८५४७ $\frac{११६}{२१२}$ एवमैरावतादारभ्य विदेहपर्यंत ज्ञातव्यं ॥ ९२९ ॥

इदानीं धातकीखंडस्य विदेहस्थकच्छादीनामायामं गाथाद्वयेनाह;—

गिरिजुददु भद्दसालं मज्झिमसूइम्हि धणरिणे सूई ।
पुव्ववरमेरुबाहिरअब्भंतरभद्दसालअंतस्स ॥ ९३० ॥

गिरियुतं द्विभद्रशालं मध्यमसूचौ धनर्णे सूची ।
पूर्वापरमेरुबाह्याभ्यंतरभद्रशालांतस्य ॥ ९३० ॥

गिरि । धातकीखंडस्थपूर्वापरमंदरयोरर्धार्धं गृहीत्वा एकमंदरव्यासं कृत्वा ९४०० त्र तयोर्बाह्यभद्रशालद्वयव्यासं २१५७५८ मेलयित्वा २२५१५८ इदं मध्यमसूच्यां ९००००० धने कृते ११२५१५८ पूर्वापरमेर्वोर्बाह्यभद्रशालयोर्बाह्यसूचिर्भवति । तत्सूच्यां ९ ल. पुनरस्मिन् २२५१५८ ऋणे कृते तयोरभ्यंतरसूचिः स्यात् ६७४८४२ तदभ्यंतरभद्रसालसूचीव्यासं ६७४८४२ विष्कंभवर्गेत्यादिना करणिं कृत्वा ४५५४११७२४९६४० अस्य मूले गृहीते २१३४०३७ तत्सूचीपरिधिः स्यात् । अस्मिन् पर्वतावरुद्धक्षेत्रे १७८८४२ अपनीते गिरिरहितपरिधिः स्यात् १९५५१९५ ॥ ९३० ॥

गिरिरहिदपरिहिगुणिदं अडकदिणाविसयबारसेहि हिदं
णदिहीणदलं दीहं कच्छादिमगंधमालिणी अंते॥९३१॥

गिरिरहितपरिधिगुणितं अष्टकृतिना द्विशतद्वादशैः हितं ।
नदीहीनदलं दीर्घं कच्छादिमं गंधमालिनी अंते ॥ ९३१ ॥

गिरि । एतावच्छलाकयोः २१२ एतावति क्षेत्रे १९५५१९५ एतावद्विदेहशलाकयोः ४ किमिति संपात्य गिरिरहितपरिधिमष्टकृत्या संगुण्य १२५१३२४८० प्रमाणेन द्वादशोत्तरद्विशतेन २१२ हृतं चेदभ्यंतरसूचीस्थले विदेहविष्कंभः

स्यात् ॥ ५९०२४७ $\frac{११६}{२१२}$ अत्र नदीव्यासं १००० हीनयित्वा ५८९२४७ $\frac{११६}{२१२}$ अर्धिते २९४६२३ $\frac{१६४}{२१२}$ गंधमालिन्याख्यदेशस्यांत्यायामः स्यात्। प्रागानीतधातकीखंडबाह्यभद्रशालसूचीव्यासं ११२५१५८ पूर्ववत्करणिं कृत्वा १२६५९८०५२४९६४० मूले गृहीते तत्परिधिः स्यात् ३५५८०६२ अस्मिन् पर्वतावरुद्धक्षेत्रं १७८८४२ अपनीय ३३७९२२० प्राग्वत्त्रैराशिकविधिनाष्टकृत्या ६४ संगुण्य २१६२७००८० द्वादशोत्तरद्विशतेन २१२ भक्ते बाह्यभद्रशालसूचीस्थाने विदेहविष्कंभः स्यात् १०२०१४१ $\frac{१८८}{२१२}$ । अत्र नदीव्यास १००० मपनीय १०१९१४१ $\frac{१८८}{२१२}$ दलिते ५०९५७० $\frac{२००}{२१२}$ कच्छाया आद्यायामः स्यात् ॥ ९३१ ॥

इदानीं कच्छादिविजयादीनां मध्यायाममंत्यायाममानेतुमवतारं गाथाद्वयेनाह;—

विजयावक्खाराणं विभंगणदिदेवरण्ण परिहीओ ।
बिण्णिसयबारभजिदा बत्तीसगुणा तहिं वड्ढी ॥ ९३२ ॥

विजयवक्षाराणां विभंगनदीदेवारण्यानां परिधयः ।
द्विशतद्वादशभक्ता द्वात्रिंशद्गुणा तस्मिन् वृद्धयः ॥ ९३२ ॥

विजया । विजयवक्षारविभंगनदीदेवारण्यानां चतुर्णां परिधयः द्वात्रिंशद्गुणिता द्वादशोत्तरद्विशतेन २१२ भक्ताश्चेत् तस्मिंस्तस्मिन् वृद्धयो भवंति ॥ ९३२ ॥

सगसगवड्ढी णियणियपढमायामम्हि संजुदा मज्झे ।
दीहो पुणरवि सहिदो तिरिए णियचरिमदीहत्तं॥९३३॥

स्वस्वकवृद्धयः निजनिजप्रथमायामे संयुता मध्ये ।
दीर्घः पुनरपि सहितः तिर्यक् निजचरमदीर्घत्वम् ॥ ९३३ ॥

सग । विजयादीनां चतुर्णां स्वकीयस्वकीयवृद्धयः निजनिजप्रथमायामे संयुक्ताश्चेत् तत्र तत्र मध्ये दीर्घः स्यात् तत्तन्मध्यायामे पुनरपि सहिताश्चेत्

तत्र तत्र निजनिजचरमदीर्घत्वं स्यात् । गाथाद्वयमेव विवरयति—धातकीखंडव्यासे ४ ल. गिरियुक्तभद्रशालद्वये २२५१५८ अपनीते विदेहस्य पूर्वापरप्रांतयोः क्षेत्रं स्यात्। १७४८४२ अस्मिन्नर्धितेऽर्धप्रांत क्षेत्रं स्यात् ८७४२१ अस्मिन् पुनर्वक्षारचतुष्टयव्यासं ४००० विभंगत्रयव्यासं ७५० देवारण्यव्यासं च ५८४४ सर्वं मेलयित्वा १०५९४ अपनीते शेषं विदेहस्यैकप्रांतशुद्धक्षेत्रव्यासः स्यात् ७६८२७ एतं धृत्वा देशाष्टकस्य ८ एतावति क्षेत्रे ७६८२७ एकस्य देशस्य किमिति संपात्य भक्ते कच्छाया व्यासः स्यात् $९६०३\frac{३}{८}$ अत्र समच्छेदेनांशांशिनोर्मेलनं कृत्वा $\frac{७६८२७}{८}$ अमुं विक्खंभवग्गेत्यादिना करणिं कृत्वा $\frac{५९०२३८७९२९०}{६४}$ मूलं गृहीत्वा $\frac{२४२९४८}{८}$ भक्ते कच्छाव्यासपरिधिः स्यात् $३०३६८\frac{१}{२}$ अस्मिन्नंशांशिनोः समच्छेदनमेलने कृत्वा $\frac{६०७३७}{२}$ एकभागस्यै १ तावत्परिधौ $\frac{६०७३७}{२}$ द्वयो २ र्भागयोः किमिति संपात्य $\frac{६०७३७।२}{२}$ पश्चात् पर्वतानां समव्यासत्वेन वृद्ध्यभावात् तच्छलाकाः १६८ धातकीखंडसर्वशलाकासु ३८० अपनीयावशिष्टाः क्षेत्रशलाकाः २१२ स्युः । एतावतीनां शलाकानां २१२ एतावति वृद्धिक्षेत्रे $\frac{६०७३७।२}{२}$ एतावद्विदेहशलाकानां ६४ किमिति संपातिते विदेहसर्ववृद्धिक्षेत्रं स्यात् $\frac{६०७३७।२।६४}{२१२।२}$ उभयोः प्रांतयोरेतावति वृद्धिक्षेत्रे $\frac{६०७३७।२।६४}{२१२।२}$ एकस्मिन् प्रांते १ किमिति संपातिते कच्छाया अंत्यायामवृद्धिक्षेत्रं स्यात् $\frac{६०७३७।२।६४}{२१२।२।२}$ अस्मिन् मुखभूमिसमासार्धमिति न्यायेनार्धीकृत्य $\frac{६०७३७।२।६४।१}{२१२।२।२।२..}$ यथायोग्यमपवर्तिते $\frac{६०७३७।३२}{२१२।२}$ बत्तीसगुणा तेहिं वड्ढीति गाथोक्तं स्यात् । पुनर्द्वाभ्यामपवर्तिते १६ गुणयित्वा $\frac{९७१७९२}{२१२}$ भक्ते कच्छाया मध्यायामवृद्धिक्षेत्रं स्यात् $४५८३\frac{१९६}{२१२}$ अस्मिन् कच्छाया आद्यायामे $५०९५७०\frac{२००}{२१२}$ युक्ते मध्यायामो भवति $५१४१५४\frac{१८४}{२१२}$ अस्मिन् पुनस्तदेव वृद्धिक्षेत्रे युक्ते कच्छाया बाह्यायामः स्यात् $५१८७३८\frac{१३८}{२१२}$ सांप्रतं वक्षारव्यासं १००० विक्खंभवग्गेत्यादिना करणिं कृत्वा १०००००० मूले गृहीते

वक्षारपरिधिः स्यात् ३१६२ एकस्मिन् भागे एतावति क्षेत्रे ३१६२ द्वयो २ र्भागयोः किमिति संपात्य ३१६२।२ पश्चादेतावच्छलाका-ना २१२ मेतावति वृद्धिक्षेत्रे ३१६२।२ एतावच्छलाकानां ६४ किमिति संपातिते विदेहगतपरिधिवृद्धिः $\frac{३१६२।२।६४}{२१२}$ स्यात् । उभयप्रांतयोरेतावति क्षेत्रे $\frac{३१६२।२।६४}{२१२}$ एकस्मिन् प्रांते किमिति संपात्य $\frac{३१६२।२।६४।१}{२१२।२}$ इदं मुखभूमिसमासेति युक्त्यार्धीकृत्य $\frac{३१६२।२।६४।१}{२१२।२।२}$ अपवर्तिते बत्तीसगुणि-ते गाथोक्तं स्यात् $\frac{३१६२।३२}{२१२}$ पुनर्गुणकारेण ३२ गुणयित्वा $\frac{१०११८४}{२१२}$ भक्ते मध्यायामवृद्धिक्षेत्रं स्यात् ४७७ $\frac{६०}{२१२}$ प्रागानीतकच्छाबाह्यायाम एव वक्षारस्याद्यायामः ५१८७३८ $\frac{१६८}{२१२}$ अस्मिन् प्रागानीतवक्षारवृद्धिक्षेत्रे ४७७ $\frac{६०}{२१२}$ युक्ते मध्यायामः स्यात् ५१९२१६ $\frac{१६}{२१२}$ अस्मिन् पुनस्तद्वृ-द्धिक्षेत्रे युक्ते बाह्यायामः स्यात् ५१९६९३ $\frac{७६}{२१२}$ वक्षारस्य बाह्या-याम एव सुकच्छाया आद्यायामः ५१९६९३ $\frac{७६}{२१२}$ अत्र प्रागानीत-देशवृद्धिक्षेत्रे ४५८३ $\frac{१९६}{२१२}$ युक्ते तस्या मध्यायामः ५२४२७७ $\frac{६०}{२१२}$ अस्मिन् तद्वृद्धिक्षेत्रे युक्ते तस्या बाह्यायामः ५२८८६१ $\frac{४४}{२१२}$ स्यात् । विभंगव्यासं २५० विक्खंभवग्गेत्यादिना करणिं कृत्वा ६२५००० मूले गृहीते ७९० विभंगपरिधिः । अमुं धृत्वा एकस्मिन् भागे १ एतावति क्षेत्रे ७९० द्वयोर्भागयोः किमिति संपात्य ७९०।२ पश्चादेतावच्छलाकाया २१२ एतावति क्षेत्रे ७९०।२ एतावच्छलाकानां ६४ किमिति संपातिते विदेहवृद्धिक्षेत्रं स्यात् $\frac{७९०।२।३४}{२१२}$ उभयप्रांतयोरेतावति क्षेत्रे $\frac{७९०।२।६४}{२१२}$ एकप्रांतस्य किमिति संपात्ये $\frac{७९०।२।६४}{२१२।२}$ दं मुखभूमिसमासार्धमिति युक्त्यार्धीकृत्य $\frac{७९०।२।६४}{२१२।२।२}$ अपवर्त्य $\frac{७९०।३२}{२१२}$ गुणयित्वा $\frac{२५२८०}{२१२}$ भक्ते $\frac{११९५२}{२१२}$ विभंगवृद्धिः स्यात् । सुकच्छाबाह्यायाम एव विभंगस्याद्यायामः ५२८८६१ $\frac{४४}{२१२}$ एतस्मिन् वृद्धिक्षेत्रे ११९ $\frac{५२}{२१२}$ युक्ते विभंगस्य मध्या-यामः ५२८९८० $\frac{९६}{२१२}$ अस्मिन् वृद्धिक्षेत्रे युक्ते तस्य बाह्यायामः ५२९०९९ $\frac{१४८}{२१२}$ स्यात् । इतः परं महाकच्छादिदेशायामाः वक्षारायामाः

विभंगायामाश्च तत्तद्वृद्धिक्षेत्रमेलनेनानेतव्याः। देवारण्यव्यासं ५८४४ विक्खंभवग्गेत्यादिना करणीमानीय ३४१५२३३६० मूले गृहीते देवारण्यपरिधिः स्यात् १८४८० एकभागस्यैतावति क्षेत्रे द्वयोर्भागयोः किमिति संपात्य १८४८०।२ एतावच्छलाकायाः २१२ एतावति क्षेत्रे १८४८०।२ एतावच्छलाकानां ६४ किमिति संपातिते विदेहगतदेवारण्यवृद्धिक्षेत्रं स्यात् $\frac{१८४८०।२।६४}{२१२}$ उभयप्रांतयोरेतावति क्षेत्रे $\frac{१८४८०।२।६४}{२१२}$ एकस्मिन् प्रांते किमिति संपात्ये $\frac{१८४८०।२।६४}{२१२।२}$ दं मुखभूमिसमासार्धमिति युक्त्यार्धीकृत्य $\frac{१८४८०।२।६४।१}{२१२।२।२}$ अपवर्त्य $\frac{१८४८०।३२}{२१२}$ गाथार्थं कृत्वा पुनरपि गुणकारेण ३२ गुणयित्वा $\frac{५९१३६०}{२१२}$ भक्ते देवारण्यमध्यक्षेत्रवृद्धिःस्यात् २७८९$\frac{९२}{२१२}$ पुष्कलावतीबाह्यायाम एव देवारण्यस्याद्यायामः ५८७४४७$\frac{१००}{२१२}$ अस्यानयनप्रकारं विवृणोति—देशवृद्धिं ४५८३$\frac{११६}{२१२}$ षोडशभि-१६ गुणायित्वा ७३३२८$\frac{३१३६}{२१२}$ वक्षारवृद्धिं ४७७$\frac{६०}{२१२}$ अष्टभि ८ गुणयित्वा ३८१६$\frac{४८०}{२१२}$ विभंगवृद्धिं ११९$\frac{५२}{२१२}$ षड्भिर्गुणयित्वा ७१४$\frac{३१२}{२१२}$ कच्छाया आद्यायामांशे $\frac{२००}{२१२}$ सहितान् सर्वानंशान्मेलयित्वा $\frac{४१२८}{२५२}$ भक्त्वा शेषो $\frac{१००}{११२}$ देवारण्याद्यायामस्य कला स्यात्। तल्लब्ध१९ मेकत्रांशिनि मेलयित्वा कच्छाद्यायामांशि ५०९५७० सहितानां सर्वेषामांशिनां मेलने ५८७४४७देवारण्यस्याद्यायामः। अत्र देवारण्यवृद्धिक्षेत्रे २७८९$\frac{९२}{२१२}$ युक्ते मध्यायामः ५९०२३६ $\frac{१९२}{२१२}$ अस्मिन् पुनस्तद्वृद्धिक्षेत्रे युक्ते बाह्यायामः ५९३०२६$\frac{७२}{२१२}$ स्यात्। एवं सीताया दक्षिणतटेपि विजयवक्षारविभंगदेवारण्यानां व्यासपरिधिवृद्धिक्षेत्रायामास्तत्रानेतव्याः। एवं पुष्करार्धेपि विजयवक्षारविभंगदेवारण्यव्यासानां परिधीनानीय उभयोभयभागोत्पन्नगुणकाराद्विकेन गुणयित्वा द्वादशोत्तरद्विशत्या क्षेत्रशलाकाभि २१२ र्भक्त्वा चतुःषष्ट्या विदेहशलाकाभि ६४ र्गुणयित्वा लब्धं विदेहवृद्धिक्षेत्रे तत्तद्द्विकेन भक्तं लब्धमेकप्रांतवृद्धिक्षेत्रं मुखभूमिसमासार्धमित्यर्धयित्वापवर्त्य तत्तल्लब्धवृद्धिक्षेत्रं तत्तदाद्यायामेषु युंज्यात्। तथा सति तत्तन्मध्यायाम आग-

च्छति, पुनस्तत्तद्वृद्धिक्षेत्रे तत्तन्मध्यायामेषु प्रक्षिप्ते तत्तद्बाह्यायामा आगच्छंति ॥ ९३३ ॥

अथ धातकीखंडपुष्करद्वीपयोः किंचिद्विशेषस्वरूपं गाथाद्वयेन;—

धादइपुक्खरदीवा धादइपुक्खरतरूहिं संजुत्ता ।
तेसिं च वण्णणा पुण जंबूदुमवण्णणं व हवे ॥ ९३४ ॥

धातकीपुष्करद्वीपौ धातकीपुष्करतरुभ्यां संयुक्तौ ।
तयोः च वर्णना पुनः जंबूद्रुमवर्णना इव भवेत् ॥ ९३४ ॥

धादइ । धातकीखंडपुष्करद्वीपौ धातकीपुष्करतरुभ्यां संयुक्तौ, तयोर्वृक्षयोर्वर्णना पुनर्जंबूद्रुमवर्णनावद्भवेत् ॥ ९३४ ॥

धादइगंगारत्तदु हिमसिहरिणगोवरि उजुं जादि ।
णवणभतिणविगि चलणं जंबू व पुक्खरे दुगुणं ॥९३५॥

धातकीगंगारक्ताद्वे हिमशिखरिनगोपरि ऋजुं यातः ।
नवनभस्त्रिनवैकं चलनं जंबू व पुष्करे द्विगुणं ॥ ९३५ ॥

धादइ । धातकीखंडस्थगंगासिंधू रक्तारक्तोदे द्वे नद्यौ यथासंख्यं हिमवच्छिखरिनगयोरुपरि नवनभस्त्रिनवांकोत्तरैकयोजनानि १९३०९ ऋजुं यातः चलनादिकं पूनर्जंबूद्वीपवत् ज्ञातव्यं । पुष्करद्वीपे पुनर्नगोपरि नदीगमनं एतस्माद्द्विगुणं ज्ञातव्यं ३८६१८ ॥ ९३५ ॥ एवं **नरलोको** व्याख्यातः ।

इदानीं तिर्यग्लोकं प्रतिपादयन् तावदुभयत्रापि स्थितानां शैलार्णवानां गाधं बोधयति;--

मेरुणरलोयबाहिरसेलागाढं सहस्सपरिमाणं ।
सेसाणं सगतुरियं सव्वुवहीणं सहस्सं तु ॥ ९३६ ॥

मेरुनरलोकबाह्यशैलावगाधं सहस्रपरिमाणं ।
शेषाणां स्वकतुर्यं सर्वोदधीनां सहस्रं तु ॥ ९३६ ॥

मेरु । मेरुनगस्य मानुषोत्तरं वर्जयित्वा नरलोकबहिःस्थानां शैलानामवगाधं सहस्र १००० परिमाणं ज्ञातव्यं तदभ्यंतरस्थितानां शेषाणां हिमवदादिशैलानामवगाधः पुनः स्वकीयस्वकीयोदयचतुर्थांशो ज्ञातव्यः। सर्वेषामुदधीनामवगाधं तु सहस्रयोजनं जानीयात् ॥ ९३६ ॥

अनंतरं मानुषोत्तरस्वरूपं गाथात्रयेणाह;—

अंते टंकच्छिण्णो बाहिं कमवड्डिहाणि कणयणिहो ।
णदिणिग्गमपहचोद्दसगुहाजुदो माणुसुत्तरगो ॥ ९३७॥

अंतः टंकच्छिन्नो बाह्ये क्रमवृद्धिहानिकः कनकनिभः ।
नदीनिर्गमपथचतुर्दशगुहायुतः मानुषोत्तरः ॥ ९३७ ॥

अंते । अभ्यंतरे टंकछिन्नो बाह्ये शिखरात् क्रमवृद्धि मूलात् क्रमहानियुक्तः कनकनिभः नदीनिर्गमपथैश्चतुर्दशगुहाभिर्युतो मानुषोत्तराख्यशैलो ज्ञातव्यः ॥ ९३७ ॥

मणुसुत्तरुदयभूमुहमिगिवीसं सगसयं सहस्सं च ।
बावीसहियसहस्सं चउवीसं चउसयं कमसो ॥ ९३८ ॥

मानुषोत्तरोदयभूमुखमेकाविंशं सप्तशतं सहस्रं च ।
द्वाविंशाधिकसहस्रं चतुर्विंशतिः चतुःशतं क्रमशः ॥ ९३८ ॥

मणुसु । मानुषोत्तरोदयभूमुखव्यासाः क्रमेण एकविंशतिसप्तशतोत्तरसहस्रयोजनानि १७२१ द्वाविंशत्यधिकसहस्रयोजनानि १०२२ चतुर्विंशत्युत्तरचतुःशतयोजनानि ४२४ भवंति ॥ ९३८ ॥

तण्णगसिहरे वेदी चावाणं चदुस्सहस्सतुंगजुदा ।
सोहइ वलयायारा चरणण्णिदकोसवित्थारा ॥९३९॥

तन्नगशिखरे वेदी चापानां चतुःसहस्रतुंगयुता ।
शोभते बलयाकारा चरणान्वितक्रोशविस्तारा ॥ ९३९ ॥

तण्णग । तन्मानुषोत्तरनगस्य शिखरे चापानां चतुःसहस्रतुंगयुता चतुर्थांशान्वितक्रोशविस्तारा २५०० वलयाकारा वेदी शोभते ॥ ९३९ ॥

अथात्र स्थितानि कूटानि कथयति;—

णइरिदिवायव्वदिसं वज्जिय छस्सुवि दिसासु कूडाणि ।
तियतियमावलियाए ताणब्भंतरदिसासु चउवसई९४०

नैऋतीं वायव्यदिशं वर्जयित्वा षट्स्वपि दिशासु कूटानि ।
त्रिकत्रिकमावल्या तेषामभ्यंतरदिशासु चतुष्कवसत्यः ॥ ९४० ॥

णइ । नैऋतीं वायवीयं च दिशं वर्जयित्वा षट्स्वपि दिशासु पंक्तिक्रमेण त्रीणि त्रीणि कूटानि संति । तेषामभ्यंतरादिशासु चतुरस्रा वसत्यः संति ॥ ९४० ॥

अथ तत्कूटवासिदेवानाह;—

अग्गीसाणछकूडे गरुडकुमारा वसंति सेसे दु ।
दिग्गयबारसकूडे सुवण्णकुलदिक्कुमारीओ ॥ ९४१ ॥

अग्नीशानषट्कूटे गरुडकुमारा वसंति शेषेषु तु ।
दिग्गतद्वादशकूटेषु सुवर्णकुलदिक्कुमार्यः ॥ ९४१ ॥

अग्गी । आग्नेय्यैशानदिक्स्थेषु षट्सु कूटेषु गरुडकुमारा वसंति । शेषेषु पुनर्दिग्गतद्वादशकूटेषु सुपर्णकुलदिक्कुमार्यो वसंति ॥ ९४१ ॥

अथ मानुषोत्तरस्य स्थानादिकमाह;—

पणदाललक्खमाणुसखेत्तं परिवेढिऊण सो होदि ।
उदयचउत्थोगाढो पुक्खरविदियद्धपढमम्हि ॥ ९४२ ॥

पंचचत्वारिंशल्लक्षमानुषक्षेत्रं परिवेष्ट्य स भवति ।
उदयचतुर्थावगाधः पुष्करद्वितीयार्धप्रथमे ॥ ९४२ ॥

पण । पंचोत्तरचत्वारिंशल्लक्षयोजन ४५००००० प्रमितमानुषक्षेत्रं परिवेष्ट्य पुष्करद्वीपद्वितीयार्धस्य प्रथमभागे स मानुषोत्तरो भवति । तस्यावगाधः उदयचतुर्थांशः ४३०$\frac{1}{4}$ स्यात् ॥ ९४२ ॥

अथ कुंडलरुचकाचलयोरुदयादित्रयमाह;—

कुंडलगो दसगुणिओ पणसदरिसहस्स तुंगओ रुजगे ।
चउरासीदिसहस्सा सव्वत्थुभयं सुवण्णमयं ॥ ९४३ ॥

कुंडलगौ दशगुणितौ पंचसप्ततिसहस्रं तुंगो रुचके ।
चतुरशीतिसहस्राणि सर्वत्रोभयौ सुवर्णमयौ ॥ ९४३ ॥

कुंडल । मानुषोत्तरभूमुखव्यासात् कुंडलपर्वतस्य भूमुखव्यासौ दशगुणितौ भू १०२२० मुख ४२४० तत्तुंगस्तु पंचसप्ततिसहस्रयोजनानि ७५००० रुचके सर्वत्र उदये व्यासे च चतुरशीतिसहस्रयोजनानि ८४००० उभयौ कुंडलरुचकौ सुवर्णमयौ स्यातां ॥ ९४३ ॥

सांप्रतं कुंडलस्योपरिमकूटानि गाथात्रयेणाह;—

चउ चउ कूडा पडिदिसमिह कुंडलपव्वदस्स सिहरम्मि
ताणब्भंतरदिग्गय चत्तारि जिणिंदकूडाणि ॥ ९४४ ॥

चत्वारि चत्वारि कूटानि प्रतिदिशमिह कुंडलपर्वतस्य शिखरे ।
तेषामभ्यंतरदिग्गतानि चत्वारि जिनेंद्रकूटानि ॥ ९४४ ॥

चउ । इह कुंडलपर्वतस्य शिखरे प्रतिदिशं चत्वारि ४ चत्वारि ४ कूटानि । तेषामभ्यंतरादिग्गतानि चत्वारि ४ जिनेंद्रकूटानि ॥ ९४४ ॥

वज्जं तप्पह कणयं कणयप्पह रजदकूड रजदाहं ।
सुमहप्पह अंकंकप्पह मणिकूडं च मणिपहयं ॥ ९४५ ॥

वज्रं तत्प्रभं कनकं कनकप्रभं रजतकूटं रजताभं ।
सुमहत्प्रभं अंकमंकप्रभं मणिकूटं च मणिप्रभं ॥ ९४५ ॥

वज्जं । वज्रं वज्रप्रभं कनकं कनकप्रभं रजतकूटं रजताभं सुप्रभं महाप्रभं अंकं अंकप्रभं मणिकूटं मणिप्रभं ॥ ९४५ ॥

रुजगरुजगाह हिमवं मंदरमिह चारि सिद्धकूडाणि ।
अत्थंति सेसि कूडे कूडक्खसुरा कदावासा ॥ ९४६ ॥

रुचकरुचकाभे हिमवत् मंदिरमिह चत्वारि सिद्धकूटानि ।
आसते शेषेषु कूटेषु कूटाख्यसुराः कृतावासाः ॥ ९४६ ॥

रुजग । रुचकं रुचकाभं हिमवत् मंदिरं ४ एभ्यः कूटेभ्यः सकाशादन्यानि इह चत्वारि सिद्धकूटानि संति । शेषकूटेषु १६ कूटाख्याः सुराः कृतावासा भूत्वा आसते ॥ ९४६ ॥

इदानीं रुचकोपरिमकूटानि तन्निवासासिनीदेवीस्तत्कृत्यं च त्रयोदशगाथाभिराह;—

पुव्वादिसु पुह अड अड अंते चउचारि चारि कूडाणि ।
रुजगे सव्वब्भंतरचत्तारि जिणिंदकूडाणि ॥ ९४७ ॥

पूर्वादिषु पृथक् अष्टौ अष्टौ अंतः चतसृषु चत्वारि चत्वारि कूटानि
रुचके सर्वाभ्यंतरचत्वारि जिनेंद्रकूटानि ॥ ९४७ ॥

पुव्वा । रुचकगिरौ पूर्वादिषु चतसृषु दिक्षु पृथक् पंक्तिक्रमेणाष्टावष्टौ कूटानि । तेषामभ्यंतरे चतसृषु दिक्षु एकवारं चत्वारि कूटानि । तदभ्यंतरे पुनरप्येकवारं चत्वारि कूटानि तदभ्यंतरे च पुनरप्येकवारं चत्वारि कूटानि एवमभ्यंतरे प्रतिदिशं त्रीणि त्रीणि कूटानि तेषु सर्वाभ्यंतराणि चत्वारि जिनेंद्रकूटानि ॥ ९४७ ॥

कणयं कंचण तवणं सोत्थियकूडं सुभद्दमंजणयं ।
अंजणमूलं वज्जं तत्थेदा दिक्कुमारीओ ॥ ९४८ ॥

कनकं कांचनं तपनं स्वस्तिककूटं सुभद्रमंजनकं ।
अंजनमूलं वज्रं तत्रैता दिक्कुमार्यः ॥ ९४८ ॥

कणयं । कनकं कांचनं तपनं स्वस्तिककूटं सुभद्रमंजनकं अंजनमूलं वज्रमित्येतानि पूर्वदिश्यष्टौ कूटानि । तत्रैता अग्रे वक्ष्यमाणा दिक्कुमार्यो निवसंति ॥ ९४८ ॥

विजयाय वइजयंती जयंति अवरजिदाय णंदेत्ति ।
णंदवदी णंदुत्तर णामाणंतो णंदिसेणेत्ति ॥ ९४९ ॥

विजया वैजयंती जयंती अपराजिता नंदा इति ।
नंदवती नंदोत्तरा नाम्नामंते नंदिषेणा इति ॥ ९४९ ॥

विजया । विजया वैजयंती जयंत्यपराजिता नंदा नंदवती नंदोत्तरा नंदिषेणेत्यष्टौ ता दिक्कुमार्यः ॥ ९४९ ॥

फलिह रजदं व कुमुदं णलिणं पउमं ससीय वेसवणं ।
वेलुरियं देवीओ इच्छापढमा समाहारा ॥ ९५० ॥

स्फटिकं रजतं वा कुमुदं नलिनं पद्मं शशि वैश्रवणं ।
वैडूर्यं देव्यः इच्छाप्रथमा समाहाराः ॥ ९५० ॥

फलिह । स्फटिकं रजतं कुमुदं नलिनं पद्मं शशि वैश्रवणं वैडूर्यं इत्यष्टौ ८ दक्षिणदिक्कूटानि । अत्रस्था देव्यः इच्छासमाहाराः ॥ ९५० ॥

सुपइण्णाय जसोहर लच्छी सेसवदि चित्तगुत्तोत्ति ।
चरिम वसुंधरदेवी अमोहमह सोत्थियं कूडं ॥ ९५१ ॥

सुप्रकीर्णा यशोधरा लक्ष्मीः शेषवती चित्रगुप्ता इति ।
चरमा वसुंधरा देव्यः अमोघमथ स्वास्तिकं कूटं ॥ ९५१ ॥

सुपइ । सुप्रकीर्णा यशोधरा लक्ष्मीः शेषवती चित्रगुप्ता वसुंधरा इत्यष्टौ ८ देव्यः अमोघमथ स्वास्तिकं कूटं ॥ ९५१ ॥

तो मंदर हेमवदं रज्जं रज्जुत्तमं च चंदमवि ।
पच्छिम सुदंसणं पुण इलादियाय सुरादेवी ॥ ९५२ ॥

ततो मंदरं हैमवतं राज्यं राज्योत्तमं च चंद्रमपि ।
पश्चिमं सुदर्शनं पुनः इलादिका सुरादेवी ॥ ९५२ ॥

तो । ततो मंदरं हैमवतं राज्यं राज्योत्तमं चंद्रमपि सुदर्शनामित्यष्टौ ८ पश्चिमदिक्कूटानि । तत्र स्थिता देव्यः इलावती सुरादेवी ॥ ९५२ ॥

पुढवी पउमवदी इगिणासो देवी य णवमिया सीदा ।
भद्दा तो विजयादी चउकूडं कुंडलं रुजगं ॥ ९५३ ॥

पृथ्वी पद्मावती एकनासा देवी च नवमिका सीता ।
भद्रा ततो विजयादिचतुष्कूटानि कुंडलं रुचकं ॥ ९५३ ॥

पुढवी । पृथ्वी पद्मावती एकनासा देवी नवमिका सीता भद्रा इत्यष्टौ ता देव्यः । ततो विजयवैजयंतजयंतापराजितानीति चत्वारि कूटानि कुंडलं रुचकं ॥ ९५३ ॥

तो रयणवंत सव्वादीरयणं उत्तरे अलंबूसा ।
बिदिया दु मिस्सकेसीदेवी पुण पुंडरीगिणि सा ॥९५४

ततो रत्नवत् सर्वादिरत्नं उत्तरे अलंभूषा ।
द्वितीया तु मिश्रकेशी देवी पुनः पुंडरीकिनी सा ॥ ९५४ ॥

तो । ततो रत्नवत् सर्वरत्नामित्यष्टौ ८ उत्तरादिक्कूटानि, तत्र स्थितास्तु देव्यः अलंभूषा मिश्रकेशी देवी पुंडरीकिणी ॥ ९५४ ॥

वारुणि आसासच्चा हिरिसिरि पुव्वगयदिक्कुमारीओ ।
भिंगारं धरिदूणिह दक्खिणदेवीओ मुकुरुंदं ॥ ९५५ ॥

वारुणी आशासत्या ह्रीः श्रीः पूर्वगतदिक्कुमार्यः ।
भृंगारं धृत्वा इह दाक्षिणदेव्यो मुकुरुंदं ॥ ९५५ ॥

वारुणि । वारुणी आशासत्या ह्री श्रीत्यष्टौ देव्यः । एतासु तावत्पूर्वगत्वदिक्कुमार्यो भृंगारं धृत्वा इह दक्षिणदेव्यो मुकुरंदं धृत्वा ॥ १५५ ॥

पश्चिमगा छत्ततयं उत्तरगा चामरं पमोदजुदा ।
तित्थयरजणणिसेवं जिणजणिकाले पकुव्वंति ॥१५६॥

पश्चिमगाः छत्रत्रयं उत्तरगाः चामरं प्रमोदयुताः ।
तीर्थकरजननीसेवां जिनजनिकाले प्रकुर्वंति ॥ १५६ ॥

पच्छिम । पश्चिमादिग्गता देव्यश्छत्रत्रयं धृत्वा उत्तरादिग्गता देव्यश्चमराणि धृत्वा प्रमोदयुता सत्यस्ताः सर्वा देव्यो जिनजननकाले तीर्थकरजननीसेवां प्रकुर्वते ॥ १५६ ॥

पुव्वे विमलं कूलं णिच्चालोयं सयंपहं अवरे ।
णिच्चुज्जोदं देवी कमसो कणया:सदादिदहा ॥ १५७ ॥

पूर्वयोः विमलं कूटं नित्यालोकं अपरयोः ।
नित्योद्योतं देव्यः क्रमशः कनका शतादिह्रदा ॥ १५७ ॥

पुव्वे । रुचकस्याभ्यंतरकूटेषु तावत्पूर्वदिशि विमलं कूटं दक्षिणदिशि नित्यालोकं अपरदिशि स्वयंप्रभं उत्तरादिशि नित्योद्योतमिति चत्वारि कूटानि । अत्र स्थिताः देव्यः क्रमशः कनका शतह्रदा ॥ १५७ ॥

कणयादिचित्त सोदामणि सव्वदिसप्पसण्णदं देंति ।
तित्थयरजम्मकाले कूलं वेलुरियरुजगमदो ॥ १५८ ॥

कनकादिचित्रा सौदामिनी सर्वदिशाप्रसन्नतां दधते ।
तीर्थकरजन्मकाले कूटं वैडूर्यं रुचकमतः ॥ १५८ ॥

कणया । कनकचित्रा सौदामिनी चतस्रस्ता देव्यः तीर्थकरजन्मकाले सर्वदिशां प्रसन्नतां दधते । अतो अभ्यंतरे पूर्वदिदिक्षु वैडूर्यं रुचकं ।१५८॥

मणिकूडं रज्जुत्तममिह रुजगा रुजगकीत्ति रुजगादी ।
कंता रुजगादिपहा जिणजादयकम्मकदिकुसला॥९५९॥

मणिकूटं राज्योत्तममिह रुचका रुचककीर्तिः रुचकादिः ।
कांता रुचकादिप्रभा जिनजातकर्मकृतिकुशलाः ॥ ९५९ ॥

मणि । मणिकूटं राज्योत्तममिति चत्वारि कूटानि, इहस्था देव्यः रुचका रुचककीर्तिः रुचककांता रुचकप्रभा चतस्रो देव्यो जिनजातकर्मकृतौ कुशलाः ॥ ९५९ ॥

अथ कुंडलरुचकस्थकूटानां व्यासादिकमाह;—

सव्वेसिं कूडाणं जोयणपंचसय भूमिवित्थारो ।
पणसयमुदओ तद्दलमुहवासो कुंडले रुजगे ॥ ९६० ॥

सर्वेषां कूटानां योजनपंचशतं भूमिविस्तारः ।
पंचशतमुदयः तद्दलमुखव्यासः कुंडले रुचके ॥ ९६० ॥

सव्वे । कुंडले रुचके च सर्वेषां कूटानां योजनपंचशतं ५०० भूमिविस्तारः उदयश्च पंचशतयोजनानि ५०० तेषां मुखव्यासस्तु पंचशतार्धयोजनानि २५० ॥ ९६० ॥

अथ द्वीपसमुद्राणामधीशान् गाथापंचकेनाह;—

जंबूदीवे वाणो अणादरो सुट्ठिदो य लवणेवि ।
धादइखंडे सामी प्रभासापियदंसणा देवा ॥ ९६१ ॥

जंबूद्वीपे वानौ अनादरः सुस्थितश्च लवणेपि ।
धातकीखंडे स्वामिनौ प्रभासप्रियदर्शनौ देवौ ॥ ९६१ ॥

जंबू । जंबूद्वीपे लवणसमुद्रे च स्वामिनौ व्यंतरावनादरसुस्थिताख्यौ धातकीखंडे स्वामिनौ प्रभासप्रियदर्शनौ देवौ ॥ ९६१ ॥

कालमहकाल पउमा पुंडरियो माणुसुत्तरे सेले ।
चक्खुमसुचक्खुमा सिरिपहधर पुक्खरुवहिम्हि ॥९६२॥

कालमहाकालौ पद्मः पुंडरीकः मानुषोत्तरे शैले ।

चक्षुष्मसुचक्षुष्माणौ श्रीप्रभधरौ पुष्करोदधौ ॥ ९६२ ॥

काल । कालोदकसमुद्रे नाथौ कालमहाकालौ पुष्करार्धे मानुषोत्तरे चाधीशौ पद्मपुंडरीकौ पुष्करद्वीपे द्वितीयार्धे प्रभू चक्षुष्मसुचष्माणौ पुष्करोदधौ नाथौ श्रीप्रभश्रीधरौ स्यातां ॥ ९६२ ॥

वरुणो वरुणादिपहो मज्झो मज्झिमसुरो य पंडुरओ ।
पुप्फादिदंत विमला विमलप्पह सुप्पहा महप्पहओ९६३

वरुणो वरुणादिप्रभो मध्यः मध्यमसुरः च पांडुरः ।

पुष्पादिदंतः विमलो विमलप्रभः सुप्रभः महाप्रभः ॥ ९६३ ॥

वरुणो । वारुणीद्वीपे नाथौ वरुणवरुणप्रभौ, वारुणीसमुद्रे नाथौ मध्यमध्यमदेवौ, क्षीरद्वीपे नाथौ पांडुरपुष्पदंतौ, क्षीरसमुद्रे नाथौ विमलविमलप्रभौ, घृतद्वीपे नाथौ सुप्रभमहाप्रभौ ॥ ९६३ ॥

कणय कणयाह पुण्णा पुण्णप्पहा देवगंधमहागंधा ।
तो णंदी णंदिपहो भद्दसुभद्दा य अरुण अरुणपहा ९६४

कनकः कनकाभः पुण्यः पुण्यप्रभो देवगंधमहागंधौ ।

ततो नंदी नंदिप्रभः भद्रसुभद्रौ च अरुणः अरुणप्रभः॥ ९६४ ॥

कणय । घृतसमुद्रे प्रभू कनककनकप्रभौ, क्षौद्रद्वीपे प्रभू पुण्यपुण्यप्रभौ क्षौद्रसमुद्रे प्रभू देवगंधमहागंधौ । ततो नंदीश्वरद्वीपे प्रभू नंदीनंदिप्रभौ नंदीश्वरसमुद्रे प्रभू भद्रसुभद्रौ, अरुणद्वीपे प्रभू अरुणारुणप्रभौ ॥ ९६४ ॥

ससुगंध सव्वगंधो अरुणसमुद्दम्हि इदि पहू दो दो ।
दीवसमुद्दे पढमो दक्खिणभागम्हि उत्तरे बिदियो ९६५

ससुगंधः सर्वगंधः अरुणसमुद्रे इति प्रभू द्वौ द्वौ ।
द्वीपसमुद्रे प्रथमः दक्षिणभागे उत्तरे द्वितीयः ॥ ९६५ ॥

ससुगंध । अरुणसमुद्रे नायकौ ससुगंधसर्वगंधौ इति द्वीपे समुद्रे च द्वौ द्वौ प्रभू भवतः । तत्र दक्षिणभागे प्रथमोक्तः स्यात् उत्तरभागे द्वितीयोक्तः स्यात् ॥ ९६५ ॥

इदानीं नंदीश्वरद्वीपं सविशेषं प्रतिपादयन् तावत्तस्य बलयव्यासमाह;—

आदीदो खलु अट्ठमणंदीसरदीववलयविक्खंभो ।
सयसमहियतेवट्ठीकोडी चुलसीदिलक्खा यं ॥ ९६६ ॥

आदितः खलु अष्टमनंदीश्वरद्वीपवलयविष्कंभः ।
शतसमधिकत्रिषष्ठिकोटिः चतुरशीतिलक्षश्च ॥ ९६६ ॥

आदीदो । जंबूद्वीपादारभ्याष्टमनंदीश्वरद्वीपवलयविष्कंभः शतसमधिकात्रिषष्टिकोटिचतुरशीतिलक्षयोजनप्रमितः खलु १६३८४००००० एतावत्कथं नंदीश्वरद्वीपसहितप्राक्तनद्वीपसमुद्राणां संख्या ? १५ पदं कृत्वा रूअणाहियपदमित्यादिना कृते सति भवति ॥ ९६६ ॥

अथात्र दिक्चतुष्टयस्थितानां पर्वतानामाख्यां संख्यामवस्थानं च निरूपयति;—

एक्कचउक्कट्ठंजणदहिमुहरइयरणगा पडिदिसम्हि ।
मज्झे चउदिसवावीमज्झे तब्बाहिरदुकोणे ॥ ९६७ ॥

एकचतुष्काष्टांजनदधिमुखरतिकरनगाः प्रतिदिशं ।
मध्ये चतुर्दिग्वापीमध्ये तद्बाह्यद्विकोणे ॥ ९६७ ॥

एक्क । प्रतिदिशं मध्ये चतुर्दिक्स्थवापीमध्ये तद्वापीबाह्यद्विकोणे च यथासंख्यं एक चतुः ४ काष्टसंख्याकाः अंजनदधिमुखरतिकराख्याः नगा नंदीश्वरद्वीपे ज्ञातव्याः ॥ ९६७ ॥

अथ तद्गिरीणां वर्णं परिमाणं च प्रतिपादयति;—

अंजणदहिकणयणिहा चुलसीदिदहेक्कजोयणसहस्सा।
वट्टा वासुदएणय सरिसा बावण्णसेलाओ॥ ९६८॥

अंजनदधिकनकनिभाः चतुरशीतिदशैकयोजनसहस्राः।
वृत्ताः व्यासोदयेन सदृशाः द्वापंचाशच्छैलाः॥ ९६८॥

अंजण। अंजनादयस्त्रयः पर्वताः यथासंख्यं अंजनदधिकनकाभाः तेषां प्रमाणं चतुरशीतिसहस्र ८४००० दशसहस्रै १०००० कसहस्र १००० योजनानि। ते च वृत्ताः व्यासोदयेन सदृशाः सर्वे मिलित्वा द्वापंचाशच्छैला ५२ भवंति॥ ९६८॥

इदानीं तद्वापीनां नामानि गाथाद्वयेनाह;—

णंदा णंदवदी पुण णंदुत्तर णंदिसेण अरविरया।
गयवीदसोगविजया वइजयंती जयंती य॥ ९६९॥

नंदा नंदवती पुनः नंदोत्तरा नंदिषेणा अरविरजे।
गतवीतशोकाविजयाः वैजयंती जयंती च॥ ९६९॥

णंदा। नंदा नंदवती पुनर्नंदोत्तरा नंदिषेणा अरजा विरजा गतशोका वीतशोका विजया वैजयंती जयंती च॥ ९६९॥

अवराजिदा य रम्मा रमणीया सुप्पभा य पुव्वादी।
रयणतडा लक्खपमा चरिमा पुण सव्वदोभद्दा॥९७०॥

अपराजिता च रम्या रमणीया सुप्रभा च पूर्वादितः।
रत्नतट्यः लक्षप्रमाः चरमा पुनः सर्वतोभद्रा॥ ९७०॥

अवरा। अपराजिता च रम्या रमणीया सुप्रमा च चरमा पुनः सर्वतो भद्राः। एताः सर्वा रत्नतट्यो लक्षयोजनप्रमिताः पूर्वदिग्भागादितो ज्ञातव्याः॥ ९७०॥

अनंतरं तासां वापीनां स्वरूपमाह;—

सव्वे समचउरस्सा टंकुक्किण्णा सहस्समोगाढा ।
वेदियचउवण्णजुदा जलयरउम्मुक्कजलपुण्णा ॥ ९७१ ॥

सर्वाः समचतुरस्राः टंकोत्कीर्णाः सहस्रमवगाधाः ।
वेदिकाचतुर्वर्णयुता जलचरोन्मुक्तजलपूर्णाः ॥ ९७१ ॥

सव्वे । ताः सर्वाः समचतुरस्राष्टंकोत्कीर्णाः सहस्रयोजनावगाधाः वेदिकाभिश्चतुर्वनैश्च युक्ताः जलचरोन्मुक्तजलपूर्णाः स्युः ॥ ९७१ ॥

अथ तद्वापीनां वनस्वरूपमाह;—

वावीणं पुव्वादिसु असोयसत्तच्छदं च चंपवणं ।
चूदवणं च कमेण य सगवावीदीहदलवासा ॥ ९७२ ॥

वापीनां पूर्वदिषु अशोकसप्तच्छदं च चंपवनं ।
चूतवनं च क्रमेण च स्वकवापीदीर्घदलव्यासानि ॥ ९७२ ॥

वावीणं । तद्वापीनां पूर्वादिदिक्षु यथाक्रमेण स्वकीयस्वकीयवापीदीर्घाणि १ ल. तद्दलव्यासानि ५०००० अशोकसप्तच्छदचंपकचूतवनानि भवंति ॥ ९७२ ॥

एवमंजनादिगिरींद्रेषु प्रत्येकमेकैकं चैत्यालयं प्रतिपादयन् तेषु चतुर्णिकायामरैः कालविशेषाश्रयेण क्रियमाणपूजाविशेषं प्रतिपादयितुं गाथापंचकेनाह;—

तव्वावण्णणगेसुवि बावण्णजिणालया हवंति तहिं ।
सोहम्मादी बारसकप्पिंदा ससुरभवणतिया ॥ ९७३ ॥

तद्द्वापंचाशन्नगेष्वपि द्वापंचाशज्जिनालया भवंति तेषु ।
सौधर्मादयो द्वादशकल्पेंद्राः ससुरभवनत्रिकाः ॥ ९७३ ॥

तव्भाव। तेषु द्वापंचाश ५२ नगेष्वपि द्वापंचाश ५२ जिनालया भवंति, तेषु इतरसुरैः भवनत्रयदेवैश्च सहिताः सौधर्माद्यो द्वादशकल्पेंद्राः ॥ ९७३ ॥

ते कथंभूताः—

गयहयकेसरिवसहे सारसपिकहंसकोकगरुडे य।
मयरसिहिकमलपुप्फयविमाणपहुदिं समारूढा ॥९७४॥

गजहयकेसरिवृषभान् सारसपिकहंसकोकगरुडान् च।
मकरशिखिकमलपुष्पकविमानप्रभृति समारूढाः ॥ ९७४ ॥

गय। गजहयकेसरिवृषभान् सारसपिकहंसकोकगरुडांश्च मकराशिखिकमलपुष्पकविमानप्रभृति समारूढाः ॥ ९७४ ॥

पुनः कथंभूताः—

दिव्वफलपुप्फहत्था सत्थाभरणा सचामराणीया।
बहुधयतूरारावा गत्ता कुव्वंति कल्लाणं ॥ ९७५ ॥

दिव्यफलपुष्पहस्ता शस्ताभरणाः सचामरानीकाः।
बहुध्वजतूर्यारावाः गत्वा कुर्वंति कल्याणं ॥ ९७५ ॥

दिव्व। दिव्यफलपुष्पहस्ता शस्ताभरणाः सचामरानीकाः बहुध्वजतूर्यारावाः संतो गत्वा ऐंद्रध्वजादिकल्याणं कुर्वंति ॥ ९७५ ॥

कदा इतिचेत्;—

पडिवरिसं आसाढे तह कत्तियफग्गुणे य अट्ठमिदो।
पुण्णदिणोत्ति यभिक्खं दो द्दो पहरं तु ससुरेहिं ॥९७६

प्रतिवर्षमाषाढे तथा कार्तिके फाल्गुने च अष्टमीतः।
पूर्णादिनांतं चाभीक्ष्णं द्वौ द्वौ प्रहरौ तु स्वसुरैः ॥ ९७६ ॥

पडि । प्रतिवर्षमाषाढमासे तथा कार्तिकमासे फाल्गुनमासे चाष्टमीत आरभ्य पूर्णिमादिनपर्यंतमभीक्ष्णं द्वौ द्वौ प्रहरौ स्वस्वसुरैः सह ॥ ९७६ ॥

किं कुर्वंतीति चेत्;—

सोहम्मो ईसाणो चमरो वइरोचणो पदक्खिणदो ।
पुव्ववरदक्खिणुत्तरदिसासु कुव्वंति कल्लाणं ॥ ९७७ ॥

सौधर्म ईशानः चमरो वैरोचनः प्रदक्षिणतः ।
पूर्वापरदक्षिणोत्तरदिशासु कुर्वंति कल्याणं ॥ ९७७ ॥

सोह । सौधर्म ईशानश्चमरो वैरोचनश्च प्रदक्षिणतः पूर्वापरदक्षिणोत्तरदिशासु कल्याणं पूजां कुर्वंति ॥ ९७७ ॥

इदानीं त्रिलोकस्थिताकृत्रिमचैत्यालयानां सामान्येन व्यासादिकमाह;—

आयामदलं वासं उभयदलं जिणघराणमुच्चत्तं ।
दारुदयदलं वासं आणिद्दाराणि तस्सद्धं ॥ ९७८ ॥

आयामदलं व्यासं उभयदलं जिनगृहाणामुच्चत्वं ।
द्वारोदयदलं व्यासः आणुद्वाराणि तस्यार्धं ॥ ९७८ ॥

आवाम । उत्कृष्टादिचैत्यालयानामायामा १००।५०।२५ धं तेषां व्यासः ५०।२५ $\frac{२५}{२}$ आयामव्यासयोरुभयो उ. १५० म ७५ ज $\frac{७५}{२}$ दलं जिनगृहाणामुच्चत्वं ७५|$\frac{७५}{२}$|$\frac{७५}{४}$ तेषां द्वारोदयः १६।८।४ दलं द्वारव्यासः ८।४।२ क्षुल्लकद्वाराणि वृहद्द्वारार्धोदयव्यासानि ॥ ९७८ ॥

उक्तार्थमेव विशेषतो गाथाद्वयेनाह;—

वरमज्झिमअवराणं दलक्कमं भद्दसालणंदणगा ।
णंदीसरगविमाणगजिणालया होंति जेट्ठा हु ॥ ९७९ ॥

वरमध्यमावराणां दलक्रमं भद्रशालनंदनकाः ।
नंदीश्वरकाविमानगाजिनालया भवंति ज्येष्ठाः हि ॥ ९७९ ॥

वर। उत्कृष्टमध्यमजघन्यचैत्यालयानां व्यासादिक मर्धार्धक्रमं जानीहि। भद्रशालनंदननंदीश्वरविमानगतजिनालया ज्येष्ठाः खलु भवंति ॥ ९७९ ॥

सोमणसरुजगकुंडलवक्खारिसुगारमाणुसुत्तरगा।
कुलगिरिगा वि य मज्झिम जिणालया पांडुगा अवरा

सौमनसरुचककुंडलवक्षारेष्वाकारमानुषोत्तरगाः।
कुलगिरिगा अपि च मध्यमा जिनालया पांडुगा अवराः ॥९८०॥

सोमण। सौमनसरुचककुंडलवक्षारेष्वाकारमानुषोत्तरगाः कुलगिरिगता अपि च जिनालयाः मध्यमाः पांडुकवनगता जघन्याः ॥ ९८० ॥

तदनंतरं ज्येष्ठजिनालयानामायामागाढद्वारोत्सेधानाह;—

जोयणसय आयामं दलगाढं सोलसं तु दारुदयं।
जेट्ठाणं गिहपासे आणिद्दाराणि दो द्दो दु ॥ ९८१ ॥

योजनशतमायामः दलावगाढः षोडश तु द्वारोदयः।
ज्येष्ठानां गृहपार्श्वे आणुद्वारे द्वे द्वे तु ॥ ९८१ ॥

जोयण। ज्येष्ठजिनालयानामायामो योजनशतं अर्धयोजनावगाढः षोडशयोजनानि तद्द्वारोदयः ताज्जिनगृहपार्श्वे द्वे द्वे क्षुल्लकद्वारे भवतः॥९८१

उत्कृष्टादिविशेषणविरहितानां वसतीनामायामः कियानित्युक्ते आह;—

वेयड्ढजंबुसामलिजिणभवणाणं तु कोस आयामं।
सेसाणं सगजोग्गं आयामं होदि जिणदिट्ठं ॥ ९८२ ॥

विजयार्धजंबूशाल्मलिजिनभवनानां तु क्रोश आयामः।
शेषाणां स्वकयोग्यः आयामो भवति जिनदृष्टः ॥ ९८२ ॥

वेयड्ढ। विजयार्धगिरौ जंबुवृक्षे शाल्मलीवृक्षे च जिनभवनानामायामः एकक्रोशः शेषाणां भवनादिजिनालयानां स्वयोग्यायामो जिनैर्दृष्टः ॥९८२॥

उक्तानां जिनभवनानां परिकरं गाथासप्तकेनाह;—

चउगोउरमणिसालति वीहिं पडि माणथंभ णवथूहा।
वणधयचेदियभूमी जिणभवणाणं च सव्वेसिं॥ ९८३॥

चतुर्गोपुरमणिशालत्रयं वीथीं प्रति मानस्तंभा नवस्तूपाः।
वनध्वजाचैत्यभूमयः जिनभवनानां च सर्वेषां॥ ९८३॥

चउ। सर्वेषां जिनभवनानां चतुर्गोपुरयुक्तमणिमयशालत्रयं प्रतिवीथ्येकैकमानस्तंभाः। नव नव स्तूपाश्च भवंति। तच्छालत्रयांतराले बाह्यादारभ्य क्रमेण वनध्वजचैत्यभूमयो भवंति॥ ९८३॥

जिणभवणे अट्ठसया गब्भगिहा रयणथंभवं तत्थ।
देवच्छंदो हेमो दुगअडचउवासदीहुदओ॥ ९८४॥

जिनभवनेषु अष्टशतानि गर्भगृहाणि रत्नस्तंभवान् तत्र।
देवच्छंदो हैमः द्विकाष्टचतुर्व्यासदीर्घोदयः॥ ९८४॥

जिण। तेषु जिनभवनेष्वष्टोत्तरशतप्रमितानि गर्भगृहाणि संति। तत्र जिनभवनमध्ये रत्नस्तंभवान् हेममयद्विकाष्टचतुर्योजनव्यासदीर्घोदयो देवच्छंदोस्ति॥ ९८४॥

सिंहासणादिसहिया विणीलकुंतल सुवज्जमयदंता।
विद्दुमअहरा किसलयसोहायरहत्थपायतला॥ ९८५॥

सिंहासनादिसहिता विनीलकुंतलाः सुवज्रमयदंताः।
विद्रुमाधराः किसलयशोभाकरहस्तपादतलाः॥ ९८५॥

सिंहासणादि। सिंहासनादिसहिता विनीलकुंतलाः सुवज्रमयदंताः विद्रुमाधराः किसलयशोभाकरहस्तपादतलाः॥ ९८५॥

दसतालमाणलक्खणभरिया पेक्खंत इव वदंता वा।
पुरुजिणतुंगा पडिमा रयणमया अट्ठअहियसया॥ ९८६॥

दशतालमानलक्षणभरिताः प्रेक्ष्यमाणा इव वदंत इव ।
पुरुजिनतुंगाः प्रतिमाः रत्नमया अष्टाधिकशताः ॥ ९८६ ॥

दस । दशतालमानलक्षणभरिताः प्रेक्षमाणा इव वदंत इव पुरुषजिनतुंगाः ५०० रत्नमयाः अष्टाधिकशतप्रमिताः जिनप्रतिमास्तेषु गर्भगृहेष्वेकैकाः संति ॥ ९८६ ॥

ताः कथंभूताः—

चमरकरणागजक्खगबत्तीसंमिहुणगेहिं पुह जुत्ता ।
सरिसीए पंतीए गब्भगिहे सुट्ठु सोहंति ॥ ९८७ ॥

चमरकरनागयक्षगद्वात्रिंशन्मिथुनैः पृथक् युक्ताः ।
सदृश्या पंक्त्या गर्भगृहे सुष्ठु शोभंते ॥ ९८७ ॥

चमर । चमरकरनागयक्षगतद्वात्रिंशन्मिथुनैः पृथक् पृथक् गर्भगृहे सदृश्या पंक्त्या युक्ताः सुष्ठु शोभंते ॥ ९८७ ॥

सिरिदेवी सुददेवी सव्वाण्हसणक्कुमारजक्खाणं ।
रूवाणि य जिणपासे मंगलमट्ठविहमवि होदि ॥९८८॥

श्रीदेवी श्रुतदेवी सर्वाह्णसनत्कुमारयक्षाणां ।
रूपाणि च जिनपार्श्वे मंगलमष्टविधमपि भवति ॥ ९८८ ॥

सिरि । तज्जिनप्रतिमापार्श्वे श्रीदेवी श्रुतदेवी सर्वाह्णसनत्कुमारयक्षाणां रूपाणि अष्टविधानि मंगलानि च भवंति ॥ ९८८ ॥

भिंगारकलसदप्पणवीयणधयचामरादवत्तमहा ।
सुवइट्ठ मंगलाणि य अट्ठहियसयाणि पत्तेयं ॥ ९८९ ॥

भृंगारकलशदर्पणवीजनध्वजचामरातपत्रमथ ।
सुप्रतिष्ठं मंगलानि च अष्टाधिकशतानि प्रत्येकम् ॥ ९८९ ॥

भिंगार । भृंगारकलशदर्पणवीजनध्वजचामरातपत्रसुप्रतिष्ठान्यष्टमंगलानि । तानि मंगलानि पुनः प्रत्येकमष्टाधिकशतप्रमितानि भवंति ॥ ९८९ ॥

अथ गर्भगृहाद्बाह्यस्वरूपं गाथाचतुष्टयेनाह;—

मणिकणयपुप्फसोहियदेवच्छंदस्स पुव्वदो मज्झे ।
वसईए रूप्पकंचणघडासहस्साणि बत्तीसं ॥ ९९० ॥

मणिकनकपुष्पशोभितदेवच्छंदस्य पूर्वतो मध्ये ।
वसत्यां रूप्यकांचनघटसहस्राणि द्वात्रिंशत् ॥ ९९० ॥

मणि । मणिकनकपुष्पशोभितदेवच्छंदस्य पूर्वतो वसत्यां मध्ये रूप्यकांचनमयानि द्वात्रिंशद्धटसहस्राणि भवंति ॥ ९९० ॥

महदारस्स दुपासे चउवीससहस्समत्थि धूवघडा ।
दारबहिं पासदुगे अट्ठसहस्साणि मणिमाला ॥ ९९१ ॥

महाद्वारस्य द्विपार्श्वे चतुर्विंशसहस्रं संति धूपघटाः ।
द्वारबहिः पार्श्वद्वये अष्टसहस्राणि मणिमालाः ॥ ९९१ ॥

मह । महाद्वारस्य द्वयोः पार्श्वयोश्चतुर्विंशतिसहस्राणि २४००० धूपघटाः संति । तद्द्वारबाह्ये पार्श्वद्वये अष्टसहस्राणि ८००० मणिमालाः संति ॥ ९९१ ॥

तम्मज्झ हेममाला चउवीसं वदणमंडवे हेमा ।
कलसामाला सोलस सोलसहस्साणि धूवघडा ॥ ९९२ ॥

तन्मध्ये हेममाला चतुर्विंशतिः वदनमंडपे हेमाः ।
कलशामालाः षोडश षोडशसहस्राणि धूपघटाः ॥ ९९२ ॥

तम्म । तासां मणिमालानां मध्ये चतुर्विंशातिसहस्राणि २४००० हेममालाः संति । मुखमंडपे पुनर्हेममयानि कलशानि तन्मयमालाश्च षोडश-

षोडशसहस्राणि संति १६०००।१६००० तत्रैव पुनः षोडशसहस्राणि १६००० धूपघटाश्च संति ॥ ९९२ ॥

महुरझणझणणिणादा मोत्तियमणिणिम्मिया सकिंकिणिया। बहुविहघंटाजाला रइदा सोहंति तम्मज्झे ९९३

मधुरझनझननिनादाः मौक्तिकमणिनिर्मिताः सकिंकिणिकाः।
बहुविधघंटाजाला रचिताः शोभंते तन्मध्ये ॥ ९९३ ॥

महु। तन्मंडपस्यैव मध्ये पुनर्मधुरझणझणनिनादा मौक्तिकमणिनिर्मिताः सकिंकिणिकाः बहुविधघंटाजाला अनेकरचनायुक्ताः शोभंते ॥ ९९३ ॥

तद्वसतेः क्षुल्लकद्वारादिस्वरूपमाह;—

वसईमज्झगदक्खिणउत्तरतणुदारगे तदद्धं तु।
तप्पुट्ठे मणिकंचणमालडचउवीसगसहस्सं ॥९९४॥

वसतिमध्यगदक्षिणोत्तरतनुद्वारे तदर्धं तु।
तत्पृष्ठे मणिकांचनमाला अष्टचतुर्विंशकसहस्राणि ॥ ९९४ ॥

वसई। तद्वसतेर्दक्षिणोत्तरपार्श्वमध्यगतक्षुल्लकद्वारे मुख्यद्वारोक्तविधानं सर्वमर्धार्धं भवति। तद्वसतेः पृष्ठभागे पुनर्मणिमालाः कांचनमालाश्चाष्टसहस्राणि ८००० चतुर्विंशतिसहस्राणि २४००० च स्युः ॥ ९९४ ॥

उक्तस्य मुखमंडपादेर्व्यासादिकं ततः पुरस्तात् स्थितानां सर्वेषां स्वरूपं गाथापंचदशकेनाह;—

जिणगिहवासायामो तप्पुरदो सोलसोच्छिओ होदि।
मुहमंडओ तदग्गे पिक्खण चउरस्स मंडवओ ॥९९५॥

जिनगृहव्यासायामः तत्पुरतः षोडशोच्छ्रितो भवति।
मुखमंडपः तदग्रे प्रेक्षणः चतुरस्रः मंडपः ॥ ९९५ ॥

जिण । जिनगृहव्यासा ५० यामः १०० षोडश १६ योजनोच्छ्रितो मुखमंडपः ताज्जिनगृहपुरतो भवति । तस्याग्रे चतुरस्रप्रेक्षणमंडपश्च स्यात् ॥ ९९५ ॥

सदवित्थारो साहियसोलुदओ हेमपीडियं पुरदो ।
चउरस्सं जोयणदुगसमुच्छयं सीदिवित्थारं ॥ ९९६ ॥

शतविस्तारः साधिकषोडशोदयः हेमपीठं पुरतः ।
चतुरस्रं योजनद्विकसमुच्छ्रयं अशीतिविस्तारं ॥ ९९६ ॥

सद । स च कियानिति चेत्, शतयोजन १०० विस्तारः साधिकषोडश १६ योजनोदयः । तत्प्रेक्षणमंडपस्य पुरतो योजनद्विकसमुच्छ्रयमशीतियोजन ८० विस्तारं चतुरस्रं हेममयपीठमस्ति ॥ ९९६ ॥

तम्मज्झे चउरस्सो मणिमय चउविंदवास सोलुदओ ।
अत्थाणमंडओ तप्पुरदो तालुदयथूवमणिपीढं ॥ ९९७ ॥

तन्मध्ये चतुरस्रः मणिमयः चतुर्वृंदव्यासः षोडशोदयः ।
आस्थानमंडपः तत्पुरतः चत्वारिंशदुदयस्तूपमणिपीठं ॥ ९९७ ॥

तम्म । तत्पीठमध्ये चतुरस्रो मणिमयश्चतुर्घन ६४ व्यासः षोडश १६ योजनोदय आस्थानमंडपः स्यात् । तत्पुरतः पुनश्चत्वारिंश ४० योजनोदयस्तूपस्य माणिमयं पीठमस्ति ॥ ९९७ ॥

तं पुण चउगोउरजुदबारंबुजवेदियाहि संयुत्तं ।
मज्झे मेहलतियजुद चउघणदीहुदयवास बहुरयणो ९९८

तत् पुनः चतुर्गोपुरयुतद्वादशांबुजवेदिकाभिः संयुक्तं ।
मध्ये मेखलात्रययुतः चतुर्घनदीर्घोदयव्यासः बहुरत्नः ॥ ९९८ ॥

तं पुण । तत्पीठं पुनश्चतुर्गोपुरयुतद्वादशांबुजवेदिकाभिः संयुक्तं । तत्पीठमध्ये मेखलात्रययुतश्चतुर्घन ६४ दीर्घोदयव्यासो बहुरत्नः ॥ ९९८ ॥

थूहो जिणविंबचिदो णवण्हमेवं कमेण तप्पुरदो ।
वासायामसहस्सं बारसवेदिजुद हेममयपीठं ॥ ९९९ ॥

स्तूपः जिनविंबचितः नवानामेवं क्रमेण तत्पुरतः ।
व्यासायामसहस्रं द्वादशवेदीयुतं हेममयपीठं ॥ ९९९ ॥

थूहो । जिनविंबरचितः स्तूपोस्ति नवानां स्तूपानामेवं क्रमेण स्वरूपं स्यात् । ततः स्तूपस्य पुरतो व्यासायामसहस्रं द्वादश १२ वेदीयुतं हेममयपीठमस्ति ॥ ९९९ ॥

तहिं चउदीहिगिवासक्खंधा बहुमणिमया ससालतिया ।
बारहजोयणआयदचउमहसाहा अणेयतणुसाहा १०००

तस्मिन् चतुर्दीर्घैकव्यासस्कंधौ बहुमणिमयौ सशालत्रयौ ।
द्वादशयोजनायतचतुर्महाशाखौ अनेकतनुशाखौ ॥ १००० ॥

तहिं । तस्मिन् पीठे चतुर्योजनदीर्घैकयोजनव्यासस्कंधौ बहुमणिमयौ शालत्रयसाहितौ द्वादशयोजनायतचतुर्महाशाखौ अनेकतनुशाखौ ॥ १०००

बारहजोयणवित्थडसिहरा सिद्धत्थचेत्तणामतरू ।
णाणादलपुप्फफला पंचहियापउमपरिवारा ॥१००१॥

द्वादशयोजनविस्तृतशिखरौ सिद्धार्थचैत्यनामतरू ।
नानादलपुष्पफलौ पंचाधिकपद्मपरिवारौ ॥ १००१ ॥

बारह । द्वादशयोजनविस्तृतशिखरौ नानादलपुष्पफलौ पंचाधिकपद्मपरिवारौ सिद्धार्थचैत्यनामानौ तरू स्तः ॥ १००१ ॥

मूलगपीठणिसण्णा चउद्दिसं चारि सिद्धजिणपडिमा
तप्पुरदो महकेदू पीठे चिट्ठंति विविहवण्णणगा १००२

मूलगपीठनिषण्णा चतुर्दिक्षु चतस्रः सिद्धजिनप्रतिमाः ।
तत्पुरतः महाकेतवः पीठे तिष्ठंति विविधवर्णनकाः ॥ १००२ ॥

मूलग । तत्तरुमूलगतपीठनिषण्णाश्चतुर्दिक्षु चतस्रः सिद्धतरुमूले सिद्धप्रतिमाश्चैत्यतरुमूले जिनप्रतिमाः संति । तत्पुरतः पीठे विविधवर्णनका महाकेतवास्तिष्ठंति ॥ १००२ ॥

सोलुदय कोसवित्थडःकणयत्थंभग्गगा हु रयणमया ।
चित्तवडछत्ततिदया बहुगा जणणयणमणरमणा १००३

षोडशोदयाः क्रोशविस्ताराः कनकस्तंभाग्रगा हि रत्नमयाः ।
चित्रपटछत्रत्रितया बहुका जननयनमनोरमणाः ॥ १००३ ॥

सोलुदय । षोडश १६ योजनोदया एकक्रोशविस्ताराः केतूनां कनकस्तंभाः तेषामग्रगा रत्नमया बहुकाः जननयनमनोरमणाश्चित्रपटछत्रत्रया शोभंते ॥ १००३ ॥

तप्पुरदो जिणभवणं तच्चउदिस विविहकुसुम चउ दहगा
दसगाढसयदलायदवासा मणिकणयवेदिजुदा॥१००४॥

तत्पुरतः जिनभवनं तच्चतुर्दिक्षु विविधकुसुमाः चत्वारो ह्रदाः ।
दशावगाधशतदलायतव्यासाः मणिकनकवेदीयुताः ॥ १००४ ॥

तप्पुर । तद्ध्वजात्पुरतो जिनभवनमस्ति तस्य चतुर्दिक्षु विविधकुसुमा दशयोजनावगाधाः शतयोजनायतास्तदर्धं ५० व्यासा मणिकनकवेदीयुताश्चत्वारो ह्रदाः संति ॥ १००४ ॥

पुरदो सुरक्कीडणमणिपासाददु होंति वीहिपासदुगे ।
पण्णुदय दलंवासो तप्पुरदो तोरणं होदि ॥ १००५ ॥

पुरस्तात् सुरक्रीडनमणिमयप्रासादद्वयं भवंति वीथिपार्श्वद्वये ।
पंचाशदुदयं दलव्यासं तत्पुरतस्तोरणं भवति ॥ १००५ ॥

पुरदो । ततः पुरस्ताद्वीथीपार्श्वद्वये पंचाश ५० योजनोदयं तद्दल २५ व्यासं सुरक्रीडनमणिमयप्रासादद्वयं भवति । तस्य पुरस्तोरणं भवति ॥ १००५ ॥

तं मणिथंभग्गठियं मुत्ताघंटासुजाल पण्णुदयं ।
तद्दलजोयणवासं जिणविंबकदंवरमणिज्जं ॥ १००६ ॥

तत् मणिस्तंभाग्रस्थितं मुक्ताघंटासुजालं पंचाशदुदयं ।
तद्दलयोजनव्यासं जिनविंबकदंबरमणीयं ॥ १००६ ॥

तं मणि । तत्तोरणं मणिस्तंभाग्रास्थितं मुक्ताघंटासुजालं पंचाश ५० योजनोदयं तद्दल २५ योजनव्यासं जिनविंबकदंबरमणीयं भवति । १००६

पुरदो पासाददुगं फलिहादिमसालदारपासदुगे ।
अब्भंतरे सदुदयं दलवासं रयणसंघडियं ॥ १००७ ॥

पुरतः प्रासादद्वयं स्फटिकादिमशालद्वारपार्श्वद्वये ।
अभ्यंतरे शतोदयं दलव्यासं रत्नसंघटितम् ॥ १००७ ॥

पुरदो । तत्तोरणस्य पुरतः स्फटिकमयादिमशालस्याभ्यंतरे द्वारपार्श्वद्वये शतयोजनोदयं तद्दल ५० व्यासं रत्नघटितं प्रासादद्वयमस्ति ॥१००७॥

जं परिमाणं भणिदं पुव्वगदारम्हि मंडवादीणं ।
दक्खिणउत्तरदारे तदद्धमाणं गहीदव्वं ॥ १००८ ॥

यत् परिमाणं भणितं पूर्वद्वारे मंडपादीनाम् ।
दक्षिणोत्तरद्वारे तदर्धमानं ग्रहीतव्यं ॥ १००८ ॥

जं परि । पूर्वस्मिन् द्वारे मंडपादीनां यत्परिमाणं भणितं तस्यार्धप्रमाणं दक्षिणद्वारे उत्तरद्वारे च ग्रहीतव्यम् ॥ १००८ ॥

वंदणभिसेयणच्चणसंगीयवलोयमंडवेहिं जुदा ।
कीडणगुणणगिहेहि य विसालवरपट्टसालेहिं ॥१००९॥

वंदनाभिषेकनर्तनसंगीतावलोकमंडपैः युतानि ।
क्रीडनगुणनगृहैश्च विशालवरपट्टशालैः ॥ १००९ ॥

वंदण । तानि चैत्यालयानि पुनर्वंदनाभिषेकनर्तनसंगीतावलोकनमंडपैर्युतानि क्रीडनगुणनगृहैश्च विशालवरपट्टशालैश्च युतानि भवंति ॥१००९॥

सांप्रतं प्रथमद्वितीयशालयोरंतरालस्वरूपमाह;—

सिंहगयवसहगरुडसिहिंदिणहंसारविंदचक्कधया ।
पुह अट्ठसया चउदिसमेक्केक्के अट्ठसय खुल्ला ॥ १०१० ॥

सिंहगजवृषभगरुडशिखींद्विनहंसारविंदचक्रध्वजाः ।
पृथक् अष्टशतानि चतुर्दिशमेकैकस्मिन् अष्टशतं क्षुल्लाः ॥१०१०॥

सिंह । सिंहगजवृषभगरुडशिखींद्विनहंसारविंदचक्रध्वजाः पृथक् पृथगष्टोत्तरशतानि । एवं प्रत्येकं चतुर्दिक्षु भवंति । अत्रैकैकस्मिन् मुख्यध्वजे अष्टोत्तरशतक्षुल्लकध्वजा भवंति ॥ १०१० ॥

द्वितीयप्राकारप्राकारबाह्ययोरंतरालस्वरूपं गाथात्रयेणाह;—

चउवणमसोयसत्तच्छदचंपयचूदमेत्थ कप्पतरू ।
कणयमयकुसुमसोहा मरगयमयविविहपत्तड्ढा ॥ १०११ ॥

चतुर्वनमशोकसप्तच्छदचंपकचूतमत्र कल्पतरवः ।
कनकमयकुसुमशोभाः मरकतमयविविधपत्राढ्याः ॥ १०११ ॥

चउ । अशोकसप्तच्छदचंपकचूतमयानि चत्वारि वनानि संति । अत्र पुनः कनकमयकुसुमशोभिताः मरकतमयविविधपत्राढ्याः कल्पतरवश्च संति ॥ १०११ ॥

वेलुरियफला विद्दुमविसालसाहा दसप्पयारा ते ।
पल्लंकपाडिहेरग चउदिसमूलगय जिणपडिमा ॥१०१२॥

वैडूर्यफला विद्रुमविशालशाखाः दशप्रकारास्ते ।
पल्यंकप्रातिहार्यगाः चतुर्दिशामूलगता जिनप्रतिमाः ॥ १०१२ ॥

वेलुरिय । ते च पुनः वैडूर्यफला विद्रुमविशालशाखाः दशप्रकाराः स्युः । तत्रैव वने पुनः पल्यंकप्रतिहार्ययुक्तचतुर्दिग्मूलगताजिनप्रतिमाः ॥ १०१२ ॥

सालत्तयपीढत्तयजुत्ता मणिसाहपत्तपुप्फफला ।
तच्चउवणमज्झगया चेदियरुक्खा सुसोहंति ॥ १०१३॥

शालत्रयपीठत्रययुक्ताः मणिशाखापत्रपुष्पफलाः ।
तच्चतुर्वनमध्यगताः चैत्यवृक्षाः सुशोभंते ॥ १०१३ ॥

साल । शालत्रयपीठत्रययुक्ताः मणिमयशाखापत्रपुष्पफलास्तच्चतुर्वनमध्यगताश्चैत्यवृक्षाः सुशोभंते ॥ १०१३ ॥

नंदादिवापीनां मानस्तंभानां च विशेषस्वरूपमाह;—

णंदादीय तिमेहल तिवीढया भंति धम्मविहवावि ।
पडिमाधिट्ठियमुड्ढा वणभूचउवीहिमज्झम्हि ॥ १०१४॥

नंदादिकाः त्रिमेखलाः त्रिपीठका भांति धर्मविभवा अपि ।
प्रतिमाधिष्ठितमूर्धानः वनभूचतुर्वीथीमध्ये ॥ १०१४ ॥

णंदा । प्रागुक्ता नंदादिषोडशवाप्यास्त्रिमेखला युक्ता भांति । वनभूप्रणिधिचतुर्वीथीमध्ये प्रतिमाधिष्ठितमूर्धानः धर्मविभवा अपि मानस्तंभा इत्यर्थः त्रिपीठयुक्ता भांति ॥ १०१४ ॥

इति श्रीनेमिचंद्राचार्यविरचिते त्रिलोकसारे नरतिर्यग्लोकाधिकारः॥६॥

अथ प्रशस्तिः ।

अंत्यमंगलार्थं सर्वेषां सर्वज्ञप्रतिरूपाणां वंदनां करोति;—

जिणसिद्धाणं पडिमा अकिट्टिमा किट्टिमा दु अदिसोहा
रयणमया हेममया रुप्पमया ताणि वंदामि ॥ १०१५॥

जिनसिद्धानां प्रतिमा अकृत्रिमाः कृत्रिमास्तु अतिशोभाः ।
रत्नमया हेममया रूप्यमया ताः वंदे ॥ १०१५ ॥

जिण । अकृत्रिमाः कृत्रिमा अतिशोभा रत्नमया हेममया रूप्यमया जिनानां सिद्धानां च प्रतिमास्तानि बिंबानि वंदामि ॥ १०१५ ॥

पुनरंत्यमंगलार्थमेव गणनासमेतानां समुदिताकृत्रिमजिनगृहाणां वंदनां कुर्वन्नाह;—

कोडी लक्ख सहस्सं अट्ठय छप्पण्ण सत्तणउदी य।
चउसदमेगासीदी गणणगए चेदिए वंदे ॥ १०१६ ॥

कोट्यः लक्ष्याणि सहस्राणि अष्ट षट्पंचाशत् सप्तनवतिः च।
चतुःशतमेकाशीतिः गणनागतानि चैत्यानि वंदे ॥ १०१६ ॥

कोडी। अष्टौ कोट्यः षट्पंचाशल्लक्षाणि सप्तनवतिसहस्राणि चतुःशतानि एकाशीति प्रमितानि ८५६९७४८१ गणनागतानि चैत्यालयानि वंदे १०१६

सांप्रतं शास्त्रमिदं परिसमापयन्नंत्यमंगलार्थमेव त्रिलोकगोचराणां कृत्रिमाकृत्रिमजिनभवनानां वंदनां कुर्वन्नाह;—

तिहुवणजिणिंदगेहे अकिट्टिमे किट्टिमे तिकालभवे।
वणकुमरविडंगामरणरखेचरवंदिए वंदे ॥ १०१७ ॥

त्रिभुवनजिनेंद्रगेहान् अकृत्रिमान् कृत्रिमान् त्रिकालभवान्।
वानकुमारविद्युतांगामरनरखेचरवंदितान् वंदे ॥ १०१७ ॥

तिहु। कृत्रिमान् अकृत्रिमान् त्रिकालभवान् व्यंतरभवनवासिज्योतिष्ककल्पवासिनरखेचरवंदितान् त्रिभुवनजिनेंद्रगेहान् वंदे ॥ १०१७ ॥

अंतमंगलानंतरं ग्रंथकारः स्वकीयौद्धत्यं परिहरति;—

इदि णेमिचंदमुणिणा अप्पसुदेणभयणंदिवच्छेण।
रइयो तिलोयसारो खमंतु तं बहुसुदाइरिया ॥ १०१८ ॥

इति नेमिचंद्रमुनिना अल्पश्रुतेनाभयनंदिवत्सेन।
रचितस्त्रिलोकसारः क्षमंतु तं बहुश्रुताचार्याः ॥ १०१८ ॥

इदि। इत्येवं प्रकारेणाल्पश्रुतेनाभयनंदिसिद्धांतचक्रिवत्सेन श्रीनेमिचंद्रसिद्धांतचणगणिना त्रिलोकसाराख्यो ग्रंथो रचितः तं बहुश्रुताचार्याः क्षमंतु ॥ १०१८ ॥

टीकाकारवक्तव्यम् ।

तं त्रिलोकसारमलंकरिष्णुर्माधवचंद्रत्रैविद्यदेवो अपि आत्मीयमौद्धत्यं परिहरति;—

गुरुणेमिचंदसम्मदकदिवयगाहा तहिं तहिं रइदा ।
माहवचंदतिविज्जेणिणमणुसरणिज्जमज्जेहिं ॥ १ ॥

गुरुनेमिचंद्रसंमतकतिपयगाथाः तत्र तत्र रचिताः ।
माधवचंद्रत्रैविद्येनेदमनुसरणीयमार्यैः ॥ १ ॥

स्वकीयगुरुनेमिचंद्रसिद्धांतचक्रिणां संमताः अथवा ग्रंथकर्तृणां नेमिचंद्रसिद्धान्तदेवानामभिप्रायानुसारिणः कतिपयगाथाः माधवचंद्रत्रैविद्येनापि तत्र तत्र रचिताः । इदमप्यार्यैराचार्यैरनुसरणीयम् ॥ १ ॥

सांप्रतमलंकारकर्ताऽप्यंतयमंगलं कुर्वन्नभीष्टाशंसनं करोति;—

अरहंतसिद्धआइरियुवज्झयासाहु पंचपरमेट्ठी ।
इय पंचणमोक्कारो भवे भवे मम सुहं दिंतु ॥ २ ॥

अरहंतसिद्धाचार्योपाध्यायसाधवः पंचपरमेष्ठिनः ।
इति पंचनमस्कारः भवे भवे मम सुखं ददतु ॥ २ ॥

इति **टीकाकारवक्तव्यम्** ।

इति श्री **माधवचंद्रत्रैविद्यदेवविरचिता त्रिलोकसारव्याख्या समाप्ता ॥**

त्रिलोकसारः समाप्तः ।

त्रिलोकसारस्य अकारादिक्रमेण गाथासूची ।

गाथा	पृ.सं. गा.सं.
अ	
अकदीमाउअ आदी ...	२७। ६३
अग्गिदिसादो चउचउ...	२५८।६२८
अग्गिदिसादी सक्कुलि...	३६६।९१८
अग्गिभया धावंता ...	८१।१८८
अग्गिपयावादिसोमो ...	१८५।४३४
अग्गीसाणछकूडे ...	३८०।९४१
अच्चीय अच्चिमालिणि	१९४।४५६
अच्छिणिमीलणमेत्तं ...	८८।२०७
अट्ठगुणिड्ढिविसिट्ठा ...	८२।२१९
अट्ठावीसस हस्सं ...	११४।२८२
अट्ठीसत्तरसय ...	१७१।४०२
अट्ठण्हं देवीणं ...	२१४।५१२
अट्ठमछट्ठ चउत्थे ...	३१७।७८५
अट्ठारस तेरस अड ...	३२०।७९५
अडसीदट्ठावीसा ...	१५०।३६२
अडसट्ठिगदे तादिए ...	१८२।४२४
अड्ढाइज्जं तिसयं ...	९९।२३७
अड्ढाइज्जतिपल्लं ...	१०१।२४३
अणवट्ठसगाउस्से ...	८४।१९६
अण्णे सगपदविठिया ...	२७६।६८३
अत्थइ सणीणवसये ...	१३६।३३४
अद्धं चउत्थभागो ...	५२।११७
अद्धिंदुणिहा सव्वे ...	२०६।६३५

गाथा	पृ. सं. पृ. सं.
अधियसहस्सं बारस...	१३१।३२५
अधियरणे वरहारे ...	१८८।४४१
अंजणकवज्जधाउक ...	११४।२८३
अंजणदहिकणयणिहा	३८९।९६८
अंजणमूलिय अंका ...	६६।१४८
अंताइसूइवग्गं ...	१२७।३१५
अंते टंकुच्छिण्णो ...	३७९।९३७
अंतेदलबाहल्लं ...	२६२।६४०
अंतोमुहुत्तकाले	७९।१८१
अबराजिदकामादी ...	२८२।६९९
अब्भंतरदिसि विदिसे	२३८।५७६
अभिजादि तिसीदिसयं	१७४।४०७
अभिजिणव सादिपुव्वु	१८६।४३७
अभिजिस्स गगणखंडा	१६९।३९८
अमण सरिसपविहंगम...	८७।२०५
अमरावदिपुरमज्झे ...	२३५।५१५
अंवरतिलगं मंदर	२८३।७०५
अम्हाणं के अवसा ...	३४२।८५२
अरहंतसिद्धआइरि	४०५ (टी. २)
अवरं जुत्तमसंखं ...	१८। ३७
अवरपरित्तस्सुवरिं ...	१७। ३६
अवरपरित्तं विरलिय ...	२८। ४६
अवराजिदाय रम्मा ...	३८९।९७०
अवरा खाइयलद्धी ...	३१। ७१

गाथा	पृं. सं. गा. सं
अवरे सलागविरलण ...	१८। ३८
अवराणंताणंतं	२१।४८
असुरा णागसुवण्णा	८९।२०९
अस्सत्थसत्तसामालि	९१।२१४
असुरस्स महिसतुरग	९७।२३२
असुरतिए देवीओ	९८।२३४
असुरादिचदुसु सेसे	१००।२४०
असुरचउक्के सेसे	१००।२४१
असुरे तित्तिसु सासा	१०२।२४८
अवसेसाण गहाणं	११६।३३३
अस्सिणि पुण्णे पव्वे	१८२।४२५
अस्सग्गीओ तारय	३३३।८२८
अस्सिणिकित्तियमियसिर	१७०।४००
अस्सपुरी सींहपुरी	२८६।७१४
अह माणिपुण्णसैलम	१०९।२६५
अहियंकादडवसिं	१८४।४३१

आ.

गाथा	पृं. सं. गा. सं
आइच्चचंद जदुपहु	२३७।५७३
आउट्ठिरिक्खमास्सिणि	१८४।४३०
आउट्टिलद्धरिक्खं ...	१८३।४२९
आउड्डरज्जुसेढी ...	६२।१३६
आऊपरिवारिड्ढी ...	१००।२४२
आऊपल्लदसंसो ...	३२०।७९६
आणदपाणदपुप्फय ...	१९८।४६८
आणियगुणसंकलिदं ...	१४८।३६१
आणीयगेहक्कमला ...	२३७।५७४
आणंदतूरजयथुदि ...	२२९।५५१

गाथा	पृ.सं. गा.सं
आदीअंतविसेसे ...	८५।२००
आदीदो खलु अट्ठम	३८८।९६६
आयामकदी मुहदल ...	१३२।३२७
आयामदलं वासं ...	३९२।९७८
आराए दु णिसिट्ठा ...	७१।१६१
आरोहियाभियोग्गग	२१०।५०१
आसाढपुण्णमीए ...	१७६।४११
आसीवादादिं ससि ...	३२३।८००

इ.

गाथा	पृ.सं. गा.सं
इगि अड पहुदिं केवल	२५।६०
इगि गमणे पणणउदिम	३५६।९१५
इगि चादिकेवलंतं ...	२४।५८
इगि णवणवसागिगिगिदुग	१५।३८
इगितीससत्तचत्ता ...	१९६।४६२
इगिमासे दिणवड्ढी ...	१७६।४१०
इगिवीस छदालसयं ...	१६२।३९०
इगिबितिकोसो वासो	७९।१८०
इगिवीसेयारसयं ...	१४०।३४५
इगि सगणवणव दुगणभ	१३।२५
इणससितारासावद ...	३२३।७९९
इदि अट्ठारससेढी ...	२७७।६८४
इदि अब्भंतरतडदो ...	१४४।३५६
इदि जोयण एगारह	२५२।६१४
इदि णेमिचंदमुणिणा	४०४।१०१८
इदि पडिसहस्सवस्सं	३४३।८५७
इंदट्ठियं विमाणं ...	२०५।४८४
इंदपडिंददिगिंदा ...	९३।२२३

गाथा		पृ.सं. गा.सं.
इंदयसेढीबद्धा	...	७४।१६८
इंदयसेढीबद्ध	...	२०२।४७७
इंदसमा हु पडिंदा	...	९४।२२६
इंदसमा, समा	...	११३।२७९
इंदा य सुपडिरूवा	...	११०।२७०
इंदिणसुक्कगुरिदरे	...	१८९।४४६
इंदुरवीदो रिक्खा	...	१७२।४०४
इसुदलजुदविक्खंभो	...	३०६।७६६
इसुवग्गं चउगुणिदं	...	३०३।७६१
इसुहीणं विक्खंभं	...	३०३।७६०
इह इंदरायसिस्सो	...	३४३।८५८
इहभिण्णसंधि गंठी	...	१५१।३६६
इह वग्गमाउआए	...	२७।६२
ई		
ईसाणलांतवच्चुद	...	२२१।५३१
उ		
उज्जलिदो पज्जलिदो	...	६९।१५७
उड्डिय वेगेण पुणो	...	८२।१८९
उडुजोग्गकुसुमदाम	...	३३१।८२२
उडुविमलचंदवग्गू	...	१९७।४६४
उडुसेढीबद्धदलं	...	२०१।४७४
उड्ढगया आवासा	...	११८।२९५
उण्हं छंडदि भूमी	...	३४७।८६९
उत्तरगाय दुआदी	...	१७७।४१३
उत्तरकुरुगंधादी	...	२९५।७४१
उत्तरकुलगिरिसाहे	...	२६५।६४९
उत्तरदक्खिण उड्ढा	...	१३९।३४४

गाथा		पृ.सं. गा.सं.
उत्तरादिसि कोणदुगे	...	२३८।५७५
उत्तरसेढीबद्धा	...	२०१।४७६
उत्ताणट्ठियगोलक	...	१३७।३३६
उत्ताणट्ठियमंते	...	२३१।५५८
उत्तेव सव्वधारा	...	२३।५४
उदयदलं आयामं	...	५०।११३
उदयं भूमुहवेहो	...	६१।१३४
उदयं भूमुहवासं	...	२६१।६३७
उदयरवी पुण्णिदू	...	३१६।७८४
उदयमुहभूमिवेहो	...	६०।१३०
उद्धारेयं रोमं	...	४४।१०१
उप्पज्जदि जो रासी	...	३२।७३
उप्पज्जंति तहिं बहु	...	७८।१७९
उब्भियदलेक्कमुरव	...	५।६
उभयंतगवणवेदिय	...	२७०।६६५
उम्मग्गचारिसणिदा	...	१९१।४५०
उम्मग्गणिमग्गणदी	...	२४४।५९३
उवरिमपाच्छिमपडला		७६।१७३
उवहिदलं पल्लद्धं	...	२२५।५४१
उवहीण पण्णकोडी	...	३२६।८०७
उसहदुकाले पढमदु	...	३३७।८३७
उस्सप्पिणीयपढमे	...	३४६।८६८
उस्सपिणीयबिदिए	...	३४७।८७१
ए		
एक्केक इंदयस्स य	...	१९६।४६३
एक्केक्क वणे पडिदिसा		२५०।६११
एक्क चउक्कट्ठंजण	...	३८८।९६७

गाथा	पृ.सं. गा.सं.
एक्कट्ठी पण्णट्ठी ...	४२।९७
एक्कपहलंघणं पडि ...	१७४।४०८
एक्कारसट्ठणवणव ...	२८८।७२०
एक्कारसत्तसम्महिय ...	१९५।४६१
एक्कारसयसहस्सं ...	१८९।४४५
एगादि बिउत्तरिया ...	२४।५६
एगुरुगा लंगालिगा ...	३६६।९१६
एगोरुगा गुहाए ...	३६७।९२०
एत्थ मुदाणिरयदुगं ...	३४५।८६३
एदेसिं पल्लाणं ...	४४।१०२
एयादीया गणणा ...	९।१६
एयारंसोसरणे ...	२५३।६१६
एयं सत्थं सव्वं ...	२३२।५५९
एरावदमाणिकंचण ...	२९०।७२९
एवं बिदियसलागे ...	१९।४१
एवमणंतं ठाणं ...	३५।८१
एवं सलागभरणे ...	१७।३३
एवं सलागरासिं ...	१९।४०
एवं साविय पुण्णा ...	१७।३४
एवं सेस तिठाणे ...	३५५।८९४
एसो सव्वो भेओ ...	३५१।८८१
ओ	
ओहिल्लाणं चरिमे ...	७०।१५९
क	
कक्कडमयरे सव्व ...	१५६।३८०
कच्छा सुकच्छा महा	२७८।६८७
कज्जल कज्जलपह सिरि	२५८।६२९
कंचणमयाणि खंड ...	२९३।७३५
कणयकणयाह पुण्णा	३८७।९६४
कणयादिचित्त सोदा	३८५।९५८
कणयं कंचण तवणं ...	३८२।९४८
कप्पठिदि बंधपच्चय ...	२०।४४
कप्पेसु रासिपंचम ...	२०२।४७८
कमलदलजलविणिग्गय.	२३६।५७१
कमसो बिसहस्सूणिय	७७।१७४
कमसो सिद्धायदणं ...	२८८।७२१
कम्मावाणिपडिबद्धो ...	१३१।३२४
कलहप्पिया कदाइं ...	३३६।८३५
कालमहकाल माणव	३३१।८२१
कालमहकाल पउमा ...	३८७।९६२
कालविकालो लोहिद	१५०।३६३
किंणर किंपुरिसाय म	१०५।२५१
किंणरचउ दसदसधा	१०६।२५६
किंचूण रज्जुवासो ...	५९।१२८
किण्ह सुमेघ सुकड्ढा	९८।२३६
कित्तियपंडतिसमये ...	१८६।४३६
कित्तियपहुदिसु तारा	१८७।४४०
कित्तियरोहिणि मियसिर	१८५।४३२
किंपुरिसकिंणरावि य	१०७।२५७
किंपुरुसाकिंणरास ...	१११।२७३
कुंजरतुरयपदादी ...	११३।२८०
कुंडलगो दसगुणिओ...	३८१।९४३
कुंडादो दक्खिणदो ...	२४३।५९१
कुंभंड रक्खजक्खा ...	११०।२७१

गाथा	पृ.सं. गा.सं.
कुम्मो दद्दुर तुरया ...	२०६।४८७
कुरओ हरिरम्मगभू ...	२६६।६५३
कुरुभद्दसालमज्झे ...	२६९।६६१
कुलगिरिविक्खारणदी...	३६९।९२६
कुलगिरिसमीवकूडे ...	२९६।७४४
कुंडा सामलिरुक्खा ...	८९।१८७
केदूखीरसघस्सव ...	१५२।३७०
केलास वारुणीपुरि ...	२८२।७०२
केवलणाणस्सद्धं ...	२४। ५७
केसरिमुहसुदिजिब्भा	२४१।५८५
कोडीलक्खसहस्सं ...	४०४।१०१६
कोसदुगदीहबहला ...	२४१।५८४
कोसस्स तुरियमवरं ...	१३७।३३८
कोसाणं दुगमेक्कं ...	५९।१२६
कोसायामं तद्दल ...	२९३।७३६
ख	
खगगिरिगंगदुवेदी ...	३४६।८६५
खेत्तजणिदं असादं ...	८४।१९७
खेमा खेमपुरी चेव ...	२८५।७१२
खेमंकर चंदाहं ...	२८२।७००
ग	
गंगदु रत्तदु वासा ...	२४६।६००
गंगसमा सिंधुणदी ...	२४५।५९७
गणिक्कामहत्तरीणं ...	२१२।५०५
गणिकामहत्तरीयो ...	११९।२७५
गमिय असंखं ठाणं...	२९। ६८
गमिय तदो पंचसयं	२६७।६५६
गयहयकेसरिगमणं ...	१६१।३८८
गयहयकेसरिवसहे ...	३९१।९७४
गरुडे सेसे सोलस ...	९९।२३८
गरुडे सेसे कमसो ...	१०२।२४७
गंगादु रोहिदस्सा ...	२३९।५८१
गंगा दुगं व रत्ता ...	२४६।५९९
गाढो वित्थारो विय ...	२०७।४९१
गाहदहपंकवदिणदी ...	२७१।६६७
गिरि अब्भंतरमज्झिम	१५८।३८२
गिरिजुद दु भद्दसालं	३७३।९३०
गिरितुरियं पढमंतिम	२९७।७४६
गिरिदीहो जोयणदल	२९१।७३०
गिरिपहुदीणं वासं ...	२९९।७५२
गिरिभद्दसालविजया ...	२९९।७५१
गिरिमत्थयत्थदीवा ...	३६७।९१९
गिरिरहिदपरिहिगुणिदं	३७३।९३१
गीतरदी गीतयसो ...	१०९।२६३
गुणयारद्धच्छेदा ...	४६।१०५
गुरुणेमिचंदसम्मद ...	४०५(टी. २)
गोउरवासो कमसो ...	२०८।४९३
गोखीरफेणमक्खो ...	२८४।७०७
गोमुत्तमुग्गणाणा ...	५७।१२३
घ	
घणमाउगस्स सव्वग	२७।६४
घाडा घडा चउत्थे ...	७०।१५८
च	
चउगोउरवं वेदी ...	२६२।६४२
चउगोउरसंजुत्ता ...	३५२।८८५

गाथा	पृ.सं. गा.सं.
चउगोउरमणिसालति	३९४।९८३
चउचउकूडा पडिदिस	३८१।९४४
चउचेत्तदुमा जंबू ...	२११।५०३
चउणउदिसयं णवस	३००।७५४
चउतिदुगकोडकोडी ...	३१५।७८१
चउदिससोलसहस्सं ...	२६३।६४४
चउरिसुगारा हेमा ...	३६९।९२५
चउवण्णतीस णवचउ	३२७।८०९
चउवणमसोयसत्त	४०२।१०११
चउवीसमुहुत्तं पुण ...	८८।२०६
चउवीस बार तिघणं	३२४।८०३
चउवीसं चउवीसं ...	३६७।९२१
चक्किकुरुफणिसुरिंदे ...	२३२।५६०
चक्किदु तेरस सुण्णा ...	३३९।८४४
चक्की भरहो सगरो ...	३२९।८१५
चक्की भरहो दीहा ...	३४९।८७७
चक्खुम्म जसस्सी अहि	३१९।७९३
चडिदूणेवमणंतं ...	३९।८९
चंदा पुण आइच्चा ...	१२१।३०३
चंदाभाय सुसीमा ...	१९०।४४७
चंदिण बारसहस्सा ...	१३८।३४१
चंदो णियसोलसमं ...	१३९।३४२
चंदो मंदो गमणे ...	१७१।४०३
चमरकरणागजक्खग	३९५।९८७
चमरतिये सामाणिय	९५।२२७
चमरदुगे परिसाणं ...	१०२।२४६
चमरंगरक्खसेणा ...	१०१।२४४
चमरो सोहम्मेण य ...	९०।२१२
चरयाय परिव्वाजा ...	२२८।५४७
चरिमणवक्किदकुंडे ...	१७।३५
चरिमस्स दुचरिमस्स य	३५।८२
चरिमं दसमं विसुर्प ...	१८२।४२६
चरिमादिचउक्कस्स य	३९।९०
चरमे खुदजंभवसा ...	३१९।७९१
चिट्ठंति तत्थ गोरुद ...	२१७।५२०
चित्तवइरादु जावय ...	११८।२९६
चित्तसमाहीगुत्तो ...	३४९।८७५
चित्ता वज्जा वेलुरि ...	६६।१४७
चुलसीदिलक्खसत्ता ...	१९२।४५१
चुलसीदिछतेत्तीसा ...	२४८।६०५
चुलसीदिलक्खभद्दिभ	२७६।६८२
चुलसीदीय असीदी	२०६।४८९
चूडामणि फणि गरुडं	९०।२१३
चेत्ततरूणं मूले ...	९१।२१५
चोत्तीसं चउदालं ...	९१।२१७
चोद्दस पुव्वधरा पडि ...	२२५।५४०
छ	
छक्कट्ठ चोद्दसादिसु ...	७५।१७०
छक्कदिणवतीससयं ...	१४१।३४७
छज्जुगल, अट्ठारस ...	२०४।४८३
छज्जुगल, अणु ...	२१२।५०७
छज्जुगलसेसकप्पे तप्पा	२०६।४९०
छज्जुगल, तित्तिसु सेसे	२०३।४८०
छट्ठम्मदसमेया ...	१८७।४३८

गाथा		पृ.सं. गा.सं.
छद्मचरिमे होंति	...	३४६।८६६
छप्पण्णंतरदीवा	...	२७४।६७७
छम्मासद्धगयाणं	...	१८१।४२१
छव्वीसमदो सोलं	...	२७३।६७५
छादालसुण्णसत्तय	...	१६०।३८६
ज		
जक्खुत्तमा मणोहर	...	१०९।२६६
जगपदरसत्तभागं	...	६०।१२९
जगसेढिसत्तभागो	...	६।७
जगसेढीए वग्गो	...	४९।११२
जं जोयणवित्थिण्णं	...	४१।९५
जत्थुद्देसे जायदि	...	३५।८०
जमगो मेघो वट्टा	...	२६७।६५५
जं परिमाणं भणिदं		४०१।१००८
जंबीरजंबुकेली	...	२७३।६७३
जंबुसमवण्णणो सो	...	२६६।६५२
जंबुरविंदू दीवे	...	१५४।३७५
जंबू उभयं परिहीं	...	१२७।३१४
जंबूचारधरूणो	...	१६२।३९२
जंबू जोयणलक्खो	...	१२३।३०८
जंबूतरुदलमाणा	...	२६५।६५०
जंबूदीवे एक्को	...	२३३।५६३
जंबूदीवे वाणो	...	३८६।९६१
जंबूधादकिपुक्खर	...	१२१।३०४
जलयरजीवा लवणे	...	१२९।३२०
जसहर सुभद्दणामा	...	१९८।४६९
जादजुगलेसु दिवसा	...	३१८।७८९
जावदियं पच्चक्खं	...	२२। ५२
जिणगिहवासायामो	...	३९७।९९५
जिणभवणे अट्ठसया	...	३९४।९८४
जिणलिंगे मायावी	...	३६८।९२२
जिणसमकोट्ठविदा	...	३३८।८४२
जिणसिद्धाणं पडिमा	...	४०३।१०१५
जिब्भा जिब्भिगसण्णा		६९।१५६
जीवदु विदेहमज्झे	...	३१३।७७७
जीवाविक्खंभाणं	...	३०५।७६४
जीवाहृदइसुपादं	...	३०४।७६२
जेट्ठपरित्ताणंतं	...	२१। ४७
जेट्ठभवणाण परिदो	...	११०।२९९
जेट्ठा ताओ पुह पुह	...	१९०।४४८
जेट्ठा मूल पुवुत्तर	...	१८५।४३३
जेट्ठावरभवणाणं	...	११९।२९८
जोइसदेवीणाऊ	...	१९०।४४९
जो जो रासी दिस्सदि		३९।८८
जोयणमेक्कट्ठिकए	...	१३७।३३७
जोयणलक्खं वासो	...	८। १५
जोयणवीससहस्सं	...	५७।१२४
जोयणसत्तसहस्सं	...	७८।१७६
जोयणसंखासंखा	...	९२।२२०
जोयणछगदुदुछक्किगि	...	१२६।३१२
जोयणसय आयामं	...	३९३।९८१
ण		
णइणिग्गमदारजुदा	...	२६८।६५८
णइरिदिवायव्वदिसं	...	३८०।९४०

गाथा	पृ.सं. गा.सं.
णउदिसयभजिदतारा	१५२।३७१
णउदुत्तरसत्तसए ...	१३५।३३२
णक्खत्तसूरजोगज ...	१७३।४०६
णगरी सुगंधिणीव ...	२८४।७०८
णदिणिग्गमे पवेसे ...	२४७।६०१
णदितीरगुहादिठिया ...	३४७।८७०
णंदणमंदरणिसहा ...	२५७।६२५
णंदाणंदवदी पुण ...	३८९।९६९
णंदादीयतिमेहल ...	४०३।१०१४
णयरपदे तस्संखा ...	२०८।४९४
णयराणं बिदियादी ...	२१०।४९९
णयराण बहिं परिदो ...	२८७।७१७
णरगीदं बहुकेदू ...	२८९।६९७
णरतिरियिगदीहिंतो ...	२२८।५४९
णरतिरियिदेसअयदा ...	२२७।५४५
णवमतिए जलणजमे...	२६३।६४५
णवपण्णारसलक्खा ...	६४।१४१
ण मरंति ते अकाले ...	८३।१९४
णमह णरलोयजिणघर	२३३।५६१
णवसत्तयणवसत्तय ...	२९५।७३७
णाणारयणुवसाहा ...	२६४।६४८
णाणारयणविचित्तो ...	२५५।६१८
णाणं जिणेसु य कमा	७।१२
णाभिगिरिचूलिगुवरिं	१९८।४७०
णावा गरुडिभमयरं ...	९७।२३३
णिच्चलपलंभणिम्मं ...	१५१।३६८
णियगंधवासियदिसं ...	२३६।५६९
णियजलपवाहपडिदं ...	२४४।५९४
णियजलभरउवरिगदं	२४४।५९५
णिरयचरो णत्थि हरी	८७।२०४
णिरया इगिविगलासं	१३५।३३१
णिरयादो णिस्सरिदो	८७।२०३
णिरयं गया पडिरिवो	३३५।८३३
णिवसंति बह्मलोय ...	२२३।५३४
णिसहावसाणजीवा ...	३१३।७७६
णिसहुवरिं गंतव्वं ...	१६२।३९१
णीयंता सिग्घगदी ...	१६०।३८७
णीलणिसहादु गत्ता ...	२६६।६५४
णीलणिसहे सुरद्दिं ...	२७०।६६४
णीलसमीवे सीदा ...	२६१।६३९
णीलुत्तरकुरुचंदा ...	२६७।६५७
णीलो णीलब्भासो ...	१५०।३६४
त	
तण्णगसिहरे वेदी ...	३७९।९३९
तण्णामा पुव्वादी ...	२६९।६६२
तण्णामा सीदुत्तर ...	२७०।६६६
तडदो गत्ता तेत्तिय ...	३६२।९०९
तडदो बारसहस्सं ...	३६३।९१०
तत्तो असंखलोगं ...	३८।८७
तत्तो जुम्माणतिए ...	१९५।४६०
तत्तोरणवित्थारो ...	२४७।६०२
तत्तो दक्खिणभरह ...	२४४।५९६
तत्तो बहुजोयणयं ...	२११।५०४
तत्तोवि हंसगब्भं ...	२८३।७०३

गाथा	पृ.सं. गा.सं.
तत्थलिडपरिमभागे ...	२६२।६४१
तत्थाणिलखेत्तफलं ...	६२।१३५
तत्थादि अंत आऊ ...	३१५।७८२
तत्थुदयुदवासमरा ...	३६२।९०७
तत्थुप्पण्णं विरलिय ...	१८।३९
तत्थेव य गणिकाणं ...	११६।२८९
तद्देवीओ पच्छा ...	२१९।५२५
तद्दंपतीणमादिम ...	३१८।७९०
तदिए तुरिए काले ...	३२८।८१३
तप्पायारुदयतियं ...	११५।२८५
तप्पाणिउडे णिवडिद ...	३४२।८५३
तप्पुरदो जिणभवणं ...	४००।१००४
तब्भवणवदी सोमो ...	२५६।६२१
तब्भयदो तस्स सुतो ...	३४३।८५५
तम्मज्झिमतियभागे ...	३५७।८९९
तम्मज्झहेममाला ...	३९६।९९२
तम्मज्झे चउरस्सो ...	३९८।९९७
तम्मज्झे रूप्पमयं ...	२३१।५५७
तम्मूले पलियंकग ...	१०६।२५४
तव्वादरुद्धखेत्तं ...	६१।१३३
तव्वाहिं पुव्वादिसु ...	२१६।५१७
तव्वासरस्स आदी ...	३४४।८६१
तव्वावण्णणगाणं ...	३९०।९७३
तस्स फलं जगपदरो	६०।१३१
तस्सागा इगिवासो ...	२१७।५१९
तसिदो वक्कंतक्खो ...	६९।१५५
तस्सुवरिं पासादो ...	११५।२८६
तस्सोलसमणुहि कुला	३४८।८७२
तह अद्धमंडलीओ ...	२७७।६८५
तहि तण्णामदुवाणा ...	३६१।९०६
तहिं चउदीहिगिवास	३९९।१०००
तं उवरि भणिस्सामो	८।१३
तं रासिं पुव्वं वा ...	२०।४५
तं कयतिप्पाडिरासिं ...	२०।४३
तं तिण्णिवार वग्गिद	२२।५०
तं रूवसहिदमादी ...	२८।६५
तं जाण बिरूवगयं ...	३६।८३
तं सोदुमक्खमो तं ...	३४२।८५४
तं मणिथंभग्गठियं ...	४०१।१००६
तं पुण चउगोउरजुद	३९८।९९८
ताओ उत्तरअयणे ...	१७९।४१८
ताओ चउरो सग्गे ...	२१२।५०६
तामिस्सगुहगमुत्तर ...	२९१।७३३
तारंतरं जहण्णं ...	१३६।३३५
तिगुणियवासं परिही	१२५।३११
तिण्णिसयजोयणाणं ...	१०४।२५०
तित्थयरसंतकम्मुव ...	८३।१९५
तित्थयरुदंक पोक्खिल ...	३४८।८७५
तित्थद्धसयलचक्की ...	२७५।६८१
तित्थाऊचुलसीदी ...	३२५।८०५
तिदुगेक्ककोसमुदयं ...	३१६।७८३
तिभुजुदयूणहयुच्चं ...	५५।१२०
तियहीणसेढिछेदण ...	१४६।३५९
तियातिय पंचेक्कारा ...	१८८।४४१

गाथा	पृ.सं. गा.सं.
तियणभछण्णवतिण्ण	३०१।७५५
तिविद्दुविद्दसयंभू ...	३३२।८२५
तिलसरिसवबल्लाढइ ...	१३।२३
तिविहजहण्णाणंतं ...	३०।६९
तिसदेक्कारससर्ले ...	२९१।७३१
तिस्सेदारुदओ दुग ...	११५।२८७
तिस्से अंतो बाहिं ...	३५३।८८८
तिहुवणजिणिंदगेहे ...	४०४।१०१७
तिहुवणमुड्ढारूढा ...	२३९।५५६
तीसं पणुवीसं प ...	६७।१५१
तीसदसएक्कलक्खा ...	३२५।८०६
तुण्हिय पवयणणामा...	१११।२७२
तुरियजुदविजुदछज्जो...	२१७।५२१
तुरिए पुव्वदिसाए ...	२६३।६४३
तुरंगपत्तभूसण ...	३१७।७८७
ते अवरमज्झजेट्ठं ...	८।१४
तेउक्काइयजीवा ...	३६।८४
तेरादिदुहीणिंदय ...	६८।१५३
तेवि विहंगेण तदो ...	८०।१८४
तेसिं कमसो वण्णो ...	१०५।२५२
तेसिं असोयचंपय ...	१०५।२५३
तेदालगदे तुरियं ...	१८९।४२३
ते हीणाहियरहिया ...	२२५।५३९
तें य सयंपहरिद्धिज ...	२५६।६२३
ते पुव्वावरदीहा ...	२७९।६९२
तेसीदिगिसत्तरि बिगि	३३७।८३९
तेहिं तो सेसजणा ...	३४६।८६७

गाथा	पृ.सं. गा.सं.
तो संखठाणगमणे ...	२९। ६७
तो माणिपुण्णभद्दा ...	१११।२७४
तो रजगभुजगकुसगय	१२२।३०५
तो उदय पंचवण्णा ...	१५०।३६५
तो गोरिंदि जल विस्सो	१८६।४३५
तो गद्दतोयतुसिदा ...	२२४।५३६
तो चंदसूरणागा ...	२७१।६६९
तो सिद्धमहाहिमवं ...	२८९।७२४
तो वेयड्ढकुमारं ...	२९३।७३४
तो सिद्धं सोमणसं ...	२९४।७३९
तो चित्त विमलवाहण	३५०।८७८
तो पुण्णचंदसुहचं ...	३५०।८७९
तोरणजुददारुवरिं ...	३५५।८९३
तो मंदर हेमवदं ...	३८४।९५२
तो रयणवंत सव्वा ...	३८४।९५४
थ	
थिरभोगावणिमज्झे ...	२८७।७१८
थूलफलं ववहारं ...	१०। १८
थूहो जिणबिंबाचिदो ...	३९९।९९९
द	
दक्खिण अयणे पंचसु	१७८।४१५
दक्खिणउत्तरदेवी ...	२१८।५२४
दक्खिण उत्तरवाबी ...	२५९।६३१
दक्खिणादिसासु भरहो	२३४।५६४
दक्खिणभरहे जीवा ...	३१०।७६९
दक्खिणमुहं बलित्ता ...	२४०।५८३
दउवारिससहस्सादो ...	११७।२९३

गाथा	पृ.सं. गा.सं.
दसगुणपण्णत्तारिसय ...	१४३।३५३
दलिदे पुण तदणंतर...	१४४।३५५
दहमज्झे अरविंदय ...	२३६।५७०
दलगाढवासमरगय ...	२६४।६४७
दहदो गंतूणग्गे ...	२६८।६६०
दस दस पणोत्ति पण्णं	२८०।६९३
दसबावीससहस्सा ...	३००।७५३
दप्पणसम मणिभूमी	३१८।७८८
दसदसभाजिदा पंचसु	३२६।८०८
दसमयणपंचकेसव ...	३४०।८४५
दसगुण पण्णं पण्णं ...	३६४।९१४
दसतालमाणलक्खण...	३९४।९८६
दंसणविराहिया जे ...	३६८।९२३
दामेट्ठी हरिदामा ...	२०९।४९६
दारगुहुच्छयवासा ...	२४३।५९२
दिणगदिमाणं उदयो	१६४।३९५
दिसिविदिसंतरगा हिम	३६४।९१३
दिव्वफलपुप्फहत्था ...	३९१।९७५
दीवसमुद्दे दिण्णे ...	१५।३०
दीवद्धपढमवलये ...	१४२।३५०
दीउवहिच्चारखित्ते ...	१६५।३९६
दुप्पहुदिरूववज्जिद ...	२५।५९
दुगुणपरीतासंखे ...	४८।१०९
दुसु दुसु अट्ठसु कप्पे...	२०४।४८२
दुसु दुसु तिचउक्केसु य	२१९।५२६
दुसु दुसु, पढ ...	२१९।५२७
दुसु दुसु, सत्त ...	२२०।५२९
दुसु दुसु चदु दुसु ...	२२६।५४३
दुतडे पण पण कंचण	२६८।६५९
दुगुणिसुक्कादिजुदजीवा	३०५।७६३
दुगुणिसुहिदघणुवग्गो	३०६।७६५
दुतडादो सत्तसयं	३६१।९०४
दुब्भाव असुचिंसूदग	३६८।९२४
दुगचउरुडसगइगि	३७०।९२८
देवीपासादुदया ...	२१५।५१४
देसे पुह पुह गामा ...	२७३।६७४
देसा दुब्भिक्खीदी ...	२७५।६८०
देवकुरु पउम तवणं ...	२९४।७४०
देहुदओ चापाणं ...	३३४।८२९
दोद्दो वग्गं बारस ...	१४०।३४६
दोद्दो चंदरविं पडि ...	१५३।३७४
दोचंदाणं मिलिदे ...	१७०।४०१
दोद्दोचउचउक्कप्पे ...	२०३।४८१
ध	
धणुतणुतुंगो तित्थे ...	३२५।८०४
धम्माधम्मागासा ...	५।५
धम्माधम्मागुरुलघु ...	३०।७०
धम्माधम्मिगिजीवग...	१९।४२
धम्मं पसंसिदूण ...	२२९।५५२
धम्मावंसामेघा ...	६५।१४५
धवला सहस्समुग्गय ...	३६२।९०८
धादइगंगारत्तदु ...	३७८।९३५
धाइदपुक्खरदीवा ...	३७८।९३४
धारेत्थसव्वसमकदि ...	२३।५३

गाथा	पृ.सं. गा.सं.	गाथा	पृ.सं. गा.सं.
प		पढमंतिमवीहीदो ...	१७७।४१२
पउमप्पहवसुपुज्जा ...	३४०।८४७	पडिवदिकिण्हे पुस्से ...	१७९।४१७
पउममहापउमा ति ...	२३५।५६७	पडिदिसगोउरसंखा ...	२०७।४९२
पल्लछिदिमेत्तपल्ला ...	६।८	पक्खं वाससहस्सं ...	२२७।५४४
पत्थतुलचुलयएग ...	७।१०	पणसयदलं तदंतो ...	२४२।५८९
परमाणुसयलदव्वं ...	७।११	पणसय पणसय सहियं	२४९।६०९
परिणाहेक्कारसमं ...	१२।२२	पढमवणडसीदंसो ...	२५१।६१२
पल्लघणं बिंदंगुल ...	३४।७८	पव्वदवावीकूडा ...	२६१।६३८
पल्लो सायरसूई ...	४०।९२	पम्मा सुपम्मा महापम्मा	२७८।६८९
पणसयगुणतणुवादं ...	६४।१४२	पणवण्णं पणवण्णं ...	२८०।६९५
पदमेगेण विहीणं ...	७२।१६४	पढमे जिंणिदगेहं ...	२८८।७२२
पदराहय विलबहलं ...	७६।१७२	पल्लद्धमं तु सिद्धे ...	३१९।७९२
पणघणजोयणमाणं ...	७९।१८२	पल्लासीदिममंतर ...	३२१।७९७
पढमासणमिह खित्तं...	८३।१९३	पल्लतुरियादि चय प	३२८।८१४
पढमिंदे दसणउदी ...	८४।१९७	पणतीसतीस अडदुख	३३०।८१९
पढमे सत्तातिछक्कं ...	८६।२०१	पढमो सत्तमिमण्णे ...	३३५।८३२
पडिदिसयं णियसीसे	९१।२१६	पणसयपण्णूणसयं ...	३३७।८३८
पण्णसहस्स बिलक्खा	९५।२२८	पढमदु माघविमण्णे ...	३३८।८४०
पढमा परिसा समिदा	९७।२२९	पण्णरजिणखदुतिजिणा	३३९।८४३
पदमेत्ते गुणयारे ...	९६।२३१	पणछस्सयवस्सं पण	३४१।८५०
पणवीसं असुराणं ...	१०३।२४९	पढमजिणो सोलससय	३४९।८७६
पडिपाडिमं एक्केक्का ...	१०६।२५५	पढमादो तुरियोत्ति य	३५१।८८२
पण्णासमेकदालं ...	१२७।३१३	पढमो देवे चरिमो ...	३५२।८८४
पडिदिवसमेक्कवीथिं ...	१५४।३७६	पणदाललक्खमाणुस	३८०।९४२
पथवासपिंडहीणा ...	१५४।३७७	पच्छिमगा छत्ततयं ...	३८५।९५६
परिधिम्हि जम्हि चिट्ठदि	१५९।३८३	पडिवरिसं आसाढे ...	३९१।९७६
पणपरिधीयो भजिदे	१५९।३८४	पंचाहुट्टिगिरज्जू ...	६२।१३७

गाथा		पृ.सं. गा.सं.
पंचमभागपमाणा	...	७३।१६७
पंचुत्तरसत्तसया	...	१५२।३७२
पंचमचरिमे पक्खड	...	३४४।८५९
पांडुकपांडुकंबल	...	२५९।६३३
पासे उववादगियं	...	२१८।५२३
पायारगोउरट्टल	...	२८४।७०९
पासो दु उग्गवंसो	...	३४१।८४९
पायाराणं उवरिं	...	३५३।८८७
पायारंतब्भागे	...	३५५।८९५
पिट्ठकगजमित्तपहा	...	१९७।४६६
पुण्णा सइमणवत्था	...	१५। २९
पुव्वावरेण परिही	...	५६।१२१
पुढविंदयमेगूणं	...	७२।१६५
पुरसा पुरुसुत्तमस	...	१०७।२५९
पुरसपिया पुंकंता	...	११२।२७६
पुरदो गंतूण बहिं	...	११६।२८८
पुक्खरसयंभुरमणा	...	१३०।३२२
पुणरपि छिण्णे पच्छिम		१४४।३५४
पुक्खरसिंधुभयधणं	...	१४७।३६०
पुव्वुत्तरदक्खिणदिस	...	२१६।५१६
पुण्णागणागपूगी	...	२३९।५८०
पुव्ववरविदंहंते	...	२७२।६७२
पुव्ववरजीवसेसे	...	३१३।७७८
पुरगामवट्टणादी	...	३२४।८०२
पुण्णदिणे अमवासे	...	३५८।९००
पुव्वादिसु पुह अड अड		३८२।९४७
पुढवी पउमवदी इगि		३८४।९५३

गाथा		पृ.सं. गा.सं.
पुव्वे विमलं कूलं	...	३८५।९५७
पुरदो सुरकीडणमणि		४००।१००५
पुरदो पासाददुगं	...	४०१।१००७
पोराणिया तदा ते	...	८०।१८३
पोग्गलअइरुक्खादो	...	३४५।८३२
फ		
फणिगरुडसेसयाणं	...	१०१।२४५
फलिहरजदं व कुमुदं		३८३।९५०
ब		
बडवामुहं कदंबग	...	३५६।८९७
बलगोविंदासिहामणि	...	२।१
बत्तीसमट्ठवीसं	...	६७।१४९
बत्तीस बे सहस्सा	...	९८।२३५
बत्तीसट्ठाबीसं	...	१९५।४५९
बलभद्दणामकूडे	...	२५७।६२४
बलदेवा विजयाचल	...	३३३।८२७
बहुवण्णणपासादा	...	३६३।९११
बादालं सोलसकादि	...	११।२०
बादालमट्ठघणइगि	...	१४।२७
बाहिरसूईवग्गं	...	१२८।३१६
बाहिरसूई बलय	...	१२९।३१८
बावत्तरि बादालं	...	१३५।३३०
बावीस सोलतिण्णिय		१६०।३८५
बासट्ठी सेढिगया	...	२००।४७३
बारस चोद्दस सोलस		२०९।४९८
बावीसं च सहस्सा	...	२५०।६१०
बादालसहस्सं पुह	...	२९८।७४८

गाथा	पृ.सं. गा.सं.
बारहजोयणवित्थड ...	३९९।१००१
बिदिये पढमं कुंडं ...	१६।३१
बिदिये बारे पुण्णं ...	१६।३२
बिगुणणवपव्वतीदे ...	१८१।४२२
बिगुणे सगिट्ठ इसुपे ...	१८३।४२७
बेयादि बिउत्तरिया ...	२३।५५
बेरूववग्गधारा ...	२८।६६
बेरूवविंदधारा ...	३३।७७
बेसदछप्पण्णंगुल ...	१२९।३०२
बेरूवतदियपंचम ...	१३।२४
भ	
भजस्सद्धच्छेदा ...	४६।१०६
भवणव्वितरजोइस ...	४।२
भवणेसु सत्तकोडी ...	८९।२०८
भवणं भवणपुराणिय	११९।२९७
भवणावासादीणं ...	१२०।३०१
भरहे पणकदिमचलं ...	२४१।५८६
भरहस्स य विक्खंभो	२४८।६०४
भरहवरविदेहेरा ...	२६०।६३४
भरहइरावदसरिदा ...	२९७।७४६
भरहस्संते जीवा ...	३११।७७१
भरहेसुरेवदेसु य ...	३१४।७७९
भरहदु वसहदुकाले ...	३२९।८१६
भरह इरावद पण पण	३५१।८८३
भरहइरावदवस्सा ...	३७१।९२९
भिंगारकलसदप्पण ...	३९५।९८९
भीममहभीमविग्घवि	१०९।२६७
भीमो य महाभीमो	११०।२६८
भीम महभीम रुद्दा ...	३३६।८३४
भीमावलि जिदसत्तू ...	३३६।८३६
भुजकोडिकदिसमासो	५६।१२२
भुजगा भुजंगसाली ...	१०८।२६१
भूदाणंदो धरणा ...	९०।२१०
भूदाणं तु सुरूवा ...	११०।२६९
भूदाण रक्खसाणं ...	११६।२९०
भूमज्झग्गो वासो ...	२४२।५८८
भूभद्दसाल साणुग ...	२४९।६०७
भूमीदो दसभागो ...	२५३।६१७
भोमिन्दकं मज्झे ...	११४।२८४
म	
मघवं सणक्कुमारो ...	३३२।८२४
मज्जारसाणसूयर ...	७८।१७८
महकायो अतिकायो	१०८।२६२
महगंध भुजग पीदिकं	११७।२९२
मणुसुत्तरोत्ति मणुसा ...	१३१।३२३
मणुसुत्तरसेलादो ...	१४१।३४९
मज्झिमचउजुगलाणं ...	१९३।४५४
महदामेहि मिदगदी ...	२०९।४९७
महपूजासु जिणाणं ...	२३०।५५४
मज्झे दीओ जलदो ...	२४२।५८७
मणितोरणरयणुब्भव ...	२५९।६३०
मज्झे सिंहासणयं ...	२६०।६३६
मल्लव महसोमणसो ...	२७०।६६३

गाथा	पृ.सं. गा.सं.
महहिमवचरिमजीवा	३१२।७७४
मल्लिदुमज्झे णवमो ...	३३०।८१७
महपउमो सुरदेवो ...	३४८।८७३
महअइबला तिविद्वो ...	३५०।८८०
मज्झिमपरिधिचउत्थं	३६०।९०२
मणुसुत्तरुदयभूमुह ...	३७९।९३८
मणिकूडं रज्जुत्तम ...	३८६।९५९
मणिकणयपुप्फसोहिय	३९६।९९०
महदारस्स दुपासे ...	३९६।९९१
महुरझणझणणिणादा	३९७।९९३
मंदरगिरिमज्झादो ...	१६८।३९७
मंदरकुलवक्खारिसु ...	२३३।५६२
मंदारचूदचंपय ...	२४९।६०८
माणं दुविहं लोगिग ...	६।९
माणुसखेत्तपमाणं ...	७४।१६९
माहवचंदुद्धरिया ...	१६४।३९४
माघे सत्तमि किण्हे ...	१७८।४१६
माणुसखित्तपमाणं ...	१९९।४७२
माणीचारणगंध ...	२५५।६१९
मागहतिदेवदीव ...	३६३।९१२
मुहभूमीण विसेसे ...	५०।११४
मुरवदले सत्तमही ...	६५।१४४
मुत्ताहारं णेमिस ...	२८३।७०६
मुरवायारो जलही ...	३५८।९०१
मूलगपीठणिसण्णा ...	३९९।१००२
मेरुतलादु दिवड्ढं ...	१९४।४५८
मेरू विदेहमज्झे ...	२४८।६०६
मेहंकरमेहवदी ...	२५८।६२७
मेरुगिरिभूमिवासं ...	३०२।७५९
मेरुणरलोयबाहिर ...	३७८।९३६
र	
रज्जुतयस्सोसरणे ...	५२।११६
रज्जुदुगहाणिठाणे ...	५५।११९
रयणप्पहा तिहा खर ...	६६।१४६
रयणप्पहपुढवीदो ...	६८।१५२
रयणप्पहपुढवीए ...	८६।२०२
रयणप्पहपंकड्ढे ...	९३।२२२
रतिपियजेट्ठा इंदा ...	१०७।२५८
रज्जूदलिदे मंदिर ...	१४३।३५२
रविखंडादो बारस ...	१७३।४०५
रयणकवाडवरावर ...	२८६।७१६
रायजुवंततराए ...	९४।२२४
राहुअरिट्ठविमाणा ...	१३८।३३९
राहुअरिट्ठ, गंतू ...	१३८।३४०
रिट्ठसुरसमिदिबम्हं ...	१९७।४६७
रुद्दक्ख रुद्दरिसिण ...	११२।२७८
रुचगरुचिरंक फलिहं ...	१९७।४६५
रुचकं मंदरसोकं ...	२०५।४८५
रुद्दुगं छस्सुण्णा ...	३४०।८४६
रुजगरुजगाह हिमवं ...	३८२।९४६
रूवहियपुढाविसंखं ...	७५।१७१
रूप्पसुयण्णयवज्जय ...	१२२।३०६
रूऊणहियपदमिद ...	१२३।३०९

गाथा		पृ.सं. गा.सं.
रूऊणसलाबारस	...	१२८।३१७
रूऊणाउद्दिगुणं	...	१८०।४१९
रूप्पगिरिहीणभरह	...	३०७।७६७
रोमहदं छक्केसज	...	४५।१०४
ल		
लक्खतियं बाणउदी	...	२९८।७४९
लद्धं तिवार वग्गिद	...	२२।५१
लवणंबुहिसुहुमफले	...	४४।१०३
लवणंबुहिकालोदय	...	१२२।३०७
लवणादीणं वासं	...	१२४।३१०
लवणं वारुणितियमिदि		१२९।३१९
लवणदुगंतसमुद्दे	...	१३०।३२१
लवणे दु पडिदेक्कं	...	१४५।३५८
लवणे दिसविदिसंतर		३५६।८९६
लोगो अकिट्टिमो खलु		४।४
लोयतले वादतये	...	५९।१२७
लोयबहुमज्झदेसे	...	६५।१४३
लोहोदयभरिदाओ	...	८२।१९०
व		
वइचउगोउरसालं	...	२७४।६७६
वग्गादुवरिमवग्गे	...	३२।७४
वग्गसला रूवहिया	...	३२।७५
वग्गिदवारावग्गस	...	३३।७६
वग्गसलागत्तिदयं	...	३७।८५
वग्गसलागप्पहुदी	...	३८।८६
ववहारुवजोग्गाणं	...	४०।९१
ववहारुद्धारद्धा	...	४०।९३
वटलवणरोचगोनग	...	४३।९८
वस्ससदे वस्ससदे	...	४३।९९
ववहारेयं रोमं	...	४३।१००
वज्जघणाभित्तिभागा	...	७८।१७७
वयवग्घघूगकागहि	...	८०।१८५
वट्टादीण पुराणं	...	१२०।३००
वरविरहं छम्मासं	...	२२१।५३०
वसहिक्कामधरणि	...	२२४।५३८
वज्जमुहदो जाणित्ता	...	२४०।५८२
वरसंति कालमेहा	...	२७५।६७९
वच्छा सुवच्छा महावच्छा		२७८।६८८
वप्पा सुवप्पा महावप्पा		२७९।६९०
वट्टा सव्वे कूडा	...	२८९।७२३
वक्खारसयाणुदओ	...	२९६।७४५
वक्खारवास विरहिय		३०२।७५८
वदक्खामलयप्पम	...	३१७।७८६
वरदाणदो विदेहे	...	३२०।७९४
वस्सा कोडिसहस्सा	...	३२७।८१०
वज्जमयमूलभागा	...	३५२।८८६
वरमज्झजहण्णाणं	...	३५३।८८९
वडवामुहपहुदीणं	...	३६१।९०५
वज्जं तप्पह कणयं	...	३८१।९४५
वरुणो वरुणादिपहो	...	३८७।९६३
वरमज्झिमअवराणं	...	३९२।९७९
बसई मज्झगदक्खिण		३९७।९९४
वंसतदगे अणिच्छा	...	७०।१६०

गाथा	पृ.सं. गा.सं.
वंदणभिसेयणच्चण ...	४०१।१००
वासो तिगुणी परिही	९।१७
वासद्धघणं दलियं ...	११।१९
वासद्धकदी तिगुणा ...	१४।२६
वासुदयभुजं रज्जू ...	६३।१३८
वासिगि कमले संखमु	१३१।३२६
वासादिणमास बारस ...	१३४।३२९
वासायामोगाढं ...	२३५।५६८
वासुदयादीहत्तं ...	३५४।८९०
वारुणि आसासच्चा ...	३५४।९५५
वावीणं पुव्वादिसु ...	३९०।९७२
विधुणिधिणगणव ...	१२।२१
विक्खंभवग्गदहगुण ...	४१।९६
विरालिज्जमाणरासिं ...	४७।१०७
विरलिदरासिच्छेदा ...	४७।१०८
विरालिदरासीदो पुण ...	४९।११०
विरालि० हीण० ...	४९।१११
विच्छियसहस्सवेयण ...	८२।१९८
विंतरणिलयतियाणि य	११८।२९४
विजयो दु वैजयंतो ...	१९४।४५७
विविहतवरयणभूसा ...	२३०।५५५
विजयकुलद्दी दुगुणा ...	२४७।६०३
विजयं पडि वेयड्ढो ...	२७९।६९१
विजया च वइजयंती	२८६।७१५
विमलदुगे वच्छादी ...	२९५।७४२
विज्जाणुवादपढणे ...	३३८।८४१
विजयं च वैजयंतं ...	३५४।८९२
विजगावक्खाराणं ...	३७४।९३२
विजया यणंद० ...	३८३।९४९
वीयणसयलद्धीए ...	१८८।४४२
वीसादिवक्खाराणं ...	२७२।६७१
वीराजिणातित्थकालो ...	३२८।८१२
वेगपदं चयगुणिदं ...	७१।१६३
वेदालगिरी भीमा ...	८१।१८६
वेंतर अप्पमहाड्ढिय	९३।२२१
वेंतरजोयिसियाणं ...	९४।२२५
वेगाउट्ठिगुणंते ...	१८०।४२०
वेगपद छग्गुणं इगि ...	१८३।४२८
वेदी वणुभयपासे ...	२५१।६१३
वेयड्ढंते जीवा ...	३११।७७०
वेलंधरभुजगविमा ...	३६०।९०३
वेयड्ढ जंबु सामलि	३९३।९८२
वेलुरियफलाविद्दुम ...	४०२।१०१२

स

गाथा	पृ.सं. गा.सं.
सइमादिमूलवग्गे ...	३१।७२
सव्वागासमणंतं ...	४।३
समकदिसलविकदीए	२६।६१
सत्तमजम्मावीणं ...	४१।९४
सत्तमखिदिपाणिधिम्हि य	५८।१२५
सत्तासीदिचदुस्सद ...	६३।१३९
सट्ठीसत्तएहिं ...	६४।१४०
सत्तमखिदिबहुमज्झे	६७।१५०
ससुगंधपुप्फसोहिय ...	९२।२१७

गाथा	पृ. सं. गा.सं.	गाथा	पृ.सं. गा.सं.
सप्पुरुसमहापुरुसा ...	१०७।२६०	सरिसायदगजदंता ...	३०१।७५६
सत्तेव य आणीया ...	९५।२३०	सदलबिसदं समातिय	३२७।८११
सगसगजोइगणद्धं ...	१४१।३४८	सव्वे सुवण्णवण्णा ...	३३०।८१८
सगसगपरिधिं परिधिग	१४२।३५१	समचुलसीदि बहत्तरि	३३४।८३०
सगरविंदलविंबूणा ...	१५३।३७३	सगसीदि दुसु दसूणं	३३४।८३१
सट्ठिहिदपढमपरिहिं ...	१६१।३८१	सम्मद्दंसणरयणं ...	३४३।८५६
सदभिस भरणी अद्दा	१६९।३९९	सयलुज्झिणिभा वस्सा...	३७०।९२७
सतिपंचमचउदिवसे ...	१७५।४०९	सगसगवड्ढीणियणिय	३७४।९३३
सगसग चरिमिंदयधय	१९९।४७१	सव्वेसिं कूडाणं ...	३८६।९६०
सगसग संखेज्जूणा ...	२०२।४७९	ससुगंध सव्वगंधो ...	३८७।९६५
सत्तेव यआणीया ...	२०८।४९५	सव्वे समचउरस्सा ...	३९०।९७१
सत्तपदे देवीणं ...	२१३।५०८	सदवित्थारो साहिय	३९८।९९६
सत्तपदे अट्ठम ...	२१३।५०९	संखमसंखमणंतं ...	३४।७९
सचिपउम सिवसियामा	२१४।५१०	संखेज्जवासणिरए ...	७७।१७५
सत्तपदे वल्लभिया ...	२१५।५१३	संखेज्जरूवसंजुद ...	१४५।३५७
सव्वं च लोयणालिं ...	२२०।५२८	संवत्तयणामणिलो ...	३४५।८६४
सम्मे घादेऊणं ...	२२२।५२३	संवच्छरासहस्सा ...	३३१।८२०
सव्वट्ठोत्ति सुदिट्ठी ...	२२७।५४६	सामण्णं पत्तेयं ...	५४।११८
सरजा गंगा सिंधू ...	२३९।५७८	सामण्णं दो आयद ...	५१।११५
सरिदा सुवण्णरूप्पय ...	२३९।५७८	सादिकुहिदातिगंधं ...	८२।१९२
सगसगहाणिविहीणे ...	२५२।६१५	सायरदसमं तुरिये ...	८५।१९९
सड्ढावं विजडावं ...	२७१।६६८	सावणमाघे सव्व ...	१५७।३८१
सयलभुवणेक्कणाहो ...	२७८।६८६	साणक्कुमारजुगले ...	२१८।५२२
सत्तरिसयवसहगिरी ...	२८५।७१०	सारस्सद आइच्चा ...	२२३।५३५
सत्तरिसय णयराणि य	२८५।७११	सारस्सद आइच्चप् ...	२२४।५३७
सड्ढावं विज. पउ. ...	२८७।७१९	साहियपल्लं अवरं ...	२२६।५४२
सत्तरसं बाणउदी ...	२९९।७५०	सालत्तयपीढत्तय ...	४०३।१०१३

गाथा	पृ.सं. गा.सं.
सिद्धा णिगोदसाहिय ...	२१।४९
सिंहगयवसहजडिल ...	१३९।३४३
सिंहाउ विउल काला	१५१।३६७
सिरिमति राम सुसीमा	२१४।५११
सिरिहिरिधिदिकित्तीवि य	२३७।५७२
सिरिगिहदलमिदरगिहं	२३८।५७७
सिरिगिहसीसठियंबुज	२४३।५९०
सिद्धत्थं सत्तुंजय ...	२८३।७०४
सिद्धं णिसहं च हरि	२८९।७२५
सिद्धं णीलं पुव्ववि ...	२९०।७२६
सिद्धं रुम्मी रम्मग ...	२९०।७२७
सिद्धं सिहरिय हेर ...	२९०।७२८
सिद्धं दक्खिण अद्धा	९९२।७३२
सिद्धं मल्लवमुत्तर ...	२९४।७३८
सिद्धं वक्खारक्खं ...	२९५।७४३
सिक्खंति जराउच्छिदिं	३२४।८०१
सिंहस्ससाणमहिसव ...	३६६।९१७
सिंहासणादिसहिया ...	३९४।९८५
सिरिदेवी सुददेवी ...	३९५।९८८
सिंहगयवसहगरुडसि...	४०२।१०१०
सीमंतणिरयरौरव ...	६८।१५४
सीमंकर खेमभयं ...	१५१।३६९
सीतोदावरतीरे ...	२६५।६५१
सीतासीतोदाणदि ...	२७४।६७८
सुस्सर अणिंदिदक्खा	११२।२७७
सुद्धखरभूजलाणं ...	१३४।३२८
सुरगिरिचंदरवीणं ...	१५५।३७८
सुक्कदसमीविसाहे ...	१७७।४१४
सुक्कमहासुक्कगदो ...	१९२।४५३
सुरपुरबहिं असोयं ...	२११।५०२
सुहसयणग्गे देवा ...	२२९।५५०
सुरबोहियावि मिच्छा	२३०।५५३
सुसीमाकुंडला चेव ...	२८६।७१३
सुसमसुसमं च सुसमं ...	३१५।७८०
सुपइण्णाय जसोहर ...	३८३।९५१
सूरादो दिणरत्ती ...	१५६।३७९
सूरपुरचंदपुराणि ...	२८२।७०१
सेढीछिरज्जु चोद्दस ...	६१।१३२
सेढीणं विच्चाले ...	७३।१६६
सेणादेवाणं पुण ...	९९।२३९
सेणामहत्तरासु ...	११३।२८१
सेणागयपुव्वावर ...	१८९।४४४
सेढीणं विच्चा, णिर ...	२०१।४७५
सेण्णावंदितणुरक्खा ...	२१०।५००
सेणावईणमवरे ...	२१६।५१८
सेसा रूप्पंता दह ...	२४५।५९८
सेणामहत्तराणं ...	२६४।६४६
सेलायामे दक्खिण ...	२८१।६९६
सेणगिहपवदिपुरहो ...	३३२।८२३
सेयादिपणसु हरिपण...	३३३।८२६
सेसा सोलस हेमा ...	३४९।८४८
सोहम्मीसाणसण ...	१९२।४५२
सोहम्मादीबारस ...	२०५।४८६
सोहम्मादिचउक्के ...	२०६।४८८

गाथा	पृ.सं. गा.सं.
सोहम्मवरं पल्लं ...	२२२।५३२
सोहम्मो वरदेवी ...	२२८।५४८
सोमणसदुगे वज्जं ...	२५५।६२०
सोमदुवरुणदुगाऊ ...	२५६।६२२
सोचिदठाणासिदपारे ...	२५९।६३२
सोहम्म आभिजोग्गग	२८०।६९४
सोलेकट्ठिविसट्ठिगि ...	३०२।७५७
सोउम्मग्गाहिमुहो ...	३४९।८५१
सोहम्मे जायंते ...	३४४।८६०
सोमणसरुजगकुंडल ...	३९२।९८०
सोलुदय कोसावित्थड...	४००।१००३
सोहम्मो ईसाणो ...	३९२।९७७
ह	
हत्थपमाणे णीचु ...	११७।२९१
हत्थं मूलतियं विय ...	१८७।४३९
हरिगिरिधणुसेसद्धं ...	१६३।३९३
हरिजीवा इगिणभणव	३१२।७७५
हरिसेणो हरिकंतो ...	९०।२११
हा हामा हामाधिक्...	३२२।७९८
हाहा हूहू णारय ...	१०८।२६३
हिट्ठिममज्झिमउवरिम	१९३।४५५
हिमगा णीला पंका ...	७१।१६२
हिमणगपहुदीवासो ...	३०७।७६८
हिमवण्णगंत जीवा ...	३११।७७२
हिमवं महादिहिमवं ...	२३४।५६५
हेट्ठुवरिमतियभागे ...	३५७।८९८
हेमज्जुणतवणीया ...	२३४।५६६
हेममया तुंगधरा ...	२५७।६२६
हेममया वक्खारा ...	२७२।६७०
हेमवदंतिमजीवा ...	३१२।७७३
होइ विमोइ पुरंजय ...	२८१।६९८

इति गाथासूची

माणिकचंद-दिगम्बरजैनग्रंथमालासमिति ।

(प्रबन्धकारिणी सभाके सभ्य ।)

१ सर नाइट सेठ स्वरूपचन्द हुकुमचन्द ।
२ राय बहादुर ,, तिलोकचन्द कल्याणमल ।
३ ,, ,, ,, ओंकारजी कस्तूरचन्द ।
४ सेठ गुरुमुखरायजी सुखानंद ।
५ ,, हीराचंद नेमिचंद आ० मजिस्ट्रेट ।
६ मि० लल्लूभाई प्रेमानंद परीख एल्. सी. इ. ।
७ सेठ ठाकुरदास भगवानदास जौंहरी ।
८ ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी ।
९ पं० धन्नालालजी काशलीवाल ।
१० पं० खूबचंदजी शास्त्री ।
११ नाथूराम प्रेमी (मंत्री)

माणिकचन्द्रजैनग्रन्थमालाके

पूर्व प्रकाशित ग्रन्थ ।

१ लघीयस्त्रयादि संग्रह ... ... ।=)
२ सागारधर्मामृत सटीक ... ... ।≡)
३ विक्रान्तकौरवीय नाटक ... ... ।≡)
४ पार्श्वनाथ-चरित ... ... ॥)
५ मैथिलीकल्याण नाटक ... ... ।)
६ आराधनासार सटीक ... ... ।)॥
७ जिनदत्त-चरित्र ... ... ।)॥
८ प्रद्युम्न-चरित्र ... ... ॥)
९ चारित्रसार ... ... ।=)
१० प्रमाणनिर्णय ... ... ।-)
११ आचारसार ... . ।=)

छप रहे हैं ।

१३ तत्त्वानुशासनादिसंग्रह
१४ अनगारधर्मामृत सटीक
१५ नयचक्र

निवेदन ।

यह ग्रन्थमाला स्वर्गीय दानवीर सेठ मानकचन्द हीराचन्दजीके स्मरणार्थ निकाली गई है । यह केवल प्राचीन जैनसाहित्यके उद्धारके लिए प्रकाशित की जाती है । प्रत्येक ग्रन्थका मूल्य ठीक लागतके बराबर रक्खा जाता है । इसके प्रत्येक ग्रन्थकी दस दस पाँच पाँच प्रतियाँ खरीदकर विद्वानोंको, पुस्तकालयोंको, जैनमन्दिरोंको धर्मार्थ बाँटना चाहिए । धर्मप्रभावनाके लिए इससे अच्छा और कोई काम नहीं हो सकता ।

तत्त्वानुशासनादिसंग्रह, अनगारधर्मामृत सटीक, नयचक्र, युक्त्यनुशासन सटीक, आदि कई ग्रन्थोंके छपानेका प्रबन्ध हो रहा है । सहायताकी आवश्यकता है ।

निवेदक,

नाथूराम प्रेमी

मंत्री ।